

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

ग्रन्थाङ्क 187

आनन्दमाला

1997

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
जोधपुर

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक
आनन्द कुमार R.A.S.
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क 187

आनन्दभारती प्रणीत

आनन्दमाला

सम्पादक
वैद्य बुद्धिप्रकाश आचार्य

प्रकाशक
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.)
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1997 मूल्य : 140.00

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक
आनन्द कुमार R.A.S.
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क 187

आनन्दभारती प्रणीत

आनन्दमाला

सम्पादक
वैद्य बुद्धिप्रकाश आचार्य

प्रकाशक
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.)
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1997 मूल्य : 140.00

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित
सामान्यतः अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानप्रदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावली

आनन्दभारती कृत

आनन्दमाला

प्रथम संस्करण 1997 500 प्रतियां

मुद्रक :
प्रिंटिंग हाउस, जालोरी गेट, जोधपुर
✆ : 627708

प्रधान-सम्पादकीय

भारतीय चतुर्दश विद्याओं में आयुर्वेद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज आयुर्वेद हमारे जीवन में जिस तरह से अनुस्यूत हो चुका है कि उसका पृथक्करण निश्चय ही दुष्कर है। वैष्णवमत में धन्वन्तरि विष्णु के अवतार माने जाते हैं जो आयुर्वेद शास्त्र के प्रवर्तक हैं। शैवमत में शिव के 18 अवतारों में नकुलीश या लकुलीश अवतार तो मात्र चिकित्सक स्वरूपधारक ही है। बुद्ध के एक स्वरूप अवलोकितेश्वर को भैषज्यगुरु का ही अभिधान प्राप्त है। काश्यप संहिता में "ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदार्थववेदेभ्य:" कहकर आयुर्वेद को पञ्चम वेद निरूपित किया गया है।

वस्तुत वैदिक साहित्य में स्थाने स्थाने आयुर्वेद की चर्चा है। अतः ब्राह्मण उपनिषद् ग्रन्थों व सूत्रसाहित्य में चिकित्सा विषयक अनेक उल्लेख मिलते हैं। जराजीर्ण च्यवन ऋषि को पुनः यौवन प्राप्ति, शिरश्छेद के पश्चात् भी दीर्घतमस ऋषि को अश्विनीकुमारों द्वारा जीवनदान, अश्विनीकुमारों द्वारा लोहे की टाँगे लगाना, अन्धे ऋजाश्व को दृष्टिदान आदि कितने ही वेदकालीन निदर्शन उपस्थापित किये जा सकते हैं जो तत्कालीन आयुर्वेद के उन्नयन का पर्याप्त परिचय देते हैं किन्तु इस सम्बन्ध में चरकसंहिता से पूर्व का कोई भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हुआ हैं। चरकसंहिता कायचिकित्सा का प्रधानभूत ग्रन्थ है और पाश्चात्य विद्वानो की दृष्टि में चरक का काल शताब्दी ई. है।

आयुर्वेद के शल्य, शालाक्य, काय चिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगदतंत्र, रसायनतन्त्र और वाजीकरण आदि आठ विभाग मिलते हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ आनन्दमाला जैसाकि विद्वान् सम्पादक ने लिखा है—रस एवं काय चिकित्सा का समन्वयात्मक ग्रन्थ है।

15 अधिकारों व 2 परिशिष्टों में विभक्त आनन्दमाला में शीतल एवं क्वथित जल गुण-विवेचना, भारतीय नदियों के पानी का गुण दोष, 46 अनुभूत शास्त्रोक्त चूर्ण, विभिन्न प्रकार की भस्में व पाकों का निर्माण, लेपों, अवलेहों, आसवों, घृत व तैलों के अलावा स्त्रीरोग चिकित्सा, पारद लक्षण,

मारण एवं शोधन आदि विविध विषयों पर विचार किया गया है।

यतीन्द्र आनन्द भारती द्वारा ग्रन्थारम्भ में ओङ्कार का नमन करने से उनके शैव होने का अनुमान होता है। आत्मपरिचय में श्री भारती अत्यन्त संकोची रहे हैं। प्रत्येक अधिकार के अन्तिमांश में अपने आपको परिव्राजकाचार्य श्री नृसिंह भारती का शिष्य द्योतित किया है। थियेडोर आॅफरेट के केटेलागस केटेलोगोरेम पार्ट II पृष्ठ 9 पर भी नृसिंहभारती के शिष्य आनन्द भारती का उल्लेख मिलता है। न्यू केटेलागस केटेलोगोरेम (मद्रास यूनिवर्सिटी) में भी आनन्द भारती की एकमात्र रचना आनन्दमाला का उल्लेख मिलता है किन्तु कोई इतर परिचयात्मक विवरण उपलब्ध नहीं हुआ है। यह कार्य सुविज्ञ पाठकों एवम् अन्वेषणकर्त्ताओं के भरोसे छोड़ा जा रहा है।

आनन्दमाला का प्रकाशन दीर्घकाल तक लम्बित रहा, यह निश्चय ही खेद का विषय है। विलम्ब से ही सही लेकिन रसकाय चिकित्सा के इस अनुपम प्रकाशन को विद्वज्जगत् को समर्पित करते हुए मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है।

अन्त में आनन्दमाला के सम्पादक स्व. वैद्य बुद्धिप्रकाशजी आचार्य की दिवंगत आत्मा को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूं जिनके प्रयासों से इस प्रौढ़ ग्रन्थ का प्रकाशन सम्भव हो सका।

आनन्दकुमार
RAS
निदेशक

सम्पादकीय

सृष्टि की रचना के साथ ही प्राणियों को होने वाले नाना रोगों की कल्पना व उनके निवारणार्थ आयुर्वेदशास्त्र की उत्पत्ति हुई ।[1] पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति हेतु सर्वप्रथम आवश्यकता 'शरीर की आरोग्यता' है ।[2] उसकी प्राप्ति के लिये आयुर्वेदज्ञान परमावश्यक है ।[3] अस्तु, समस्त विद्याओं के मूलस्रोत वेदों में इस विज्ञान की उभय शाखाओं— (1) काय तथा (2) शल्य का उत्तम विवेचन किया गया ।[4] वेद शास्त्र में वेदों एवं उनके

---

1 (क) 'इह खल्वायुर्वेदं नामोपाङ्गमथर्ववेदस्यानुत्पाद्यैव प्रजाः श्लोकशतसहस्रमध्यायसहस्रं च कृतवान् स्वयम्भूः; ततोऽल्पायुष्ट्वमल्पमेधस्त्वं चालोक्य नराणां भूयोऽष्टधा प्रणीतवान्' (सुश्रुत सूत्र 1/6)

(ख) 'बालस्योत्पत्तेः पूर्वं स्तन्योद्गमनमिव सृष्टेः प्रथमतः आयुर्विज्ञानं स्वरतो ऽपि सम्मति' (काश्यपः)

2 (1) 'धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम् ।
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ।।'
चरक सू. 1/15

3 (1) 'वत्स सुश्रुत' इह खल्वायुर्वेदप्रयोजनं—व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः, स्वस्थस्य रक्षणं च । "आयुरस्मिन् विद्यते, अनेन वाऽऽयुर्विन्दन्ति" इत्यायुर्वेदः ।।' सुश्रुत सू. 1/14/45

(2) 'आयुर्हिताहितं व्याधेर्निदानं शमनं तथा ।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ।।'

4 ऋग्वेद 1/112/8, 1/116/10, 1/116/15-16,, 1/157/6, 2/33/13, 7/46/3, 8/9/15, 10/39/3, 10/39/8-9, 10/97/1 से 24, 10/137/2 से 7, 10/162/1 से 4, 10/164/1 से 6 इत्यादि ।

यजुर्वेद—'प्रथमो दैव्यो भिषक्' 16/5, 19/85 अथर्ववेद—
1/3/1 से 9, 1/17/1 से 4, 1/22/1 से 4, 1/23/1 से 4, 1/24/1 से 4, 2/3/6, 2/33/1 से 6, 8/7/1/28, 9/12/1 से 18, 9/13/1 से 22, 10/2/1 से 17 इत्यादि ।

अग्निपुराण अध्याय 279

शतपथ ब्राह्मण 2, 3, 4, 5, 7, 8, 10, 12, 14

ब्राह्मणादिग्रन्थों का भी अन्तर्भाव है ।[5]

गरुड़ पुराण—अध्याय 168

'भेषज कृतो ह वा एष यज्ञः ।' छान्दो. उप.

(1) 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' आपस्तम्ब, यज्ञपरिभाषा 39

(2) (बाह्मणग्रन्थों के तीन विभाग (i) ब्राह्मण (ii) आरण्यक व उपनिषद् हैं । इन्हें श्रुतिसाहित्य कहते हैं ।)

(2) वेदों के व्यञ्जक महर्षि व्यास ने इतिहास व पुराणग्रन्थों को भी वैदिक-साहित्य के अध्ययनार्थ उपयोगी बताया है—'इतिहास-पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्' ।

5 (1) या ओषधीः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा ।
मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च ।। 10/97/1

''मर्म्माणि ते वर्मणाच्छादयामि'' यजुः

अर्थात्—जो औषधियां अनेक प्राणियों को पालने में समर्थ मनुष्यों के हितार्थ पहिले ही तीनों ऋतुओं में उत्पन्न होती हैं. उन पक्व औषधियों का मैं अवश्य ज्ञान प्राप्त करूं व उन धारक पोषक ओषधियों के 700 धाम अर्थात् मनुष्य देह के 700 वे मर्म जानूं जहां इन ओषधियों के अचिन्त्य प्रभाव प्रकट होते हैं ।

(सप्तशतं पुरुषस्य मर्मणां, तेषु एता दधातीति—निरु. 9/28)

(या ओषधी-रोषधयः, पूर्वाः-पुरातन्यो, जाता-उत्पन्नाः, केभ्यः सकाशात्, देवेभ्यः—जगन्निर्मातृभ्यः यद्वा देवा द्योतमाना ऋतवः तेभ्यः कस्मिन्काले, त्रियुगं त्रिषु युगेषु विशेषेण प्रादुर्भावापेक्षया कृतादियुगत्रयमुक्तं कलौत्वत्यन्ताऽल्पत्वादुपेक्षितं, अथवा त्रिषु युगेषु—वसन्ते प्रावृषि शरदि चेत्यर्थः । अहं बभ्रूणां—बभ्रूवर्णाना सोमाद्योषधीनां, शतं सप्त च धामानि—अनुलेपसम्मार्जनाभिषेकादिरूपेणाऽऽश्रयभूनानि स्थानानि तु क्षिप्रं, मनेमन्ये सम्भावयामीत्यर्थः ।' अत्र वाजसनेयकं या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरेति ऋतवो वै देवास्तेभ्य एतास्त्रिपुरा जायन्ते वसन्ते प्रावृषि शरदि, मनै नु बभ्रूणामहमिति वै बभ्रूः सोम्या ओषधय ओषधः पुरुषः शतं धामानीति यदिदं शतायुः शताधः शतवीर्य एताभिर्ह्यस्यशतं धामानि सप्त चेति य एवमेव सप्तशीर्षन् प्राणास्तानेनदाहेति । वा. सं. 12/75)

(2) 'अति विश्वाः परिष्ठाः स्तेन इव व्रजमक्रमुः ।
ओषधीः प्राचुच्यवुर्यत्किंच तन्वो ३ रपः ।। 10/97/10

अर्थात् चोर या लुटेरा जिस प्रकार पथिकों पर आक्रमण करता है उसी प्रकार समस्त देह में सर्वत्र विद्यमान रह कर औषधियां रोगसमूह, पर आक्रमण करती हैं और रोग के कष्टकारी कारण को दूर करती हैं।

(विश्वा—व्याप्ताः, परिष्ठाः—परितः स्थिताः ओषधयः, अत्यक्रमुः—व्याधीन् अतिक्रान्तवत्यः, स्तेन इव व्रजं—यथा स्तेनो व्रज अत्यक्रमीत् तद्वत् तथा कृत्वा, ओषधीः—ओषधयः, प्रचुच्यवुः—प्रच्यावयन्ति यत्किञ्च, तन्वः—रुग्णशरीरस्य, रपः—पापं व्याधिलक्षणमरित तदिदि । वाज सं. 12/84

(3) साकं यक्ष्म प्रपत चाषेण किकिदीविना ।
साकं वातस्य ध्राज्या साकं नश्य निहाकया ।। 10/97-13

अर्थात्—हे यक्ष्म रोग ! तू भूख या अतिभक्षण के साथ दूर हो। कि कि आदि विशेष वेदनासूचक ध्वनि करने वाले रोगों (कास-हिक्कादि) के साथ नष्ट हो जा। वात की गति के साथ हो जा, एवं सान्निपातिक प्रलाप व निहाका के साथ नष्ट हो जा।

चाषः—चषमक्षणेम्वादिः। किकिदीवी—किकिना ध्वनिविशेषेण दीव्यति व्यवहरति इति किकिदीवी। यया पीड़याः निहतोस्मि हा कष्टम् इति जायते सा पीड़ा निहाका। इति सायणः।। तैत्तिरीयसंहिताभाष्ये 'श्येनेन' इति पाठः।।

'हेऽस्मदीयस्य पुरुषस्य शरीराधिष्ठायिन्, यक्ष्म—व्याधे, त्वम् साकं सहैव, प्रपत—प्रकर्षेण शीघ्रं गच्छ केन साकमिति उच्यते—चाषेण अतिशीघ्रं पतता चाषाख्येण पक्षिणा सह तथा, किकिदीविना—पक्षिणा च सह तथा वातस्य शीघ्रं गच्छतो वायो, ध्राज्या—ध्रजुगतौ गत्या वेगेन सह गच्छ तथा, निहाकया—गोधिकया साकं, नश्य-नाशं प्राप्नुहि।

(4) आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः।
आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ।। ऋ. 10/137/6

(5) प्र ते भिनद्मि मेहनं वर्त्रं वेशन्त्या इव।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ।। अथ. जे. 1-3-7

(6) वि ते भिनद्मि मेहनं वि योनिं वि गवीनिके।
विमातरं च पुत्रं च वि कुमारं जरायुणाव जरायु पद्यताम् ।।

अथ. वे. 1/11/5

इत्यादि

वेदों में सूत्ररूपेण 'गागर में सागर' भरा है।[6] वहाँ नृदेह के 700 उन मर्मस्थानों की चर्चा मिलती है जहां औषधियों का अचिन्त्य प्रभाव प्रकट होता है। अश्मर्यादि रोगों की शल्य चिकित्सा का सुन्दरवर्णन अथर्ववेद में मिलता है।[6]

ब्राह्मणग्रन्थों का प्रधान विषय यज्ञ एवं कर्मकाण्ड हैं किन्तु वहां भी यत्र तत्र आनुषङ्गिकरूपेण इस विज्ञान की भी विवेचना हुई है। शतपथ ब्राह्मण में शरीर की अस्थियां, प्राणसंख्या, मस्तिष्क की रचना आदि का विशद वर्णन उपलब्ध है।[7]

ब्राह्मणों के अन्त में जुड़े वानप्रस्थ एवं सन्यासजीवन सम्बन्धी अंशों वाले 'आरण्यकों' तथा कालान्तर में उनसे विकसित उपनिषदों में भी यत्र तत्र हमारे आयुर्विज्ञान की चर्चा हुई है।[7]

वाल्मीकि रामायण, महाभारत तथा पुराणों में भी आयुर्वेद का विवरण मिलता है।

---

6 (1) 6/8/1, 7/5/2, 7/12, 9/28 इ.
(2) ए. ब्राह्मण 1/10, 2/16 इ.
(3) तै. ब्राह्मण 3/10/8/2 इत्यादि
(4) तैत्ति. सं. 2/4/9/1, इत्या.
(5) वाज. सं. 19/87, 19/95, 25/4, 25/7-8, 39/8-9, इ.
(6) छान्दो. उ. 5/1 इ.
(7) बृहदारण्यक 6/1 इ.
(8) शतपथ ब्राह्मण समग्र.

7 (1) वा. रा. 2-10-30, 2-66-14 इत्यादि
'स वै भगवतः साक्षात् विष्णोरंशांशसम्भवः ।
धन्वन्तरिरिति ख्यात 'आयुर्वेददृगिज्यभाक् ॥' श्रीमद्भागवतमहापुराणे 8/34-35
'ततो धन्वन्तरिर्देवः श्वेताम्बरधरः स्वयम्' विष्णुपुराणे
(2) महाभारत भी.प. 45/36, द्रो.प. 14/37 व 92/52/121

वेदव्यञ्जक व्यासजी के प्रमुख शिष्य, सामवेद के उपदेष्टा महर्षि जैमिनि के महाभारत ग्रन्थ में भी तत्कालीन अनेकों रोगों व उनके उपचार का सुन्दर विवरण मिलता है।[1] व्रण के 108 प्रकार, शूलों के 300 प्रकार व त्रयोदशविध ज्वरराट् सन्निपात के भेदों का वहां पर वर्णन तत्कालीन उन उन रोग भेदों की संख्या के इयत्तादर्शक हैं।[2]

1_1 क्षयं प्रधानं रोगाणां नायकं वाक्यमब्रवीत् ।
....

जायन्ते वालुकैर्मुक्ता बाधते तान्न वालुकम् । जैमिनीयाश्वमेघपर्वणि 48/15-93 (यक्ष्मा, प्रमेह, विषूचिका, पाण्डु, शोफा, जलोदर, व्रण, 108 व्रणभेद [व्रणस्य बहुरूपाणि शतमष्टोत्तरं विभो ।], विर्वाचिका, गजचर्म, भगन्दर, स्फ़ोटराज, ज्वर, अतिसार, संग्रहणी, अरोचक, अध्मान, तीन सौ प्रकार के शूलरोग, हिक्का, श्वास कास, कुष्ठ, धनुर्वात, कर्णशूल, नेत्ररोग, मुखरोग, वल्मीक, गण्डमाला, अपस्मार, वालुक, उमरू, विस्तीणाशिरोव्यथा, [एते मुख्यतया रोगास्तथान्ये बहवो यम] इत्यादि ।

1_2 यक्ष्मोवाच.....'विप्राणां पठतां चोग्रो ध्वनिर्धूमश्च होमजः ।
मन्नेत्रश्रोतयोर्दुःखं करिष्यति न संशयः ।।' 48/18

2 'त्रयोदशविधश्चायं ज्वरकाट् सान्निपातिकः' ।।
गुरुस्तु शम्भुजनितः कुतः स्थास्यति तद् वद ।।" 48/29

'प्रमेहं पुत्रकं सूक्ष्मं घृताक्षं मूत्रनाशकम्'
'विषूचिकायास्त्वधिको महिमा केन लभ्यते ।
क्षणेन मानुषं हन्ति........।।' 48/20

'भ्रातुः स्थानं न पश्यामि पाण्डोरमिततेजसः ।
भ्रातुर्भार्या विशालाक्षी शोफा हर्त्री परं जनम् ।।

तया सह सुतस्तेन पाण्डुना च जलोदरः ।
जनितः स्वगुणैस्तुल्य-........' ।। 48/21-22

'विर्चचिका प्रिया यस्य पुत्रश्चास्य भगन्दरः ।
गुरुस्त्रीगामिनां शिश्न मूले किल भगो भवेत् ।।' 48/26-27

1_3 'अतिसारश्च वीरोऽसौ नायकस्ते महाबलः ।
प्रिया सङ्ग्रहणी यस्य पुत्रोऽध्मानश्च भासुरः ।।' 48/30
"अरोचकः क्रोधनश्च पुत्रः परमपातकः ।।" 48-31

वहां प्रमेह का मूत्र से सम्बन्धित होना, विषूचिका रोग की क्षणभर में मारकता, जलोदर रोग में पाण्डु व शोथ की उपस्थिति रहना, शिश्नमूल में भगन्दर का होना, हिक्काश्वसादि रोगों की उपरिस्था वायु से उत्पत्ति आदि अनेक मननार्ह बातें कही गई हैं।[3] बालक जन्म के समय में परिचर्यार्थ उस युग में भी कुशल धात्रियों की विद्यमानता के पुष्ट प्रमाण वहां मिलते हैं।[4]

शेषनाग की मणि का मृत व्यक्ति के हृदय पर रखने से उसका पुनर्जीवित हो उठना[5], युद्ध में, बाणों से कटे शिर का पुनः धड़ से जोड़ना आदि तत्कालीन उत्कृष्ट शल्यज्ञान व क्रिया के द्योतक हैं।

उत्तरवैदिक काल तथा बौद्धकाल के बीच के कालखण्ड को इतिहासवेत्ता महाकाव्यकाल कहते हैं। इसी काल में आयुर्वेद-शास्त्र ने "पृथक् स्वतन्त्र शास्त्र" का रूप ग्रहण किया। आत्रेय, भारद्वाज, काश्यप, पाराशर, मेल, जतुकर्ण, क्षारपाणि, हारीत व सुश्रुतादि महर्षियों ने इसी युग में वेद-सूक्तों के

'शतानि त्रीणि शूलानां तानि यानि महात्मनाम्।'
'हिक्काश्वासादयश्चैते कासकुष्ठा महाबलाः।
उपरिस्था वायुभूता........।'

1₄ 'क्षयी च वित्तहीनश्च सोमवारे समाश्रयेत्।
गौतमीं सागरस्थां चेत् स्नानार्थं मास-मात्रकम्॥
स्नातमात्रं जनं यक्ष्मन् मा पीडय पतिष्यति॥ 48/52

3 'सूतिका पतिता तावत करमेणातिगामिनी'। 11/13
....
'तथा सृजन्ति नात्मानं तेन जीवामि माधव'॥ 11/16

4 'गृहीत्वा केशवो दिव्यं मणि शेषात् स्वयं प्रभुः।
....
पार्थः शम्भुप्रसादेन मणिना जीवितं पुनः॥ 40/15

5 'धृते मणौ कर्णपुत्रस्य शीर्ष
बाणैर्भिन्नं बभ्रुवाहस्य युद्धे।
तथा लग्नं चायसं चुम्बकेन
यथा पुरा घनघातैर्विशीर्णम्॥' 40/17

विस्ताररूप में समयानुकूल अपने अपने नामों से पृथक् पृथक् संहिताग्रन्थों की रचना की।

'गन्धर्वं नारदो वेदं भारद्वाजो पुनर्वसुम्।
देवर्षिचरितं गार्ग्यः कृष्णात्रेयश्चिकित्सितम्।।'

—महाभा. शां. प. ३.

प्राचीनकाल में ब्रह्माजी ने एकलक्षश्लोकों व एकसहस्र अध्यायों से युक्त एक ग्रन्थ रचा था जो अधुना अनुपलब्ध है। कालान्तर में आयुर्वेद की इन मुख्य शाखाओं की संहिताओं के प्रतिसंस्करण हुए। अधुना उपलब्ध संहिताओं में से कुछ प्रतिसंस्कृत, कुछ खण्डित व कुछ सङ्ग्रहीत हैं। चरक व सुश्रुत संहिताएं प्रतिसंस्कृत, मेल व काश्यप संहिताएं खण्डित व चतुर्थशताब्दी का 'अष्टाङ्गहृदय' आदि सङ्ग्रह ग्रन्थ हैं। इनमें से चरक, सुश्रुत व वाग्भट्ट के उक्त ग्रंथ 'बृद्धत्रयी' नाम से आज भी विख्यात हैं। मेल, हारीत व पाराशरादि के ग्रन्थों का क्रम लगभग सरीखा है—किञ्चित् फेरबदल अवश्य हैं।

भगवान् शङ्करोदित रसशास्त्र के ग्रन्थों का भी ऐसा ही इतिहास है। रस चिकित्सा में औषधियों की अल्पमात्रा होती हैं व सद्यफलप्रद हैं अतः इसकी कालान्तर में चिकित्सा शास्त्र में प्रधानता आ गई। कड़वे क्वाथ लेने का व रोगियों को बार बार उन्हें बनाने का झंझट दूर हो गया।

वाग्भट्ट के पश्चात् माधवाचार्य, भावमिश्र व शार्ङ्गधर के ग्रन्थों का प्रचार रहा। इनमें से प्रथम ग्रंथ केवल निदान निषयक लगभग छठी शताब्दी का है जो उस विषय का उत्तम ग्रन्थ माना जाता है "निदाने माधवः श्रेष्ठः"। शाङ्र्गधर व भावमिश्र के ग्रन्थों में काय रस चिकित्सा के मिले जुले सिद्धयोग दिये गये हैं। शाङ्र्गधर का समय चौदहवीं शताब्दी व भावमिश्र का सोलहवीं शताब्दी माना गया है। इन तीनों के ग्रन्थ "लघुत्रयी" नाम से आज भी विख्यात हैं। नवीं सदी के वृन्द तथा ग्यारहवीं सदी के चक्रदत्त आदिकों ने भी इसी पद्धति का अनुसरण किया है। इस युग में संग्रह चिकित्सा ग्रन्थों

की ही अधिकतर रचना हुई हैं। काय-शल्य व रस के समन्वयात्मक ग्रन्थों में बङ्गसेन, चक्रदत्त आदि हैं।

युगानुरूप, वैद्यों की अल्पायु, अल्पबुद्धि व प्रवृत्ति के अनुसार कालान्तर में केवल चिकित्सा ग्रन्थ, जिनमें अधिकतर सिद्ध-अनुभूत-शास्त्रोक्त योगों का सङ्ग्रह होता था, वे ग्रन्थ लिखे जाने लगे। चिकित्सा ही कल्पलतावत् सर्वार्थसाधिका तथा अन्य साधन इतने सघन नहीं हैं; चिकित्सा कभी भी निष्फल नहीं होती[1], अतः अल्पायुवान् मनुष्यों के हित के लिये, जिन्हें आर्षग्रन्थ पढ़ने पढ़ाने का समय भी सुलभ नहीं रह गया; सार्द्रहृदय विद्वानों ने प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर, ख्याति प्राप्त चिकित्सकों के अनुभूत योगों के सङ्ग्रहग्रन्थ रचे और वे उपयोगी भी सिद्ध हुए।

मध्ययुग के विस्तारवादी एवं विनाशकारी नीति वाले विदेशी आक्रमकों ने हमारे विज्ञान व उसके साहित्य को नष्ट किया, उनसे हमाम जलाये तो यह संग्रहग्रन्थ साहित्य भी केवल कतिपय विद्वानों के कण्ठस्थ रह गया। उन मनीषियों ने तन्त्रों को पुनः लेखबद्ध किया व अन्य ऐसे ही नये तन्त्र भी रचे। ऐसे सरल तन्त्र अति उपयोगी रहें। प्रस्तुत ग्रन्थ "आनन्दमाला" उसी माला की एक कड़ी है। रस व काय चिकित्सा का सुन्दर समन्वय इस ग्रन्थ में मिलता है। इसके प्रायः सभी योग आर्षग्रन्थोक्त हैं व चिकित्सकों द्वारा प्रशंसित हैं। इस ग्रन्थ के लेखनकाल के पश्चात् भी इसी प्रकार के ग्रन्थों की रचना का सिलसिला जारी रहा है। प्रसिद्ध ग्रन्थ भैषज्यरत्नावली आदि इसके उदाहरण हैं।

ग्रन्थकारः

इसके कर्त्ता यतीन्द्र आनन्दभारती हैं। ये शैव थे व श्री नृसिंहभारती के शिष्य थे। ग्रन्थारम्भ में इन्होंने अपने इष्टदेव शिव की स्तुति की है—

---

1 क्वचिदर्थः क्वचिन्मैत्री क्वचिद्धर्मः क्वचिद्यशः।
क्वचिदभ्यासयोगश्च चिकित्सा नास्ति निष्फला॥

'ओङ्कारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ओङ्काराय नमो नमः ।। 1 ।।'

ग्रन्थकर्त्ता ने तदनन्तर अपने गुरु की वन्दना की है—

'नाऽहं योगेश्वरो देवो न मनुष्यो न चात्मवित् ।
चरणेषु नृसिंहस्य पादरेणुरिव स्थितः ।। 1/7 ।।'

ग्रन्थ के प्रत्येक अधिकार के अन्त में "इति श्री परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीनृसिंहभारती तत् शिष्य परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीआनन्दभारती विरचितायां आनन्दमालायां............ अधिकारः" यह पुष्पिका मिलती है।

"आनन्दमाला" नाम से आद्योपान्त पुस्तक केवल एक ही उपलब्ध हुई है जो राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान में है। ग्रन्थकर्त्ता का एक अन्य ग्रन्थ जिसका नाम "आनन्दमाला रसशास्त्र" व कहीं कहीं "आनन्दमाला योगशास्त्र" है, वह ग्रन्थ संख्या 30301 रूपेण इसी प्रतिष्ठान में उपलब्ध है। इसका कलेवर पूर्वोक्त प्रति से लगभग आधा है और वह अपूर्ण है। इस खण्डित प्रति में काफी अंश पूर्वोक्त प्रति का ज्यों का त्यों मिलता है। पूर्व पुस्तिका को आगे "आदर्श", व द्वितीय को "ख" कहा जावेगा।

ग्रन्थकर्त्ता की एक अन्य प्रति इसी नाम से "भाण्डारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना" में उपलब्ध है किन्तु वह पाण्डुलिपि आदर्शपुस्तिका से भिन्न है। यह वास्तव में तीसरी ही कृति है। 74 पुटों की इस प्रति में केवल प्रथम पुट की प्रथम पङ्क्ति पर "आनन्दमाला" नाम अङ्कित है। अन्य पुटों पर इसके दो प्रकार के नाम मिलते हैं। कहीं "यन्त्ररस" व कहीं "जन्त्ररस" या "रस-जन्त्र" नाम है। इस प्रति का कुछ भाग आदर्श पुस्तिका या 'ख' प्रति में नहीं है। इसकी शेष साकल्यसामग्री कहीं कहीं आदर्श पुस्तिका के मेटर से भिन्न भी है। वहां इसकी ग्रन्थ संख्या 922 ऑफ 1891-95 है। क्योंकि इसके कुछ योग आदर्श प्रति में भी हैं, अतः इस पाण्डुलिपि का भी इस सम्पादन में उपयोग किया गया है। इसे आगे 'ग' प्रति कहेंगे।

आदर्श प्रति के कई योगों के नीचे राजस्थानी भाषा से मिलती जुलती भाषा में भाषान्तरभी है। टीकाकार कौन थे ? स्वयं ग्रन्थकार अथवा अन्य

यह इस ग्रन्थ से नहीं कह सकते है। इस प्रति में कुछ योग केवल गुजराती मिश्रित राजस्थानी भाषा में भी लिखे गिनते हैं। ऐसे योग 'ग' प्रति में भी हैं जहां कोई टीका नहीं मिलतो। हमारी विनम्र राय में टीकाकार कोई अन्य विद्वान् होने चाहिये व भाषा में लिखे योग उन्हीं के हो सकते हैं।

ग्रन्थकार का समय

आदर्श एवं 'ख' प्रति में कहीं भी इस ग्रन्थ का रचनाकाल नहीं मिला किन्तु 'ग' प्रति में पृ. 36 (i) की पङ्क्ति 6 पर "संवत् 1717 वृषे श्रावण सुदि 9 आदित्यवासरे" लिखा है। यह ग्रन्थ के केवल मध्य भाग ही पर लिखा है अतः इसे ग्रन्थकर्ता का समय नहीं माना जा सकता है, वह भी तब, जबकि ग्रन्थकर्ता संस्कृतज्ञ थे और "वृषे" व "सुदि" बोलचाल की अशुद्ध भाषा के शब्द हैं। यह समय 'ग' प्रति के पृ. 37 तक के भाग का प्रतिलिपि काल ही हो सकता है।

पानीयगुणकथन विषयक पहला श्लोक "पानीयं तु पानीयं" प्राचीन विद्वान् अरुणदत्त के संग्रह-श्लोकों में ज्यों का त्यों मिलता है। अतः हमारे ग्रन्थ-कार का समय "अरुणदत्त" के समय के बाद का, ना तो निश्चितरूपेण है। अरुणदत्त का समय 15 वीं सदी का माना जाता है। आदर्श पुस्तिका का प्रतिलिपि काल संवत् 1853 है। अतः ग्रन्थकार का समय 17वीं शताब्दी का का प्रारम्भ माना जा सकता है। प्रमाणों के अभाव में निश्चित काल कहना सम्भव नहीं। 'ग' प्रति के विक्रम संवत् '1717' का ई. सन् 1660 होता है।

तीनों ही प्रतियों में अनेक स्थलों पर भ्रष्टपाठ हैं; अतः उनके यथामति शुद्धरूप कोष्टकों में दिये गये हैं। एतदर्थ हमारे इसी प्रतिष्ठान में उपलब्ध दो अप्रकाशित ग्रन्थ (1) जोधपुर राज्य के राजवैद्य लोकनाथ विरचित "मल्ल प्रकाश" (लगभग 1553 AD) व जोधपुर के व किशनगढ के राजवैद्य मगनीराम विरचित "रसकल्पलता" (लगभग 1800 ई.) एवं चिकित्सा-सङ्ग्रह-ग्रंथ-युग के अन्यान्य प्रकाशित प्रसिद्ध ग्रंथों की भी सहायता ली गई है। उन ग्रन्थों के सन्दर्भ यथास्थान टिप्पणी में दिये गये हैं।

ग्रन्थ के अधिकार (सर्ग)

इसे 15 अधिकारों में विभक्त किया गया है। वे हैं क्रमश— (1) पानीयगुणवर्णन तथा क्वाथाधिकार, (2) चूर्ण, (3) गुटिका, (4) लेपाधिकार, (5) अवलेहाधिकार, (6) आसवाधिकार, (7) घृताधिकार, (8) तैलाधिकार, (9) स्त्री व शिशु चिकित्सा अधिकार, (10) विरेचनाधिकार, (11) अञ्जनाधिकार, (12) स्वतंत्ररूपेणनस्याधिकार, (13) स्वेद व रक्तमोक्षाधिकार, (14) स्नेहाधिकार तथा (15) धातूपधातुशोधनमारणाधिकार। प्रथम चार अधिकार विशालकाय हैं व अवशिष्ट छोटे-छोटे हैं। सभी अधिकारों में प्राय: अनुभवसिद्ध शास्त्रीय योग हैं जो तत्कालीन अन्य प्रसिद्ध तन्त्रों में भी किञ्चित् पाठभेद से मिलते हैं। पाठान्तरों का, ग्रन्थ की उपादेयता बढ़ाने की दृष्टि से टिप्पणिरूपेण समाविष्ट किया गया है।

पहला अधिकार

इसमें सर्वप्रथम शीतलजल व क्वथितजल गुणविवेचन, पृथ्वी पर गिरे, संगृहीत वर्षाजल की सविषता व उसकी शुद्धि का सुश्रुत-सम्मत उपाय, ऋतुभेदानुसार कूप, तडाग व नदीजल के सामान्य गुण, देश की प्रसिद्ध नदियों— ताप्ती, गौतमी, नर्मदा, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, चर्मण्वती आदि के विशेष गुण बताये हैं। राजस्थान में उपलब्ध चम्बल के जल का वर्णन करते हुए उसे पित्तकर कफ-वातभञ्जक-ज्वरहर-अग्निकर व शूरवीरतावर्द्धक कहा है। यह ग्रंथकर्त्ता के राजस्थानी होने का संकेत माना जा सकता है।

अनेक रोगों यथा पित्त, कुष्ठ, लूता, गण्डमाला, कामला, हलीमक, रक्तपित्त आदि में शीतलजल ही देने तथा प्रतिश्याय, पार्श्वशूल, गलग्रह, आध्मान, स्तिमितकोष्ठ, नवज्वर, हिक्कादि रोगों एवं स्नेहपीत रोगी को शीतलजल कदापि न देने का स्पष्ट विधान दिया है। ऋतुभेद से से वर्षा में अष्टावशिष्ट, शरद् में षड्भागावशिष्ट, हेमन्त में पञ्चभागावशिष्ट तथा शिशिर-वसंत व ग्रीष्म में अर्द्धावशेषित जलप्रयोग को रोगियों के लिये हितकारी बताया है। विविध रोगों में पादहीन से षोडशांश शेष क्वथितजल प्रयोग विधि बताई है। खड़े खड़े पानी पीने, सोये सोये पानी पीने को रोगोत्पाद व दिन में सूर्यास्त तक उपयुक्त मात्रा में पानी पीना लाभकर व सूर्यास्त

के पश्चात् पानी पीना अहितकर बताया है। चरक महर्षि द्वारा उपदिष्ट, हेम, रजत या मृत्पात्र में रखकर औषधि सेवन का विधान, मिट्टी काष्ठ के बने बर्तनों से रोगों का प्रभाव, एक बार गरम करके शीतल हुए पानी, व्यञ्जन, तैल, घी व कषाय को पुनः तप्त करने के अवगुणों का वर्णन आदि अनेक उपयोगी उपदेश ग्रंथकार ने दिये हैं।

फिर 'षडङ्गपानीय' नामक सुप्रसिद्ध योग को चरक के अनुसार कहा गया है। वृद्धवैद्यपरम्परानुसार छहों द्रव्यों को मिला कर। 'कर्ष लेकर'। प्रस्थ जल में उबालना चाहिये। आधा रहने पर छान कर सुरक्षित रख लेना चाहिये। ज्वर रोगियों के लिये यह अमृतोपम है।

तदनु, इसी अधिकार में 55 बहु अनुभूत, शास्त्रीय, उत्तम व सिद्ध क्वाथ-योग दिये गये हैं। सभी प्रकार के ज्वर, सन्निपात, अतिसार, श्वास, कास, अरुचि, पाण्डु, प्रदर, गुल्म, वातव्याधि, व रक्तविकार आदि प्रचलित रोगों पर ये अव्यर्थ योग हैं। प्रमुख नाम दशमूलादि, वृद्धक्षुद्रादि, देवदार्व्यादि, दार्व्यादि, मञ्जिष्टादि, वृहद्रजन्यादि, कट्फलादि, रास्नादि, भाषादि एवं जातीपञ्चादिक्वाथ हैं।

द्वितीय चूर्णाधिकार

इस अध्याय में 46 सुप्रसिद्ध, अनुभूत व शास्त्रोक्त चूर्णों के योग दिये गये हैं। 'सुदर्शन चूर्ण' हमारे ग्रंथकर्त्ता का योग उत्तम है। अन्य ग्रन्थों में इसके पाठ-भेद भी मिलते हैं। जहां एक ग्रन्थ में इसके घटक 54 हैं वहीं अन्यत्र 43, 53, 42, 51 व 52 हैं। इस विसङ्गति को हमने परिशिष्ट 1 में ग्रन्थसन्दर्भों सहित स्पष्ट किया है। जहां घटक-भिन्नता है वह भी इससे स्पष्ट हो जाती है। हमारे ग्रन्थकार का योग बहुशोनुभूत है। यह केवल 42 घटकों से युक्त है। अन्य सुप्रसिद्ध चूर्णों के नाम—लवणभास्कर, पारद, गङ्गाधर, चन्दनादि, जातीफलादि, नवायस, कामदेव,(अकारो करभादि), कर्पूरादि, ताल्लीसादि, हिङ्ग्वष्टक आदि हैं। यह रसचिकित्सा व कायचिकित्सा का मिश्रित अध्याय है।

तृतीय गुटिका-पाकाधिकार

इस अधिकार में रसशास्त्र तथा कायचिकित्सा ग्रन्थों के 2 सुप्रसिद्ध, वहुशोनुभूत सिद्धयोग गुटिकाओं के दिये गये हैं । इसका प्रथम योग ,वृद्धकामेश्वर गुटिका' है जिसमें वनौषधियों के अतिरिक्त स्वर्ण, पारद, नाग, रौप्य, माक्षिक, वङ्ग, अभ्रक, ताम्र, लोह आदि भस्मों का भी समावेश है । योग उत्तम है व अन्य तन्त्रों में भी मिलता है । चन्द्रप्रभा, योगराज-गुग्गुलु, मरिच्यादि, एलादि, रामबाण, शङ्खवटी, अजीर्णकण्टक, नागार्जुनी, सञ्जीवनी, चित्रकादि. सूर्यप्रभा, शिवगुटिका, निराम गुटिका आदि अति प्रचलित योग इस अध्याय में हैं । इन 25 योगों के पश्चात् इसमें केवल पूर्वोक्त भाषा में लिखे सात योग मिलते हैं । 'ग' प्रति में इनके अतिरिक्त 4 योग मिलते हैं जिनमें से 2 योग श्लोकबद्ध व सटीक हैं ।

ये योग अधिकतर फिरङ्गरोग पर हैं । यह रोग विदेशों से आया था व व उस काल में बहुतायत में मिलता था ।

तत्पश्चात् इसी अध्याय में 9 सुप्रसिद्ध पाकों के योग हैं । इनमें बृहत् सौभाग्यशुण्ठी, सुरतिवल्लभपूग, खण्डपिप्पली, वृद्धनारिकेलखण्ड, आम्रखण्ड, वृहच्छूरणपाक आदि उत्तमश्रेणी के बहुशोनुभूत योग हैं । 2 योग वर्धमान पिपप्ली व रसोनपिण्ड के भी इसी अध्याय में हैं । चिकित्सा जगत में इनकी ख्याति है ।

चतुर्थ पञ्चम अधिकार

इसमें लेपों व अवलेहों का वर्णन है । आदर्शपुस्तिका में लेपों के शास्त्रीय व अनुभूत 8 योग हैं किन्तु 'ग' प्रति में पूर्वोक्तभाषा में लिखे तीन अतिरिक्त योग भी हैं। उन्हें टिप्पणिरूपेण दिया गया हैं । लेपवर्णन के पश्चात् आदर्श पुस्तिका में 16 योग विविध अवलेहों के मिलते हैं किन्तु 'ग' प्रति में इनके अतिरिक्त 2 और अवलेह भी कहे गये हैं। इन्हें भी यहाँ टिप्पणिरूपेण प्रदर्शित किया गया है । अवलेहों के सिवाय 3 योग शंखद्राव व जम्बीरद्राव के 'ग' प्रति में मिलते हैं । आदर्श पुस्तक में ये योग व आसवाधिकार में हैं अतः इनकी चर्चा उस में ही की गई है ।

इस अधिकरण के लेपों में 'दशाङ्गलेप' आदि प्रसिद्ध व बहुशोनुभूत योग है। अवलेहों में रक्त व चर्मरोगों पर अव्यर्थ योग 'महामल्यातक लेह' है जो अत्यन्त विश्वसनीय शास्त्रीय उत्तम योग है। दुष्टप्रतिशयाय पर अनुभूत योग 'अगस्त्य हरीतकी', कास श्वास पर 'भाङ्र्ग्यादि अवलेह', 'कण्टकाया-वलेह', 'च्यवनप्राश', वासावलेह कूष्माण्डावलेह आदि आयुर्वेद के उत्कृष्ट योग इसमें भरे हैं।

छठा अधिकार

इसीमें आगे आसवों व फांटों के योग हैं। आदर्श पुस्तक में आसवों के केवल 3 योग हैं किन्तु 'ग' प्रति में इनके अतिरिक्त 1 और योग है। ये सभी योग उत्तम श्रेणी के व बहुत उपयोगी हैं। फांटों के 2 योग केवल 'ग' प्रति में हैं व पुटपाकों के 3 योग भी 'ग' प्रति में ही है जिन्हें टिप्पणिरूपेण उद्धृत किया गया है। अवलेह कथन के पश्चात् एक पुष्पिका 'इति श्री..........अव-लेहाधिकार:' मिलती है किन्तु अवलेहों के अन्त की पुष्पिका में 'इतिश्री...... आनन्दमालायां अवलेह, आसव फांटाधिकार' पाठ मिलता है। क्योंकि आसव केवल 3 ही योग हैं। अत: मालूम होता है कि ग्रंथकार का आशय इन्हें अवलेहाधिकार ही में कहने का था। अस्तु हमने इन्हें इसी अधिकार में लिया है।

सातवां अधिकार

आदर्श पुस्तिका में केवल 4 घृतयोगों का छोटा अध्याय दिया गया है जिसमें कल्याणघृतादि उत्तम योग हैं। 'ग' प्रति में इनके अतिरिक्त पांच और योग हैं। पहले दो योग आमिषयुक्त हैं, यथा— (1) छागमांसाद्यं घृतम् हैं व अवशिष्ट योग निरामिष हैं।

आठवां अधिकार

इसमें विविध तैल योग हैं। आदर्श पुस्तक में 10 योग ही हैं किन्तु 'ग' प्रति में सात और योग मिलते हैं। जिन्हें टिप्पणिरूपेण उद्धृत किया गया है। आदर्श पुस्तक के (1)वृद्धनारायण तैल, (2) विषगर्भ तैल, (3) षड्बिन्दु-तैल, (4) नारायण तैल, (5) बृहन्माषादि तैल, (6) सप्तशतिकप्रसारिणी

तैल उत्तमश्रेणी के प्रचलित व अनुभूत सिद्धयोग हैं। 'ग' प्रति प्रोक्त लाक्षादि भी इसी श्रेणी का सिद्धयोग है। इसका 'छुच्छुन्दरी तैलम्' नामक योग परीक्षा करने योग्य है। भावप्रकाश व चक्रदत्त में भी यह योग आया है है। यह सामिष है।

9-10 वा अधिकार

इसमें ग्रन्थकार ने स्त्रीरोगों पर 2 ही योग कहे हैं। पहना प्रदररोग पर व दूसरा पुत्रकर योग है। प्रथम योग भैषज्यरत्नावली तथा भावप्रकाशादिकों में भी है, किन्तु दूसरा प्रयोग 'वन्ध्याजीवनम्' में मिलता है। तत्पश्चात् इसी अधिकार में ग्रन्थकार ने शिशु चिकित्सा के केवल 2 योग एक ही श्लोक में कह कर पञ्चकर्म विषयक वर्णन किया है। इसमें वमन-विरेचन के लिये योग्य व अयोग्य व्यक्ति व वमन-विरेचन-शिरामोक्षजु व काल निर्देशित किये हैं। विरेचनार्थ पञ्चसमचूर्ण, अभयादिमोदक, स्नुहीघृत, एरण्डतैल, जैपालादियोग, इच्छाभेदी रस, नाराचरस आदि उत्तम योग लिखे हैं।

11 वा अधिकार

इसमें नेत्ररोग संबंधी एक नेत्रधोवन योग, दो दृष्टिवर्धक योग, वर्तियां व अजंन दिये हैं। उन्माद व अपस्मारहर प्रचेतनीगोलीनामक एक योग, अञ्जननिषेध विषयक व ऋतुओं के अनुसार अञ्जनकरणविधि कहे हैं।

12 वा अधिकार

इसमें ग्रन्थकर्त्ता ने नस्य के पांच भेद, प्राणरन्ध्र से उषा-पान, नस्य सेवन के लाभ बताकर तीन प्राचीन नस्य योग, अर्धावभेदक शिर-शूल-प्रतिशाय व अवबाहुक रोगों पर कुछ नस्य प्रयोग दिये हैं। नस्य के लिये उपयुक्त व अनुपयुक्त रोगी औषधमात्रा आदि का सूक्ष्मवर्णन किया है।

13 वा अधिकार

इसमें त्रयोदश स्वेद प्रकार, स्वेद के लिये उपयुक्त व अनुपयुक्तरोगीवर्णन देकर शास्त्रीय बहुशोनुभूत योग दिये हैं—यथा—माहेश्वरधूप, महाधूप, कार्पासादिधूप व सुगन्धधूप।

14 वा अधिकार

दोषानुसार स्नेहपान, उसका समय, अनुपान तथा मात्रा आदि उपयोगी

बातें भी सूक्ष्मता से कही हैं। तत्पश्चात् शिरोबस्ति, उत्तरबस्ति तथा रक्त-मोक्षण विधान सूक्ष्मतया देकर ग्रन्थ समाप्त किया है।

संक्षेप में, 'आनन्दमाला' के रचयिता श्री आनन्दभारती प्राचीनकाय व रसचिकित्सा ग्रन्थों के वेत्ता थे, तथा साथ ही सफल चिकित्सक भी थे। उन्होंने चिकित्सा ग्रन्थों का आलोडन करके युगानुरूप इस ग्रन्थ की रचना की। योग प्राय: प्रभावी हैं व ग्रन्थ की भाषा सरल है। निदान, रोगलक्षण व विकृतिविज्ञान के सामान्य ज्ञान वाले भी इस पुस्तक में वर्णित सिद्धयोगों की सहायता से सफल चिकित्सा कर सकते हैं। इस प्रकार यह ग्रन्थ अतीव उप-युक्त व उपयोगी है व सङ्ग्रहालयों तथा वैद्यों द्वारा ग्राह्य है। इसीलिये मान्य-निदेशकजी, राजस्थान प्राच्यविद्याप्रतिष्ठान ने उसका सम्पादन करवाया है।

इसके सम्पादन कार्य में मुझे स्वर्गीय पं. श्री रमानन्दजी शास्त्री व आदरणीय श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी से बहुत सहायता मिली है। एतदर्थ मैं उनका भी कृतज्ञ हूं।

मनुष्यमात्र स्वभावत: अल्पज्ञ होता है, अत: ऐसी उपयोगी पुस्तक का सर्वथा दोषमुक्त व त्रुटिशून्य सम्पादन सरल नहीं था। पाण्डुलिपियों में प्रति-लिपि कर्त्ताओं के प्रमाद अथवा अज्ञानवश प्रचुरमात्रा में अशुद्धियों का होना तथा उनका सम्मार्जन भी सहज कार्य न था। प्रतिष्ठान के उल्लेखनीय सह-योग ही से यह ग्रन्थ भली प्रकार सम्पादित होकर पाठकों के हाथ में है। बहुत प्रयत्न करने पर भी त्रुटियों का रह जाना सम्भव है अत: दृष्टिदोषादि कारणों से रही अशुद्धियों को हमारे विवेकशील विज्ञपाठकगण शुद्ध करके पढ़ने की कृपा करेंगे ताकि भविष्य में इनका सम्मार्जन हो सके।

अन्त में गीर्वाणवाणी में एक आशीर्वादात्मक पद्य प्रस्तुत कर यहीं विश्राम लेंगे।

अमृतकलशमुच्चैस्सन्धरन् पाणिपद्मे,
जगति जनहितायाऽम्भोधिमध्येऽवतीर्णः।
गतिरगतिगतानां गीतिभिर्गीयमानो,
वितरतु सुखलक्ष्मीं विष्णु-धन्वन्तरिर्नः ॥

विदुषामनुचरः
प्राणाचार्यबुद्धिप्रकाशशर्म्मा

अनुक्रम

शुद्धि-पत्र

अशुद्ध	पृष्ठ	शुद्ध
प्रथमः परिशिष्टः	1, 3, 5, 7	प्रथमोऽधिकारः
पञ्चमोऽधिकारः	216-232	षष्ठोऽधिकारः
	233-245	सप्तमोऽधिकारः
	246-263	अष्टमोऽधिकारः
द्वादशोऽधिकारः	309	चतुर्दशोऽधिकारः

श्रीआनन्दभारतीयतीन्द्र-गुम्फिता

आनन्दमाला

[प्रथमोऽधिकारः]

।। श्रीगणेशाय नमः ।। श्रीधन्वन्तरये[1] नमः ।। श्रीगुरुभ्यो[2] नमः ।।

[मङ्गलाचरणम्]

ओङ्कारम्बिन्दुसंयुक्तन्नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदम्मोक्षदञ्चैव ओङ्काराय नमो नमः ।।१।।*

जयति जगति विष्णुः श्रीनृसिंहाख्य एष[3],
दितिजदनुजदावज्वालनान्तः[4]कृशानुः ।
सकलनिजजनानां ज्ञानविज्ञानहेतोः[5],
प्रकटितनिजदेहन्तं हरिं सन्नतोऽस्मि ।।२।।

श्रीनृसिंहन्नमस्कृत्य[6] देवदानववन्दितम् ।
जगत्स्थानमिवाधारं[7] कारणम्परमेश्वरम् ।।३।।

माता नृसिंहश्च[8] पिता नृसिंहो[9] भ्राता नृसिंहश्च[8] सखा नृसिंह[9]ः ।
स्वामी नृसिंहश्च[8] गुरुर्नृसिंहो[10] *यं यं विलोके स च मे नृसिंहः ।।४।।*

आनन्दभारतीनाम्ना यतीन्द्रेण प्रकाशिता ।
आनन्दार्थम्पण्डितानामानन्दस्य तु मालिका ।।५।।

---

1 क. धनंतराय । 2 क. गुरूभ्यौ । *शिवषडक्षरस्तोत्रे एष प्रथमः श्लोकः प्रसिद्ध एव । 3 क. एषो । 4 क. ०ज्वलनांतः । 5 क. हेतो । 6 क. नमस् । 7 क. ०मिराधादि । 8 क. ०स्य । 9 क. नृसिंह । 10 क. गुरुनृसिंह । *क. यतो ततो दृश्यति तं नृसिंह ।

आनन्दमाला सुखकन्दमाला, मन्दारमाला रतभृङ्गमाला ।
विद्योतमाला प्रविलासमाला *विमुक्तमाला बुधकण्ठमाला* ।।६।।

नाहं[2] योगेश्वरो देवो न मनुष्यो न चाऽऽत्मवित् ।[3]
श्रीनृसिंहपदाम्भोजरेणुः स्याञ्च मुदा सदा ।।६।।

अथ पानीयगुणा[4] लिख्यन्ते[5]

पानीयं न तु पानीयं पानीयेऽन्यप्रदेशजे[6] ।
अजीर्णे क्वथितं[7] चाऽऽमे[8] पक्वे[9] जीर्णेऽपि[10] नेतरत्[11] ।।१।।

[व्यापन्नजलसंस्काराः]

नानादेशोद्भवं सारं[12] सविषं भवति ध्रुवम् ।
स्वच्छं[13] कतकमुक्ताऽऽद्यैः शीतं दोषाघ्नं क्वचित् ।।२।।

[अथ ऋतुविशेषे जलविशेषगुणाः]

वर्षावसन्तसमये कौपं वारि[15] प्रशस्यते ।
अम्भः शरदि ताडागं [16]नादेयमृतुषु त्रिषु[16] ।।३।।

[अथ कूपोदकगुणाः]

कूपोदकं वातकफापहारि[17] पित्तप्रवृद्धावपि[18] चाग्निकारि[19] ।
बलाधिकारि प्ररतानुसारि वर्षावसन्तेषु च प्राणधारि[20] ।।४।।

1क. विद्युत । *-*क. विमुक्तमाला नमतु प्रमाला । 2क. नांह । 3क. आत्मवित । 4क. ०गुण । 5क. लिष्यते । 6क. ०प्रवेशयेत् । 7क. क्वथिते । 8क. वामि । 9क. पक्वं । 10क. ०च । 11क. नेतरं । 12क. सार । ग्रन्थान्तरेषु 'धारं' । 13क. स्वछं । 14क. मुक्ताद्यै । 15क. वार । 16-16क. 'नादेयमृत्युषु । 'नादेयमृतुषु त्रिषु' इति पाठः योगरत्नाकरेऽपि दृश्यते, किन्तु तत्र कस्माद्ग्रन्थादयमुद्धृत इति नैव निर्दिष्टम् । अन्येषाम्बहूनां विपश्चिताम्मते वसन्तग्रीष्मर्त्तुकाले दोषाणाम्बलाबलहेतुत्वान्नादेयजलस्याग्राह्यता दृश्यते-यतः—
'नादेयं वारि नादेयं वसन्तग्रीष्मयोर्बुधैः ।
विषवद्वनवृक्षाणां पत्राद्यैर्दूषितं यतः ।।'
17ख. ०हारी । 18क. पितात्प्रवृद्धेष्वपि, ख. पित्तात्प्रवृद्धेऽप्यपि । 19क. दग्निकारि, ख. दग्निकारी । *-*क. वलाधिकारसुरतानुसारी । ख. बलाधिसुरतानुसारी । 20. ०धारी ।

पाषाणजातेष्टक[1]-कूपयोर्वै[2] *क्षारं बलासारि च वातहारि* ।
[3]मिष्टानुजाते त्रितयापहारि[3] [4]वह्नेः प्रवृद्धावथ प्राणधारि[4] ॥५॥

[तडागजलगुणाः]

तडागतोयञ्च शरदृतौ वै[5] [6]पीतञ्च पित्तस्य[6] विनाशकारि[7] ।
ज्वरापहारि [8]रुधिराणि हन्यात्[8] *कफापहं वातकरञ्च पुंसाम्* ॥६॥

[ऋतुप्रभावेन जलगुणाः]

हिमशिशिर-सुशीते[9] पानयोग्यं[10] नदीनां[11],
विविधगदनिहन्तृ[12] स्नानमुष्णोदकेन[13] ।
पिबति[14] यदि[15] नरो[16] वै वार्षिकं[17] शारदेषु
भवति गदमनेक[18]ञ्चाग्निमान्द्यं[19] करोति ॥७॥

[20]कृष्णात्रेयात्—*

[पश्चिमसमुद्रगाणां सरितां नामानि]

---

1 क. जातिष्वपि । ख. जातेष्टपि । 2 क. कूपयोवै, ख. कुपयोश्च । ••क. तद्वै विलासेष्वपि वातहारि, ख. तत्वलासेष्मपि वातहारी । 3-3क. दूष्टानुजातेत्रिणचोपहारि, ख. इष्टानुजाते त्रितयोपहारी । 4-4 क. वह्निप्रवृधेषु च, ख. वह्निप्रवृद्धेषु । ख.० प्रांणधारी । 5 क. सरधिती च, ख. सद्दतौ च । 6-6 क. पित्तं च पितेन, ख. पीतं च पित्तेन । 7 क. विनासकारि, ख. विनाशकारी । 8-8 क. रुधिरान्निहन्या, ख. रुधिरान्निहन्यांत्, अत्र रक्तपित्तानीत्याशयः । ••क.ख. कफेषु वातेषु करोति पुंसां । 9 क. बसन्तं, ख. वसंत । 10 क. ०योगं । 11 क.ख. नदीषु । 12 क. ख. निहन्यात् । 13 क. ष्नानपुण्योदकेषु, ख. स्नानपुन्योवृकेषु । 14 क. पिवति, ख. पिवत । 15 क. पद । 16 क.ख. नराणां । 17 क. वार्षिक । 18 क.ख. ०मनेकम० (छन्दोभङ्गः स्यात्) । 19 ख. ०माद्यं । 20 क. कृष्णत्रेयात्, •कृष्णात्रेयः भगवान् पुनर्वसु—आत्रेयः—तद्यथा—

"त्रित्वेनाष्टौ समुद्दिष्टाः कृष्णात्रेयेण धीमता" (चरक०)

'कृष्णात्रेयं पुरस्कृत्य............'(भेलसंहिता)

'देवर्षिरचितं गार्ग्यः कृष्णात्रेयश्चिकित्सितम्' (महाभारते)

चरके तु नैवायं श्लोको लभ्यते किन्तु हारीतसंहितायामात्रेयकथितोऽयं दृश्यते ।

तापी ताव्या[1] च गोलोमी-गोतमी-पुण्यभावनाः[2] ।
सरस्वतीयुता नद्यो नर्म्मदा[3] पश्चिमानुगाः[4] ।।८।।

[गङ्गाजलगुणाः]

[5]गङ्गोदकामृतं नाम[5] त्रिदोषशमनन्तथा[6] ।
[7]स्नाने पाने पवित्रञ्च[7] देवानामपि दुर्लभम् ।।९।।

[कालिन्दीजलगुणाः]

कालिन्दी[8] वातला रूक्षा कफघ्नी पित्तहारिणी[9] ।
अग्निसन्दीपनी[10] हृद्या[11] बल-पुष्टिविवर्द्धिनी[12] ।।१०।।

[चर्मण्वतीजलगुणाः]

चर्मण्वती[13] पित्तहरा[14] विभाति[15], [16]कफापहृद्वातविनाशकृच्च ।[16]
[17]ज्वरापहार्य्यग्निप्रवर्द्धिनी च[17] *रते रणे च प्रभवेत्सुधीरा ।।११।।*

[सामान्यनदी-ताडागजलगुणाः]

---

1 ख. तापा । हा० सं० 'गोपति' एतदेव पदं समीचीनम् । 2 क.ख. ०भाजना । 3 क. नवंदा, ख. नर्मदा । 4 ख. पश्चिमोनुगा, क. मश्चिमानुगा । 5-5 क.ख. 'अमृतं गंगोदकं नाम' इति पाठे छन्दोभङ्गः स्यात् । 6 क. ०समनस्तथा, ख. ०शमनस्तथा । 7-7 क. श्नान पान पवित्रं च, ख. स्नान पान पवत्रं । 8 ख. कालंदी । 9 क. पित्तकारिणी, ख. पित्तकारणी । 10 क.ख. ०संदीपनं 11 क.ख. हृद्यं । 12 क.ख. ०विवर्धनं । 13 क. चर्म्पन्वती, ख. चर्मन्वती । 14 क.ख. पित्तकरा । 15 क. भवंति, ख. भवंती । 16-16 क. 'कफेषु वातेषु विनासकारि,' ख. 'कफेषु विनाशकारी । 17-17क. 'ज्वरापहारीरग्नि प्रवर्द्धनीच ? (छंदोभङ्गः), ख. 'ज्वरापहारी' ।। अग्निप्रवर्धनी । *-*क. 'सुरते रणे शूर, भवन्ति वारा,' ख. 'सुते रणे सुरु भवन्ति धीरा ।'

नादेयं वातलन्तोयन्ताडागं[1] कफपित्तजित् ।

[कूप-वापीवारिगुणावगुणाः]

द्विदोषहरणी[2] वापी कूपवारि प्रशस्यते[3] ।।१२।।

[जलजातयः]

ब्राह्मणं प्रवहत्तोयं ताडागं क्षत्रियं जलम् ।
वापीकूपेषु तद्वैश्यं गृहभाण्डेषु[4] शूद्रवत्[5] ।।१३।।

[शीतलजलगुणाः]

पित्ते कुष्ठे[6] च लूतायां[7] गण्डमालासु[8] कामले ।
हलीमके रक्तपित्ते शीतमम्भः[9] प्रशस्यते[10] ।।१४।।

[शीतलजलनिषेधः]

पार्श्वशूले[11] प्रतिश्याये वातरोगे[12] गलग्रहे[13] ।
आध्माने स्तिमिते[14] कोष्ठे[15] सद्यः[16] शुद्धौ[17] नवज्वरे[18] ।।१५।।*

हिक्कायां स्नेहपीते च[19] शीताम्बु[20] परिवर्जयेत् ।

[अल्पजलपानविषयः]

नेत्ररोगे प्रतिश्याये[21] पानीयं मन्दमाचरेत् ।।१६।।

[उष्णोदकमाह]

---

1 क. ०तडागं । 2 क. त्रिदोषकरणी । 3 क. प्रसश्यते । *-*क. वहंति ब्रह्मणं तोयं ताडागेष्यंत्रियं जलं, ख. ०क्षित्रिय० । 4 ख. ०भांडेसु । 5 ख. सुद्रवत् । 6क. कुष्ठेषु च, ख. कुष्ठे । 7ख. षुतायां । 8क ख. ०मालां च । 9ख. सीतमंम । 10 प्रसस्यते, ख. प्रशसिते । 11ख. पार्शस्तले । 12ख. वारोगे । 13ख. ०गृहे । 14 क. त्सिमिते, ख. स्तमिते । 15 क.ख. कोष्टे । 16 क. सद्य, ख. सघ, 17ख. शुधौ । 18क. नवज्वरैं, ख. न च ज्वरे । * अस्मात्परं भावप्रकाशादि-ग्रन्थेषु 'अरुचि-ग्रहणीगुल्मश्वासकासेषु विद्रधौ' इति विशेषः पाठः ।
19 क. श्नेहपितं च, ख. स्नेपीत्ते चा । 20ख. शीतांवु । 21 क. प्रतिस्याये ।
22 ख. गलगृहे ।

यत्क्वाथ्यमानं[1] निर्वेगं निस्फेनं[2] निर्मलं भवेत् ।
तत्पादहीनं[3] वातघ्न[4]मर्द्धहीनन्तु[5] पित्तजित्[6] ।।१७।।

कफघ्नं पादशेषस्थं[7] पानीयं लघु दीपनम् ।
एकादि[8]-षोडशान्तन्तत्[9] सङ्ग्राहि-कारणं[10] परम् ।।१८।।

निर्वाते मृण्मये[11] पात्रे [12]काष्ठजे शाकनिम्बयोः[12] ।
बब्बूल[13]-बिल्व-खदिरै[14] [15]र्निर्मिते चातिसारजित्[15] ।।१९।।

[अथ शीतलकरणविधिः]

धारापातेन विष्टम्भि दुर्जरं पवनाहतम् ।
स्वाङ्गशीतलमम्भः स्यात् त्रिदोषघ्नं सुखावहम्[16] ।।२०।।

[जलपानविधिः]

[17]उत्ताने शयने[17] पेयं कार्श्य[18]मन्दाग्निदोषकृत् ।
वामदक्षिणपार्श्वाभ्यां पिबेत्तोयं[19] सुखावहम् ।।२१।।

[20]पिबेद्घटसहस्राणि[21] यावन्नाऽस्तमितो[22] रविः ।
अस्तमिते[23] पुनः सूर्ये बिन्दुरेको घटायते ।।२२।।

1क. क्वाथमानं । 2क.ख. निफेनं । 3ख. हीन । 4क.ख. वातघ्नं । 5क. अर्द्धहीन । ख. महीनं । 6क. पितजित । 7क. सेषस्बः । 8.क.ख. एकादौ 9क. सतसहश्रांतं, ख. शतसहश्रंतु । 10-10. संगृहिकरणं । 11क. मृत्मये, ख. मृन्मये । 12-12 क. काष्टौ वासार्कनिम्बजै, ख. काष्टैर्वा सार्कं निंबजै ।। वासाऽर्ककाष्ठस्य पात्रासम्भवादत्र 'शाकनिम्बयो': इत्येवोपात्तः । शाकः भूमिसहः, सागौन इति लोके । 13 क. ०बंबूर,० ख. ०ववूल्व० । 14 क. ०वदिरै, ख. ०षदिरजो । 15-15 क. योजयेदतिसारिणा, ख. जयेदतिसारिणं । 16 क. सुषांवहं । 17-17 क. उतानसयने । 18 क. कार्श्यं । 19क. पिवेतीयं । 20 ख. पीवेतघ० । 21 क. सहश्रंतु । 22क. यावन्नास्ति० । 23 क. अस्तिमिते ।

अत्यम्बुपानान्न विपच्यतेऽन्नं[1] निरम्बुपानाच्च[2] स[3] एव दोषः।
तस्मान्नरो[4] वह्निविवर्द्धनाय मुहुर्मुहुर्वारि[5] पिबेदभूरि[6] ॥२३॥

[औषधग्रहणविचारः]

औषधं[7] हेमरजत[8]-मृद्भाजनपरिष्ठितम् ।
उपविश्य शुचिः शान्तः[10] प्रसन्नवदनेक्षणः[11] ॥२४॥

[जलपानावश्यकता]

पानीयम्प्राणिनाम्प्राणो विश्वमेव च तन्मयम् ।
अतोऽत्यन्तनिषेधेन न क्वचिद्वारि वार्य्यते ॥२५॥

[ज्वरे उष्णोदकव्यवस्था]

ज्वरस्य प्रथमे रूपे भेषजं न दिनत्रयम् ।
नो देयं क्वथितन्तोयं वदन्तीति[13] भिषग्जनाः[14] ॥२६॥

तृषिते[15] सलिलं चोष्णं दद्याद्वातकफज्वरे ।
पित्त[16]-मद्य[17]-विषोत्थेषु[18] शीतलं [19]तिक्तकैः श्रितम्[19] ॥२७॥

दीपनं पाचनञ्चैव ज्वरघ्नमुभयं[20] च तत्[21] ।
स्रोतसां[22] शोधनं[23] पथ्यं[24] रुच्यं स्वेदप्रदं शिवम्[24] ॥२८॥

1क. तेतं। 2क. ०पानच। 3क. तद्। 4क. तस्मानः। 5क. मुहुःखारि। 6क. पिवेद्भूरिः। 7क. उषधं। 8क. रजतः। 9क. परिस्थितः। 10 ग्रन्थान्तरेषु पिबेदिति। 11कने ॰षणः। योगरत्नाकरादिषु 'औषधं हेमरजत……वदनेक्षणः' अस्मिन्स्थाने 'तत्रोपविश्य विश्रान्तः प्रसन्नवदनेक्षणः। औषधं-हेमरजतमृद्भाजनपरिष्ठितम् ॥ पिबेत् प्रसन्नवदनः पीत्वा पात्रमधोमुखम् । निक्षिप्य पात्रे सलिलं ताम्बूलाद्युपकल्पयेत् ॥ यमदूतपिशाचाद्या यक्षगन्धर्वराक्षसाः। ते घ्नन्त्यौषधवीर्याणि ततो गण्डूषवर्जनम् ॥' इति पाठः। 12य. वर्थते। 13क. वद। 14क. भिषगजनाः। 15क. तृष्यते। 16क. पित। 17ख. मध्य। 18क. विषाछेपु, ख. विषोस्छेषु। 19-19ख. तिक्तकश्कं, क.तिक्तकैः श्रृतां। 20ख. पुनयं। 21ख. तत। 22क. श्रोतसां। 23ख. सोधन। 24-24क. रूचि श्वेदं शिव प्रियं, ख. रुचिस्वेदप्रदशिवं ॥

[अथ ऋतुविशेषे जलक्वाथनियमः]

यथर्तुक्रमनिर्देशो[1] जलक्वाथः[2] प्रचक्ष्यते[3] ।
वर्षासूदकमादाय[4] पाचयेत्सप्तभागिकम्[5] ॥२९॥

अष्टभागावशेषस्थं[6] निर्दोष[7]मुदकम्पिबेत्[8] ।
षड्विभागावशेषस्थं[9] श्रिताम्भः[10] शारदे[11] पिबेत्[12] ॥३०॥

पञ्चभागावशेषन्तु[13] हेमन्ते[14] सलिलं[15] पिबेत्[16] ।
शिशिरे[17] च वसन्ते च ग्रीष्मे चार्द्धावशेषितम्[18] ॥३१॥

[क्वथितजलगुणाः]

त्रिपादहीनं श्लेष्मघ्नं[19] तच्छेषमनिलापहम्[20] ।
अर्द्धक्षयञ्च पित्तघ्नं[21] पादशेषं त्रिदोषनुत् ॥३२॥

यथा यथाऽम्भः क्वथितं सङ्ग्राहि[22] लघु-दीपनम् ।

[पर्युषितजलगुणाः]

दिवाश्रितं तु यत्तोयं[23] रात्रौ तद्गुरुतां[24] व्रजेत् ॥३३॥
रात्रौ श्रितं दिवा तत्तु[25] गुरुत्वमधिगच्छति[26] ।

---

1 क. यथार्भुक्तमनिर्देस, ख. यथार्त्तक्रम० । 2 ख. जयक्वाथ । 3. ०क्ष्यते । 4 ख. ०स्तदक । 5 क. पाचयेस० ख. पचयेत०, 6 ख. अष्टभागाचशेषत् । 7 ख. निर्दोषं 8 क. ख. ०वेत् । 9. क. षड्भागाच सेषस्थं, ख० षटुभागवशेषत् ०क. निश्रृभं. ख. निसृतं । 11 क. शारदिकं, ख. शरदिकं । 12 क. ख. पिवेत् । 13 क. ०सेषस्थं । 14 ख. हेमंतो । 15 क. सलिल । 16 क. ख. पिवेत् । 17 क. सिसिरे, ख. शिशरे । 18 क. ०सेषतं, ख. शेषकं । 19 क. पित्तघ्नं, किन्तु तदसत्, यतोऽस्मिन्नेव पुस्तके पूर्वोक्ताष्टादशश्लोके 'पादशेषस्थं कफघ्नं' इति कथनात् । राजनि० वृ. यो. तरङ्गिण्यादिग्रन्थेष्वपि 'अर्द्धहीनं तु पित्तनुत् ।' 'त्रिपादहीनंश्लेष्मघ्नं' इति दर्शनाच्च । 20 क. तछेख 0 । 21 क. कफहरं, पूर्वोक्त-स्पष्टीकरणवशान्न साधुः 'पित्तघ्न'मेव समीचीनपाठः । 22 क. सङ्ग्राह । 23 क. यतोयं । 24 क. गुरुतां । 25 क. तुयतोयं । 26 क. ०छति ।

तैलं घृतं च पानीयं कषायं[1] व्यञ्जनादिकम् ।
[2]श्रितशीतं पुनस्तप्तं सर्वं [3]स्यात्तद्विषोपमम्[3] ।। ३४ ।।

[षडङ्गपानीयम्]

मुस्तपर्पटकोशीर ※चन्दनोदीच्यनागरैः[4] ।
[5]श्रितशीतं जलं दद्यात् [6]पिपासाज्वरशान्तये[7] ।। ३५ ।।

[इति षडङ्गपानीयम्]

(१) [नागरादिपाचनम्]

नागरं देवकाष्ठं[8] च [9]धान्यकं बृहतीद्वयम् ।
दद्यात्पाचनकं पूर्वं ज्वरितानां• ज्वरापहम् ।। ३६ ।।

टीका: सुंठि, देवदारु, धाणा, बैठी रींगणी, उभी रींगणी, औषध सममात्रा-नागरादि पाचनम्[10] ।।

(२) [आरग्वधादिकषायः[11]]

आरग्वध[12]ग्रन्थिकमुस्ततिक्ता-[13]हरीतकीभिः क्वथितः[14]कषायः ।
सामे सशूले कफवातयुक्ते ज्वरे हितो[15] दीपनपाचनश्च[16] ।। ३७ ।।

टीका:—किरमालो, पीपलामूल, मोथ. कुटक, हरडै समान-मात्रा क्वाथ । किरमाला पञ्चक[17] ।

---

1 क. कखायं 2 क. श्रृ 3-3 क. तद्विषमोपमम् 4 क. नागरैं 5 क. शृतसीतं
6 क. पर्पासा ११ क. सांतये
※-※ चन्दनोदीच्यनागरैः स्थाने भा. प्र. "च्छत्राऽऽख्योशीरचन्दनैः" इति पठितम् ।।
7 क. 'प्टं' 8 भा.प्र. 'ध्यामकं' ध्यामकं रोहिषं, तदलाभांदुशीरं । • मल्लप्र. 'य'
9 यो.र. पाठान्तरम कण्ठकारीद्वयं शुण्ठी धान्यकं सुरदारु चं ।
एभिः शृतं पाचनं स्यात्सर्वज्वरनिवारणम्' ।।
10. ग. नि. गिरंमालापञ्चककषायः, वृ.यो.त. "अथाऽऽरोग्यपञ्चकम्"
12 वृ.वै. 'धो', 13 क. हरीतः की भीः 14 क. कथितः 15 क. दितो 16 क. काचक्रं
18 यो.र., पाठान्तरम् बृ.यो.त., यो.त.च.
'आरग्वधकणामूल-मुस्तातिक्ताभयाकृतः ।
क्वाथः शमयति क्षिप्रं ज्वरं वातकफोद्भवम्' ।।

(३) [अथ [1]गुडूच्यादिक्वाथः[2]]

[1]गुडूची निम्बधान्यक-पद्मकं रक्तचन्दनम्[3] ।
एष सर्वज्वरान्हन्ति[4] गुडूच्यादिस्तु दीपनः ।। ३८ ।।

टीका:—गिलोइ, निबछाति, धाणा, पद्माख, रक्तचंदन सम[5] मात्रा औषध क्वाथ करि पाइजे । दीपन[6] ।

(४) [अथ दशमूलादि-क्वाथः]

दशमूलसमं[7] [8]धानाऽमृताभूनिम्बपर्पटैः[9] ।
सर्वज्वरहरः[10] क्वाथः[11] [12]सर्वोपद्रवनाशनः[13] ।। ३९ ।।

टीका:—नीब ? [बिल्व], पाडल, टीटू, टीडू, सालिपर्णी, पृष्टिपर्णी, दोन्यू रीगणी, अरणी, कांटी, उषध सममात्रा दशमूला हुंजु ओषध पछे कहिया छै. दशमूल इ समानियां तियां रा नांव लिखिया था. धाणा, गिलोई, किराइतौ, पित्तपापडौ, ए दसमूला री बराबरी, सर्व ज्वर उपद्रवनासन क्वाथः ।

(५) [अथ आमलक्यादि[14] क्वाथः]

---

1 क. 'ग' 2. क. य 3. ग.नि. 'चन्दनान्वितम्, चक्र 'चन्दनानिच' 4 ग.नि. तृष्णादाहारुचिच्छर्दि-सर्वज्वरहरो गणः ।

म.प्र. 'हल्लासारोचकं छर्दि-पिपासा-दाहनाशनः' ।

5. क. स्म

पाठान्तराणि :

6 भा.प्र. पाठान्तरम् गुडूचीधान्यकारिष्टं पद्मकं रक्तचन्दनम् ।
एषां क्वाथः सुप्रसिद्धः सर्वज्वरहरः स्मृतः ।। दीपनो दाहहल्लासतृष्णाच्छर्घरुचीर्हरेत् ।।
शा. गुडूची-धान्यकारिष्ट-रक्तचन्दनपद्मकैः ।
गुडूच्यादिगणः क्वाथ...... '

बृ.यो.त. 'अमृतारिष्टकुचन्दनपद्मकधान्योद्भवः क्वाथः ।
ज्वरहृल्लासच्छर्दिस्तृष्णादाहारुचीर्हन्यात्' ।।

यथाऽऽह शिवदासः 'अत्र अत्यन्तदाहपिपासायां वृद्धाः शीतीकृत्य मधुप्रक्षिपन्ति'

7 क. दस 8 क. धान्या 9 पर्पटं 10 क. हरं 11 क. क्वाय 12 क. सर्वा 13 क. नाशनम् 14 क. आमक्यादि ।

आमलक्यभयाकृष्णा[1] चित्रकश्चेत्ययं गणः[2] ।
सर्वज्वराः[3] क्षयं[4] यान्ति[4] भेदी-दीपन-पाचनः[5] ।। ४० ।।

टीका:—आमला, हरडै, पीपल, चित्रक (रक्तचित्रक) सम मात्रा । औषधगण रो नांव आवै तठै इ उषध री दस ? (बस ?) कल्पना छै । तियां मांही क्वाथ गोली-दाय (पसन्द) आवै सो करो ।

(६) [मुस्तादिक्वाथः[6]]

मुस्तापर्पटकोशीरचन्दनोदीच्य[7]पद्मकैः[8] ।
श्रितशीतं[9] जलं दद्यात् [10]पिपासाज्वरदाहनुत् ।। ४१ ।।

टीका:—मोथ पितपापड़ौ, उशीर, रतांजणी (रक्तचंदन), (उदीच्य वालौ) पद्माख, क्वाथ करि पाईजे । त्रिस (प्यास) भाजई (नष्ट होती है), ताव (ज्वर) उतरई ।।

(७) [क्षुद्रादिक्वाथः]

क्षुद्राऽमृतानागरपुष्कराह्वयैः[11] कृतः कषायः कफमारुतोत्तरे[12] ।
सश्वासकासाऽरुचिपार्श्वशूलकेज्वरे[13] त्रिदोषप्रभवे प्रशस्यते ।। ४२ ।।*

टीका:—बैठी रींगणी, गिलोई, सुंठि, पुहकरमूल, क्वाथ करि पीजै, त्रिदोष-ज्वर जाइ ।।

---

1 क. आमलक अभया 2 क. गताः, 3 क. ज्वर, म.प्र. ज्वरामय 4-4 म. प्र. कफातङ्क, यो र. भयातङ्को, वृ.यो त. कफान्तक, चक्र. कफातङ्क 5 क. नम् 6 क. थ 7 क. दीच 8 क. पद्मकै 9 क. श्रितः शीत 10 क. पिपासजुर 11 क. पुष्कराह्वयः 12. क तरे 13 य.नि., वृ.वै.च रुक्करे

पाठान्तरम् : (शा.)

*क्षुद्राशुण्ठीगुडूचीनां कषायः पौष्करस्य च ।
कफवाताधिके पेयो ज्वरे वाऽपि त्रिदोषजे ।।
कासश्वासारुचिहरे पार्श्वशूलविधायिनि ।।

(८) [अथ वृद्धक्षुद्रादिक्वाथः[1]]

क्षुद्राऽमृता-पद्मकचन्दनं घनं भूनिम्ब तृष्णारि[2]पटोलपुष्करम् ।
तिक्ताकलिङ्ग[3] पिचुमन्दवासकं विश्वौषधं[4] [5]भार्गिवितुन्नकं[6] समम् ।४३।
[7]शृतं पिबेत्[8] पूर्वकृतं[9] कषायं[10] निहन्ति[11] [12]सामज्वरमुग्रशीतम्[13] ।❀
एकाहिकं द्व्याहिक-नित्यकञ्च चित्रज्वरं नाशयति ध्रुवं वै ।। ४४ ।।

टीका:—बैठी कंटाली, गिलोइ, पद्माष, रक्तचन्दन, मोथ, किराइतो, पित्त-पापडौ, पटोल, पोष्करमूल, 'कटुक, इन्द्रजव, नींबछालि, अरडूसौ, सुंठि, भाडंगी, धाणा, सम मात्रा क्वाथ, आमज्वर जाइ ।।

(९) [अथ मुस्तादि-क्वाथः]

मुस्ताऽऽमलकगुडूचीविश्वौष[14]धकण्टकारिका-क्वाथः[15] ।
पीतः सकणाचूर्णः[16] समधुर्विषमज्वरं हन्ति❀ ।। ४५ ।।❀

---

1 शा. क्षुद्रादि इति नाम, तत्र पाठान्तरम्
क्षुद्राधान्यकशुण्ठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः ।
रक्तचन्दनभूनिम्ब-पटोलवृषपौष्करैः ।।
कटुकेन्द्रयवाऽरिष्टभार्गीपर्पटकैः समः ।
क्वाथं प्रातर्निपेवेत सर्वशीतज्वरच्छिदम् ।।

यो.र. वृ.यो.त. च पाठान्तरम्—
क्षुद्रानागरमुस्तपर्पटघना-भूनिम्बनिम्बामृता
भार्गीचन्दनपुष्कराह्वकुलकैस्तिक्ताटरुषान्वितैः ।
पद्माख्येन्द्रयवान्वितैश्च रचितः क्वाथो निपीतः प्रगे-
शीताद्यं ज्वरमुच्छिनत्तिविषमं त्रिद्व्येकघस्रोद्भवम् ।।

2 क., म.प्र. च 'पर्पट' (छन्दोभङ्गः) (तृष्णारि-पर्पटः) 3 क. कलिंग 4 क. विश्वोषधं 5 क. भीग्री 6 क. वितुनकं 7 म.प्र. क्वाथं 8 क. पिवेत् 9 म.प्र. पूर्वदिने 10 म.प्र. सुखोष्णं 11 म.प्र. हन्तु 12 म.प्र. प्रवृद्ध 13 म.प्र. मुष्ण 12-13 ख. सामं-जुरमुग्रशीतं ।। ❀ अस्मात् परं मल्लप्रकाशे—
'सश्वासमूर्च्छारुचिदाहमुल्वणं तृष्णां वमिं कासमतीव दुस्तरम् । आनाहहिक्कामल-रोधमस्तकव्यथां सतन्द्राभ्रमसन्निपातजम्' इत्यधिकः पाठः । ख-ग्रन्थे 'एकाहिकंद्वाहिक च वेलाज्वर नासयती ।।ध्रुवं च

14 क. श्वौषधं

❀शार्ङ्गधरे पाठान्तरम् 'मुस्ताक्षुद्रामृताशुण्ठीधात्रीक्वाथः समाक्षिकः ।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तो विषमज्वरनाशनः ।।

म.प्र. 'जयति' क. निहन्ति 15 क. थं 16 क. 'णं'

टीकाः—मोथ, आंवला· गिलोय, शुण्ठी, बैठीरींगणी, सममात्रा पिप्पली रो प्रतिवास (प्रक्षेप) । विषमज्वरजाइ ।।

(१०) [अथ पटोलादि-क्वाथः[1]]

पटोलाऽरिष्टमृद्वीका-शम्याकत्रिफला[3] वृषैः[2]।
क्वाथ[4] एकाहिकं हन्ति शर्करामधुयोजितः[5] ।। ४६ ।।

टीकाः—पटोल, नींबछालि, दाख, किरमालो, हरडै, बेहडा, आंवला, अरडूसो, औषध सम[6] मात्रा, क्वाथ परांतिवास (प्रक्षेप) सहित, (मधु) व निवात (शर्करा) कीजै । एकान्तरो जाइ[7] ।।

(११) [अथ कोशातक्यादि-क्वाथः]

काशातकीवारिदधन्वयासं[8] छिन्नोद्भवावासकचेतकीभिः[9] ।
अक्षोऽपि[10] धात्री पिचुमन्दतिक्ते सचन्दनं[11] पर्पटकं निशोत्री ।। ४७ ।।

एतैश्च द्रव्यैः[12] क्वथितः[13] कषायः शीतज्वरं हन्ति च शीघ्रपानात् ।
नित्यज्वरैकान्तरजं[14]तृतीयं[15] चतुर्थकं चापि निहन्ति शीघ्रम् ।। ४८ ।।

टीकाः –कडवीतोरु + की जड़, मोथ, धमासो, गिलोइ, अडूसो, हरडै, बेहड़ा, आंवला, नीमछालि, कटुक, रक्तचन्दन, पितपापड़ो, निशोथ, औषध सम मात्रा क्वाथ । नित्यज्वर, एकान्तरो, तेजरो (तृतीयक), चउथजरो, (चातुर्थक) शीतज्वरजाइ ।।

(१२) अथ [देवदार्व्यादि-क्वाथः]❋

---

1 क. 'थ' 2 क. 'विषः' ग. वृषान् 3 क. म्पा 4 क. 'थ' 5 क. 'स्म' 6 बृ.यो.त. 'संयुतः' 7 शार्ङ्गधारे पाठान्तरम्:-

'पटोलत्रिफलानिम्बद्राक्षाशम्पाकवासकैः ।
क्वाथः सितामधुयुतो जयेदैकाहिकं ज्वरम् ।।'

8 क. 'जा' 9 क. 'नो' 10 क. 'धरित्री' 11 क. 'न' 12 क. 'व्यै' 13 क. 'कृत' 14 क. 'तृ' 15 क 'च' +ग. किराइतो ॥

देवदारु*वचाकुष्ठं पिप्पलीविश्वभेषजम् ।
*कट्फलं मुस्त-भूनिम्बं तिक्ता धान्यं हरीतकी ।। ४९ ।।

गजकृष्णा[1] च[1] दुःस्पर्शा[2] गोक्षुरं[3] धन्व[4]यासकम्[4]
एतदत्र[5] समं भागं हिङ्गु-सैन्धव-संयुतम् ।। ५० ।।[6]

क्वाथेनाष्टावशेषेण[7] सूतिकादोषनाशनम् ।
शूलं श्वासं ज्वरं तृष्णां [8]छर्दिमूर्च्छामरोचकम् ।। ५१ ।।

टीका: देवदारु, वच, कूठ, पिप्पली, सूंठि, कायफल, मोथ, किरायतो, कटुक, धाणा, हरड, गजपिप्पली, जवासो, कांटी, धमासो ।। आंबला, अरणी ए (ये) दोउ (दोनों) पाठ पछै (पाठ के पश्चात्) घालिया (मिलाये) है । ओषध सममात्रा, अष्टावशेष पानी सूं क्वाथ कीजै । हींग, सींधव प्रतिवास (प्रक्षेप), शूल श्वास, ज्वर, तृष्णा छर्दि, मूर्च्छा, अरुचि इतरा (इतने) रोग जाय [इससे सूतिका-दोष नष्ट होते हैं][9]

(१३) [अथ सहचरादिक्वाथः]

सहचरवेतसपुष्करमूल[10-11]विकङ्कतदारुकुलत्थसमम्[12] ।
[13]जलमत्र[14] ससैन्धवहिङ्गुयुतं सद्योज्वर-सूतिकशूलहरम् ।। ५२ ।।*

---

1 क. 'पिप्पली' (छंदोभङ्गः) 2 क. दुस्पर्शा' 3 क. 'गोक्षीर 4 क. 'जा' 5 क. 'देव' 6 अस्मात् परं 'बृहत्यतिविषाछिन्ना कर्कटं कृष्णजीरकम्' इत्यधिक: पाठो लभ्यते । सः समुचितः प्रतिभाति ।
(शा., भै.र, भा.प्र , यो.र, यो त. ज्वर.ति.भा. च ।।
यो.त. कर्कटस्थाने पर्पटः 7 क. शेषेच 8 क. छीर्छ-मूर्छा
9 पाठान्तरम्-वृ यो.त.
सुरदारुविश्ववचामृताघनकर्कटत्रिकण्टकाभया
कटुकाकिरातविषाग्रवासनिदिग्धिकायुग्मधान्यकैः ।
गदपिप्पलीद्वय-कृष्णजीरक कट्फलश्च शृतो जयेद्
द्विविधवत्सर्सिधुजरामठो नवसूतिकासकलामयम् ।।
10-11 क. मूलं 12 क. चैकंक 13 क. कुलछ 14 क. मंत्र 15 क. सुसैंधव
*पाठान्तरम्, वृ.यो.त.
सहचरकुलत्थपुष्करदारुनिशादारुवेतसक्वाथः ।
पीतःसहिङ्गुलवणः शमयति शूलज्वरो सूत्याः ।।

टीका:—कंटासेला री जड़ (कटसरैया या बाणमूल या पियाबांसामूल) आमल-वेतस, पौष्करमूल, [विकङ्कत-कण्टाई या स्रुवावृक्ष (रामबबूर)], देवदारु, कुलित्थ, औषध सम मात्रा, क्वाथ करि प्रतिवास (प्रक्षेप) सैन्धव, हींग दीजै । प्रसूतिज्वर जाय ।

(१४) [अथ [1]दार्व्यादिक्वाथः]

[2]दार्वी-दारु-कलिङ्ग-लोहितलता[3]-श्यामाक[4]-पाठा[5]-शठी-
[6]शौण्डीवीर[7]किरातकुञ्ज[8]रकणा-त्रायन्तिकापद्मकान्[9] ।
[10]वक्राधान्यकनागराऽब्द[11]सरल-शीघ्रा[12]म्बुसिंहीशिवा-
व्याघ्रीपर्पटदर्भमूलकटुको[13]ऽनन्ता[14]ऽमृतापौष्करान् ।। ५३ ।।
❀एकीकृत्य शुभे दिने कृत इति क्वाथो जलेन श्रृतः❀
❀धातुस्थं[15] विषमं त्रिदोषजनितं चैकाहिकं[16] द्व्याहिकम्[17] ।❀

---

1 भै.र., ज्व.ति.भा., क्वा.म.मा. च 'दास्यादि' इति नाम 2 ख. दार्वी दारकलंग, भै-र., ज्व.ति.भा.. क्वा.म.मा. च दार्वी स्थाने दासी वर्तते । दासी-नीलझिण्टी 3 क. लोहितलजा,-लोहित-मञ्जिष्ठा, लजा-प्रियङ्गु-अनन्तमूलः अथवा बृहती अन्यसर्वेषु ग्रन्थेषु 'लोहितलता' एव पठितः । ख.ग्रन्थेऽपि 'लता' इति पाठः । तस्मात् 'लोहितलता' इति पाठस्साधुः । 4 ख. सम्या, बृ.यो.त., यो.र., ज्व.ति.भा. च 'शम्याक' (शम्याकः-आरग्वधः, श्यामकस्तु-तृणविशेषः ।) 5 क. पाठसठी 6 भै र. शुण्ठी 7 यो.र. विश्व, ज्व.ति.भा-'धीर' (धीरः ऋषभकः) 8 यो.र. वारण 9 क. पद्मकैः 10 यो.र., बृ.यो.त. च उग्रा (यवानी), भै.र., क्वा म.मा. च, वज्री (अस्थि-संहारी अथवा सेहुण्डः) 11 क. नागराच्च-शरला 12 भै.र.शिग्रवम्बु, यो.र. शिग्रुत्व-गम्भः शिवा, (शीघ्रा-दन्ती, शिग्रुः-शोभाञ्जनः, अम्बु-वालं, सिंही-बृहती, शिवा-हरीतकी शिग्रुत्वक्-शोभाञ्जनत्वक्, अम्भः-बालं), क. सिंही सिवा । 13 क. कठुका 14 ज्व.ति.भा. छिन्नामृता (छिन्ना-गुडूची, अमृता-धात्री) अनन्ता-शारिवा, यासः वा. ❀-❀ क. 'एकीकृत्यमिदं दिनं युक्ता जलेन शृतम्' ❀-❀ अस्मिन्स्थाने विपर्यस्त-क्रमेण- 'कामैः शोकसमुद्भवं च विविधं यच्छर्दियुक्तं नृणाम्' इति पाठः भै.र., क्वा. म.मा. च दृश्यते किन्तु म.प्र., यो.र., च अयं श्लोकार्द्धः नोद्धृतः । ज्व.ति.भा.तु 'मूर्च्छा शीतमदोग्रदाह अरुचिं श्वासं च कासं तथा' इति पाठितः ।

15 म.प्र. धातूत्थं 16 क. एकाहिकं 17 क. द्वाहिकं

पीतो[1] हन्ति तृतीयकं[2] [2]ज्वरमथो [3]चातुर्थिकं भूतजं-
✻कण्डूदाहमयं ज्वरञ्च सततं योगो मुनीनां मतः✻ ।। ५४ ।।

(१५) [अथ [4]शट्यादिक्वाथः]

शटी[5] [6]दारुहरिद्रा,✻ च पुष्करं सुरदारु च ।
नागरैला[7]मृता[8]कृष्णा-ताम्रमूलीकिरातकैः ।। ५५ ।।

✻दशमूलरज शृङ्गी क्वाथयि[9]त्वा[9] रसाञ्जनम् ।
एकजं द्वन्द्वजं चैव सर्वजं सर्वधातुजम् ।।
सर्वज्वरहरं घोरं सर्वोपद्रवनाशनम्[10] ।। ५६ ।।

टीकाः- सठी, दारुहलद, पोहकरमूल, देवदारु, सूंठी, इलायची, गोखरु ? गिलोई, पीपली, धमासारीजड़, किरायतो, पाढल, टीटू, सिवनी, सालीपनी, पीठीपनी, दोनूं रींगणी, अरणी, कांटी, त्रिलगिर, काकड़ासिंगी, रसवति, औषध सममात्रा क्वाथ कीजें । एकदोष, द्विदोष, त्रिदोष, सर्वधातुगत सर्वज्वर, घोरज्वर सर्वउपद्रवज्वर जाइ ।

1 ख., यो.र. च क्वाथो 2-2 यो.र. तृतीयक-ज्वरभयं, क. ज्वरमयं 3 क. चातुर्थक
✻-✻ म.प्र. 'पीतो हन्ति महाव्यथं वहुरुजं सद्यः प्रलापान्वितम्' क्वा.म.मा., भै.र. च 'पीतो हन्ति क्षयोद्भवं सततकं ————'

✻ अयमर्द्ध श्लोकः म.प्र., यो.र. च न दृश्यते किन्तु क्वा.म.मा., भै.र. च अस्मिन्स्थाने 'योगोऽयं मुनिभिः पुरा निगदितो जीर्णज्वरे दुस्तरे' इति पाठो दृश्यते । ज्व.ति.भा. तु 'पाण्डु-शोफ-मति-प्रलापशमनं क्वाथोऽमृतः कल्पितः ।' इति लक्ष्मणोत्सवादुद्धृतः पाठो विद्यते ।

4 क. सग्रादि 5 क. सठी 6 क. सादारु ✻ हरिद्रा च (छन्दोभङ्गः) 7 क नागरैल
8 क. तृष्णा ✻ क. वख 9 क. 'पियां' 10 क. नासनम्

पाठान्तरम् भावप्रकाशे :—
'शटी निशाद्वयं शुण्ठी दारू पुष्करमूलकम् ।
एला गुडूची कटुका पर्पटश्च यवासकः ।।
शृङ्गी किराततिक्तं च दशमूली तथैव च ।
क्वाथमेषां पिवेत्कोष्णं सिन्धुचूर्णयुतं नरः ।।
ज्वरान् सर्वान् द्रुतं हन्ति नात्र कार्या विचारणा ।
अनुभूतोऽयम् । इति शट्यादिक्वाथः ।।

(१६) [पुनर्नवादि-क्वाथः[1]]

पुनर्नवानिम्बपटोल[2]शुण्ठीतिक्ता[3]ऽमृतादार्व्यभयाकषायः[4] ।
सर्वाङ्गशो[5]फोदर[6]पार्श्वशूलश्वासा[6]न्वितं[7] पाण्डुगदं निहन्ति ।।५७।।❁

टीकाः साटी रीजड़, निंबछालि, पटोलि, शुंठि, कटुक, गिलोइ, दारुहलद, हरडे, औषध सममात्रा क्वाथ कीजै । सगला हीं अंग रो सोजो, उदर-पेट से सोजो उतरई । शूल (पार्श्वशूल) श्वास सहित पाण्डु रोग जाइ ।।

(१७) [अथ दार्व्यादि क्वाथः]

दार्वीरसाञ्जनवृषाब्दकिरातबिल्व-[8]
[9]भल्लातकैरवकृतो[10] मधुना कषायः ।
पीतो जयत्यतिबल[11] प्रदरं सशूलं
[12]श्वेतासितारुणविलोहितपीतवर्णम्[13] ।। ५८ ।।❁

1. भै र. 'पुनर्नवाष्टकक्वाथः' बृ.यो.त. 'बृहत् पुनर्नवादि' 2 क. 'शू.' 3 क. 'तिक्त' 4 क. 'य' 5 क. सोफदर 6 क. काशशूल 7 क. श्वासान्वितो

पाठान्तरम्—शार्ङ्गधरेः—
पुनर्नवाऽभयानिम्बदार्वीतिक्तापटोलकैः ।
गुडूची-नागरयुतैः क्वाथो गोमूत्रसंयुतः ।।
पाण्डुकासोदरश्वासशूलसर्वाङ्गशोथहा ।।'

❁ यो र., 'सर्वाङ्गशोफोदरपाण्डुरोगस्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु'
ग.नि., बृ.यो त. च' ....कासशूल..........'
बृ.वै, 'शोथोदरं कासयुतं सशूलं
श्वासान्वितं पाण्डुगदं निहन्ति ।।'

8 क. विल 9 क. भिलातकै 10 क. रविकृतो, ग.नि. कैरव (कैरवं कुमुदं) बृ.वै. रिंह, 11 क. वालं 5 क. श्वेतां, बृ.वै., यो र., बृ.यो.त. च पीता 12 क. वर्णः, बृ यो. त., यो.र., बृ.वै. च नीलशुक्लम्, ग.न. पीतनीलम् ।। ❁पाठान्तरम्—

शा. 'दार्वी रसाञ्जनं मुस्तं भल्लातः श्रीफलं वृषः ।
कैरातश्च पिबेदेषां क्वाथं शीतं समाक्षिकम् ।।
जयेत् सशूलं प्रदरं पीतश्वेतसितारुणम् ।।'

भा.प्र. 'दार्वीरसाञ्जनकिरातवृषाब्दबिल्व-
सक्षौद्रचन्दनदिनेशभवप्रसूनैः ।
क्वाथः कृतो मधुयुतो विधिना निपीतो
रक्तं सितं च सरुजं प्रदरं निहन्ति ।।'

टीका:—दारुहलद, रसोत, अरडूसौ, मोथ, चिरायतौ, बीलगिर, भिलावा, औषध सममात्रा क्वाथ सहित (मधु) रो प्रतिवास, असित, धवलई, लई, रातई, पीलई वर्ण रो प्रदररोग जाई ।।

(१८) [अथ [1]लशुनादिक्वाथः]

[2]लशुनोषणोग्रगन्धा-कट्फलाकुचिलाकृतः[3] क्वाथः ।
अपनयति[4] [5]सन्निपातांस्त्रयोदशपानतो नूनम् ।। ५६ ।।

टीका:—लसण पीपलि, वच, कायफल, कुचीला, ए औषध सममात्रा क्वाथ करि पाईजे तेरह सन्निपात जाई ।

(१६) [अथ भूनिम्बादिक्वाथः, काव्यः[6]]

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्द[7]-
तिक्तेन्द्र*बीजधनिकेभ[8]कणाकषायः[9] ।
[10]तन्द्राप्रलापकसनारुचिदाहमोह[11]-
[11]श्वासादियुक्तम[12]खिलं ज्वरमाशु हन्ति[13] ।। ६० ।।

टीका: – किरायतो, देवदारु, पाढल. टीटू. सिवनी, शालपर्णिनी, पीठीपर्णिनी. दोन्यू ही रींगणी, अरणी, बीलगिर, [गोक्षुरु], सुण्ठी, मोथ, कुटक, इन्द्रयव, धाणा, गजपिप्पली, औषध सममात्रा क्वाथ कीजै । नींद, अतिप्रलापकसन्निपात, अरुचि, दाह, मोह, अणोसासी (सश्वास) स्मस्त (समस्त) ज्वर जाइ ।।

---

1 क. लसणादि 2 क. लसुनो 3 क. कृतं 4 क. अपनियति 5 क. सनिपातास्त्रयो 6 यो.र., र.र., शा., वृ.यो.त. च 'अष्टादशाङ्गः' भै.र., भूनिम्बादि-अष्टादशाङ्गः', तथा भा.प्र. द्वितीयाष्टादशाङ्ग'क्वा थः 7 क. र्भाीं कषाई। 8 क. तंद्री 9. क. 'ह:स्वा' 10 क. मपिलं 11 क. माश्वहंति 12-13 भा.प्र.
श्वासत्रिदोषजनितज्वरनाशनः स्यात् ।
पाठान्तरम् शा.
'कैरातकुटकीमुस्ताधान्येन्द्रयवनागरैः ।
दशमूलमहादारुगजपिप्पलिकायुतैः ।।
कृतः कषायः पार्श्वार्ति सन्निपातज्वरं जयेत् ।
कासश्वासवमीहिक्का-तन्द्राहृद्ग्रहनाशनः ।।

(२०) अथ पिप्पल्यादिक्वाथः][1]

पिप्पलीपिप्पलीमूलं[2] चव्यचित्रकनागरैः[3] ।
वचा-प्रतिविषाऽजाजीपाठावत्सकरेणुकैः[4] ॥ ६१ ॥

किराततिक्तको[5] मूर्वा सर्षपा[6] मरिचानि[7] च ।
कट्फल[8] कत्तृणं[9] भार्ङ्गी विडङ्ग[10] कर्कटाह्वयम्[11] ॥ ६२ ॥

अर्कमूलं बृहत्सिंही[12] श्रेयसी[13] सदुरालभा ।
दीप्यकश्चाजमोदा[14] च शुकनासा[15] सहिङ्गुका[16] ॥ ६३ ॥

एतानि समभागानि गणोऽष्टाविंशको[17] महत्[17] ।
कषायमुपयुञ्जीत वातश्लेष्मज्वरान्तकृत्[18] ॥ ६४ ॥

हन्ति वातं तथा शीतं श्वासं[19] च प्रबलं कफम्[19] ।
प्रलापञ्चातिनिद्रां[20] च रोमहर्षाऽरुची[21] तथा ॥ ६५ ॥

महावातेऽपतन्त्रे[22] च सर्वगात्रेषु शून्यताम् ।
सर्वज्वरहरः श्रेष्ठः[23] [24]सन्निपातांस्त्रयोदशान् ॥ ६६ ॥

---

1 क. पिप्पलादि, भा.प्र., म.प्र., भै.र. च बृहत्पिप्पल्यादिक्वाथः इति नाम 2 क. पिपली 3 क. नागरै 4 क. रेणुकै 5 क. तिक्तकैः 6 क. सर्षपै 7 क. मारिचान्वितैः 8 शा. कटुकं 9 क. तृणां, शा०, भा.प्र., म.प्र., भै.र. च 'पुष्करं' 10 क. वीडंगं 11 क. कर्कटाद्वियं 12 क छेणी (श्रेयसी-रास्ना वातश्लेष्मज्वरहरत्वात्) 14 क. दीप्यको अज 15 क. सुक 16 क. नासाश्चहिङ्गुभिः 17-17 क. गणोप्टाविसको महर, भा.प्र., म.प्र., भै.र. च 'गण एकोऽष्टविंशतिः' शा. 'गणोऽष्टाविंशकोमतः' इति पाठः 18 क. पुस्तके 'वातपित्तं' इति पाठः परन्नायं साधुः, म.प्र., भा.प्र. शा., भै.र., आदिषु 'श्लेष्म' इति ग्रहणात् । 19 म.प्र., शा. च स्वेदं, भै.र., भा.प्र. च 'प्रस्वेदमतिवेपथुम्' इति पाठः 20 क. निद्रा 21 क. रुचिं

❀अस्मात्परं भै.र., भा.प्र. च "पिप्पल्यादिमहाक्वाथो ज्वरे सर्वत्र पूजितः" इत्यधिकः पाठः 22 क. महावातेपतन्नैव 23 क. श्रेष्टः 24 क. सन्निपातांस्त्रियोदसः

टीका:—पीप्पलि, पीपलामूल, पानां री जड़ तिण रो नाम चव्य[1] कहीजै, चित्रक, सूंठि, वच, प (अ) तीस, जीरो, पाठा, कुडांछालि, किरायतौ, कुटक. रेणुका, मूर्वा, सरिसव, मरिच, कायफल, रोहिस, भाडंगी, बायविडंग काकड़ासिंगी, आक रीजड. उभीरींगणी, गजपीपलि[2], घमासो, अजमो, अजमोद, हींग (भुनी) ओषध सममात्रा, करि क्वाथ कीजै। अठावीसौ गण:, वातपित्तज्वरजाई, वात, सीत, स्वास, प्रबल-कफ, प्रलापक, अतिनींद, रोमहर्ष, अरुचि, महावात, गात्रसूनि, ताप, सर्वश्रेष्ठ सनिपात तेरह एते रोग जाई।

(२१) [अथ [2]बृहद्रजन्यादिक्वाथ:]

रजनी श्रेयसी भार्गी [3]ह्यरिष्टो रामसेनक:।
कृष्णाभेदांबुवाहश्च[4] वार्त्ताकी वरतिक्तक:॥ ६७॥
राजीफलं दीप्यका[5] चा[6] ऽजाजी वितुन्नकन्तथा[7]।
त्रिफला[3] च महादारु[9] रोहिषं श्रीफलन्तथा॥ ६८॥

बालभद्रं[10] कलिङ्गञ्च[10] काश्मरी[11] विश्वभेषजम्।
ताम्रमूली कालिकाह्वा[12] कट्फलं कण्टकारिका॥ ६९॥

---

1 चव्य-'पाइपर चबा' इत्यर्वाचीनानां मतम् (वि.टी.) भवेच्चव्यं तु चविका कथिता सा तथोषणा। (भा.प्र.नि.) 'चविकाया. फलं प्राज्ञैः कथिता गजपिप्पली'। (भा.प्र. नि.) 'तीक्ष्णा करिकणावल्ली क्रकरो द्वादशाभिधा।''''''''तस्या: फलं विनिर्दिष्टं श्रेयसी गजपिप्पली' (राजनि.)

'एलापर्णी च सुरसा सुगन्धा श्रेयसी तथा।
रास्नाऽऽमपाचिनीतिक्ता गुरूष्णा कफवातजित्॥'
भा.प्र.नि.

'गजकृष्णा कटुर्वातश्लेष्मह्वद्वह्निवर्धिनी।
उष्णा निहन्त्यतीसारं श्वासकण्ठामयक्रिमीन्॥'
गजपिप्पली-सिंडेप्सस आफिसिनेलिस् का फल ''

(बाजार में ताडवृक्ष के बाल को काट कर बनाई गई वस्तु इस नाम से बेची जाती हैं। कुछ विद्वान, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, चव्य के फल को ही गजपिप्पली कहते हैं। (भा.प्र.वि.टी.)

2 क. वृद्धि 3 क. अरिष्टो 4 क. भेदांबुधाराश्च अम्बु=मुस्तकं धारा=कोशातकी 5 क. दीप्यकं 6 क. च जाजी 7. क. वितुनकं 8 क. त्रिफलायाँ 9 क. दारू 10-10 क. वालभद्राश्चलिंगाश्च 11 क. कासमीरी 12 क. कालिकाह्व, कालिका–कालाजाजी न तु कुलिञ्जन:।

समभागान्वितैरेतैः[12] रास्ना[13] त्रिगुणभागिकैः ।
अष्टभागाऽवशेषन्तु[14] व्योषचूर्ण[15]समन्वितम्[16] ।। ७० ।।

रजन्यादिगणश्चैष धन्वन्तरिविनिर्मितः ।
अभिन्यासो महाघोरो मोहाढ्यो हन्यतेऽपि च ।। ७१ ।।

सर्वेषु सन्निपातेषु[17] ज्वरेचाष्टविधे[18] तथा ।
प्रवाहिकावमीश्वासाः[19] शीतगात्रत्वमेव च ।। ७२ ।।

स्वेदप्र[20]वाहे स्तैमित्य[21] मोहे निद्राविपर्यये ।
[22]श्वास-कास-तृषा-दाह-हृच्छूल[23]-पार्श्वशूलके[24] ।। ७३ ।।

अन्तर्दाहेऽग्निमान्द्ये च विष्टम्भे कण्ठकूजने ।
प्रहृष्ट-रोमस्तैमित्ये कर्णशूले च दारुणे ।। ७४ ।।
[25]एतान्रोगान् निहन्त्याशु मृगराजो मृगान्यथा ।❀

---

12. क. समभाग निर्वैतिरेतैं 13 क. राष्णा 14 क. भागावसेषं 15 क. चूर्ण 16 क. समन्वितैः 17 क. सनिपातेषु 18 क. ज्वरे चाविधै चाष्टै विधेस्तथा 19 क. प्रवाह-चकावमी स्वास 20 क. स्वेदप्रवाह 21 क. स्तैमित्य 22 क. स्वास 23 क. हृच्छूले 24 क.जे 25 क. एतद्रोगानिहंत्याशु ।

❀ पाठान्तरम् ज्वरतिमिरभास्करेः—

हरिद्रामुस्तभूनिम्ब-त्रिफलारिष्टसायकैः ।
कण्टकारीद्वयं भार्गी कुटकी नागरं कणा ।।
पटोली पर्पटं शुण्ठी देवदारु सरोहिषम् ।
चित्रकञ्च बला-बिल्वकुम्भकारी हरीतकी ।।
कट्फलं दीप्यकटभी सर्वमेकैकभागिकम् ।
रास्ना भागद्वयञ्चात्र दत्वा क्वाथन्तु साधयेत् ।।
व्योषचूर्णयुतः क्वाथो ज्वरान्हन्ति त्रिदोषजान् ।
त्रीन् दोषान् महाघोरानन्धकारान्यथा रविः ।।
वमिं स्वेदं प्रलापञ्च स्तैमित्यं शीतगात्रताम् ।
मोहं तन्द्रां भृशं श्वासं कासं दाहाग्निमार्दवम् ।।
हृत्पार्श्वशूलविष्टम्भं कण्ठकूजनकन्तथा ।
जिह्वास्फुटनकं कर्णशूलं चाशुविनाशयेत् ।।
नातः परतरं किञ्चिदौषधं सान्निपातिके ।
रजन्यादिगणो ह्येष धन्वन्तरिविनिर्मितः ।।

बृहद्रजन्यादि—

टीका:—हलद, गजपिप्पली, भाडंगी, निंबछालि, किरायतौ, कटुक. मोथ,[1] रींगणीं बडी, पित्तपापड़ो, पटोल, अजमो, जीरो, वाणा, हरड, बेहड़ा, आंवला, देवदारु, रोहीस, बील, वालो, [भद्र][2] इन्द्रजव, सीवनी, सूंठि, धमासो, कुलिंजन[3] काइफल, बंठ रींगणी, औषध समभाग। उसाँ हुतो (इन सबसे) राठ त्रिगुणा घातीजै, काढो करि पाईजे। तेरह सन्निपात जाई। सकलज्वर जाहै। बीजा (अन्य) ही रोग सर्व पाठ मांहे कह्या छै।

(२२) [अथ मध्य-रजन्यादिक्वाथः]

रजनी श्रेयसी भार्गी [4]ह्यरिष्टो राममेनक:[5]।
कृष्णाभेदाम्बमोघा[6]श्च वार्त्ताकी[7] वरतिक्तक:[7] ।। ७५ ।।

राजीफलं[8] दीप्यकञ्च[9] काश्मरी[10] विश्वभेषजम्।
वत्सादनी[11] पापचेलो कृष्णा वितुन्नकन्तथा[12] ।। ७६ ।।

बलभद्रा[13] कलिङ्गश्च[14] ताम्रमूली कुलञ्जन:[15] ?।
समभागान्वितैरेतै:[16] रास्ना[17] द्विगुणभागिका ।। ७७ ।।

त्रयोदशसन्नि[18]पाताञ्ज्वरमष्ट[19]विधन्तथा।
तन्द्रा-हिक्का-वमि-श्वास[20]-शीतगात्रत्वमेव[21] च ।। ७८ ।।

---

1 'अंबुधाराश्च' से मोथा और कोशातकी का बोध होता है। 2 वाल-भद्र से वाला और भद्रमोथा का बोध होता है। 3 कालिकाह्व कलौंजी का बोधक है। 4 क. अरिष्टौ ख. अरिष्टो 5 ख. सेनक 6 क. कृष्णाभेदांबुमेघनामा, ख. मेघनामा अचुधराश्च 7-7 क. वार्ताकीर्वत्तिकूक, ख. वार्त्तकी. 8 क. राजीफलो 9 क. दीपकश्च, ख. ग्रन्थे अस्य श्लोकस्य प्रथमभागस्य अष्टाक्षराणि त्रुटितानि 10 क. कासमरी 11 ख. वतसाधनी 12 ख. वितुनकं 13 क. वालभद्र, ख. वालभद्रा 14 क.ख. कलिगाश्च 15 क. कलिगक, ख. कुलिंगक 16 ख. भागानितै 17 क. राष्णा, ख. रास्नो 18 ख. त्रियोदशसानिपाता, क. सनिपाता 19 ख. ज्वराष्टविध तथा (छन्दोभङ्गः) 20 क. श्वास ख. ततु हिक्का वमी स्वासं 21 ख. सीतगात्रं तु मेव

स्वेद-प्रमेहस्तैमित्य[1]·विट्भेद[2]-कण्ठकूजनम् ।
ज्वरस्योपद्रवान्हन्यात्[3] कर्णशूलं[4] च दारुणम्[5] ।। ७६ ।।
एतान्रोगान्निहन्त्याशु[6] यथा सिंहो मृगादिकान् ।। ८० ।।

टीका:—हलद[7], गजपीप्पलि, भाडंगी, निंबछालि, किरायतो कुठुक, मोथ, बिडंग[8], उभो (बडी) रींगणी, पितपापडो, पटोल, अजमो, सिवनी, सूंठि, गिलोइ, पाठ, पीपलि[9]. धाणा, त्राहिमाण, इन्द्रजव, धमासो, कुलिंजन, घमासौ[10] उषध समभाग क्वाथ । वीजा ऊ साथी (औरों से) राठ विमणी (द्विगुणी) धालीजै । पाठ माहै जितरा रोग कह्या छै ईता रोग जाई ।।

(२३) [अथ मरिचादिक्वाथः]

मरिचदशमूलकटुकाफलत्रयनिशा[11]महौषधीकृष्णाः[12] ।
भूनिम्बसैन्धवयुतः[13] कर्णकहन्ता भवेत्क्वाथः ❀ ।। ८१ ।।

---

1 क. स्तैमित्यं, ख. स्वेदप्रवाहस्तोमिति 2 ख. धिद्रेद कंठकूजनां 3 क. उपद्रवा-हन्यात्, ख. उपद्रवोनन्यातु 4 क. शूलां, ख. शूले 5 ख दारुणे 6 क. एतान्य-रोगा निहन्त्याशु, ख. एते रोगा निहन्यास

7 ख. हरड़ ? (हल्दी ही होनी चाहिये) 8 ख. ग्रन्थ की टीका में विडग नहीं लिखी है । 9 ख. की टीका में पिप्पली भी नहीं लिखी गई है । 10 ख. वासो ? (धमासा)

11 क. कणा 12 क. नोक्तम् 13 क. भिश्रभूनम्बयुतः

❀पाठान्तराणि:—

यो.र. 'मरिचदशमूलमगधा-फलत्रयनिशामहौषधीतिक्ताः ।
भूनिम्ब-सैन्धवयुतः कर्णकहन्ता भवेत्क्वाथः ।।'

भा प्र. 'दशमूलमत्स्यशकलाचपलात्रिफलामहौषधकिरातैः❀ ।
मरिच चाशुक्वथितं❀ बलादपहन्ति कर्णरुजः सकलाः ।।'

❀वृ.यो.त. 'किरातयुतम्' ❀वृ.यो.त. 'क्वथितमाशु' ❀वृ.यो.त. 'कर्णकरुजः'

(मत्स्यशकला-कटुका, चपला-पिप्पली)

ज्व.ति.भा. 'दशाङ्घ्रित्रिफलाव्योषतिक्ता-भूनिम्बकैः कृतः ।
क्वाथो पीतो हरत्याशु कर्णकस्य रुजोऽखिलाः ।।'

टीका:—मरिच, टीटू, सीवनी. सालिवनी, पीठवनी दोनु रींगणी, अरणी, कांटी, बीलगिर (त्वक्) [पाढर[1]] कुटक, हरडै री छालि, बेहडा, आंवला, [हल्दी][2] सूंठि [पीपल[3]] किरायतौ [सैंधेव] ओषध सममात्रा क्वाथ कीजै। कर्णक सन्निपात जाई।

(२४) [[4]कट्फलादि-क्वाथ:]

[5]कट्फलाब्द[6]वचापाठापुष्करराजाजिपर्पटै:[7]।
देवदा[7]र्वभयाशृङ्गी कणाभूनिम्बनागरै:[7] ॥ ८२ ॥

भार्ङ्गीकलिङ्गकटुका-शटीकत्तृणधान्यकै.[8]।
समांशै:[9] साधित:[10] क्वाथ: सहिङ्ग्वार्द्ररसैर्यु त:[11] ॥ ८३ ॥

कर्णमूलोद्भव[12] शोथं[13] हन्ति मन्यागलामयान्[14]।
कफवातज्वरं[15] कासं[16] पीतो[17] हन्ति मुखामयम्[18] ॥ ८४ ॥

गलगण्डं गण्डमालां स्वरभेदं कफात्मकम्।
शिरो गुरुत्वं [19]बाधिर्यं[20] वृद्धिं च कफमेदसो:[21] ॥ ८५ ॥
[22]दशमूलयुतश्चैष[23] सन्निपातज्वरं[24] जयेत्[25] ॥ ८६ ॥

---

1 क. टीका में दशमूल की केवल 9 ही ओषधियों के नाम हैं। दसवीं पाढर है।
3 क. फलत्रय के बाद 'कणा' है व 'महौषधो' के बाद कुछ नहीं है। यो र. में 'कणा' व निशा दोनों हैं व क. ग्रंथ का पाठ योग रत्नाकर से मिलता जुलता है।
4 यो.र. में सैंधव है। क. मिश्री
5 क. 'टु' 6 क. 'टु' 7 क. 'च' 8 क. 'टै' 9 क. 'र्थं' 10 क.'रे' 11 क. 'तृ' 12 क. 'मासै:' 13 क. 'कित:' 14 क. 'द्र' मल्लप्र. 'हिङ्ग्वर्द्रक' 15 क. 'भयं' 16 क. 'श्व' 17 क 'ह', मल्लप्र. 'हन्त्यात्तालु' 18 क. 'जातं' 19-20 म.प्र. 'श्वासं हिक्काम्' 21 क. 'मयान' ज्व.ति.भा. (म-प्र. 'वर्गलग्रहम्) भै.र. 'हनुग्रहम्' 22 क. 'व्या', 23 क. 'र्यं' 24 क. 'सम्' 25 क. 'स' 22 ज्वर.ति.भा. 'श्चापि देय: केचिद्वदन्ति हि। [23]मल्लप्रकाशे अस्मात्परं 'अभिन्यासमसंज्ञं च कट्फलादिरयं महान्' इत्यधिक: पाठो लभ्यते।

(२५) [अथ रास्ना[1]दिपञ्चकक्वाथः]

रास्ना[2]गुडूचीवाताऽरि देवदारुमहौषधी ।
पिबेत्सर्वाङ्गके वाते[3] साममज्जाऽस्थिसंधिगे ।। ८७ ।।

टीका— राठ, गिलोई, एरण्ड रीजड़, देवदारू, सूंठी औषध सममात्रा क्वाथ कीजै । सर्वाङ्गवाय जाय । आम, मज्जा, हाडगत, संधगत, वाव (वायु) जाई ।

(२६) [लघुरास्ना[4]दिक्वाथः]

रास[4]नाऽमृताऽऽरग्वधदेवदारु[5]—त्रिकण्टकैरण्डपुनर्नवानाम् ।
क्वाथं पिबेन्नागरचूर्ण-मिश्रं जङ्घोरुपृष्ट-त्रिकजा[5]नुशूली ।। ८८ ।।

टीका— राठ, गिलोइ, किरमालौ, देवदारू, कांटी, एरण्डजड़, साटी सममात्रा क्वाथ कीजै, सुंठीचूर्ण प्रतिवास (प्रक्षेप) दीजै । जांघ, उरू, पिष्टि (पृष्ट), त्रिग, गोडां री शूल जाई ।।

(२७) [महारास्ना[6]दिक्वाथः]

रास्ना वाताऽरिमूलं च वासकं च दुरालभाम् ।
शटीदारुबला[7]मुस्तनागरातिविषाऽभयाः ।। ८९ ।।

---

1 क. 'ष्णा' 2 क. 'ष्णा' 3 क. 'तैः'

पाठान्तरम्—शार्ङ्गधरेः—

'रास्नाऽमृतामहादारुनागरैरण्डजैः शृतम् ।
सप्तधातुगते वाते सामे सर्वाङ्गजे पिबेत् ।।

ग. नि. यो. र. वृन्दवै. बृ. यो. त. चक्र. इत्यादिषु ।

'रास्नां गुडूचीमेरण्डं देवदारु महौषधम् ।
पिबेत् सर्वाङ्गगे वाते सामे संध्यस्थिमज्जगे ।।'

4 शा., वृ. यो. त., यो. र. 'रास्नासप्तकक्वाथः' क. 'ष्णा'
5 यो. र. ग. नि. च. 'पार्श्वं' 5 क. 'रु'
6 क. 'ष्णा' 7 मल्लप्र. वचा ।

श्वदंष्ट्राव्याधिघातश्च मि❀सिधान्यपुनर्नवाः ।
अश्वगन्धाऽमृताकृष्णा वृद्धदारुः शतावरी ।। ६० ।।

वचा सहचरश्चैव चविका बृहतीद्वयम् ।
समभागा[1]न्वितैरेतैः रास्ना[2] त्रिगुणभागिकैः ।। ६१ ।।

[3]कषायं पाययेत्सि[3]द्धमष्टभागावशेषितम् ।
[4]शुण्ठीचूर्णसमायुक्तमाभाऽऽद्येन च संयुतम्[4] ।। ६२ ।।

अलम्बुषाऽऽदिसंयुक्तमजमोदादिसंयुतम् ।❀
यथादोषं यथाव्याधि प्रक्षेपं कारयेद्भिषक् ।। ६३ ।।❀

❀ ख. निशि   1 बृ. यो. त. 'नि सर्वाणि'

2 बृ.यो.त.' तत्त्रिगुणा मता'. ख. द्विगुणा 3-3 बृ. यो. त. 'पिबेत्कषायमेतेषां'
4-4 बृ यो. त. 'क्षिप्त्वा नागरचूर्णं च प्रक्षेपोऽत्र यथानलम् ।
ख. सुंठि चूर्णेन संयुक्तं विपेदाभातिकेन वा ।

शा. पाठान्तरम्

'रास्ना द्विगुणभागा स्यादेकभागास्ततः परे ।
धन्वयासबलैरण्डदेवदारुशठीवचाः ।।
वासको नागरं पथ्या चव्या मुस्ता पुनर्नवा ।
गुडूची वृद्धदारुश्च शतपुष्पा च गोक्षुरः ।।
अश्वगंधा प्रतिविषा कृतमालः शतावरी ।
कृष्णा सहचरश्चैव धान्यकं बृहतीद्वयम् ।।
एभिः कृतंपिबेत्क्वाथं शुण्ठीचूर्णेन संयुतम् ।
कृष्णाचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाथ वा ।।
अजमोदादिनावापि तैलेनैरण्डजेन वा ।
सर्वाङ्गकम्पे कुब्जत्वे पक्षाघातेऽवबाहुके ।।
गृध्रस्यामामवाते च श्लीपदे चापतानके ।
अन्त्रवृद्धौ तथाध्मानेजङ्घाजानुगतेऽर्दिते ।।
शुक्रामये मेढ्ररोगे वन्ध्यायोन्यामयेषु च ।
महारास्नादिराख्यातो ब्रह्मणा गर्भकारणम् ।।

❀ ख. अलंबुषादिनाथैव ।। मजमोदादिनाथवा ।।
❀ ख. यथादोषं या व्याधि प्रक्षेपं कारयेद्भिषक ।।

सर्वेषु वातरोगेषु [1]सन्धि मज्जागतेषु च[1] ।
[2]आनाहेषु च सर्वेषु सर्ववातानुकम्पिते[2] ।। ९४ ।।

[3]-कुब्जके वामने चैव पक्षाघाते तथाऽर्दिते-[3] ।
जानुजङ्घाऽस्थिपीडासु गृध्रस्यां च हनुग्रहे ।। ९५ ।।

[4]प्रशस्तं वातरक्ते स्यादूरुस्तम्भे तथाऽर्शसि ।
विश्वाची-गुल्महृद्रोगविषूची क्रोष्टुशीर्षके ।। ९६ ।।

अण्डवृद्धौ श्लीपदे च[4] योनिशुक्रामये तथा ।
पुंसां मेढ्रगते रो[5]गे स्त्रीणां वन्ध्यामये तथा ।। ९७ ।।

योषितां गर्भदं पु[6]ष्पं नास्ति[7] तस्मात्परं[8] क्वचित् ।
सर्वेषां पाचनानां तु श्रेष्ठमेतद्धि पाचनम् ।। ९८ ।।

महारास्नाऽऽदिकं[9] नाम[9] प्रजापति[9]विनिर्मितम् ।

1-1 बृ. यो. त. 'सामेषुच विशेषतः' ख. संधिमज्जगलेषु च ।।
2-3 बृ. यो. त. 'पक्षाघातेऽर्दिते कम्पे कुब्जे संधिगतेऽनिले ।
4-4 ख. आनाहेशु चस्तलेषु सर्वगात्रान कंपने, बृ. यो. त. उरुस्तम्भे वातरक्ते विश्वाच्यां क्रोष्टुशीर्षके ।। हृदामये च दुर्नाम्नि योनि...........'
5 बृ. यो. त. 'वाते' 6 बृ. यो. त. मुख्यं' 7 'बृ. यो. त. 'स्त्यस्मात् 8 बृ.यो.त. 'परमौषधम्' 9-9 बृ. यो. त. 'क्वथो वेधसाऽयं । खग्रंथे 95-98 श्लोकाः नोद्धृताः ।

०यो. सा. पाठांतरम्—

'रास्नैरण्डमृतोग्रासहचरचविका-रामसेनाब्दभार्गी—
दीप्या-नन्ता-यवानी-वृकिसुर-कृमिजिच्छिङ्गशुण्ठीबलाभिः ।
मूर्वातिक्तासमङ्गा-द्विविषशटिवरा-पिप्पलीयावशूकै—
रक्तश्रीखण्डकारग्वधकटुक-फलैर्वत्सवृश्चीवयुक्तैः ।। 1 ।।

सर्वैरेतैर्दशाङ्घ्रिप्रयुतसमलवै. साधितोऽष्टावशेषः—
क्वाथो रास्नादिरादौ महदुपपदवान् कौशिकाक्तो निहन्ति ।
सर्वाङ्गैकाङ्गवातान् श्वसनकसनहृत्स्वेदशैत्यादितन्द्रा—
शूलं तूनीप्रतूनीगलगदनिखलाङ्गव्यथाकम्पखल्लीः ।। 2 ।।

टीका:—राठ[1], एरण्ड रीजड, अरडूसौ, धमासौ[2], सठि, देवदारू, [3]वील, मोथ, सूंठि, पतीस, हरडै, कांटी, किर[4]मालौ, सौवा[5], धाणा, [पुनर्नवा][5]आसगंधि, गिलोइ[6], पीपलि, बधाइरौ, श[7]तावरि, बच, कंटा[8]सेलो, चविक, बैठी [9]रींगणी, उभीरीगणी, उषध [10]स्म (सम) भाग, उषध हुंती [11]राठ त्रिगुणौ लीजै । प्रतिवास सूठि रौ चूर्ण घातीजे, भावै (चाहे) आभा[12]दि, भावै अजमो[13]दादि, भावै अलंबुषा[14]दि भावै ति[15]सडा वायु रा रोग पाठ मांहि कह्या जितरा रोग सर्वजाई । तिसडा अवगुण दीसै तिसडा (दोषानुसार) प्रतिवास दीजै । आभा षुरसांणी बच जिण रा डाल्हा ऊंभा हुवै अपर अलंबुषा वोडथेरी? ॥

विश्वाची-श्लीपदामानिल-निखिलमहासूतिकारोगसुप्ति—
जिह्वास्तम्भापतानं स्फुटनविमथनक्लीबताक्षेपकौब्जम् ।
शोफाटोपापतन्त्रार्दितखुडहनुरुग्गृध्रसीपादशूलं ।
वायुश्लेष्मोत्थरोगानपि गिरितनयावल्लभेनोपदिष्टः ॥

अन्यमहारास्नादिक्वाथ. बृ. यो. त.

'रास्ना त्रिः पृथगेकभागमपरं
सैर्याब्द-यासामृता—
श्चोग्रा दार्व्यभयाग्वंधक्षुरसटी
शुण्ठी-कणा-वेल्लरी ।
व्याघ्रचौ धात्र्यविषावरीवृषबलैरण्डं विशाखो मिश्रि—
श्चव्यं चेति शृतं सविश्वमनिले सामे रुबुस्नेहयुक् ॥

इति महारास्नादिक्वाथः'

सैर्या=कटसरैया, यास=जवासा, उग्रा=वच, क्षुर—गोक्षुर, वेल्ल—विडंग या कालीमिरच ।

1 ख. सुरही 2 ख. जवासा री जड 3 ख. सामस की जड़? (बला) 4 ख. किरवारो 5 ख. सौप(सौंफ) 5 ख. धाणा और असगंध के बीच साटी (पुनर्नवा) भी है। 6 ख. गोरोची 7 ख. स्तावरी 8 ख. पियाबांसे की जड़ 9 ख. विरहटी 10 ख. सर्वसमान 11 ख. सुरही सब ही तैं दूनौ 12 ख. आभादि चूर्ण 13 ख. अजमोदादि गुटिका 14 ख. अलंबुषादि चूर्ण 15 ख. इन्हों का प्रक्षेपु सैं काढो दीजै ।

(२८) [अथ माषादिक्वाथः[1]]

माष[2]वलाशुक[3]शिम्बी क[4]त्तृणरास्ना[5]श्वगन्धारुबूका[6]णाम् ।
※क्वाथो यस्य–[7]नि– पीतो[8] राम[10]ठलबणान्वितः काष्णः ।। ९९ ।।※

अपह[14]रति पक्षा[9]घातं[10] मन्या[11]स्तम्भ[12] सकर्णनादरु[13]जम् ।[15]
[दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् ।। १०० ।।]

टीका — उड़द, बल[16] रीजड़, कौंछ[17]रीजड़ रोहि[18]प, राठ, एरण्ड [व अ[19]स-गंध] उषध सममात्रा । क्वाथ करि, उपरि प्रतिवास सौउचल (संच-रनमक) हींग, सींधव रो चूर्ण दीजै । थोड़ो गरम थको पाजै । पक्षा-घात मन [मन्या]स्तंभ जाइ ।।

---

1 यो. र., बृ. यो. त., च 'माषादिसप्तकम्' ख. माषवलादि चक्र० भै. र., ग. नि. च 'माषबलादिक्वाथः' 2. ख. माषकलास्तक 2 क. 'पा', 3 क. 'सि', 4 क. 'टणः' 5 क. 'ष्णो' ख. रास्नोरुबक 6 क. करुचकानाम्' 7 क. 'न्ति' ख. नसति 8 क 'तः' 9 क. 'ष्या' ※ ख. त. 10 ख० क. 'तः' 11. क. 'न्य०' ख. मनिस्तं 12 क. 'भा' 13 क. 'झा' 13 क. 'यद्दि' 12-13 ख. क्षि. ख. भाद्रितं जयति 14 यो. र., र. र. 'अपनयति' ख. उपहरति 12-13 यो. र., चक्र., भै. र., ग. नि., भै. र. च, 'सकर्णनादरुजम्' 15. बृ. यो. त. यो. र., ग. नि., भै. र. इत्यादिषु, अस्मात्परं दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् । इत्यधिकः पाठः । 16 ख. सामस 17 ख. कैछ की नर 18 ख. रोहीस 19 ख. असगंध नहीं है ।

※ ※ र. र. 'क्वाथो नश्यति पीतो वासावैलवणान्वितः कोष्णः' ।

भा. प्र. आदिषु पाठान्तरम्:— (ग. नि., यो. र.)

'माषात्मगुप्तावातारि वाट्यालकजटाशृतम् ।
हिङ्गु—सैंधवसंयुक्तं पक्षाघातं विनाशयेत् ।।
माषिके हिङ्गुसिन्धूत्थे जरणाद्यास्तु शाणिकाः ।।
आत्मगुप्त—कौंचबीज, वातारि—एरण्ड, वाट्यालकजटा—खिरेटी की जड़, जरण—जीरा

(२९) [अथ द्राक्षादि-क्वाथ:][1]

द्रा[1]क्षाऽमृता शटी शृ[2]ङ्गी मुस्[3]तकं रक्तचन्दनम् ।
नागरं कटुका पाठा भूनिम्ब: सदुरालभा ।। १०१ ।।

उ[4]शीरं प[5]द्मकं धान्यं बालकं कण्टकारिका ।
पुष्करं पि[6]चुमन्दश्च दशाष्टाङ्गमिदं शुभम् ।। १०२ ।।

जीर्णज्वराऽरुचिश्वास[7] कास[8]श्वय[9]थुनाश[10]नम् ।

टीका:– द्राख, गिलोइ, सटी, काकड़ासिंगी, मोथ, रतांजणी, सूंठी, कुटक, पाठ, किरायतो, ध[11]मासौ, उसीर, पदमा[12]ख, धा[13]णा, बालो[14], रीगणी, पुष्करमूल, एरण्ड री[15] छलि ? (यह मूल पाठ में नहीं है) निंबछालि, सममात्रा क्वाथ कीजै । गुण पाठन्तरे ? (पाठ में कहे गये)

(३०) [मञ्जिष्ठादिक[16]वाथ:]

मंजि[17]'ष्ठा कुटजाऽमृताघ[18]नवचा शुण्ठी हरिद्राद्वयं—
मूर्वा–दारु–कलिङ्ग–भृ[19]ङ्ग–मग[20]धा–त्रा[21]यन्ति–पाठा–[22]वरी: ।

गायत्री[23]–त्रिफला–किरातक[24]–महानिम्बासनारग्वधा:—
श्यामा[25]–वल्गुज–चन्दनं वरुणकं दन्तीक[26] शाखोटकम् ।। १०३ ।।

---

1 यो. र. बृ. यो. त. च 'द्राक्षादिचूर्णम्' 1 ख. द्राक्ष्या भा. प्र. 'द्राक्षाऽद्यष्टादशाङ्ग-क्वाथ:', ज्व. ति. भा. 'अष्टादशाङ्ग:' 2 ख. 'शुण्ठी' 3 क. 'क्ता' 4 क. 'सी' 5 क. 'दम' 6 क. 'पच' ख. पिचमंदच् । 7 ख. रुचिरस्वास 8 क. 'सा' 9 क. श. 10 क. स, खषयत 11 ख. जवासे री जड़ 12 ख. पद्माक्षि 13 ख. धनो 14 ख. वारो 15 ख. एरण्ड नहीं है ।

16 बृ. यो. त. 'सामान्यमञ्जिष्ठादिक्वाथ:', भा. प्र., भै. र., च बृहन् मञ्जिष्ठादि, वृ. वै. 'महामञ्जिष्ठादि' इति नामानि । 17 क. ख. मंजिष्टा, 18 वृ. वै. वनवचा ख. घनवचा 19 भा. प्र. मुण्डी, ख. सुंठी 20 वृ. वै. श्रृङ्ग ख. मृग 21 वृ.वै मभया'क. वरी 22-23 वृ. वै. 'पूतिकमाक्षोटकम् । (पूतीक:–पूतिकरञ्ज:, अक्षोट:- कर्पराल- 'अखरोट' इति लोके 24. क. गायंती 25 ख. किराततिक्ता निम्बासतारग्वधा, क॰ ··· निम्बस्यसारंगधकं ? वृ. वै.···· निंबासनं चन्दनम्, बृ. यो. त. ···· निम्बोषणारग्वधा वृ. वै. श्यामाऽरग्वध क. स्यामवालजचंदनेन 26 क. पोतसखोटक:, बृ. यो. त. ख. श्यामापूतिक ।

क्षु[1]द्रारिष्टपटोल—(ति[2]क्त)—कटुका—भा[3]र्ङ्गीबिडङ्गा[4]ग्निकं—
वासा[5]पर्पटसारिवाप्रतिविषाऽनन्ताविशालाज[6]लम् ।

मञ्जिष्ठादि[7]रसौ कषायवि[8]धिना नि[9]त्यं पुमान्यः[10] पिबेत्—
[11]त्वग्दोषाः[12] सु[12]चिरेण यान्ति वि[13]लयं कुष्ठानि[14]चाऽष्टादश ॥१०४॥❀

वातरक्ते प्र[15]सुप्ते च वि[16]स्फोटे विद्रधौ त[16]था ।
सर्वेषु रक्तदो[17]षेषु मञ्जिष्ठा[18]दि[:] प्रशस्यते ॥ १०५ ॥

टीका:— मंजीठ, कुडाछाल, गिलोई, मोथ, वच, सूंठि, हलद [दारूहलद(भी)— मूलपाठ मे 'हरिद्राद्वयम्' है] मर[19]वा ? [मूल पाठ में 'मूर्वा' है—मरवा नहीं है], देवदारू, इन्द्रजव, तज [भृङ्ग को तज भी कहते है किन्तु यहां भांगरा अधिक उपयुक्त है— पाठान्तरों में भी 'भृङ्गराज' मिलता है], पीपलि, त्राहिमाण, पाठ, सितावरि, रवैरसार, हरडै, वेहड़ा, आंवला, किरायतौ, ब[20]कावणि, [मूल पाठ में इसके आगे 'असन' है असन= विज[21]यसार], किर[22]मालौ, प्रिय[23]ङ्गु, बा[24]ला, सुकडि, वरणौ, कि[25]णगची रा पान ? [मूलपाठ में 'दन्तीं' है] आंधाझाडो ? [मूल-पाठ में 'शाखोटक' है, शारवोटक= सिहोरा की[26] छाल्] [इसके आगे

---

1 वृ.वै. द्राक्षा, ख. क्षद्रा 2 ख. कुषुकुपका वृ.वै. पत्रज 3 क॰ क भाङ्गी 4 क. बिडगानिक, ख. विंडगान्वित 5 क. पुष्करः, ख. पद्मक 6 क. डम् ख. द्वयम्, वृ. वै. विशालाञ्जनम् 7 क. रियं, वृ. वै. रसौ, भै-र., भा. प्र. च मञ्जिष्ठाप्रथमं वृ यो. त. मिम 8 भा. प्र., भै. र. च मिति यः 9 वृ. वै. संसाधितो देहिनाम्, भा. प्र., भै. र. च. संसेवते तस्य तु 10 ख. नित्यं घुमानयः पिवेत् 11 क. त्वाग्दोषा 12 क, दोषांश्च वृ. यो. त. दोषाद्य 13 वृ. वै. त्वग्दो-षान्नखिलान्निहन्तिनचिरात् । 14 क. चष्टादश ❀ अस्मात्परं भा. प्र.—
'नाशं गच्छति वातरक्तमखिला नश्यन्ति रक्तामया । वीसर्पस्त्वचि शून्यता नयनजाः रोगाः प्रशाम्यन्ति च ।। इत्यधिकः पाठः ।
15 क. 'प्रसेते', ख. प्रसूप्ते 16-16 वृ.वै. 'विद्रधौ च प्रमेहके' 17 वृ.वै. रोगेषु' 18 ख. मंजिष्टादिप्रससिते । 19 ख. मरहटी 20 ख. कुटकी बकाइन 21 ख. विजयासारू असनसार, 22 ख. किरवारो 23 ख. निसोत 24 ख. बाला नहीं है 25 ख. दंती नहीं लिखी 26 ख. सिहोरा की छालि ।

मूल पाठ में [1]'क्षुद्रा' है], नींव री छालि, पटोलि, ['कुटकी'], भाडंगी, बिडग, चित्रक, अरडूसौ, पोह[2]करमूल [मूलपाठ में पर्पट है– पुष्कर-मूल नहीं है, पर्पट=पित्तपापड़ा] सारिवा, अतीस, जवासौ, बुई रीजड [मूलपाठ में बुई कीजड़ नहीं है, वहां विशाला (इन्द्रा[3]यण व जलम् (वाला) है ।] औषध सममात्रा क्वाथ कीजै । अठारह कोढ़ जाई ।

पाठान्तराणि

ग. नि. पाठान्तरम्ः— (मञ्जिष्ठाद्यो महाकषायः)

'मञ्जिष्ठा पिचुमन्द-चन्दनघन—च्छिन्नागवाक्षीविषा
त्रायन्तीत्रिवृतासनद्विरजनीभूनिम्बपाठावृषैः ।
गायत्रीत्रिफलापटोलकटुकाकीटद्विषत्पर्पटै—
रुग्रावल्गुजयासवत्सकयुतैः क्वाथं विदध्याद्भिषक् ।।

कण्डूमण्डलपुण्डरीककिटिमैः पामाविचर्चिव्रणैः
सिध्मश्वित्रविसर्पदद्रुरक 4 सैर्व्याप्ताः प्रसुप्तत्वचः ।
ये चान्ये गलरोगचक्षुवदनघ्राणच्युताः कुष्ठिनः
प्राप्यैनंतु महाकषायमचिरात्स्युः कामरूपान्विताः ।।

बृ. यो. त, यो. त. च 'मध्यममञ्जिष्ठादि' (योगरत्नावलीतः)

'मञ्जिष्ठारिष्टवासात्रिफलदहनकं द्वे हरिद्रे गुडूची—
भूनिम्बो रक्तसारः सखदिरकटुका वाकुचीव्याधिघातः ।
मूर्वादंतीविशाला-कृमिरिपुजटिलावा[1]यसी-रारास्न[8]पाठा-
श्यामाऽनन्तापटोलैः समरिचमगधैः साधितोऽयं कषायः ।।
पीतो हन्यात् समस्तान् सकलतनुगतान् रक्तजाताान्विकारान् ।
कण्डूविस्फोटकादीनलसक[2]विषमश्वित्रपामादिदोषान् ।।

1 ख. ग्रंथ में क्षुद्रा नहीं हैं । सिहोरे के पश्चात् अरडूसा की जड़ कहा गया हैं, क्षुद्रा, नींमछाल, पटोल, कुटक, भार्गी, विंडग और चित्रक ये द्रव्य नहीं हैं । 2 ख. पद्माख 3 ख. वड़ी लहूडी ।

दहनकं=चित्रकं,व्याधिघातः = आरग्वध, विशाला = इन्द्रवारुणी जटिला=वचा, वायसी=मकोय अथवा काकनासा, श्यामा=निशोत्री, अनन्ता=धन्वयासः (जवासा इति लोके)

(३१) [किरातादिक्वाथः]

किराता❀ब्दामृतोदीच्य–बृहतीद्वयगोक्षुरैः❀ ।
सस्थि[1]राकलशी[2]विश्वैः क्वाथो वातज्वराप[1]हः ।। १०६ ।।

टीकाः—किरायतौ, [मोथा]गिलोई, वालौ, रींगणी दोन्यू, कांटी सालीवणी, पीठवनी, सूंठी ग्रौषध सम भाग क्वाथ कीजै । वात? [वातज्वर]जाइ ।।

(३२) [दुरालभादि क्वाथः]

दुरालभापर्पटकप्रि❀यङ्गुभूनिम्बवासाकटुरोहिणीनाम् ❀ ।
ज[3]लं पिबेच्छर्कर[4]याऽवगाढं तृष्णाऽ[5]स्रपित्तज्वर दाहयुक्तः ।। १०७ ।।

पटोल-कटुकी-मूर्वा-विडङ्गासनचित्रकैः ।
शतावरीत्रायमाणा-कृष्णेन्द्रयववासकैः ।।
भृङ्गराजमहादारुपाठाखदिरचन्दनैः ।
त्रिवृद्वरुणकैरातबाकुचीकृतमालकैः ।।
शाखोटकमहानिम्बकरञ्जातिविषाजलैः ।
इन्द्रवारुणिकानन्तासारिवापर्पटैः समैः ।।
एभिः कृतं पिबेत्क्वाथं कणागुग्गुलुसंयुतम् ।
ग्रष्टादशसु कुष्ठेषु वातरक्तार्दिते तथा ।।
उपदंशे श्लीपदे च प्रसुप्तौ पक्षघातके ।
मेदोदोषे नेत्ररोगे मञ्जिष्ठादिः प्रशस्यते ।।

❀ ज्व. ति. भा. 'तकामृ' ख. किरातकामृतोदीच, ❀ ख. गोक्षुरु 1-1 वृ. वै. 'कषायः साधितः सम्यग्वातज्वरविनाशकः । भा. प्र. 'त्रिपर्णीकलशीबिल्वै.......'
ख. सस्थिराकलिसी

२ क. 'सी' ❀-❀ ख. प्रयंग भूनिववासाकटुरोहिणीना
3 यो. र., बृ. यो. त., वृ. वै., यो. त., ख. 'क्वाथं' 4 ख. पीद्यगाठ
5 वृ. वै. 'ति' 5 ख. मल

भै. र. पाठान्तरम्—प्रियङ्गुनिम्बं कटुरोहिणीनाम् ।
'दुरालभावासकपर्पटानां
किराततिक्तं क्वथित कषायं सशर्कराढ्यं क्वथितं च पाचनम् ।।
सदाहपित्तज्वरमाशु हन्ति तृष्णाभ्रमं शोथविकारयुक्तम् ।।

टीका:—घमासौ, पित्तपापडौ, प्रियंगु, किरायतो, अरडूसो कटुक, ओषध सम-मात्रा, क्वाथ करि पाईजै । निवात (शक्कर) प्रतिवास दीजै । तृष्णा, अम्ल ?(रक्त) पित्त, ज्वर जाइ दाह सहित ।।

(३३) [बीजपूरादिक्वाथः]

[1]बीज[2]पूरशि[3]फापथ्या–नागर[4]ग्रन्थिकैः शृ[5]तम् ।
स[6]क्षारं पाचनं श्लेष्म[7]ज्वरे द्वादश[8]वासरे ।। १०८ ।।

टीका:—बिजोरा रीजड़, हरडै, सूंठि, पीपलामूल, ओषध सम-मात्रा, क्वाथ करि पाईजं । प्रतिवास साजी - जवाखार - सोहगी [कोई क्षार] रो चूर्ण कीजै । श्लेष्मज्वर जाई ।।

(३४) [गु[9]डूच्यादिक्वाथः]

गु[9]डूचीमुस्तधात्रीणां कषायं च समाक्षि[10]कम्[11] ।
एकाहिकमहोरात्र[12] मेककाल[13]ज्वरं जयेत् ।। १०९ ।।

टीका:—गिलोई, मोथ, आंवला, ओषध समान मात्र क्वाथ । सहित (मधु) प्रतिवास । एककालज्वर जाइ ।।

---

1 ख. क. 'वी', 2 क. 'पु' 2-3 ख. पूरे 'शिष्पा', यो. र., बृ, यो. त. च 'शिफा' ख. सिपा 4 ख. रमृ, क. 'रैः', 5 क. 'सृ' ख. श्रंत 6 क. 'खा', 7 क. 'ष्मः', 8 क. ख. पुस्तके च 'स'

पाठान्तरम्—चक्र:—
'मातुलुङ्गशिफाविश्वं-ब्राह्मीग्रन्थिकसम्भवम् ।
कफज्वरेऽम्बु सक्षारं पाचनं वा कणादिकम् ।।'

9 क. 'ग', ख. ०मुस्व 10-11 क. ख., 'क्षक' 12 क. 'त्र' 13 क. 'लं'

पाठान्तराणि:— (1) ज्व. ति. भा:—
'गुड्च्यामलकीमुस्ता-क्वाथो मधुसमन्वितः ।
ज्वरं निवारयत्याशु चतुर्थदिनसम्भवम् ।।'

चक्र० 'गुडप्रगाढां त्रिफलां पिबेद्वा विषमार्दितः ।
गुडूचीमुस्तधात्रीणां कषायं वा समाक्षिकम् ।'

चक्र०, भा. प्र., बृ. यो. त. च 'गुडूच्याऽऽमलकं मुस्तमर्द्ध श्लोकसमापनाः ।
कषायाः शमयन्त्याशु पञ्च पञ्चविधान् ज्वरान् ।।

(३५) [गु[1]डूच्यादिक्वाथः] (अपरः)

गु[1]डूचीधान्यमुस्ताभिश्चन्दनोदी[2] च्यनागरैः[3] ।
❀कृतं क्वाथं पिबे[4]त् क्षौद्र[5]सितायुक्तं ज्वरातुरः ।। ११० ।।
तृतीयज्वरनाशाय तृष्णा - दाहनिवारणम्❀ ।। १११ ।।

टीका:—गिलोई, धाणा, मोथ, चन्दन, बालो, सूंठि, सममात्रा क्वाथ कीजै । प्रतिबास सहित (मधु), निवास (शर्करा) दीजै । तेजरो, तृष्णा, दाह-सहित जाई ।

(३६) [अथ पटो[6]लादिक्वाथः]

पटोलबालकं कृ[7]ष्णा भूनिम्बं रक्तचन्दनम् ।
मुस्तापर्पटकं विश्वमु[8]शीरं कटुरोहिणी ।। ११२ ।।
समभागैः[9] शृतंतोयं रात्रिज्वरहरं पिबेत् ।
अ[10]म्लपित्तं[11] जयेद्दाहं सर्वज्वर[12]कुलान्तकम् ।। ११३ ।।

वार्त्ता:— पटोल, बालो, पीपली, किराइतो, रक्तचंदन, मोथ, पितपापड़ो, सूंठी, उसीर, कटुक औषध समभागक्वाथ । रात्रिज्वर जाई ।।

---

1 क. 'ग'. 2 शा., यो. त. च 'शीर', 3 क. 'रै' 4 क. 'बै' 5 क. 'द्रं'
❀ ❀ 'कृतं क्वाथं दाहनिवारणम्' वृ. वै., यो. त. च न दृश्यते ।
तत्र अयं श्लोकार्द्धो वर्ततेः—
'सितामधुयुतः क्वाथस्तृतीयज्वरनाशनः ।'
पाठान्तरम् भा. प्र., भै. र., वृ. यो. त. चः—
'उशीरं चन्दनं मुस्तं गुडूची धान्यनागरम् ।
अम्भसा क्वथितं पेयं शर्करामधुयोजितम् ।।
ज्वरे तृतीयके पुंसां तृष्णादाहसमन्विते ।।'
अन्यपाठान्तरम् ग. नि., चक्र., वृ वै., भै. र. चः—
'महौषधामृतामुस्त—चन्दनोशीरधान्यकैः ।
क्वाथस्तृतीयकं हन्ति शर्करामधुयोजितः (कुत्रचित् संयुतः) ।।
अपरं ग. निः— 'मुस्ताविश्वामृतं धान्यं बालकं चन्दनं समम् ।
क्वाथो मधुसितायुक्तस्त्र्याहिकज्वरनाशनः ।।
6 क. रो 7 क. तृ 8 क. सी
9 क. 'गै', 10 क. ''आ'' 11 क. 'त्त' 12 क. 'क'

(३७) [अथ र[1]क्तगुल्मे क्वाथ:[2]]

※तिलक्वाथं गुडं[3] साज्यं शु[4]ण्ठीभा[5]र्गीयुतं पिबेत् ।※
पाना[6]–द्रक्तभवं गुल्मं नष्टपुष्पं च योषिता: ।। ११४ ।।※

टीका:—तिलां रो क्वाथ, गुड, घृत, सूंठि, भाडंगो क्वाथ करि पाईजै । पाढोक्तरोग जाई ।।

(३८) [अथ जातिपत्रादिक्वाथ:]

जातीप[7]त्रामृताद्राक्षा[8]–पाठादार्वीफलत्रिकै:[9] ।
क्वाथ: क्षौ[10]द्रयुत: [11]शीतो गण्डू[12]षो मुखपाकनु[13]त् ।। ११५ ।।※

टीका:—जाई (चमेली) रा पान, गिलोइ, दाख, पाठ, दारुहलद, हरडै, बेहडा. आँवला, औषध सम मात्रा क्वाथ कीजै । सहित (मधु) प्रतिवास (प्रक्षेप) दीजै । ठाड़ो (शीतल) करीजै । कुरला (गण्डूष) कराईजे । मुखपाक जाई ।।

---

1 क. अथाती 2 क. क्वाथ 3 क. गुड 4 क. सूंठी, ख. सुभी 5 क. र्भागी, 6 ख. पानीद्रक ※ "तिलक्वाथं…" अस्मिन्स्थाने 'तिलक्वाथो गुडव्योषहिङ्गुभार्गीयुतो भवेत्' इति श्लोकार्द्धं: र. र., चक्र., ग. नि., बृ. यो. त., बृ. वै., यो. त., भै. र. च वर्तते । यो. र.…भार्गी रजोन्वित:, बृ. यो. त. … हित:, भा. प्र., यो. र., अ. हृ. च 'हिङ्गु' स्थाने घृत एव वर्तते ।

※ 'पानाद्रक्त भवं…' अस्मिन्स्थाने चक्र., ग. नि, बृ. यो. त. च

'पानं रक्तभवे गुल्मे नष्टे पुष्पे च योषिताम्" (योषित:) भा. प्र. तु 'योनिरक्त भवं गुल्मं नष्टपुष्पेषु योषित:' इति पठित: ।. बृ. यो. त. डामरतन्त्रोक्तं पाठान्तरम्—

'क्वाथस्तिलानां सघृतं निपीतो भारंगि-विश्वामगधामरीचै: ।'

7 क. पत्र 8 यो. र., यो.त., बृ. वै., बृ. यो. त. भा. प्र. चक्र. 'यास' इति पाठान्तरम्, ख. द्राक्ष्या (यास: जवासा इति लोके)

9 क. ख. फलत्रिकै 10 ख. क्षद्र 11 क. पीतो 12 क. गण्डूको 13 ख. नुत ।

※ अस्मात्परं ख. ग्रन्थे 'इति योगशास्त्रे सुस्त्रत (सुश्रुत !) मते आनन्दसिधि कलतं ? योगमाला क्वाथाधिकार समाप्त' इति पाठ:

पाठान्तम् शा.

'मुखपाकनाशकगण्डूष:'
'दार्वीगुडूची त्रिफला द्राक्षा जात्याश्च पल्लवा: ।
यवासश्चेति तत्क्वाथ: षष्ठांशक्षौद्रसंयुत: ।।
शीते मुखे धृतो हन्यान्मुखपाकं त्रिदोषजम् ।।

(३९) [अथ [1]गुडूच्यादिगण:]

[1]गुडूचीधान्यकारिष्ट–रक्त[2]चन्दनपद्मकैः ।
❀गु[1]डूच्यादिगणः क्वाथः सर्वज्वर[3]हरः स्मृतः ❀ ।। ११६ ।।
दीपनो दाहहृल्लासतृष्णाच्छर्द्यरुचीर्जये[4]त् ।।

टीका:—गिलोई, धाणा, नींब, रतांजणी, पदमाख, श्रोषध, सममात्रा, क्वाथ कीजैं, पाठोक्त रोग जाई ।।

(४०) [अथ शालपर्ण्यादिक्वाथ:]

शाल[5]पर्णी बला द्रा[6]क्षा गुडूची सारिवा त[7]था ।
[8]क्वाथो गुडयु[8]तं पीतं वातज्वरनिवारणम् ।।❀११७ ।।

---

1 क-'ग' 2 भा.प्र., चक्र. मैं-र-च 'पद्मकं रक्तचन्दनम्' ❀-❀ 'गुडूच्यादिगणः........ ....' अस्मिन्स्थाने—भावप्रकाशे—

'एषां क्वाथः सुप्रसिद्धः सर्वज्वरहरः स्मृतः'

3 क. रः 4 भा. प्र. 'हरेत्'

पाठान्तराणि:-(1) सुश्रुते–'गुडूची-निम्ब-कुस्तुम्बुरु-चन्दनानि पद्मकं चेति ।।
एष सर्वज्वरान् हन्ति गुडूच्यादिस्तु दीपनः ।।
हृल्लासारोचकवमीपिपासादाहनाशनः ।।

(2) क्वाथ म. मा., र-र. वृ वै.च. 'गुडूचीनिम्बधान्याकं पद्मकं रक्तचन्दनम् ❀ ।

(3) ज्व. ति. भा. 'गुडूचीनिम्वधान्याकचन्दनं पद्मकान्वितम् ।
तृष्णा-दाह-रुचिच्छर्दि-सर्वज्वरहरो गणः ।।'

(4) यो. र., यो. त. बृ. यो. त. च 'अमृतारिष्टक-❀चन्दनपद्मक धान्योद्भवः क्वाथः ।
ज्वरहृल्लासच्छर्दितृष्णादाहारुचीर्हन्यात् ।।'
❀बृ. यो. त. 'कुचन्दनम्'

5 क. शालपर्ण्या 6 यो. र. 'रास्ना' 7 क. वास्तथा 8-8 क. गुडां क्वाथयुतं ।

❀'क्वाथो गुड............निवारणम्' अस्मिन्स्थाने 'आसां क्वाथं पिबेत्कोष्णं तीव्रवात-ज्वरच्छिदम् इति शा., यो. त., यो. र., भै-र, बृ. यो. त च पाठो वर्तते ।
❀पाठान्तराणि:– (1) वृ. वै., चक्र. च

टीका:– सालीवनी, गंगेरण, दाख, गिलोई, सारिवा, समभाग क्वाथ । प्रतिवास गुल (गुड) तीव्रज्वर जाई ।।

(४१) [अथ वातज्वरे गुडूच्यादि क्वाथ:]

गुडूची रामसेनं च विश्वमेरण्डधान्यकम् ।
क्वाथो गुडयुत: पीतस्तीव्रवातज्वरापह ।।※११८ ।।

टीका:–गिलोई, कीरायती, सूंठि, एरण्ड री जड, धाणा, ओषध सममात्रा क्वाथ । गुगल ? (गुड) प्रतिवास ।

(४२) [अथ पित्ताज्वरे द्राक्षादिक्वाथ:]

द्राक्षाऽभ[1]यापर्पटका[2]ब्द[2]तिक्ता–क्वाथं सशम्पाकफलं विदध्यात् ।
[4]प्रलापमूर्च्छा[4]भ्रमदाहशो[3]षतृषाऽन्विते पित्त[5]भवे ज्वरे च[5] ।। ११९ ।।

'द्राक्षागुडूचीकाश्मर्यंत्रायमाणा:ससारिवा: ।
निष्क्वाथ्य सगुड: क्वाथो वातज्वरविनाशन: ।'

(2) गदनिग्रहे—
"गुडूची सारिवा द्राक्षा बला चांशुमती तथा ।
सिद्ध एषाँ कषायस्तु वातज्वरविनाशन: ।।

※ पाठान्तरेण:— (1) ग. नि०—
'अमृतोरुबूकविश्वा-सुरतरुरास्ना-हरीतकीक्वाथ: ।
सकल समीरणरोगान् प्रात: पीतो हरेत्सद्य: ।।'

(2) ज्व. ति. भा.
'एरण्डमूलधान्याकशुण्ठिभि: साधितं जलम् ।
बस्तिसंशोधनं पेयं शूलामाजीर्णनाशनम् ।।

1 क्वा. म. मा. 'ऽमृता' किन्तु 'अभया' इति पाठस्साधु: ।
2 वृ. वै. 'कांश्च';
2 र. र. 'काम्ल'; 3 क्वा. म. मा. 'मोह'
4-4 वृ. वै. 'मोहप्रलाप'
5-5 वृ. वै. 'पित्तजतापतप्ते'

टीका:—दाख, हरडै, पितपापड़ौ, मोथ, कटुक, किरमालौ, औषध सम भाग।
[इनका क्वाथ]

(४३) [अथ गु[1]डूच्यादिक्वाथः]

गु[1]डूची चन्दनं निम्बं धान्यकं पर्पटस्तथा।
क्वाथं कृत्वा प्रदातव्यं[2] पित्तज्वरनिवारणम्॥ १२०॥

टीका:—गिलोई, सूकड़ी (रक्तचंदन), नींब, धाणा, पितपापड़ौ औषध सम-
भागि क्वाथ कीजै। पित्ताज्वरजाई॥

(४४) [अथ कफज्वरे भूनिम्बादिक्वाथः]

भूनिम्ब-निम्ब-पिप्पल्यः शटी शुण्ठी शतावरी।
गुडूची बृहती चेति क्वाथं हन्यात् कफज्वरम्॥ १२१॥

टीका:—किराइतौ, नीव, पीप्पली, सठी, सुंठी, सतावरी, गिलोई, उभीरीगणी
औषध सममात्र क्वाथ। कफज्वर जाइ॥

(४५) [अथ वासकादिक्वाथः]

वृषखदिरवृहत्या—रामसेनोऽथ विश्व—
मपहरति कषायं ? पीतमात्रं प्रभाते।
सकलमुनिभिरुक्तं व्याधिविध्वंसकारी—
.... ॥ * १२२॥

पाठान्तरम्—शा. "द्राक्षा हरीतकी मुस्तं कटुकी कृतमालकः।
पर्पटश्च कृत क्वाथ एषां पित्तज्वरापहः॥
*तृण्मूर्च्छादाहपित्तासृक्शमनो भेदनः स्मृतः" *

*'तृण्मूर्च्छा .... स्मृतः' अस्मिन्स्थाने "मुखशोषप्रलापोर्तिदाहमूर्च्छाभ्रमप्रणुत्॥
पिपासारक्तपित्तानां शमनो भेदनो मत." इति श्लोकः—भा०प्र. मै. र. च वर्तते।

1 क. 'ग' 2 क. 'व्या'

* क. पद्यस्यास्यनैवास्ति चतुर्थः पादः।

(४६) [अथ पर्पटादिक्वाथः]

पर्पटाब्दामृताविश्व[1]कैरातैः साधितं जलम् ।
पञ्चभद्रमिदं ज्ञेयं वातपित्तज्वरापहम् ॥ १२३ ॥

टीका:—पित्तपापडौ, मोथ, गिलोइ, सुंठि, किराइतौ ओषध सममात्रा क्वाथ। वातपित्तज्वरजाई ।

(४७) [अथ अमृतादिक्वाथः पित्तश्लेष्मज्वरे]

अमृतारिष्टकटुकामुस्तेन्द्रयवनागरैः ।
पटोलचन्दनाभ्यां च पिप्पलीचूर्णयुक् शृतम् ॥ १२४ ॥

अमृताष्टकमेतच्च पित्तश्लेष्मज्वरापहम् ।
छर्द्यरोचकहृल्लासदाहतृष्णानि[1]वारणम् ॥ १२५ ॥+

टीकाः—गिलोई, नींब, कटुक, मोथ, इन्द्रजव, सूंठि, पटोली, सुकड़ी(रक्तचंदन) औषध सममात्रा क्वाथ कीजै । पीपली प्रतिवास [यह अमृताष्टक है जो पित्त–कफज्वर का नाश करता है । उल्टी, अरोचक, हृल्लास, दाह व तृष्णा का निवारण करता है ।]

---

1 वृ. यो. त. यो. त., च 'विश्व' स्थाने "उदीच्य" इति पाठः
+पाठान्तरात्— यो. र., क्वा. म. मा. च—
'छिन्नोद्भवापर्पटवारिवाह-भूनिम्बशुण्ठीजनितः कषायः ।
समीर-पित्तज्वरजर्जराणां करोति भद्रं खलु पञ्चभद्रः ॥'
ज्व. ति. भा.
'गुडूची पर्पटं मुस्तं किरातं विश्वभेषजम् ।
छिन्ना-पर्पट-विश्वाब्दवासाभिरथवा कृतः ॥
वातपित्तज्वरेदेयं पञ्चभद्रमिदं शुभम् ॥'
—1 शा., क्वा. म. मा. च 'विनाशनम्'
पाठान्तराणिः— (1) भा.प्र. ❀'अमृताकटुकाऽरिष्टपटोलघनचन्दनम् ।
नागरेन्द्रयवं चैतदमृताष्टकमीरीतम् ।
क्वथितं सकणाचूर्णं पित्तश्लेष्मज्वरापहम् ।
ज्व. ति. भा., भै. र., च ❀'अमृतेन्द्रयवारिष्टपटोलं कटुरोहिणी ।
नागरं चन्दनं मुस्तं पिप्पलीचूर्णसंयुतम् ॥
अमृताष्टकमित्येतत्................॥'
❀ वृ. वै., चक्र. च 'गुडूची' ॥

(४८) [अथ दशमूलक्वाथः]

शालिपर्णी–पृष्टिपर्णी–बृहतीद्वयगोक्षुरैः ।
बिल्वाग्निमन्थश्योनाक–काश्मरीपाटलायुतैः ।। १२६ ।।

दशमूलमितिख्यातं क्वथितं तज्जलं पिबेत् ।
पिप्पलीचूर्णयुक्तं तु वातश्लेष्महरं परम् ।। १२७ ।।

सन्निपातहरं चैव सूतिकादोषनाशनम् ।
शोषं शैत्यं भ्रमं स्वेदं दाहतृष्णानिवारणम् ।। १२८ ।।

❀ — ❀

टीकाः—शालीपर्णी, पृष्टीपर्णी, उभीरींगणी, बैठीरींगणी, कांटी, बेलगिर, अरणी, सिवनी, पाढ़ल, टीटू, औषध समभागि, चूर्ण पिप्पली प्रतिवास [क्वाथ में] पाठोक्त रोग जाई । किरायतौ पाठ बिना ही घालीजै ।।

(४९) [अथ पटोलादिक्वाथः]

पटोलकटुकामृद्वी–कैरातं च गुडूचिका ।
पर्पटं पिप्पलीविश्वमभयासह योजयेत् ।।
क्वाथ एकाहिकं[1] हन्ति शर्करामधुसंयुतः[2] ।। १२९ ।।❀

टीकाः— पटोल, कटुक, दाख, किराइतौ, गिलोई, पित्तपापड़ौ, पीपली, सूंठी, हरडै औषध सममात्रा क्वाथ । एकान्तर[ज्वर] जाहि ।। सहित(मधु) निवात (शर्करा) प्रतिवास (प्रक्षेप) ।

---

*-❀ शा. 'हृत्कण्ठग्रहपार्श्वार्तितन्द्रामस्तकशूलहृत्'—
इति श्लोकार्द्धस्तत्राधिक्येन दृश्यते ।

पाठान्तरम्—
मै. र. वृ. यो त.,
* 'एकाहिके पटोलादिः' । 'पटोलारिष्टमृद्वीकाः श्यामाकं त्रिफला वृषम् ।
क्वाथ एकाहिकं हन्ति शर्करामधुयोजितः ।।

❀ पाठान्तरम्—(2) 'पटोलत्रिफलानिम्बद्राक्षाशम्याकवालकैः ।
क्वाथः सितामधुयुतो जयेदेकाहिकं ज्वरम् ।।' यो. त.

1 क. 'क' 2 क. 'तम्'

(५०) [अभयादिक्वाथः]

अभया धन्वयासश्च चन्द्रहासा किरातकः ।
क्वाथ ए[1]काहिकं हन्ति शर्करामधुयोजितः ॥ १३० ॥

टीकाः— हरडै, धमासौ, गिलोई, किरायतौ, सहित (मधु) (व शक्कर) प्रतिवास दीजै । एकान्तर ज्वर जाई । भव्यं भवति ॥

(५१) [अथ धान्यपञ्चकम्]

धान्यनागरमुस्तञ्च बालकं बिल्वमेव च ।
आमशूलं विबंधं च पाचनं वह्निदीपनम् ॥ ❁ १३१ ॥

टीकाः— धाणा, सुंठि, मोथ, वालो, बील, उषध, सममात्र क्वाथ करि पाईजै । पाठोक्त रोग जाई ॥

(५२) [अथ ह्रीबेरादिक्वाथः]

ह्रीबेरा[2]तिविषामुस्त[3]–बिल्व–ना[4]गर–धान्यकैः[4] ।
सर्वज्वरहरः क्वाथः सर्वातीसारनाशनः ॥ ❁ १३२ ॥

टीकाः— वालो, अतीस, मोथ, बेलगिर, सुंठी, धाणा, उषध सममात्र क्वाथ करि पाईजै । ज्वरातीसार जाई ॥

---

1 क. एकाहिक

❁ पाठान्तरम्— 'बिल्व-विश्व-घनोदीच्य-धान्यकैः क्वथितं जलम् ।
सामपित्तातिसारघ्नं दीपनं धान्यपञ्चकम् ॥

2 क. ह्रीबेरादि 3 क. मुता 4-4 यो. र., बृ. यो. त., म. प्र., च 'धान्यवत्सकम्' इति पाठः ।

❁ 'सर्वज्वरहरः.... ...नाशनः' अस्मिन्स्थाने चक्र०, बृ. यो. त., ग. नि०, ज्व० ति. भा., वृ. वै. चः—
"पिबेत्पिच्छा विबंधघ्नं शूलदोषामपाचनम् ।
सशोणितमतीसारं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् ॥" इति पाठान्तरम् ।

(५३) [अथ पाठादिक्वाथः[1]]

पाठानागरबि[2]ल्वबा[3]लकधना–ह्रीबे[4]रच्छिन्नोद्भवा,

आम्रा[5]स्थीन्यपि मो[6]चकः प्रतिविषा क्वाथं पि[7]बेन्नित्यशः ।

तस्या[8]ऽमाशयशूल–रक्त[9]मतिसारा[10]मोद्भवं ना[11]शयेत् ।। १३३ ।।

टीका:– पाठ, सूंठि, बीलगिर, वालो, धाणा, नेत्रवालो (ह्रीबेर) गिलोई, आंबा री गुठली, मोचरस, पतीस (अतीस) उषध समभाग क्वाथ कीजै । ज्वरातीसार जाई ।।❀

(५४) [अथ जातीफलादिक्वाथः]

जातीफलं च जटिलात्व[12]चं चातिविषा–क्वथयेद्धीमान् ।

सहसातिसारहरणं शि[13]ववरभ[14]क्तिर्यथा म[15]तं पापम् ।। १३४ ।।

टीका:— जायफल, छड़ (जटामांसी), तज, पतीस (अतीस) उषध समभाग क्वाथ कीजै । पाठोक्त रोग जाई ।। अतिसार जाई ।।

(५५) [ह्रीबे[16]रादिक्वाथः]

ह्रीबेरार[17]लुरक्तचन्दनब[18]ला–धान्याकवात्सादनी,

पा[19]ठापर्पटदर्भमूलमरुणाक[19]वाथं पिबे[20]द् गुर्व्विणी ।

---

1 क्वाथ 2क. विल्व 3 क. वालक 4 क. ह्रीवेर 5 क. आम्रास्थमपि 6 क. मोचका 7 क. पिवेनित्यसः 8 क. तासांरामपिशूल 9 क. रक्तमसितं 10 क. आमोद्भवं 11 क. नासयेत् ❀ इसके आगे क. ग्रन्थ में 'अथ पाठादिक्वाथः पाठानांगरविल्व' इतना पाठ और मिलता है । 12 क. तज्जातिर्विषा 13 क. सिववर 14 क. मुक्ति 15 क. मानं ।

16 क. ह्रीवेरादि 17 नूत्र ? अस्य अस्पष्टानि अक्षराणि, टीकायां-'कूठ' इति कथितः किन्तु, बृ. यो. त., चक्र., भा. प्र., भै. र., र. र. यो. र. आदिषु 'ह्रीबेरारलु' इति पाठः । कुष्ठं रोगाह्वयं''', अरलुः— श्योनाकः— श्योनाकः ग्राही । तस्मादरलु इति पाठस्साधुः । उक्तं च.

'कुष्ठमुष्णं कटु स्वादु-शुक्रलं तिक्तकं लघु ।
हन्ति वातास्रवीसर्प—कासकुष्ठमरुत्कफान् ।।'

"श्योनाको दीपनः पाके कटुकस्तुवरो हिमः ।
ग्राही तिक्तोऽनिलश्लेष्मपित्तकासप्रणाशनः ।।"

18 क. वला 19-19 भै. र. आदिषु 'पाठा-पर्पट-दर्भमूलमरुणा' स्थाने "मुस्तोशीरयवासपर्पटबिषा" इति पाठः 20 क. पिवेत ।

नानावर्णयुता[1]तिसारगदके रक्तातिसारे ज्वरे[1],
[योगोऽयं मुनिभिः पुरा निगदितः शूलामयेऽप्युत्तमः] ।। ❀ १३५ ।।

टीका:— वालो–नेत्र, कूठ (अरलु), रतांजणि, (लाल चंदन), गांगवणी (गंगेरण), धाणा, गिलोय, पाठ, पितपापडौ, डाभ री जड़, मंजीठ उषध सममात्रा क्वाथ पाईजै। छोरूवाली वयर (पुत्रवतीस्त्री) रो अनेक वरण (रंग) रो अतिसार जाइ ।।

(५६) [अथ चन्दनादिक्वाथः]

चन्दनं शारिवा लो[2]ध्रं मृद्वीकाश[3]र्करान्वितम् ।
क्वाथं कृत्वा[4] प्रदातव्यं गुर्विणी[5]ज्वरशान्तये ।। १३६ ।।

टीका:— सुकडि, सारिवा, लोद, दाष (द्राक्षा) उषध समभागक्वाथ। निवात प्रतिवास दीजै। छोरू वाली वयर (पुत्रवती स्त्री) री ज्वर जाय ।।

इति श्री परमहंस–परिव्राजकाचार्य–श्रीनृसिंहभारथी (ती) तत् शिष्य–परमहंस–परिव्राजकाचार्य–श्रीआनन्दभारथी (ती) विरचितायां आनन्दमालायां क्वाथाधिकारः समाप्तः ।।

—०—

1-1 क. जुतोतिसारनिबहे, अन्यग्रंथेषु—
'नाना-व्याधि (दोष)—युतातिसारकगदे रक्तस्रुतौ वा ज्वरे' इतिपाठः। ❀ यद्यपि 'योगोऽयं····प्युत्तमः' अयं श्लोकपादः पूर्वोक्तेषु ग्रन्थेषु वर्तते तथापि अनेन ग्रन्थकारेण नोद्धृतः। 2 क. लोद्रं 3 क. सर्करा 4 क. कृता 5 क. गुर्व्वणी

अथ द्वितीयोऽधिकारः

[अथ चूर्णाधिकारो[1] लिख्य[2]ते]

(१) तत्र प्रथ[3]मं=सुद[4]र्शनचूर्णम् लिख्य[2]ते

कालीय[5]कञ्च रजनी कटु[6]का चाऽमृता घ[7]नम् ।
अभ[8]या धन्वयासञ्च शृ[9]ङ्गी क्षुद्रा महौ[10]षधम् ।। १ ।।

त्रायन्तो[11]पर्पटं निम्बं[12] ग्रन्थिकं बा[13]लकं (श[14]ठी) ।
पौष[15]करं मागधी मूर्वा कटुजं मधुयष्टि[16]काम् ।। २ ।।

शिग्रू[17]त्पलं चेन्द्र[18]यवं वचा[19] दार्वी कु[20]चन्दनम् ।
प[21]द्मकं सरलो[21]शीरं त्वचं सौराष्ट्रि[22]का स्थि[23]रा ।। ३ ।।

यमान्य[24]तिविषा बि[25]ल्वं मरिचं गन्ध[26]पत्रकम् ।
विभीतकं चामलकं देवदारु सचित्रकम् ।। ४ ।।❀

---

1 क. चूर्णाधिकार 2 क. लिष्यते 3 क. प्रथम 4 क. सुदर्सन चूर्णः 5 क. कालेयकं 6-7 भै. र., र. र. च 'कटुका ···घनम्' स्थाने "देवदारुवचाघनम्' इति पाठः 8 क. अभय 9 क., म. प्र., टो. च "सिंही" 10 क. महोषधम् 11 क. पर्पटी 12 क. निंब 13-14 क. 'ग्रन्थिकं च बालकम्' (छन्दोभङ्गः) अन्यग्रन्थेषु 'ग्रन्थिकं बालकं शठी' 15 क. पुष्कंर 16 क. यष्टिकां 17-18 क. शीग्रू, भै. र. शिग्रूद्भवं, टो. ससिन्धूत्थं सेन्द्रयवं 19 भै. र. वरी 20 क, कचंदनं 21-21 क. म. प्र. च पद्मकं च बलोसीरं, टो-पद्मकं च बलोशीर, चि. पा. पद्मकं शरलोशीरं 22-23 टो. सौराष्ट्रमृत्तिका चि. पा. सौराष्ट्रिका स्थिरा, टो. अ. यवान्यतिविषास्थिराम् क. सौराष्ट्रिका स्याने 'रोरोष्ट्रिकां' इति पाठः 24-25 क. यवानतीविषे, टो. त्वचं सौराष्ट्रिकां बिल्वं—क. ग्रन्थे बिल्व स्थाने बिलं, र. र. पत्रकं स्थिरा ❀ भै. र. 'विभीतकं ···सचित्रकं' स्थाने "धात्री गुडूची कटुकं सचित्रकपटोलकम्' इति पाठः र. र. 'आमलकं शिवाक्षञ्च सचित्रक····'

[1]पटोलं कलसीं चै[1]व समभागानि कारयेत् ।
अ[2]स्य सर्वस्य चार्द्धेन कै[2]रातं चात्र यो[2]जयेत् ।। ५ ।।

एतच्चू*र्णं प्रदातव्यं नित्यमुष्णे[3]न वा[4]रिणा ।*
एतत्सुद[5]र्शनं नाम ज्वरान् हन्ति न संश[6]यः ।। ६ ।।

ए[7]कदोषं समस्तञ्च धातुस्थं मानसं तथा ।*
प्रा[8]कृतं वैकृत[9]ञ्चैव सौम्यं ती[10]क्ष्णमथापि वा ।। ७ ।।

अन्त[11]र्गतं बहिः[12]स्थञ्च निरामं साममेव च ।
ज्वरमष्टविधं हन्यात् साध्यासाध्यमथापि[13]वा ।। ८ ।।

नानादे[14]शोद्भवं चैव वारिदोषं व्यपोहति ।*
त्रयोदशा[15]न् सन्निपा[16]तान् कासां[17]श्वासं[18] सुदा[19]रुणम् ।। ९ ।।*

बहु[20]रोगाँश्च हृद्रोगमशीति वात[21]जांस्तथा ।*
सुदर्शनं यथा चक्रं दानवानां विनाश[22]नम् ।। १० ।।

तथा ज्वराणां सर्वेषां तत्क्ष[23]णादेव नाश[24]नम् ।
[सुदर्शनमिदं चूर्णं ब्रह्मणा निर्मितं स्वयम् ।। ११ ।।]*

1-1 मैं. र. पटोलकलसी चैव, र. र. कलसी चैव सर्वाणि 2 र. र. 'सर्वद्रव्यस्य चार्द्धेन., मैं. र. '' चार्द्धं च, टो. चार्द्धं हि 2-2 टो. नैपालं योजयेज्ज्वरे, र. र. मैं. र.'''' संप्रकल्पयेत् * क. एतचूर्णं 3 क. उष्णेनि 4 क. वारणा * अयं श्लोकार्द्धः टोडरमल्लेन नोद्धृतः । 5 क. सुदर्सनं 6 क. संसयः 7 क. एष * 'एकदोषं ''''तथा' अस्मिन्स्थाने टो. म. प्र. च. पृथग्दोषान् समस्तान् वा धातुस्थं मानसं ज्वरं' इति पाठः, मैं. र. तु 'पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान्' इति पाठः, र. र. अयं श्लोकार्द्धः नोध्दृतः । 8 क. प्रकृति 9 क. विकृतिचैव 10 क. तिक्ष्ण 11 क. अंगस्थं च 12 क. वयः स्थं च, र. र. बहिष्कं म. प्र. बहिस्थं 13 क. पिया 14 क. देशोद्भयं टो. विनाशयेत्, र. र. वारिदोषोद्भवं तथा । * अस्मात्परं मैं. र., र. र. च "विरुद्धभेषजैर्भूतं ज्वरमाशुव्यपोहति" इत्यधिकः पाठः । 15 क. त्रयोदसं 16 क. सनिपातान्, 17 क. कास 18 क. स्वास 19 क. सुदारुणम् । * अयं श्लोकार्द्धः मैं. र. नोद्धृतः ।
20 क. वहुरोगं च व 21 क. वातजं 22 क. विनासनं 23 क. तर्क्षणंदेव 24 क. नासनं
* अयं श्लोकार्द्धः ग्रन्थकारेण नोदधृतः किंतु टो. अधिकं वर्तते ।
* 'वहुरोगाँ''''तथा' अस्मिन्स्थाने म. प्र. 'पाण्डुरोगं च हृद्रोगमशीतिर्वातजांस्तथा । इति पाठः ।

टीका:— दारूहलद, (हल्दी), कुटकी, गिलोय, मोथ, हरडै, घमासो, काकड़ासींगी, बैठी रींगणी, सूंठि, त्राहिमाणा, पितपापड़ो, नीब रा पान, पीपलामूल, बालौ, सठी, पुष्करमूल, पीपलो, मूर्वा, कुडाछाल, जेठीमधु,

पाठान्तराणि—

'त्रिफला रजनीयुग्मं कण्टकारीयुगं शटी ।
त्रिकटु ग्रन्थिकं मूर्वा गुडूची धन्व*यासकः ।।
कटुका पर्पटं मुस्तं त्रायमाणं च बालकम् ।।
निम्बः पुष्करमूलं च मधुयष्टी* च वत्सकम् ।।
यवानीन्द्रयवो भार्गी शिग्रुवीजं सुरष्ट्रजा ।
वचा-त्वक्पद्मकोशीर-चन्दनातिविषा-बलाः ।।
शालिपर्णी पृश्निपर्णी विडङ्गं तगरं तथा ।
चित्रको देवकाष्ठं च चव्यं पत्रं पटोलजम् ।।
जीवकर्षभकौ चैला* लवङ्गं वंशलोचना ।
पुण्डरीकं च काकोली पत्रकं जातिपत्रकम् ।।
तालीशपत्रं च तथा समभागानि चूर्णयेत् ।
सर्वचूर्णस्य चार्द्धांशं कैरातं प्रक्षिपेत्सुधीः ।*
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वज्वरनिवृत्तये ।।*

(भा. मै. र. प. भा.—[टो.])

*ज्व. ति. भा. धान्य—वासकं, * ज्व. ति. भा. मधुयष्टी यवासकं। कणा
* अस्मात्परं शा., भा. प्र. च.

''एतत्सुदर्शनं नाम चूर्णं दोषत्रयापहम् ।
ज्वरांश्च निखिलान् हन्यान्नात्र कार्या विचारणा ।।
पृथक् द्वन्द्वागन्तुजांश्च धातुस्थान् विषमज्वरान् ।
सन्निपातोद्भवांश्चापि मानसानपि नाशयेत् ।।
शीतज्वरैकाहिकादीन् मोहं तन्द्रां भ्रमं तृषाम् । *
श्वासं कासं पाण्डुतां च हृद्रोगं हन्ति कामलाम् ।।
त्रिकपृष्ठकटीजानु-पार्श्वशूलनिवारणम्''

* सुदर्शनं यथा चक्रं दानवानां विनाशनम् ।
तद्वज्ज्वराणां सर्वेषामिदं चूर्णं प्रणाशनम् ।।
ज्व. ति. भा., भा. प्र. शा.
शीतादीनपि दाहादीन् मेहं तंद्रां भ्रमं तृषाम् । भा. प्र * चैत्र

त्रुटिः = 'एला', रुक्—रोगाह्वयम् कुष्ठम्, हिमं-उशीरं, सेव्यं-उशीरं, कुंण्डली-अमृता, कुङ्कुमम्-केशरम् ।

सुहीजंणा रा बीज कमलकाकडी (उत्पल), इन्द्रजव, वच, दारूहल्द ? (द्विरुक्त) पतंग (कुचंदन), पद्माख, वालो ? (सरल), उशीर तज, तूरी (फिटकड़ी). सालिवन, अजमो, पतीस, बीलगिर, मिरच, पत्रज, बेहडा, आवला, देवदारू, चित्रक, पटोल, पीठवनी उषध सममात्रा, सव उषध हूँ ती किरायतौ आधो घालीजै। गर्म पाणी सेती वूकी करीजै। तेरह सनिपात, कास, स्वास, हृद्रोग, वातब्याध, अष्टज्वर, पाणी लागौ हुवै, वीजा ही जिके पाठ में कह्या छै तिके रोग सर्व जाई ॥

बृ. यो. त. पाठान्तरम् –

'भार्गीषट्कटुनिम्बवेल्लकुटजो—शीराब्दतिक्तामृता,
मूर्वोग्रानतशीतपद्मकविषादीप्येन्द्रयष्टीवला: ।
काकोली—कचपौष्करामरसठी श्रेष्ठा लवङ्गं निशे—
क्षुद्रेजीवकपुण्डरीक—ऋषभस्त्रायन्तिकापर्पटम् ॥
जातीकोश–सुराष्ट्रजादलशुभासौम्यापटोलीत्वच:
शिग्रोर्बीजमनन्तया सह गुहा-तालीसमेषां रज: ।
सर्वार्द्धेन किरातकेन मिलितं शीतादिचाष्टौ ज्वरान्—
चूर्णं हन्ति सुदर्शनं किल चतुष्पञ्चाशतं भेषजै:'

षट्कटु:—पञ्चकोलं+मरिचं, वेल्लं–विडगं: उग्रा–वचा, नतं–तगरं, शीतं शीतमूलकं, अमरं–देवकाष्ठं ।

भेडादिप्रणीतं सुदर्शनचूर्णं–(यो. र.)

'तालीसत्रिफलात्रुटीत्रिकटुकं त्वक्त्रायमाणात्रिवृ—
न्मूर्वाग्रन्थिनिशायुगं शटिबलारुवकण्टकारीयुगम् ।
मुस्तापर्पटनिम्बपुष्करजटाभार्ङ्गी–यवानीहिमं ।
चव्यं चित्रकपुण्डरीकतगरं सेव्यं विडङ्गं वचा ॥
यासो वत्सककुण्डलीन्द्रयवकं देवद्रुमं बालकं ।
बीजं शिग्रुभवं पटोलकटुकापद्माह्वपत्रं त्रिषा ॥
काकोली मधुकुङ्कमं च सतवक्षीरी लवङ्गं पृथक्—
पर्णीशैलजशालिपर्णिसहितं शामन्तकीपुष्पकम् ॥
सर्वं समं चूर्ण्यं तदर्द्धं भागं कैरातकं श्रेष्ठतमं हि चूर्णम् ।
सुदर्शनं नाम मरुद्बलासामयोद्भवान् हन्ति पृथक्कृताञ्ज्वरान् ॥

(२) [अथ लवणभास्करं[1]चूर्णम्]

पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम् ।
सैन्[2]धवञ्च बि[3]डञ्चैव पत्रं तालीशकेशरम् ।। १२ ।।

ए[4]षां द्विपलिकान्[5]भागान् पञ्च सौवर्चलस्य च ।
मरिचाजाजि[6]–शुण्ठीनामेकैकस्य पलं पल[6]म् ।। १३ ।।

[7]त्वगेले चार्द्धभागे च सामुद्रात्कुडवद्वयम् ।
दाडिमात्कुडवञ्[8]चैव द्वे पले चाऽम्लवेतसात् ।। १४ ।।

संसर्गजान् सकलजान्विषमान्निहन्याद्
धातूद्भवान् विपक्वतानभिघातजांश्च ।
सामान् समानसकृतानतिदाहयुक्ता—
ञ्छीतांस्तृतीयकचतुर्थविपर्ययांश्च ।।
एकाहिकान् द्व्याहिकसन्निपातान्
नाना-विधान् पाक्षिक-मासजातान् ।
तृड्दाहमोहभ्रमदैन्यतन्द्रा
सश्वासकासारुचिपाण्डुरोगान् ।।
हलीमकं कामलपार्श्वशूलं
पृष्ठोद्भवं जानुभवं तथैव ।
त्रिकग्रहं वातविकारजातं
विनाशयत्येव शिरोग्रहं च ।।
नानाप्रदेशोद्भववारिदोषान्
दूषीविषादिप्रभवान् विकारान् ।
स्त्रीणां रजोदोषसमुद्भवांश्च
विनाशयेदुष्णजलेन पीतम् ।।
शीताम्बुना पित्तभावान् विकारान्
नानामुनीन्द्रैर्गदितं जगद्धितम् ।
सुदर्शनं दानवनाशनं यथा
सुदर्शनं रोगविनाशनं तथा ।।

1 क. चूर्णः 2 क. सैधवं 3 क. विडंगं च, सर्वेषु ग्रन्थेषु 'विड' इति पाठः, तस्मात् 'विडञ्च' इति पाठस्साधुः वृ. वै. 'सैंघवं सविलं चव्यं' 4 क. एतेषां (छन्दो भङ्गः) 5 क. द्विपलिकान्, 6 क. मरिचाजाजिकासुंठि भागैकस्य फलं पलं, ग. नि 'मरिचा-सारिबाशुण्ठी' इति पाठः । 6 क. त्वेगैला 8 क. कुडवश्चैव ।.

एतच्चू[1]र्णीकृतं श्ल[2]क्ष्णं गन्धाढ्यममृ[3]तोपमम् ।
लवणं भास्करं नाम भास्करेण विनिर्मितम् ।। १५ ।।

जगत[4]स्तु हिता[5]र्थाय वातश्लेष्मा[6]मयापहम् ।
वातगुल्मं नुद[7]त्येतद् वातशूलानि ना[8]शयेत् ।। १६ ।।❀

तक्रमस्तुसुराशुक्त-सी[9]धु-कांजिकसंयुतम् ।
जाङ्ग[10]लानान्तु मांसेषु[10] रसेषु विविधेषु [10]च ।। १७ ।।❀

मन्दाग्नेरश्नतः शक्तो भवेदाश्वेव पावकः ।❀
अ[11]र्शांसि ग्रहणीदोषं शो[12]फ-गुल्म-भगन्दरान् ।। १८ ।।❀

हृद्रोगमामदोषं च वि[13]विधानुदरस्थितान् ।
प्लीहा[14]नमश्मरीञ्चैव श्वासकासोदरं क्रि[15]मीन् ।। १९ ।।❀

विशेषतः शर्कराऽऽदीन् रोगान् नानाविधांस्तथा ।
पाण्डुरोगांश्च विविधान् नाशयत्यशनिर्यथा ।। २० ।।❀

टीका:— पीपलि टां २०, पीपरामूल टां २०, धाणा टां २०, कालोजीरो टां २० सीघोलूंण टां २०, बिड[16]लूंण टां २०, पत्रज टां २०, तालीसपत्र टां २०, नागकेशर टां २०, सौच[17]ल टां ५०, मिरच[18] टां १०, जीरो टां[19]

---

1 क. एतचूर्णी 2 क. संर्व 3 क. अम्रतो 4 क. जगतस्य 5 क. हिताथाय 6 क. वातलेश्लेष्मामतापहं, र. र. ... भयापहम् 7 क. मुदत्येतद् 8 क. नासयेत्
❀ यद्यपि 'जगतस्तु ... नाशयेत् अयं श्लोकः भै. र., वृ. वै., चक्र. ग. नि आदिषु वर्तते तथापि यो. र., बृ. यो. त. आदिषु नोपलभ्यते ।
9 क. सीधू 10 ग. नि. 'जांगलानूपमांसेषु भक्ष्येषु ...।', वृ. वै. "जांगलानां मांसरसैरन्यै रुचिकरैस्तथा" ❀ ग. नि. 'मन्दाग्नीनां खादयतां शक्तो भवति पावकः' वृ. वै. दीप्तिमान् र. रच अयं श्लोकार्द्धः नोद्धृतः क.... भवेच्चासुकपावकः । 11 क. अर्शांसि 12 क. सोफ, भै. र., र. र., वृ. वै., म. प्र., चक्र. च 'कुष्ठामयभगन्दरान्' इति पाठः, ग. नि, 'शोष-कुष्ठ-भगन्दरान्' इति. 13 क. विवंधानुदरे 14 क. प्लीहामश्मरी चैव 15 क. क्रमान् 16 क. बिडंग । 17 क. टां 20 ।
❀इमे श्लोकाः वृ. यो. त., यो, त., यो. र. च न दृश्यन्ते । एतेषु ग्रंथेषु एषां स्थाने ।
'श्लेष्मवातं वातगुल्मं शूलमन्दाग्न्यरोचकम् ।
अन्यान्यपि निहन्त्याशु रोगान् लवणभास्करम् ।।
इति पाठो वर्तते 18-19 क. टां 20-20 ।

१०, सूंठि टां १०, तज टां ५, इलायची छोटी टां ५, समुद्र लवण टां ८०, दाड़िमसार (अनारदाना) टां ४०, आमलवेतस टां २०, उषध मेलि बांधि ठीक कपड़छाण करि चूक मांहि मकरोईजै । आमलवेतस रो रस न लाभै तो आंवला का रस मांहि मकरोइजै (भावना दें) अनोपान ईतरा सूं दीजै । कांई, छाछी, मठो, लोकईम कहे छै (लोक में यों कहते हैं) किण हीं (कहीं) सास्त्र नै न्याये (शास्त्र प्रमाण) किणहीने ई न्याय (लोकोक्ति) विगर न कीजै । काँई विणढा? दूध रो पाणी, कांजी, चूक (शुक्र) जांगलमांसरे ई रस सऊं भावै (चाहे) अनूपां रे ई मांस रस सऊं, अथवा उषध सूं भिलता रसां से दीजै । इतरा रोग जाई । वातश्लेष्म, गुल्म, वातशूल, मंदाहिग्नीह, रस-संग्रहणी, कुष्ठ, भगंदर हृद्रोग प्लीह, श्वास, कास, आमदोष, बीजा ही पाठ मोंहे दोष कह्याछै सु सर्वं जाई ।।

(३) अथ पारद[1]चूर्णम्

कर्षं गन्धक[2]मर्द्धं पारदमुभौ[3] कुर्याच्छुभां कज्ज[4]लीं
त्र्य[5]क्षं त्र्यूषणम[6]त्र पञ्चलव[7]णात् सा*र्द्धं च कर्षं पृथक् ।
*सार्द्धाक्षं द्विपलं विचूर्ण्य[8] सकलं शर्करा[9] शनान्मिश्रितं, *
खादे[10]च्छाणमतोऽनु काञ्जिकालं म[11]न्दाग्निसन्दीपनम् ।। २१ ।।

पाठान्तरम्— वृ. यो त.
'तालीसग्रन्थिधान्येभवरविड-कणा — कृष्णजीरच्छदोऽम्लं,
सामुद्रं विश्वजीरोषणमथरुचकं त्वक्त्रुटीदाडिमान्तैः ।
विंशत्यष्टत्रिपञ्चैकचतुरवयवैभास्करोऽत्राथ वाऽम्लै—
गुंल्माद्यर्शोन्त्रकासग्रहणिजठरहृत्वग्गदे श्लेष्मवाते ।।'

1 क. चूर्ण., भै. र. 'मध्यमनायिकाचूर्णमिति नाम । बृ. यो. त. 'लधुलाईचूर्णमिति नाम, यो. त. 'द्वितीय लाईचूर्णमिति नाम, म. प्र. 'लाईचूर्ण'मिति नाम । र. र. रसायनामृतं' इति नाम । 2-3- क. गन्धकपारदमुभौ, र. क. ल. गन्धकमर्द्धं पारदमुभे बृ. यो. त., यो. त. च. मुभौ, भै. र. पारदयुतं 4 क. कज्जली 5 क. त्रक्षं, भै. र. द्व्यक्षांशं, बृ. यो. त., यो. त. च त्रक्षं, म. प्र.द्वाभ्यां टो. द्व्यक्षं 6 क. त्र्यूषणमात्र, म. प्र. त्र्यूषणमत्र, भै. र त्रिकटोश्च, बृ. यो. त. च त्र्यूषणतश्च 7 क. पंचलवंग । * र. यो सा. स्यादर्धं 8 क. विचूर्णितमिदं 9 क. शर्करासिनंयोजयेत् * * म. प्र. 'अक्षाक्षं द्विपलं विचूर्ण्य मसृणं शर्कराशनाद्भक्षयेत्, बृ. यो. त. च 'तच्छर्कराशतचूर्णतुल्यनिाहतं तत्सर्वमेकीकृतं 10 क. छाणमनोनु, बृ. यो. त., यो. त. च. '···च्छाणमितं सकांजिकं 11 बृ. यो. त. च मंदाग्न्यतीसारनुत ।

स्वे[1]च्छा भोजनतो रसायनमिदं शूमिला[2]दिकोपद्रवे *
[पेयं चात्र तु काञ्जिकं वदति सा लाई महायोगिनी ।] २१ ।।

हन्याद्वातं च पित्तं कफविकृ[3]तिमतीसारमत्युग्ररूपं,
पाण्डुत्वं श्वास[4]कासज्वर मुदररु[5]जं राजयक्ष्माण[6]मुग्रम् ।
प्लीहानं[7] सामवातं षड[8]पि च गुदजान् [9]कुष्ठरोगान् समग्रान्+

दीर्घायुः काममूर्ति[10] र्भवति वि[11]पलितो धीरगम्भीरनादो[12] ।
मेधा[13]वी सत्त्ववीर्यः श्रुतिधरसहितो मानवोऽस्य[14] प्रयोगात् ।। २२ ।।

टीकाः— गन्धक टां. २।। सोधीयउ (शोधित), पारा टां. १।, सूंठि टां ७(७।।) मिरच टं. ७ (७।।), पीपरि टं ७ (७।।), सीधवलूंण टाँ २ (३ ।।), सौंचरल टां ३ (३।।।), समूद्रलंण ३ टां (३।।।), (कचलूंण ३।।। टां) बिडलूंण टां. ३ (३।।।), भांगी (विजया) टां. २१ (२१।) ए उषध भेलि तै अनोपान कांजी टां १० सुदि जई पाढांतर ? रोग सर्व जाई ?।। (पाठोक्त रोग नष्ट होते है)

※ बृ. यो. त., यो. त. च एष एव श्लोकार्धः पठितः । 1 क. श्वेच्छाभोजनभोपहारणमिदं म. प्र. 'श्रेष्ठं ...' 2 क. चूर्णचकोपद्रवं, भै. र. कंठादिकोपद्रवं र. र. घूर्णादिकोपज्वरे ।

* अस्मात्परं म. प्र., भै. र. च 'पेयंचात्र तु काञ्जिकं वदति सा नारी महायोगिनी इत्यधिकः पाठः । म. प्र. 'नारी' स्थाने 'लाई' पठितः । र. र. 'महाभैरवी 3 क. कफकृमिजमतीसाररोगग्रहण्यां, म. प्र. कफक्रिमि—घनुजं ? (मुदरं) राजयक्ष्माणमुग्रम्, र. र. कृतक 4 क. स्वास 5 क. रूजं 6 क..... यक्ष्मानमुगं 7 क. प्लीहानां 8 क. षड्वेधगुदजं 9 क. कण्ठरोगसमम भै. र. कुष्ठरोगं समग्रं, म. प्र. कंठरोगं समग्रं +अस्मात्परं र. र. भैं. र. च. वातास्रं कण्ठरोगानिदमिह कथितं दीपनं जाठराग्नेः' इति पाठः, किंतु. म. प्र. 'दीर्घायुः.....प्रयोगात्' इतिपाठः 10-11 म. प्र. काममूर्तिर्गतवलिपलितो धीरगम्भीर नादो, क. काममूर्तिभवति.....धीरगम्भीरनाना 12 क. मेधावीर्यश्रूतिधरसहितो 13 क. प्रियोगात्, म. प्र. प्रसादात् र. र. मेधावी सत्ववीर्यस्मृतिबलसहितो ...'

'सामां संग्रहणीं ससंग्रहपरं दुष्टातिसारं गदम् ।
नानावर्णमतीवशूलसहितं जित्वा सुखं वर्द्धयेत् ।
पाठोऽयं टोडरानंदग्रन्थे अधिकमुपलभ्यते ।

(४) [अथ य[1]वान्यादिचूर्णम्]

यमानी–पिप्पलीमूल–चातु[2]र्जातकनागरैः ।
म[3]रिचाग्निजलाजाजी–धान्यसौव[4]र्चलैः समैः ।। २३ ।।

वृ[5]क्षाम्लधातकीकृष्णा–बिल्वदाडिम–दी[6]प्यकैः ।
त्रिगुणैः षड्गु[7]णसितैः कपित्थाष्टगुणैः कृतः ।। २४ ।।

चूर्णो[8]ऽतीसारग्रहणी–क्षयगुल्मग[9]लामयान् ।❀
कासश्वा[10]साऽग्निसादार्श–पीनसारोचकाञ्जयेत् ।। २५ ।।+

वर्षैकं भक्षयेन्नित्यमजाक्षीरं पिबेदनु ।। ×२६ ।।

---

1. चक्र. ग. नि., शा, भै. र.. यो. त. यो. र. च 'कपित्थाष्टकं चूर्णं इतिनाम । क. जवान्यादि चूर्ण 2 क. चातुर्यातक 3 क, मिरचा, ग, नि. 'मरिचेन्द्रयवा.....' 4 क. सौवर्चलः समैः 5 क. वृष्या 6 क. दीपकैः, भै, र. तिन्दुकैः, वृ. वै. कस्तथा 7 क. षड्भुगासितैः, ग. नि. षट्सितायुतैः, 8 क. चूर्णे 9 क. गुलामयान् ❀ वृ वै. 'चूर्णोऽतिसारं ग्रहणीं हन्ति गुल्मजलामयान्' 10 क. काशस्वासानि सादार्श +यो. त. म. प्र. च कासश्वासारुचीहिक्कां कपित्थाष्टमिदं जयेत्, वृ. वै. हिक्का-कासारुचिश्वासन् कपित्थाष्टक उत्तमः । × अयं श्लोकार्द्धः अ. हृ., ग. नि., भै. र., आदिषु न दृश्यते ।

पाठान्तरम्—वृ. यो. त., म. प्र. च

'धान्याजाजीयवानीरुचकजलचतुर्जातविश्वोषणाग्नि–
ग्रन्थ्यैकांशं त्रिभागं करिकणमगधादीप्यवृक्षाम्लबिल्वम् ।
श्वेता षट्कं कपित्थाष्टकमिदमरुचि गुल्मयक्ष्मप्रतिश्या—,
तीसारार्शोग्निसादग्रहणिगलगदश्वासकासान्निहन्ति ।।

अन्यपाठान्तरम् ग. नि. ग्रहण्याम्

"कपित्थत्रुटिवराङ्गविश्वौषधं धान्यका—
चव्याजाजीयवान्यश्च तुल्यांशकाः
मरिच-दहन-दाडिमं धातकी चुक्रिका–
बिल्वसौवर्चलं पिप्पलीमूलवृक्षाम्लकम् ।।
अपरमपि कपित्थाष्टकं षड्गुणा
पिप्पली सर्वतुल्यांशका शर्करा ।
ग्रहणिनाशनं वह्निसन्दीपनं
कास-हृद्रोग-गुल्मार्शसां नाशनम् ।।

टीका:— जवानी टां १, पीपलामूल टांक १, तज टां १ तमालपत्र टां १, नागकेशर टां १, इलायची टां १, सुंठी टां १, मिरच टां १, चित्रावलि (चित्रक) टां १, मोथ (वालो) टां १, जीरो टां १, धणा टां १, सौंचल टां १, तितडीक टां. १, (३) धाय रा फूल टां. ३, पीपली टां. ३, बीलगिर टां ३, दाडिमसार टां ३, अजमोद टां ३, निवात (मिश्री) टां १८ (६), कठबडी (कपित्थ) टां २४, (८) उषध सर्व वांटि चूर्ण कपडिछाण कीजै । टां २।। प्रभाति लीजै । वर्ष १ सम लीजै । उपरि छाली रो दूध रूचि सारू पीजै । इतरा रोग जाई–अतीसार, ग्रहणी, क्षय, गुल्म, गले के रोग, कास स्वास, मंदाग्नि, पीनस, हरस (अर्श) अरुचि. पाठोक्त रोग जाई ।।

(५) [अथ दाडिमाष्टकचूर्णम्]

दाडिमस्य [1]पलान्यष्टौ [2]पलान्यष्टौ कपित्थक:[2] ।
अजा[3]जीनां पलार्द्धञ्च पलार्द्धं धान्यकस्य च ।। २७ ।।

पृथक् [4]पलांशिका–भा[4]गास्त्रिकटो: ग्रन्थिकस्य च ।
त्वक्क्षी[5]री वालकञ्चैव दद्यात्कर्षसमं भिषक् ।। २८ ।।

शर्करा[6]या: पलान्यष्टावेकीकृ[7]त्य विचूर्णयेत् ।
आमातीसारश[8]मनं का[8]स–हृत्पार्श्वशूलनु[9]त् ।। २९ ।।

हृद्रोगमरु[10]चिं प्लीहग्रहणीं गुल्ममा[11]स्रुतम् ? ।※
प्रयुक्तो नाश[12]यत्याशु चूर्णोऽयं दाडिमाष्टक:[13]: ।। ३० ।।

टीका:— अनार टां. ८०, कडोडी टां ८०, जीरो टां ५, धाणा टां ५, त्रिकटु ३० टां, पीपलामूल टां २५ (३०), वंशलोचन टां २ ।, वालो टां २।।,

---

1 क. दाडिमस्यलान्यष्टौ 2 क. पलान्यष्टौकपिकपिंछ च, ग. नि. 'चातुर्जातं पल द्वयम्' 3 क. अजीजानां 4 क. पलांसिका, ग. नि. पृथक् तु पलिकान्भागां 5 क. तुक्षीरी 6 क. शर्कराया 7 क. न्यष्टौ तदेकत्र 8-9 क. समनं. ग. नि. कासघ्नस्तथा हृत्पार्श्वशूलनुत् । 9 क. काशहृत्पार्श्व शूलवात् 10 क. मरुलि 11 क. गुल्ममाद्रवात्
※ ग. नि. 'हृद्रोगमरुचिं गुल्मं ग्रहणीमग्निमार्दवम् ।'
12 क. नासकेत्येष चूर्णोऽयं 13 क. दाडिमाष्टकम् ।

निवात टां ८ (८०) उसा (औषधियां) नाना (वारीक) वांटि चूर्ण कीजै । आमातीसार, बीजा ही (और भी) पाठ मांहे छै सु रोग जाई ।

(६) [अथ (वृद्ध) गङ्गाधरचूर्णम्]

मुस्ताऽरलुकशु[1]ण्ठीभिर्धा[2]तकीलोध्रवत्स[3]कैः ।
बिल्वमोचरसाभ्यां च पाठी[4]–रालुसु*बालकैः ?।। ३१ ।।

आम्रबीजं[5] प्रतिवि[5]षा लल्ला[5]लुरिति चूर्णितम्[6] ।
त[7]ण्डुलाम्बु–दधिक्षौद्रैः[7] पीतैर्याति प्रवाहिका ।। ३२ ।।

सर्वातिसारा ग्रहणी प्रशमं यान्ति वेगतः ।*
वृद्धगङ्गाधरं चूर्णं सरिद्वे[8]गविबन्धकम् ।। *३३ ।।

पाठान्तराणि —

(1) यो. र., चक्र-च 'कर्षोन्मिता तुगाक्षीरी चातुर्जातं तु* कार्षिकम् ।
यवानी-धान्यकाजाजीग्रन्थिव्योषं पलांशकम् ।
पलानि दाडिमस्याष्टौ सितयाश्चैकतः कृतम् ।
गुणैः कपित्थाष्टकवच्चूर्णोऽयं दाडिमाष्टकः ।।+
* टो., अ. हृ. च 'द्वि"

(2) अ. हृ. म. प्र. च द्वे पले दाडिमान्यष्टौ खण्ड 1 व्योषपलत्रयम् ।
त्रिसुगन्धं पलं चैकं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
रोचनं दीपनं स्वर्यं पीनस-श्वास-कासजित् ।।
1 अ. हृ. गुडाव्योषात्

शा. 'दाड्रिमी द्विपला ग्राह्या खण्डाद् 2 शपलानि च ।
त्रिगन्धस्य पलं चैकं त्रिकटु स्यात्पलत्रयम् ।
एतदेकीकृतं सर्वं चूर्णं स्याद्दाडिमाष्टकम् ।।
रुचिकृद्दीपनं कण्ठ्यंग्राहि कासज्वरापहम् ।।'
2 टो. खण्डादष्ट

शा. 'दाडिमस्य पलान्यष्टौ शर्करायाः पलाष्टकम् ।
पिप्पली पिप्पलीमूलं यवानी मरिचं तथा ।।
धान्यकं जीरकं शुण्ठी प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
कर्षमात्रा तुगाक्षीरी त्वक्पत्रैलाश्च केशरम् ।
प्रत्येकं कोलमात्राः स्युस्तच्चूर्णं दाडिमाष्टकम् ।
अतीसारं क्षयं गुल्मं ग्रहणीं च गलग्रहम् ।।

+'गुणैः कपित्थाष्टक...... दाडिमाष्टकः' अस्मात् परं—
'भोज्यो वातातिसारोक्तैर्यथावस्थं खलादिभिः इत्यधिकः पाठः अ. हृ. वर्तते ।

टीका:— मोथ, अरलू री छालि, सूंठि, धावै का फूल, लोद्र, इन्द्रयव, वीलगिर, मोचरस, पाठ, राल, वालो, आंब री गुठली, पतीस, लज्जालु, उषध स्म मात्र चूर्ण कीजै, साठी (शालि चांवल) चोखे (अच्छे) रा पाणी सूं दीजै, तथा मठ्ठासूं तथा सहित (मधु) सूं चूर्ण टां २।। तथा ३ दीजै, प्रवाहिका अतिसार, संग्रहणी जाई ।।

इति वृद्धि(द्ध)गङ्गाधरचूर्णम् ।

---

1 क. सूंठीभिः 2 क. धातुकी 3 भै. र., शा. भा. प्र. च बालकैः 4 शा., भा. प्र., भै, र. च 'पाठेन्द्रयववत्सकैः' 5-5 भा. प्र., भै. र. च 'आम्रबीजसमङ्गातिविषायुक्तैश्च' 6 भा. प्र., भै. र. च. चूर्णितैः 7-7 शा. 'क्षौद्रतण्डुलपानीयैः' क. 'तण्डुलांबुदधिद्रपीतैं', भै. र., भा. प्र. च. मधुतण्डुलपानीयं (पीतं हन्ति प्रवाहिकाम्)

❀ ❀ भै. र. भा. प्र. च. 'हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं हन्ति वेगतः ।

वृद्धगङ्गाधरं चूर्णं रुन्ध्याद्गीर्वाणवाहिनीम् ।।

8 क. सरिद्वेगस्य बन्धकः

पाठान्तरम्— ग. नि.

"अरलुकघनशुण्ठी—धातकीविल्व-रोध्रं
कुटजफलसमेतं मोचनिर्यासयुक्तम् ।
अतिविष-जल-पाठाः साहकारं च बीजं
मसृण-मधु-विमिश्रं तण्डुलाम्बुप्रपीतम् ।।
कफोद्भवं मारुतपित्तसम्भवं, जयेदतीसाररयं तथाऽऽमजम् ।
प्रवृद्धगङ्गाधरनाम चूर्णकं तथा हि दोषं ग्रहणीभवं च ।।"
सहकारः—आम्रः

पाठान्तरम्—यो. र., बृ. यो. त.

'मुस्तावालकलोध्रवत्सकवृकी—विश्चारलुश्रीमदा—
लज्जामोचरसाम्रकीटजविषाचूर्णस्तु गङ्गाधरः ।
पीतस्तण्डुलवारिमाक्षिकयुतः कर्षोन्मितोवाहिका—
मुग्रां च ग्रहणीं निहन्ति सहसा सर्वांतिसारामयान् ।।
वृकी-कुटजत्वक्, मदा-धातकीं

टो. 'कुटजत्वक् मुस्ता इन्द्रयवः आम्रास्थि बला लोध्रः
पाठा जम्बूफलास्थिः बिल्वः आमलकः अतिविषा
सयष्ठीमधुः धातकीपुष्पं तण्डुलाम्बुना पेयम् ।।

(७) [अथ चन्दनादिचूर्णम्]

चन्दनं नल[1]दं लोध्र[2]मुशीरं पद्मकोत्प[3]लम् ।
नागपुष्पञ्च बिल्वञ्च भद्रमुस्तं सशर्करम् ।। ३४ ।।

[4]ह्रीबेरञ्चैव पाठा च [5]कुटजोत्पलमेव च ।
शृङ्गबेरं सातिवि[6]षा धातकी च रसाञ्जनम् ।। ३५ ।।

आम्रास्थि-जम्बुसा[7]रञ्च तथा मोचरसोद्भवः ।
नीलोत्पलं समङ्गा च सूक्ष्मैला दाडि[8]मं त्वचा ।। ३६ ।।

चतुर्विंशतिरे[9]तानि समभागा[10]नि कारयेत् ।
तण्डुलोदकसंयु[11]क्तं मधु[12]ना सह योजयेत् ।। ३७ ।।

योगं[13] लोहितपित्तानामर्श[13]सां ज्व[14]रिणां तथा ।❀
मूर्च्छा-[15]मदोपसृष्टानां तृष्णार्तानां प्रदापयेत् ।। ३८ ।।

अतिसारं तथा [16]छर्दिं [17]स्त्रीणां च रजसङ्ग[17]हे ।
प्रच्युतानां च गर्भा[18]णां स्थापनं पर[19]मिष्यते ।। ३९ ।।*

अशिव[20]भ्यां विहितो योगो रक्तपित्तनिबर्हणः ।। ४० ।।

---

1 र. र. 'वरुणं' 2 क. लोध्रं उसीरं 3 भै. र., गनि., वृ. यो. त., यो. त., यो. र., र. र. 'पद्मकेशरम्' 4 क. ह्रुद्वेर चैव 5 क. वकुटज, भै. र., र. र., ग. नि., 6 कुटजस्य फलं त्वचं' 6 क. विषं 7 क. सारश्च, यो. त. वृ. यो. त., यो. र., र. र., भै. र. च 'जम्बुसारास्थि' 8 भै. र. दाडिमोद्भवम्, यो. र. र. र., वृ. यो त., यो. त. च दाडिमत्वचः (म्) 9 क. रैतानि 10 क. समभागान् कारयेत् (छन्दो मङ्गः) 11 क. संयुक्तो 12 ग. नि· क्षौद्रेण 13 क. योगोऽयं लोहितानीरं मुर्शसां 14 यो. र. गरिणां 15 क. मूर्च्छामदोषसृष्टानां 16 क. छर्दि 17 स्त्रिष्णां च रजसोग्रहं । 18 क. गर्भानां 19 क. परिमिष्यते, र. र. परमुच्यते । 20 क. आश्विन्यां; वृ. यो. त., यो, र. भै. र. च " अश्विनोः सम्मतो योगो, र. र. अश्विभ्यां सम्मतो ... ।

* ❀ 'योगं.....परमिष्यते', अस्मिन्स्थाने भै. र.

"चतुः प्रकारं प्रदरं रक्तातीसारमुल्वणम् । रक्ताशांसि निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा" । ग. नि. "चलतां चामगर्भाणां स्तम्भनं परमुच्यते । अशिवभ्यां विहितं पूर्वं रक्तपित्तविनाशनम् । हितं लोहितपित्तेभ्यो ह्यर्शस्सुलोहितेषुच ।
तमो मूर्च्छोपसृष्टानां तृषार्तानां च दापयेत् ।।"

टीकाः— सूकडि, लौद्र, छड, उसीर, पदमाख, कवलगटा (कमलगट्टा), नागकेशर, बील, मोथो, निवात, वालो, पाठ, इन्द्रजव, सुंठि, पतीस, धावै रा फूल, रसवति, आंबै री गूठली, जंबू की मींजी, मोचरस, कवलकाकडी, मजीठ, छोटी इलायची, अनारदाणा, तज उषध सममात्र चूर्ण कीजै। चोषां रा पाणी सुं (तण्डुलोदक) तथा सहित (मधु) सुं दीजै। पाठांत्तरेण (पाठोक्त) कह्या छै सो सर्व रोग जाइ ।।

(८) [अथ पाठादि[1]चूर्णम्]

पाठा जम्बवाम्रयो[2]र्मध्यं शिलोद्भेदं रसाञ्जनम् ।
अम्वष्ठकी मोचरसः समङ्गा पद्मकेशरम् ।। ४१ ।।

बाल्हीकाऽतिविषा बिल्वं लो[3]ध्रं मुस्तं [4]सगैरिकम् ।
क[6]ट्फलं मरिचं शुण्ठी मृद्वीका रक्तचन्दन[5]म् ।। ४२ ।।

पाठान्तरम्— टी०

'चन्दनं कुङ्कुमोशीरं सलोध्रपद्मकेशरम् ।
द्राक्षा खर्जूरकाऽस्मर्यः शृंगाटं च कसेरुकम् ।।
आत्मगुप्ताभवं बीजं तथा गोक्षुरुकं बला ।
नलदं शृङ्गबेरञ्च त्रपुसी चाश्वगंधिका ।।
पुण्डरीकस्य बीजञ्च विदारीकंदचूर्णकम् ।
शुभछिन्नोद्भवं सत्त्वं पिप्पली मरिचन्तथा ।।
त्रिसुगन्धञ्च त्रिफला मुस्तं बालककेशरम् ।
तार्क्ष्यजं शैलजं धान्यं कर्पूरं जातिपत्रकम् ।।
एतानि समभागानि सूक्ष्यचूर्णानि कारयेत् ।
शर्करां च समेतां च भक्षयेद्रक्तपैत्तिकः ।।
अर्शांसि ग्रहणीदोषमतीसारं च कामलाम् ।
पाण्डुं श्वासं समेहञ्च अग्निमांद्यमरोचकम् ।।
तृष्णा-दाह-भ्रममूर्च्छा-छर्दि-हिक्का-शिरोरुजः ।
ऊर्ध्वाधश्च सृते रक्ते छागक्षीरं पिबेत्सदा ।।
एतान्रोगान् निहन्त्याशु ध्वांतं चैव यथा रविः ।
चन्दनादिरिति ख्यातो महादेवेन निर्मितः ।।

1 अन्येषु ग्रन्थेषु 'पुष्यानुगं चूर्णम्' इति नाम 2 क. अयोम्मध्यं 3 क. लोध्र 4 क. मगैरिकं 5 मै. र. विश्वौषधं कट्फलं च मरिचं रक्तचन्दनम् । 5 चक्र. 'कट्फलं' स्थाने "त्रिफला" इति पाठः ।

श्योना[1]को वत्[2]सकाऽनन्ता धातकी म[3]धुकार्जुनौ ।
पुष्ये[4] हतानि तुल्यानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।। ४३ ।।

तानि[5] क्षौद्रे[6]ण संयोज्य पिबे[7]त् तण्डुलवारिणा ।
अ[8]र्शस्सु चाऽतिसारेषु रक्तं य[9]च्चोपवेश्यते ।। ४४ ।।

दोषागन्तुकृता ये च बालानां चाशु नाशयेत् ।
योनिदोषं रजोदोषं नीलं श्वेतं च पाण्डुरम् ।। ४५ ।।

स्त्रीणां श्यावारुणं य[10]च्च [11]प्रशमं याति वेगतः[11] ।
चू[12]र्णं पुष्यानुगं नाम हितमात्रेयपूजित[13]म् ।। ४६ ।।

---

1 क. सोनार्के 2 क. मधुकोर्जुनः 3 र. र. 'वत्सक' स्थाने "वासका" पठितः 4 क. पुष्यो 5 क. तान्य 6 क. क्षौद्रस्य 7 क. पिवेतंडुल 8 क. अर्शेसु 9 क. पश्योपवश्यते 10 क. यच्चः, 11-11 भै. र., वृ. वै., र. र., चक्र. च 'तत्प्रसह्य निवर्तयेत् । 12 क. चूर्णं 13 क. पूजिता ।

पाठान्तरम्– यो. र.

'पाठा रसाञ्जनं मुस्तं मज्वा जम्ब्वाम्रयोस्तथा ।
अम्बष्ठकी शिलोद्भेदं समङ्गा पद्मकेशरम् ।।

बिल्वं मोचरसं लोध्रं केशरं गैरिकं तथा ।
विश्वौषधं कट्फलं च मरिचं रक्तचन्दनम् ।।

कट्वङ्गं धातकी द्राक्षाऽनन्ता मधुकमर्जुनम् ।
वत्सकातिविषा चेति पुष्येणोद्धृत्य बुद्धिमान् ।।

तुल्यभागानि सर्वाणि सूक्ष्माणि च विचूर्णयेत् ।
तच्चूर्णं माक्षिकोपेतं पीतं तण्डुलवारिणा ।।

जयेदर्शांस्यतीसारं तथा रक्तप्रवाहिकाम् ।
बालानां कृमिरोगांश्च योनिदोषांश्च योषिताम् ।।

रजोदोषी तथा सर्वान्प्रदरान्दुस्तरानपि ।
पीत-नीलारुणश्वेतान् सर्वानेव विनाशयेत् ।।

चूर्णं पुष्यानुगं नाम्नाऽपूर्वमात्रञ्च भाषितम् ।।

टीकाः— पाठ, आंब की मींजी, जांबू की मींजी, पाषाण भेद, रसवति (रसौतं), ममाई (मोइया), मोचरस, मंजीठ, कवलकेसरि (पद्मकेशर), कुंकुं, (केशर), पतीस, वील, मोथ, लोद्र, गेरूं, कतकफल ? (कट्फल)मिरच, सूंठि, दाख, रतांजणी, अरलुछालि, इन्द्रजव, जवासौ, धावै रा फूल, जेठीमधु, अरूजन (अर्जुन) पुष्य नक्षत्र मांहि लीजै । उषध सम भागि करि पीसीजै, चूर्ण टां २।। सहित (मधु) स्युं लीजै । तथा साठी चोखां रा पाणी सुं लीजै । अरस, अतीसार, पेटा लोही बैसै आगंतक दोष, ग्रह, भूतादि छई सो बालकां रा वहिला जाई ।। वायराँग योनि दोष रजदोष, नील, श्वेत, पाण्डुरा, स्याम, राता वहिलाहीज (असाध्य-भी) रूडा हुवै ।

अथजातीफलादि चूर्णम्

(६) [अथ जातिफलाद्यं चू[1]र्णम्]

जातीफल[2]–लवङ्गैलापत्रत्वङ्[3] नागकेशरैः ।
कर्पूरचन्दनतिलैस्त्व क[4]क्षीरीतगरामलैः[5] ।। ४७ ।।

तालीस–पि[6]प्पली–पथ्या–स्थूलजीरक–चित्रकैः ।
शु[7]ण्ठीविडंगमरिचैः समभागं विचूर्णि तैः[8] ।। ४८ ।।

यावन्त्ये[9]तानि चूर्णानि कुर्या[10]द्भृङ्गाञ्च तावतीम्[11] ।
सर्वचूर्ण[12]समादेया शर्करा च[13] भिषग्वरैः[14] ।। ४९ ।।

कर्षमात्रं ततः खादेन्मधुनाप्लावितं सुधीः[15] ।
अस्य प्रभावाद्ग्र[16]हणी–कास–श्वा[17]सारुचिक्षयाः[18] ।। ५० ।।

वातश्लेष्मप्रतिश्यायाः[19] प्रशमं या[20]न्ति वेगतः ।।

---

1 क. चूर्ण 2 क. जातीफलादिलवगैला 3 क. त्वग्नाग 4 क. स्तुक्षीरी 5 क. मलै 6 क. पीप्पली 7 क. सुंठी 8 क. चूर्णते 9 क यावत्येतानि 10 क. कुर्यद्भागाश्चगो 11 क. तावतीन् 12 क. चूर्णस्यमादेया 13 क. चा 14 क. भिषग्वरै 15 क. सुधाः 16 क. ग्रहणीं 17 क. स्वासारुचि 18 क. क्षय 19 क. प्रतिस्याथ 20 क. याति ।

टीकाः— जायफल, लवंग, इलायची, तज, पत्रज, नागकेशरी, कपूर, सूर्कांड, तिल, वंशलोचन, तगर, ग्रांवला, तालीसपत्र, पीपली, हरडै, जीरो, चित्रक, सुंठि, बिडंग, मिरच, उषध सममात्र, बराबरि (भांग) व (सबके बराबर) निवात । चूर्ण २।। टां सहित (मधु) सूं लीजै ग्रहणी कास, स्वास, ग्ररुचि, क्षय, वातश्लेष्म, पीनस, एता रोग जाई ।

पाठान्तम् भा. प्र.,

'जातीफलं विडंगानि चित्रकं तगरं तिलाः ।❀
तालीसं चन्दनं शुण्ठी लवङ्गमुपकुञ्चिका ।।
कर्पूरश्चाभयाधात्री मरिचं पिप्पली तुगा ।
एषां त्वक्षसमा-भागाश्चातुर्जातकसंयुताः ।।
पलानि सप्त + भङ्गायाः सिता सर्वसमा मता ।
चूर्णमेतत्क्षयं कासं श्वासं च ग्रहणीगदम् ।।×
ग्ररोचकं प्रतिश्यायं तथा चानलमन्दताम् ।
एतान् रोगान्निहन्त्येव वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।'×

❀ भै. र. 'तथा'

❀❀ भै. र. ''पलानि सप्त भङ्गायाः''''वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा'' ग्रस्मिन्स्थाने भै. र. 'ग्रहणीमतिसारं च वह्निमान्द्यं सपीनसम् । वातश्लेष्मभवान्रोगान् प्रतिश्यायांश्च दुःसहान् ।।' तत्र भङ्गा सिताश्च नास्तः ।

+ ग. नि. त्रीणि

ग्रन्य पाठान्तरम् बृ. यो. त.

'जातिफलाग्निहिमवेल्लतिल्लेन्दुजीर-
वांशी-त्रिकत्रयमनक्षमितं नतं च ।
तालीस-देवकुसुमे ग्रपि चूर्णमेषां
द्विःशर्करं च समभङ्गमिदं ग्रहण्याम् ।।''

टो.''जातीफलं तवक्षीरी मुस्तं मोचरसं कचम् ।
कपित्थं दाडिमं पत्रं पृथक् शाणमितं भवेत् ।
नागरं कांचनं शृङ्गी पाठा कंचटकं तथा ।।
शाणद्वयं द्वयं ग्राह्यं कर्षमात्रं सुवर्चलम् ।
पाटबद्धं रसंचात्र शुक्तिमात्रं प्रदापयेत् ।।
ग्रतिसारं जयेदाशु द्वन्द्वजं सर्वजं तथा ।
शोफं तथाऽऽमवातं च हिक्कां चाशु नियच्छति ।।

(१०) [अथ लघुजातीफलादिचूर्णम्[1]]

जातीफलैलामधुमातुलु[2]ङ्गैः पत्रैश्च लाजै[3]र्युत पिप्पलीकैः ।
कृतोऽवलेहः कुरुते नराणां कण्ठे ध्व[4]निं किन्नरनाद[5]तुल्यम् ।। ५१ ।।

वार्त्ताः— (टीका) जाइफल, ईलाइची, जेठीमधु, वीजोरा रा रस री भावनाप्रदीजै (फिर पत्रज, लाजा व पिप्पलीमिला कर) (अवलेह बनावें) चूर्ण टां २ लीजै । कंठि निर्मल ध्वनि होई ।।

(११) [अथ गगनायसचूर्णम्]

त्रिकटु[6] त्रिसुगन्धञ्च लवङ्गं जातिकाफलम् ।
तुगाक्षीरी शटी शृङ्गी वाजिगन्धा च दाडिमम् ।। ५२ ।।

एतानि समभागानि सर्वतुल्य[7]मयोरजः ।
आय[8]सेन समं देयं गगनञ्च ततो[9] बुधैः ।। ५३ ।।

यावन्त्ये[10]तानि सर्वाणि तावद्दद्यात् सितोप[11]लाम् ।
ततो मा[12]त्राम्प्रयुञ्जीत विडालपदमात्रि[13]काम् ।। ५४ ।।

अग्निसन्दीपनं हृद्यं वाजीकरण[14]मुत्तमम् ।❀
प्रमेहान्विंशति[14]ञ्चैव पञ्चकासांश्च नाशयेत् ।। ५५ ।।

गगनायसो मतो नाम सर्वव्याधिहरं परम् ।।+

---

1 क, चूर्ण　2 क. लिंगै　3 क. लाजैयुत　4 क. ध्वनि　5 क. वाद ।
6 क. त्रिकुठु　7 क. सर्वतुल्यामयो　8 क. अथसेन　9 क. गतो, म. प्र. मृतं　10 क. यावदेतानि 11 क. सितोपलं　12 क. पात्रं　13 क. मात्रकः र. यो. सा. 'गद्याणेन समन्विताम्' — 'टि. मूले मात्रायां विडालपदमात्रिकामिति पाठः आसीत्तत्स्थाने समयमनुसृत्याऽस्माभिर्गद्याणेन समन्वितामिति पाठः कृतोऽस्ति' ।

❀ अस्मिन्स्थाने 'कासं पञ्चविधं हन्ति सुरुच्यं वह्निदीपनं इति र. यो. सा. पाठः

+अस्मिन्स्थाने र. यो. सा. 'स्वरभेदं निहन्त्याशु चूर्णं हि गगनायसम् ।' इति पठितः । 14 क. तिश्चैव, म. प्र. विंशतिहन्यात्पञ्चकासान्सुदारुणान् ।

+गगनायसामृतं नाम' म. प्र. ।। क. ग्रन्थे छन्दोभङ्गः ।
14 क. वाजीकर्ण

टीका:— सूंठि, मिरच, पीपलि, तज, पत्रज, इलायची, लवंग, जायफल, वंशलोचन, सटी, काकडासिंगी, ग्रासगंध, ग्रनारदाणा, उषध सममात्रा पीसि चूर्ण कीनै (कीजै)। उपध री बराबरि सार, (लोह भस्म) ग्रभ्रक भेलोजे। सर्व उषध री बराबरी निवात भेलीजै। उषध टां ३।। लीजे। ग्रग्निदीपई, रूडो वाजीकरण उत्तम छै। बीस प्रमेह, पंचकाश जाई।

(१२) [ग्रथ नवाऽऽय[1]सचूर्णम्]

चित्रकं त्रिफ[2]ला मुस्तं विडंगं त्र्यूषणानि[3] च।
समभागानि कार्याणि नवभागा ह[4]तायसः ।। ५६ ।।

एतदेकीकृतं चूर्णं मधुस[5]र्पियुतं लिहेत्[6]।
गौमूत्रेण च तक्रेण ग्रनुपानं प्रश[7]स्यते ।। ५७ ।।

पाण्डुरो[8]गं जयत्युग्रं हृद्रोगं च भगन्दरम्।
शोथ कुष्टोदरार्शांसि मन्दाग्निम[9]रुचिं कृमीन् ।। ५८ ।।※

---

1 क. निवाययस चूर्णः 2 क. 'पिप्पला' इति भ्रष्टपाठः, 'त्रिफला' इति पाठस्साधुः। 3 क, 'त्र्यूषणं निशा' इति पाठः भ्रष्टः, 'त्र्यूषणानिच' इति पाठः शार्ङ्गधरादिग्रन्थेष्वपि वर्तते। तदेवपाठस्साधुः। 4 क. हितायसः 5 क. मधुमर्पि 6 क. लिहेत 7 क. प्रसस्यते 8 क. रोगजयत्युग्रं 9 क. मरुचिकृमी।

पाठान्तराणि:—

भै. र. म. प्र., चरके च. 'त्र्यूषणत्रिफलामुस्तविडङ्गचित्रकाः (1) समाः।
नवाऽयोरजसो भागस्तच्चूर्णं क्षौद्रसर्पिषा ।।

भक्षयेत्पाण्डुहृद्रोगकुष्ठार्शः कामलाऽपहम्।
नवाऽऽयसमिदं चूर्णं कृष्णात्रेयेण भाषितम् ।। ※

(1) यो. त. (योगसारात्) ग. नि., दहनाः
※ ग्रस्मात्परं र. यो. सा. 'गोमूत्रेण पिबेद्वातपाण्डुरोगं च नाशयेत्।

शोथ-हृद्रोगमुदरं कृमिकुष्ठभगन्दरम्।
नाशयेदग्निमान्द्यञ्च दुर्नामकमरोचकम् ।।

ग्राद्रकस्य रसेनाऽपि लीढं कफसमुद्धतम्।
गुञ्जामेकां समारभ्य यावत्स्युर्नवरक्तिका। ।।

टीका:— चित्रक, हरडै, बेहडा, आंवला, मोथ, बिडग, सुंठि, मिरच, पीपलि, हलद (यह द्रव्य दशवां होगा—भ्रष्ट पाठ के कारण यह लिखा गया प्रतीत होता है।) उषध सममात्र, उषधां थी बराबरि मार्यो सार (लोहसार) वांटि चूर्ण करि घृतसहित (मधु) स्यु अवलेही कीजै। अथ (वा) मूत्रगौकास्युं अथवा तक्र स्यूं लीजै, पांडुरोग, हृद्रोग, भगंदर, सोथ, कोढ, हरस, मंदाग्नि अरुचिकृमि इतरा रोग जाई ॥

(१३) [अथ खण्डसमं चूर्णम्[1]]

त्र्यूषणं त्रिफला मुस्तं तालीसं गजपिप्पली ।
जीरकं तिंतडीकं च कर्षांशानि प्रकल्पयेत् ॥ ५६ ॥

तावल्लोहं समश्नीयाद्यथादोषबलं नरः ।
नवाऽऽयसमिदं चूर्णं नरोऽष्टादशरक्तिकाः ॥
प्रलिह्यान्मधुसर्पिभ्यां पिबेत्तक्रेण वा सह ॥
योगमहार्णवे-एवं सति प्रथमदिवसे त्र्यूषणादिसहितं
रक्तिकाद्वयमिति खादेत् । ततः प्रतिदिनं रक्तिका—
द्वयं द्वयं वर्द्धयेत् । एवं त्र्यूषणादिसहिता
अष्टादशरक्तिकाः स्युस्ततस्ताः प्रतिदिनं खादेत्'
इत्यधिकः पाठः ।

वृ. यो. त,—

'सत्र्यूषणानि सफलत्रिकचित्रकाणि,
साम्भोधराणि सविडङ्गफलानि च चस्युः ।
कर्षाणि लोहरजसश्च नवेति चूर्ण—
मेतन्नवायसमिदं मधुनाऽवलीढम् ॥
न स्युः प्रमेहपिटिका न च पाण्डुरोगाः
स्थौल्यं तनोः स्थविरता न च शीघ्रमेति ।
नोकुष्ठरुग्जठरजा जठरस्य नैव.
नाग्नेरपारवमनेन नवायसेन ॥

1 क. चूर्णः 2 क. कर्षाश्यनि ।

त्वगेला चार्द्धकर्षस्स्या[1]ल्लोहचूर्णं पलद्वयम् ।
सूक्ष्मचूर्णं[2]ततः कृत्वा तुल्यं खण्डं प्रदापयेत् ।। ६० ।।

नाशयेद्यच्च[3] हृद्रोगाञ्चूर्णं खण्डसमाहितम् ।। ६१ ।।

टीका:— सुंठि, मिरच, पीपलि, हरडै, बहेड़ा, आंवला, तालीसपत्र, गजपिप्पली, जीरो, तिंतडीक, उसा (सर्वं) टां १-१ लीजै, तज टां २ (½), इलायची टां २ (½ टां), सारमारयो टां ३२ ? (८) (और) खांड टां. ४८ ? (२०) । उषा को चूर्ण कीजै । टां २।। प्रमाण लीजै । हृद्रोग जाई ।

(१४) [अथ अश्वगन्धादिचूर्णम्]

अश्वगन्धाऽग्निमूलञ्च सर्त्तरी (?) च शतावरी ।
विदारी–मूसलीकन्दौ गोक्षुरस्य च बीजकम् ।। ६२ ।।+

---

1 क. कर्षंस्यालोह 2 क. चूर्णंततः 3 क. नाशयत्यंच ।

पाठान्तरम्— ग. नि., र. यो. सा. च

'त्रिफलाव्योषबिल्वाब्दपिप्पलीमूलचित्रकैः ।
त्वगेलापत्रचविकातिन्तिडीकाम्लवेतसैः ।।
समांशैर्धातुमाक्षीकं सर्वैस्तुल्यं प्रदापयेत् ।
लोहचूर्णं समं तैश्च सर्वैः खण्डं समांशकम् ।।
चूर्णितं मधुना लेह्यं वटकान्वा समाक्षिकान् ।
भक्षयित्वा यथासात्म्यमनुपानं प्रयोजयेत् ।।
नाशयेत्कुष्ठमालस्यं प्रमेहोदरकामलाः ।
पाण्डुरोगं तथा कासं हलीमकशिरोरुजम् ।।
प्रसेकमरुचिं मूर्च्छां हृल्लासं मन्दवह्नितताम् ।
रक्तपित्तं परीसर्पं श्वयथुं च नियच्छति ।।

+पाठान्तरम्—र. यो. सा. (रसायनखण्डोक्तम्)

(अश्वगन्धाभ्रकः)

'अश्वगन्धा-शतावर्योः शाल्मल्याश्चित्रकस्य च ।
मूलं मुशलिजं कन्दं कोकिलाक्षस्य बीजकम् ।।

वानरीबीजतुल्यञ्च शुष्कचूर्णन्तु कारयेत् ।
चूर्णतुल्यं मृताभ्रञ्च सर्वतुल्यसिता भवेत् ।। ६३ ।।

गोक्षीरेण पिबेत्कर्ष कामयेत्कामिनी शतम् ।

टीका:— असगंध, चित्रक, हलद ? (शालमलो ?) सितावरी, विदारीकंद, मूसलीकंद, कांटो, कौंचबीज उषध समवांटि चूर्ण कीजै । उषध का बराबर अभ्रक । सर्व चूर्ण की बराबरी निवात घालीजै । काली गाई का दूध सौं लीजै । स्त्री १०० सेवन करई ।

(१५) [कामदेव[1]चूर्णम्]

पलं गोक्षुरबीजस्य द्विपलं कपिकच्छु[2]रम् ।
पलं नागबलाबी[3]जं पलमेकं शता[4]वरी ।। ६४ ।।

बिदारीकन्दचूर्णस्[5]य पलद्वयम[6]थापरम् ।
द्वि[7]पलं त्रपुषीबीजं वाजिगन्धा पलत्रयम् ।। ६५ ।।

त्रिसुगन्धिकणाधात्रीलवङ्गं नागकेशरम् ।
वं[8]शी च तालमूली च गुडूची रक्तचन्दनम् ।। १६ ।।

एतानि कर्षमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
बाल[9]—शालमलिमूलञ्च सा[10]धयेच्चैकविंशतिः ।। ६७ ।।

कुश[11]कासस[12]मायुक्तं शर्करासमयोजितम् ।
नष्[13]टशुक्रं रु[14]जं हन्[14]त मूत्रकृच्छ्राणि यानि च ।। ६८ ।।

विदारी पद्मिनीकन्दं वानरीबीजकं समम् ।
मृताभ्रमेतच्चूर्णं तु तुल्य-शर्करया समम् ।।

पलार्द्धं पाययेत्क्षीरैःखादेत्कुक्कुटमांसकम् ।
क्षीरपानं ततः कृत्वा रमयेत् कामिनी शतम् ।।

1 क. अगथतथानुपरि कामदेवचूर्णः 2 क. कच्छुकं 3 क. मूलं 4 क. शितावरी 5 क. चूर्णं तु 6 क. पलद्वयं तथा वला 7 क. पलद्वयं (छंदोभङ्गः) 8 वृ. यो. त. वासा 9 क. वालशालमलीकाह्वा वै, वृ. यो. त. बालशालमलिमूलञ्च 10 वृ. यो. त. भावयेदेकविंशतिः क. विंसति 11 क, कुस 12 क. शमायुक्तं, वृ. यो. त. शिफा सप्त 13 वृ. यो. त. दुष्ट 14-14 वृ. यो. त. वीर्यंहानि

[मूत्राघातं मूत्रदोषं जयेच्छुक्रविवर्द्धनम् ।]※
शतं गच्छति च स्त्रीणां हय[1]तुल्यपराक्रमः ।। ६९ ।।

[वन्ध्या पुत्रमवाप्नोति भुक्त्वा चूर्णमिदंक्रमात् ।]※
कामदेवाभि[2]धं चूर्णं[3]धन्वन्तरिनि[4]रूपितम् ।। ७० ।।

टीकाः— गोखरू टां १०, कौंछबीज टां २०, नागबला की छालि (बीज) टां १०, सतावरी टां १०, बिदारीकंद टां २०, खरहटी टां २० (?) खीरा रा बीज री मींगी टां २०, आसगंध टां ३०, तज टां २।।, पत्रज टां २।।, इलायची टां २।।, पीप्पली टां २।।, आंवला टां २।।, लूंग टां २।।, नागकेसर टां २।।, वंशलोचन टां २।।, (अथवा वृ. यो. त. के अनुसार वासा) छड़ (तालमूली) टां २।।, मूसलीकंद टां २।।, गिलोइ सत टां २।।, रतांजनी टां २।।, (चूर्ण करके) लहुडो सबली तिण रा रस (बाल-शाल्मली) री भावना २१ डाभ री जड़ कूटि पाणी में छाणि तिण पाणी की भावना २१, ईण ही विधि कांस री जड री भावना २१ दीजे । सगली उषध बराबरी निवात घातीजे । चूर्ण टां २।। लीजे ऊपरि दूध पीजै । नष्ट वयर री पीड जाई मूत्रकृच्छ जाई । सउ वयर (सौ स्त्रियों से) रमई । घोड़ा समान वीर्य होई । कामदेव नामा रस धंनंतरि कीयौ ।।

(१६) [अथ अकारकर[5]भादिचूर्णम्]

अकारकरभ[6]: शुण्ठी कङ्कोलं कुङ्कुमं कणा ।
जातीफलं लवङ्गञ्च चन्दनञ्चेति[7] कार्षिकान् ।। ७१ ।।

चूर्णानि[8] मानतः कुर्यादहिफेनं पलोन्मितम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं माषैकं मधुना लि[9]हेत् ।। ७२ ।।

※ पाठोऽयं० क. ग्रन्थे नास्ति

1 क. हयतुल्यं स वीर्यवान् 2 क. मिदं 3 क, नाम 4 क. विनिर्मितम् वृ. यो. त. निरूपितम् ।

5 क. करभादिचूर्णः 6 क. अकारकरभा 7 क. कार्षिका 8 क. चूर्णानी 9 क. लहेत

शुक्रस्तम्भकरं चूर्णं पुंसामानन्दकारकम् ।
नारीणां [1]प्रीतिजननं सेवेत[2] नि[3]शि कामुकः ।। ७३ ।।

टीका:— अकलकरो, सुंठि, कंकोल, केसरि (केशर), पीप्पली, जाइफल, लंवग, सूकडी (श्वेतचन्दन) उषध सर्वं टां २।।, अफीण (अफीम) टां १० भेलीजं । पछै चूर्णं मासो १, सहत टां ५ मांहे घाति अवलेही लीजै । वीर्य स्तंभ होइ । जीव मांहि आणन्द थाय । अस्त्री प्रतिकरइ राति रइ विषइ कांमी सेवत ई न थ कई ।।

(१७) [अथ कर्पूरादिचूर्णम्]

कर्पूरचो[4]चकङ्कोल–जातीफलदलं[5] सम[6]म् ।
लवङ्गनागमरि[7]चकृष्णाशु[8]ण्ठ्यो विवर्धि[9]ताः ।। ७४ ।।

चूर्णंसितासमंहृ[10]–द्यं रोचनं क्ष[11]यकासजित् ।
वैस्व[12]र्य–श्वास–गुल्मा[13]र्श–छर्दिकण्ठमयापहम् ।। ७५ ।।

प्रयुक्तं चान्नपाने[14]षु भेष[15]जद्वेषिणां हितम् ।। ७६ ।।

टीका:— कपूर, तज, कंकोल, जाइफल, जांवत्री✽, (जावित्री या तेजपात) (ये प्रत्येक समान, अर्थात् १–१ भाग✽, लवङ्ग १ भाग, नागकेशर, २ भाग, मरिच ३ भाग, पीपर ४ भाग, सूंठ ५ भाग) (इस मिलित चूर्ण के बराबर शर्करा) उषध समान निवात भेलीजै । चूर्णं टां २।। लीजे । देही न उ भल उ ? रुचि करै । कास स्वास, गुल्म, हरस (अर्श) छर्दि कंठरोग हरै ।

---

1 क. ?तिजननं 2 क. सेविति 3 क. निसु
4 क. तज (चोचं-त्वक्पत्रम्), बृ. यो. त. वाला 5-6 क. दलैः समैः 7 क. मरिचं यो. र. मांसी मरिचं 8 क. सुंठी 9 क. विवर्द्धतैः 10 क. द्वंद्यं 11 क. जयकाश 12 क. वैश्वर्यं 13 क. गुल्मार्शः 12-13 यो. र. वैस्वर्यं-पीनस-श्वासच्छर्दि····
14 क. चान्नपातेषु 15 क भेषजं रोगिणो वृ. यो. त. भेषजं द्विगुणं

✽–✽ टीका में जावित्री के आगे वाले भी सभी द्रव्य समभाग कहे गये हैं किंतु पाठ में लवंग से सूंठ तक के द्रव्य भागवृद्धि से कहे गये हैं ।

(१८) [अथ लवङ्गादिचूर्णम्]

लव[1]ङ्गं शुद्धकर्पूरमेला त्वङ्[2] नागकेशरम् ।
जातीफल[3] मुशीरञ्च नागरं कृष्णजीरकम् ।। ७७ ।।

कृष्णागु[4]रुस्तुगाक्षीरी मां[5]सी नीलोत्पलं कणा ।
चन्दनं तगरं बालं कङ्कोलं चेति चूर्णयेत् ।। ७८ ।।

समभागानि सर्वाणि सर्वेभ्योऽर्द्धा सिता भवेत् ।
लवङ्गा[6]द्यमिदञ्चूर्णं राजा[7]र्हं वह्नि[7]दीपनम् ।। ७९ ।।

रोचनन्तर्पणं वृष्यं त्रिदोषघ्नं बलप्रदम् ।
हृद्रोगं कण्ठरोगञ्च कासं हिक्[8]कां च पीनसम् ।। ८० ।।

यक्ष्माणं तमकश्वासमतीसारमुरःक्षत[9]म् ।
प्रमेहारुचिगुल्मादीन्ग्रहणीम[10]पि नाशयेत् ।। ८१ ।।

---

1 क. लवंग 2 क त्वग 3 क. फल उशीरं 4 कं. कृष्णांगुरतुगा 5 क. मांशी 6 क. लवंगादिमिदं 7 क. जार्हंनह्नि 8 क. हिक्कापीनसम (छन्दोभङ्गः) 9 क. क्षतीः 10 ग्रहणीमग्निनाशयेत्

पाठान्तरम्— यो. र., भा. प्र., भै. र., चक्र

'लवङ्गकङ्कोलमुशीर-चन्दनं
नतं सनीलोत्पलकृष्ण✽जीरकम् ।
1एला सकृष्णाऽगुरुभृङ्गकेशरं
+कणा सविश्वा नलदं सहा2म्बुना ।।
3कर्पूरजातीफलवंशरोचनं
सिता4र्द्धभागं समसूक्ष्मचूर्णितम् ।
संरोचनं तर्पणमग्निदीपनं
बलप्रदं वृष्यतमं त्रिदोषनुत् ।।
उरो-विबन्धं तमकं गलग्रहं
सकास-हिक्कारुचियक्ष्मपीनसम् ।
ग्रहण्यतीसारमथासृजः क्षयं
प्रमेहगुल्मांश्च निहन्ति सत्वरम् ।।

✽ टो. जीरकंसमम्, ✽ र. र. जीरकद्वयं,
भै. र. पत्र +भै. र. मुस्ता
1 भा. प्र. जलं (जलं-बालम्) 2 भा. प्र. सहेलया (एला) 3 भा. प्र. तुषार (कर्पूरः),
भै. र. र. [illegible] 4 भै. र., चक्र च [illegible]

टीका:— लवंग, कर्पूर भीवसेनी, इलायची, तज नागकेशर, जायफल, उसीर, सुंठि, कालोजीरो, कृष्णागर, वंशलोचन, छड़, कंवलकाकड़ी (नीलोफर) पीपलि, चन्दन, तगर, वालो, कंकोल, उषध सममात्र वांटि छाणि उषध हूं ती आधी निवात घातीजै । उषध टां. २।। प्रभाति लीजै । वह्नि दीपती होई, रुचि करई, कामवृद्धि, त्रिदोष हरई, बल बधई, हृदयरोग, कंठ रोग, कास, हिक्का, पीनस, षयन (क्षय) तमकश्वास, अतीसार, तोड (क्षत), प्रमेह, अरुचि, गुल्म, ग्रहणी एता रोग जाई ।।

(१६) [अथ लघुतालीसादिचूर्णम्]

तालीश[1]पत्रं मरिचं नागरं पिप्पली शुभा[2] ।*
यथोत्तरं भागवृद्ध्या त्वगेले चार्द्धभागिके[3] ।। ८२ ।।

पिप्पल्यष्टगुणा चात्र प्रदेया सितशर्करा ।
कासश्वासज्वरहरं तच्चू[4]र्णं दीपनं परम् ।। ८३ ।।

हन्त्[5]याशु ग्रहणीदोषं प्लीह–शोष+ज्वरापहम् ।
छर्द्य[6]तीसारशूलघ्नं मूढवातानु[7]लोमनम् ।। × ८४ ।।

बृ. यो. त. पाठान्तरम्

अर्द्धं श्वेतालवङ्गागरुतगरतुगात्वक्कणा-शीतशुण्ठी—
जीरोशीरेभजातीफलनलदजलाल्लोत्पलैलेन्दुचूर्णम् ।
दोषार्तेऽल्पान्नशुक्रज्वलनबलरुचौ गुल्ममेहप्रतिश्या—
हिक्काकासातिसारक्षयतमकगलोरुग्रहेषु ग्रहण्याम् ।।

* शा. 'तालीसं मारिचं शुण्ठी पिप्पलीवंशरोचना' ।।

1 क. तलीसपत्रादि' ग. नि. मरिचं चैव तालीसं 2 यो. र. तुगा, किन्त्वन्ये 'शुभे'ति पिप्पलीविशेषणं' मन्यन्ते । चि. पा. 'वंशलोचना:' इतिपाठः 3 क. त्वगेलेर्द्धभागिका' 4 क. तचूर्णं 5 क. हन्याशु 5 चरक. म. प्र. च हृत्पाण्डु, यो. र. पांडुहृत् 6 क. छर्द्दितीसार +म. प्र. श्लेष्मकफापहम् 7 क. मूढवातांलोमन, चरक. मूर्ध्ववातानुलोमनम् ।।

× अस्मात्परं चरके, वृ. वै., चक्र. र. र. टो. न

टीका:— तालीसपत्र टां १, मरिच टां २, सूंठि टां ३, पीपलि टां ४, वंशलोचन टां ५, तज टां ½, इलायची टां ½, निवात टां ३२ घातिजै। उषध टां २॥, खाईजै कास, स्वास, ज्वर, ग्रहणी, प्लीह, शोष, छर्दि, अतिसार सूल, मूढवात, एता रोग जाई॥

'कल्पयेद्गुटिकां चैव चूर्णं पक्त्वा सितोपलैः।
गुटिका ह्यग्निसंयोगाच्चूर्णाल्लिघुतराः स्मृताः।'
चक्र. अस्मात्परं-पैत्तिके ग्राहयन्त्येके शुभया वंशलोचनाम्' इति पाठः।
ग्रन्थान्तरेण 'शुभे'ति पिप्पली विशेषणं न तु वंशलोचना'।
'विशेषणं हि पिप्पल्या अन्यत्र पैत्तिकाच्छुभा।

पाठान्तरम् — वृ. यो त.

'तालीसोषणविश्वपिप्पलितुगाः
कर्षाभिवृद्धास्त्रुटिः,
कर्षार्द्धा त्वगपि प्रकामधवला
द्वात्रिंशकर्षा सिता।
तालीसाद्यमिदं सुचूर्णमरुचात्राध्मानमन्दानल—
श्वासच्छर्द्यतिसारशोषकसनप्लीहज्वरे शस्यते॥

चि० पा०

''तालीशमरिचनागरमागधिका वंशलोचनाः क्रमतः।
वृद्धास्त्वगेलार्द्धं कृष्णायाः सिता भवेदष्टगुणा॥"

शा. 'तालीसं मरिचं शुण्ठी पिप्पली वंशरोचना।
एक-द्वि-त्रि-चतुःपञ्चकर्षैर्भागान्प्रकल्पयेत्॥
एलात्वचोस्तु कर्षा-र्द्धं प्रत्येकं भागमाचरेत्॥
द्वात्रिंशत् कर्षं तुलिता प्रदेया शर्करा बुधैः॥

टी०

'तालीसमरिचनागरपिप्पलीत्वङ्मूलत्रुटिद्राक्षाग्नि—
जातिफलमृणालत्वक्क्षीरीमुस्ततुल्यांशकम्।
चूर्णं त्रिगुणं सितोपलमेतद्द्रव्यं प्रदीपनं हृद्यम्।
ज्वररक्तपित्तकासश्वासक्षयशूलगुल्मन्घम्॥
क्रिम्यतिसारग्रहणीहृद्रोगानाहमूढवातम्।
दाहं करचरणादिषु शमयति पाण्डु च कंठरोगञ्च॥

(२०) [अथाऽम्लपित्ते मध्यतालीसादिचूर्ण[1]म्]

तालीशं तिंतडीकञ्च चातु[2]र्जातं कटुत्रिकम् ।
तुगाक्षीरी च मृद्वीका खर्जूरञ्चैव दाडि[3]मम् ।। ८५ ।।

जातीफलशठीशृङ्गी–विज[4]याजीरकद्वयम् ।
ह्रीबेरं देवकुसुमं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।। ८६ ।।

याव[7]न्त्येतानि सर्वाणि ता[7]वद् दद्यात्सितोपलम् ।
भक्षयेत् प्रातरु[8]त्थाय शीतं चाऽनु जलं पिबेत् ।। ८७ ।।

अम्लपित्तं निहन्त्याशु मूर्च्छाछर्दिमदभ्रमान् ।
अग्निमान्द्यं शि[9]रोरोगं क्षिप्रमेव विनश्य[10]ति ।। ८८ ।।
तालीसा[11]द्यमिदञ्चूर्णं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ।।

टीका:— तालीसपत्र, तिंतडीक, तज, तमालपत्र, नागकेसरि, ईलाइची, सुंठि, मिरच, पीपलि, बंसलोचन, दाख, खारक, अनारदाणा, जाइफल, सटो काकडासिंगी, हरडै (विजया), कालोजीरो, धवलोजीरो. वालो, लवंग, उषध वांटि चूर्ण कीजै । उषध समभाग, उषध बराबरि निवात घाति चूर्ण टां २।। वासी पाणी सूं लीजै, आम्लपित जाइ छर्दि, भ्रम, मंदाग्नि मस्तक रोग जाई । बल वर्ण बधई ।

(२१) [अथ यवानीषाडवनामचूर्णम्[12][
यमा[13]नी तिन्तिडीकञ्च नागरं चाम्लवेतसम् ।
दाडिमं बदरञ्चाम्लं कार्षिकाण्यु[14]पकल्पयेत् ।। ८९ ।।

धान्यसौवर्च[15]लाजाजीविडङ्ग[16]ञ्चार्द्धभागिकम् ।
पिप्पलीनां [17]शतञ्चैकं द्वे [18]शते मरिचस्य च ।। ९० ।।*

---

1 क. चूर्णः 2 क. चातुर्याति 3 क, दाडिम 4 क. विजीया 5 क. ह्रद्वेर 6 क. यावदेतानि 7 क. तावदद्या 8 क. रुछाय 9 क. सिरो 10 क. विनस्यति 11 क. तालीसादिमिदं
12 भै. र., चरके च 'यमानीखाडवम्' इति नाम, चक्र. 'यवानीषाडवम्' यो. र., बृ. यो. त., र. र. च 'यवानीखाण्डवम्' इति नाम, क. चूर्णः 13 क. जवानी 14 क. कर्षिकानु 15 क. सौवर्चलं जाती 16 च. सं., भै. र., चक्र., यो. र. र. र. आदिषु 'वराङ्ग' इति पाठः । वराङ्ग–त्वक्पत्रम् 17 क. सतं 18 क. द्वे सते

शर्करायाश्[1]च चत्वारि पलान्येकत्र कारयेत् ।
जिह्वा-संशोधनं हृद्यं तच्चूर्णं रोचनं परम् ।। ६१ ।।

हृत्पीडा[2]पार्श्वशूलघ्नं विबन्धानाहनाशनम् ।
कासश्वासहरं ग्राही ग्रहण्य[3]र्शोविकारनुत् ।। ६२ ।।

टोका:— अजमो टां २।।, सुंठि टां २।।, तितडीक टां २।।, आमलवेतस टां २।।, बोर टां २।।, (दाडिम टां २।।) भिषामिल ? टां २।। धाणां टां १ (१।) सौंचल टां १ (१।), जीरो टां १।, विडंग टां १। पीपलि थान (अदद) १००, मिरच थान २००, निवात टां ४०० ? (४० टां)एकठा करि वांटि, छाणि टां २।। प्रभाति लीजै । जिह्वाशोधन, रुचिकारी, हृदय री पीड पासा री शूल, बंधकोष्ट, आफरो, कास, श्वास संग्रहणी लोही विकार, एता रोग सर्व जाई ।।

---

1 शर्करायां 2 च. सं. 'हृत्प्लीह', वृ. यो. त. 'हितं पार्श्वति 3 क. ग्रहणीरक्त-विकारनुत् (छन्दोभङ्गः) च. सं., वृ. यो. त., चक्र., भै. र., यो. र., र आदिषु 'ग्रहण्या-र्शोविकारनुत् इति साधुः पाठः ।

"संख्याफलानां शतशोऽपला स्यात्" अ. हृ. टि.

पाठान्तरम् ग. नि.

'पिप्पलीनां शतं चैकं द्वे शते मरिचस्य च ।
सिता पलचतुष्कं च नागरार्द्धपलं तथा ।।
धान्यसौवर्चलाजाजीत्वगेलाश्चार्द्धकार्षिकाः ।
कोलदाडिमवृक्षाम्लयवान्यश्चाम्लवेतसः ।
कार्षिकांश्चूर्णयेत्सर्वान् हृद्यं त्वन्नप्ररोचकम् ।।
प्लीहहृद्ग्रहणीदोषपञ्चकासनिबर्हणम् ।।
षाडवं नाम गुल्मार्तिविबन्धानाहशूलनुत् ।।

भाव प्र०, शा. च—

'यमानी दाडिमं शुण्ठी तिन्तिडीकाम्लवेतसैः ।
बदराम्लञ्च कुर्वीत चतुः शाणमितानि च ।।
सार्द्धद्विशाणं मरिचं पिप्पली दशशाणिका ।
त्वक्सौवर्चलधान्याक-जीरकं द्वि-द्विशाणिकम् ।।
चतुः षष्टि मितैः शाणैः शर्करामत्र योजयेत् ।
चूर्णितं सर्वमेकत्र यवानीखाण्डवाभिधम् ।।

(२२) [अथ कालकं चूर्णम्]

गृहधूमो यवक्षारः पाठा व्योषं रसाञ्जनम् ।
तेजो[1]ह्वा त्रिफला लो[2]ध्रं चित्रकश्चेति चूर्णितम् ।। ६३ ।।

सक्षौद्रं धारयेदेतद् गलरोगविना[3]शनम् ।
कालकं नाम[4] तच्चूर्णं दन्तास्यगलरोगनुत् ।। ६४ ।।

टीका:— धुंसौ (गृहधूम), यवषार, पाठ, सुंठि, मिरच, पीपलि, रसवति, तेजबली, हरडे, बैहडा, आंवला, लोद, चित्रक, उषध, वांटि चूर्ण करि सहत स्युं अवलेही लीजै । चूर्ण टां २।। लीजै दांत, मुख, गला रोग सहि (सर्व) जाई ।।

चूर्णं जयेत्पाण्डुरोगं हृद्रोगं ग्रहणीज्वरम् ।
छर्दिशोषातिसारांश्च प्लीहानाहविबद्धताम् ।।
अरुचि शूलमन्दाग्निमर्शोजिह्वागलामयान् ।।'

बृ. यो. त., (वोपदेवशतांत्) यो. र. च

'तुल्यं तालीसचव्योषणलवणगजद्विःकणाग्रन्थ्यजाजी—
वृक्षाम्लाग्नित्वचं त्रिर्घनबदरधनैलाजमोदाम्लविश्वम् ।
सार्द्धं श्वेताग्निसारोऽतिसृतिकृमिवमी खाडवोऽरुच्यजीर्णे
गुल्माध्मात्पानलाख्योदरगलगदहृद्दृद्ग्रहश्वासकासे ।'
घनं-मुस्तं, घनं-धान्यकं

अ. हृ. 'यवानी तिन्तिडीकाम्लवेतसौषधदाडिमम् ।
कृत्वा कोलं च कर्षांशं सितायाश्च चतुष्पलम् ।।
धान्यसौवर्चलाजाजी-वराङ्गं चार्द्धकार्षिकम् ।
पिप्पलीनां शतं चैकं द्वे शते मरिचस्य च ।।
चूर्णमेतत्परं रुच्यं हृद्यं ग्राहि, हिनस्ति च ।
विबंधकासहृत्पार्श्वप्लीहार्शो ग्रहणीगदान् ।।

1 तेजोह्वा चव्यं इति शिवदासः 2 र. र., चक्र., भै. र. च लोहं 3 क. विनासनम् 4 क. नामनचूर्ण

पाठान्तरम् अ. हृ.

'गृहधूमतार्क्ष्यपाठाव्योषक्षाराग्न्ययो वरा तेजोह्वं ।
मुखदन्त-गलविकारे सक्षौद्रः कालको विधार्यश्चूर्णः ।।
तार्क्ष्यं— रसाञ्जनम्, अग्निः— चित्रकः, अयः = लोहभस्मं —

(२३) [अथैलाऽऽदिचूर्णं[1]म्]

एला-लवङ्ग-गजकेश[2]र-कोलमज्जा—
लाजा-वराङ्ग❀-घन+-चन्दन-पिप्पलीनाम् ।
चूर्णानि माक्षिक ○युतानि च विप्रलीढ्वा[3] ☫
च[4]र्छर्दि निहन्ति कफमारुत[5] पित्तजातम ।। ९५ ।।

टीका: — एलची, लंवग, नागकेसरि, वोर की मींगी, चावलां री खील, तज, मोथ, सूकडी, प्रियङ्गु, ? पिप्पली, गेरू ? हरडै, ? उषध सममात्रा करि सहित (मधु) सुं अवलेही लीजै । छर्दि कफ-वात-पित्त त्रिदोष री जाई ।।

(२४) [अथ [6]सारस्वतं चूर्णम्]

कुष्ठा[7]जमोदे लवणाश्वगन्धे,
द्वे जीरके त्रीणिकटूनि पाठा ।

---

1 क. चूर्णः 2 क. केसरि ग. नि. दलकेसर 3 क. लीढा 4 क. छर्दि 5 क. मारुजपित

❀ भा. प्र., र. रा., वृ यो. त. च प्रियङ्गु + र. र. वन ○ चक्र., भा. प्र., यो. र. 'माक्षिकसितासहितानि'

☫ 'चूर्णानि · लीढ्वा' अस्मिन्स्थाने 'चूर्णं सितामधुयुतं मनुजो विलिह्य' इति यो. र. (योगरत्नावलितः) तथा बृ. यो. त. पठितः

पाठान्तरम्—यो. र.
'एला पत्रं नागपुष्पं लवङ्गं
भागस्त्वेषां द्वौ च खर्जूरकस्य ।
द्राक्षा-यष्टी-शर्करा-पिप्पलीनां
चत्वारस्तत्क्षौद्रयुक्तं क्षये स्यात् ।'

शा. 'एलाप्रियङ्गुमुस्तानि कोलमज्जा च पिप्पली ।
श्रीचन्दनं तथा लाजा लवङ्गं नागकेशरम् ।।
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं सिताक्षौद्रयुतं लिहेत् ।
वातपित्तकफोद्भूतां छर्दिहन्त्यतिवेगतः ।।'

❀ टीका में वराङ्ग का अर्थ तज किया है अतः प्रियङ्गु का उल्लेख व्यर्थ है । इसी प्रकार गैरु और हरड का उल्लेख भी भ्रष्टपाठ है ।

6 ग. नि. बृहत्सारस्वतं चूर्णम् इति नाम 6 क. स्वारस्वतचूर्णः 7 क. कुष्टा अजमोदे

*मा‌ङ्गल्यपुष्पाणि समानि चूर्णं
कृत्वा नु चूर्णेन वचोद्भवेन[1] ।। ६६ ।।

तुल्येन युक्तं बहुशो रसेन
तद्भावितं ब्रह्मविनिर्मितायाः[2] । *
सर्पिर्मधुभ्यां नु ततोऽक्षमात्रं[3]
[4]गृह्यान्नरः सप्तदिनं × हिताशी ।। ६७ ।।

+सौभाग्यमिच्छन्[5]श्रमतश्च ध्वस्तां
मे[6]धां तथेच्छन्द्विगुणञ्[7]च काले ।।+
सारस्वतमिदञ्चूर्णं ब्रह्मणा निर्मितम्पुरा ।
भवेद्धि[8]ताय लोकानां दुर्मेधा[9]हतचेतसाम् ।। ६८ ।।○

टीका:— कूठ. अजमोद, सींधौ (नमक), आसगंध, कालोजीरो धवलोजीरो, सूंठि, मिरच. पीपलि, पाठ, हलद (शंखपुष्पी) उषध सममात्र । उषध

---

1 क. बचोद्भवेनः 2 क. विनिर्मिताया 3 क. मात्र 4 क. ब्रह्मानरः × बृ. यो. त. षष्ठि दिनानियावत् 5 क. मिछंस्तमश्चध्वस्तं 6-7 क. मेधा तथै छद्दि गुणं च कालं +-+ म. प्र. 'ऐश्वर्यमिच्छन् मनसश्च धैर्यं' मेधांतदिच्छन् द्विगुणं च कालम् । 8 क. भवेद्वितीय 9 ग नि. दुधर्मेसां विचेतसाम्

- भा. प्र., भै. र. बृ. यो. त. च 'मांगल्यपुष्पी च समान्यमूनि
सर्वैः समानाञ्च वचां विचूर्ण्य ।
ब्राह्मीरसेनाखिलमेव भाव्यं वारत्रयं शुष्कमिदं हि चूर्णम् ।।

अस्मात्पर भै. र. भा. प्र. च 'एतस्याभ्यासतः पुंसां बुद्धिर्मेधा धृतिः स्मृतिः ।
सम्पत्तिः कविताशक्तिः प्रवर्द्धेतोत्तरोत्तरम् ।।
पठन्नरः श्लोकसहस्रमह्नात् तद्वत्प्रयोज्यं द्विगुणं च कालम् ।।

पाठान्तरम् बृ. यो. त. (ग. पुस्तके)—
'कुष्ठाश्वगन्धालवणाजमोदं
द्वे जीरके त्रीणि कटूनि पाठा ।
मङ्गल्यपुष्प्या च समानचूर्णं
कृत्वाऽथ चूर्णेन वचोद्भवेन ।।

बराबरी वच । ब्राह्मी रा रस री भावना प्रदीजै । उषध टां २।। मधु-घृत सौं अवलेही लीजै । माणस री मत निर्मल थाय । पाठांतरेण (पाठोक्त) गुण कह्या जिके रोग जाई ।

(२५) [अथ सिद्धा[1]र्थचूर्णम्]

सिद्धा[1]र्थको वचा हिङ्गु करञ्जो[2] देवदारु च ।
मञ्जिष्ठा त्रिफला श्वेता[3] कटभी[4]त्वक् कटुत्रिकम् ।। ६६ ।।

तुल्येन युक्तं बहुशो रसेन
तद्भावितं ब्रह्मविनिर्मितायाः ।
सर्पिर्मधुभ्यां च ततोऽक्षमात्रं
लिह्यान्नरः (1) षष्टिदिनं हिताशी ।।

ऐश्वर्यवान्ना मनसश्च वैर्यं ❀
मेधां च विन्देद्द्विगुणं च कालम् ।❀
पठन्नरः श्लोकसहस्रम श्रमात् (2)
तद्वत्प्रयोज्यं द्विगुणं (3) क्रमेण ।।

सारस्वतं चूर्णमिदं प्रदिष्टं
स्वयम्भुवा लोकहितार्थमुच्चैः ।
दुर्मेधसामुन्मदमानसाना—
मपस्मृतिग्रस्तहृदां सुखाय ।।

ग. नि.
"कुष्ठाश्वगन्धसैन्धवपिप्पलिमरिचं द्विजीरकं शुण्ठी ।
पाठाऽजमोदसहिता समभागा चूर्णिता च वचा ।।

प्रातर्मधु-सर्पिभ्यां बिडालपदमात्रसेतदवलिह्य ।
सप्ताहं पथ्याशी किन्नरमधुरस्वरो भवति मर्त्यः ।।

द्विगुणीकृते च तस्मिन्मेधावी भवति सिष्टवाक्यश्च ।
त्रिगुणीकृते च तस्मिन्ल्छोकसहस्रं पठत्याशु ।।

दुर्मेधसः किलायं भिक्षोराचार्यलोकसेनेन ।
अप्रार्थितेनदत्तो योगवरो नन्दविहारे ।।

(1) ग. नि. सप्त ❀-❀ ग. नि. 'सौस्वर्यमिच्छन्मनसश्च धैर्यं मेधां तथेच्छन् द्विगुणं च कालम् । (2) ग. नि. सहस्रमह्ना - (3) ग. त्रि. त्रिगुणम् ।
1 क. सिधार्थचूर्णः, भा. प्र. मादिषु सिद्धार्थकादि घृतम्, अगदः, 2 र. र. करञ्जौ
3 क. श्वेतः 4 क. कटुभिश्चकटुत्रिकं—, म. प्र. त्वक्कुटं नतं

समांशा[1]नि प्रियङ्गुश्च शिरीषो रजनीद्वयम् ।
ब[2]स्तमूत्रेण पि[3]ष्टोऽयमगदः पानमञ्जनम् ।। १०० ।।

नस्यमालेपनञ्चैव स्नानमुद्वर्त्तनन्तथा ।
अपस्मार–वि※षोन्मादकृत्याऽलक्ष्मीज्वरापहम् ।। १०१ ।।

भूतेभ्यश्च भयं नास्ति राजद्वारे च श[4]स्यते ।
सर्पिरेतेन सि[5]द्धं वा स[6]गोमूत्रं तदर्थंकृ[7]त् ।। १०२ ।।

टीका:— धोली सरसव, वच, हींग, करंज, देवदारू, मंजीठ, हरडै, बहेंडा, आंवला, श्वेतरीगंणी ? [कटभी=कटम्भरः (भा. प्र. नि.) अथवा ज्योतिष्मतीं, न तु श्वेतकण्टकारी], सूंठि, मिरच, पीपल, प्रियंगु, सरेसराबीज, हलद, दारुहलद, उषध सममात्र करि छाणि नैं बकरै रा मूत्र सूं टां २।। पीजै । माथा मांहि घातीजै । डील लेप कीजै आंषि आंजीजै, नासदीजै, स्नान कीजै । पाठोक्त रोग जाई ।।

---

1 क. समांसानि, 2 क. वोक
3 क. पियिष्टं ※ म. प्र. ग्रहोन्माद 4 क. सस्यते 5 क. सिघं 6 क. वाश्च
7 ०क तदथंकं

पाठान्तराणि— चि. क. (सिद्धार्थकघृतम्)

'सिद्धार्थ-त्रिकटुक्षपायुगवचामंजिष्ठिकारामठ—
श्वेताह्वा त्रिफलाकरञ्जकटभीश्यामाशिरीषामरैः ।

इत्यष्टादशभिः श्रृतं घृतमिदं गोमूत्रयुक्तं नृणा—
मुन्मादघ्नमपस्मृतिघ्नमगदं स्याद्वस्तमूत्रेण वा ।।'

कटभी – शालपर्णी इति चन्द्रटः, कटभी—ज्योतिष्मती (भा. प्र. नि.) क्षपा-हरिद्रा ग. नि., अ. हृ. च सिद्धार्थकघृतम्

'सिद्धार्थकवचाहिङ्गु–प्रियङ्गुरजनीद्वयम् ।
मञ्जिष्ठा श्वेतकटभी वरा श्वेताऽद्रिकर्णिका ।।

निम्बस्य पत्रं बीजं तु नक्तमालशिरीषयोः ।
सुराह्वं त्र्यूषणं सर्पिर्गोमूत्रे तैश्चतुर्गुणे ।।

सिद्धं सिद्धार्थकं नाम पाने नस्ये च योजितम् ।
ग्रहान् सर्वान्निहन्त्याशु विशेषादासुरान्ग्रहान् ।।

(२६) [अथ हिङ्ग्वष्टक[1]चूर्णम्]

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे,
समधरणघृतानामष्टमो हिङ्गुभागः ।
प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेत—
ज्ज[2]नयति जठराग्नि वात[3]गुल्मं निहन्ति ।। १०३ ।।

टीका:— सूंठि, मिरच, पीपलि, अजमोद, सींधो (सैन्धव), कालोजीरो, धवलोजीरो, हींग, उषध सममात्र चूर्णं कृत्वा टां १ पहिला कवा सौं लीजं, घृत—भेलो करीने । वात गुल्म जाई ।।

कृत्यालक्ष्मी—विषोन्मादज्वरापस्मारपाप्मऽजित् ।
एभिरेवौषधैर्वस्तवारिणा कल्पितोऽगदः ।
पाननस्याञ्जनालेपस्नानोद्धर्षणयोजितः ।
गुणैः पूर्ववदुद्दिष्टो राजद्वारे च सिद्धिकृत् ।।

वृ. यो. त.

'सिद्धार्थत्रिफलाशिरीषकटभीश्वेतकरञ्जामरै—
र्मञ्जिष्ठारजनीद्वयत्रिकटुकश्यामावचाहिङ्गुभिः ।
पिष्टैश्छागलमूत्रतोयमगदं सर्वग्रहच्छेदनम्,
कृत्योन्मादविषज्वरप्रशमनं पानादिसंयोजितम् ।।

1 क. हिंग्वाष्टकचूर्णः 2 क. जनयति 3 टो. वातरोगांश्च

ग. नि. पाठान्तरम्

'व्योषाजमोद-युतजीरकयुग्मसिन्धु—
चूर्णं सरामठविभागमिति प्रयुक्तम् ।
हिङ्ग्वष्टकं हरति हृज्जठरान्तराल
शूलानि गुल्मगुदजग्रहणीविकारान् ।।

पाठान्तरम् वै. जी.

'हिङ्गुव्योषाजमोदा—द्विजरण-लवणं
प्राग्भजेत्साज्ययुक्तं . . .
कुर्याज्जाज्वल्यमानं ज्वलनमनिलजं . . .
गुल्ममेतन्निहन्ति ।।'

(२७) [अथ हिङ्ग्वाद्यं[1]चूर्णम्]

हिङ्गुग्रन्थिकधान्यजीरकव[2]चा,
चव्[3]याग्निपाठाशटी,
वृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं
क्षारद्वयं दाडिमम्।
पथ्यापुष्करवे[4]तसाम्ल–हपुषा[5] योज्यं तदेभिः कृतं,
चूर्णं भावितमेतदा[6]र्द्रकरसैः स्याद्बीजपूरस्य च ।। १०४ ।।

आध्मानग्रहणीविकारगुद[7]जान् गुल्मानुदावर्तकान्,
प्रत्या[8]ध्मानगदं तथाऽश्मरि[8]युतं तू[9]निद्वयारोचकान्।
ऊरुस्त[10]म्भमतिभ्रमं च म[11]नसो बाधिर्यमष्ठीलिकां
प्रत्यष्ठीलिकि[12]कामथापहरते प्रा[13]क्पीतमुष्णाम्बुना ।। १०५ ।।

हृ[14]त्कुक्षिवङ्क्षण–कटी–जठरान्तरेषु,
बस्तिस्तनांसफ[15]लकेषु च पार्श्वयोश्च।
शू[16]लानि नाशयति वातबलासजा[16]नि,
हिङ्ग्वाद्यमुक्त[17]मिदमाश्विनसंहितायाम् ।। १०६ ।।

टीका:— हींग, पीपलामूल, धाणा, जीरो, वच, चविक, चित्रक, पाठ, सठि, आमलवेतस, सिंधव–सौंचल–विडलूंण, सूंठि, मिरच, पीपरी, जवखार साजी, दाडिमसार, हरडै री छालि, पुष्करमूल, बांस री छालि? (तिन्तिडीक?) हौइ? (हाऊबेर), उषध सममात्र करि वांटि छाणि

---

1 क. बृहद्हिङ्ग्ष्टक? चूर्णः 2 ग. नि. दीप्यकवचा, क. जीरककणा, भा. प्र., यो. र. च 'जीरकवचा' 3 क. चव्यावचाग्निपाठासटी इति भ्रष्टपाठः (छन्दोभङ्गः) 4 क वेतसं सहपुष्पं 5 क. संयोज्ययर्भिकृतं ?, ग. नि. यो. र. च 'हपुषाजाज्यस्तदेभिः भा. प्र. हपुषायोज्यं 6 क. माद्रकस्वरसकैः 7 क. गुदणुल्मानुवर्तकं ? 8. क. प्रत्याध्यान् गलोदरात्रमरिहरं ? ग. नि. प्रत्याध्मानगरोदराश्मरिरुजस् 9 क. तनिद्वय 10 क. उरुस्तंनभमति 11 क. मानसां 12 ग. नि. प्रत्यष्ठीलिकया सहापहरति क. प्रत्यांष्टीलसहोदरानितिप्रभा ? 13 क. प्राक्यांत मुस्तांवचः ? 14 ग. नि. रुक्कुक्षि, क नाह्लित्कुक्षि वक्षण 15 क. तनांसकलेषु च च सूलमुग्र. 16-16 क. शोथन्विताशयति वातवलसजांश्च 17 क. माद्यमिदमिश्रीतसंहितायां।

आदा रस री भावना ३ बिजोरा रस री भावना ३ दीजै । पछ उषध टां २।। नित्य लीजे । आफरो, संग्रहणी, गुदरोग, गुल्म, उदावर्त, बीजा ही पाठ मांहे कह्या छै सो रोग जाई ।।

पाठान्तरम् वृ. यो. त. चक्र. च

हिङ्गूग्रगंधाविडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिवेच्च सौवर्च्चलपुष्कराढ्यंय वाम्भसा शूलहृदामयघ्नम् ।।

वैद्यजीवने पाठान्तरम्:—

'हिङ्गुक्षारद्वय-सैन्धव-सौवर्चल-विड-पिप्पली,
अग्निकचित्रक-चव्य-मरिच-कुस्तुम्बरी—बर्बरी —
तिन्तिडी-षड्ग्रन्थाऽजमोदाम्लवेतस-पुष्करमूल,
नागरकरञ्जजीरकहरीतकीवृकी-हपुषाभिः ।
विरचितं चूर्णमिदमश्मरी-हृदय-गलरोग—
विबन्धाध्मानहिक्का-वर्ध्मगुदजगुल्म-सकल-
शूल-प्लीह-पाण्डुश्वसन-कसन-दहन
सदनवदन-विरसताविरतये समर्थतरम् ।।

पाठान्तरम् च. सं, भै, र., बृ. यो. त., ग. नि.

'हिङ्गु त्रिकटुकं पाठां हवुषामभयां शटीम् ।
अजमोदाजगन्धे च तिन्तिडीकाम्लवेतसौ ।।
दाडिमं पुष्करं धान्यमजाजीं चित्रकं वचाम् ।
द्वौ क्षारौ लवणे द्वे च चव्यं चैकत्रचूर्णयेत् ।।
चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमनुपानेष्वनत्ययम् ।
प्राग्भुक्तमथवा पेयं मद्येनोष्णोदकेन वा ।।
पार्श्वहृद्बस्तिशूलेषु गुल्मे वातकफात्मके ।
आनाहे मूत्रकृच्छ्रे च शूले च गुदयोनिजे ।।
ग्रहण्यर्शोविकारेषु प्लीह्नि पाण्ड्वामयेऽरुचौ ।
उरो विबन्धे कासे च हिक्काश्वासे गलग्रहे ।।
भै. र. वृ. यो. त. च. 'भावितं मातुलुंगस्य चूर्णमेतद्रसेनवा ।
बहुशो गुटिकाः कार्याः कार्षिकाःस्युस्ततोऽधिका': इत्यधिकः पाठः ।।

सुश्रु. सं, र. र.

''हिङ्गु-त्रिकटु-वचाऽजमोदा-धान्याजगन्धा-दाडिम —
तिन्तिडीक-पाठा-चित्रक-यवक्षार-सैन्धव-बिड —
सौवर्चल-स्वर्जिका-पिप्पलींमूलाम्लवेतस-शटी—
पुष्करमूल-हपुषा-चव्याजाजी-पथ्यश्चूर्णयित्वा

(२८) [अथ सामु[1]द्रादिचूर्णम्]

सामुद्रं सैन्धवक्षा[2]रौ रुचकं रो[3]मकं बिड[4]म् ।
दन्ती लोहरजः किट्टं त्रिवृत् [5]सूरणकं समम् ।। १०७ ।।

दधिगोमूत्रप[6]यसा मन्दपावकपाचितम् ।
तद्यथाऽग्निबलं चूर्णं पिबेदु[7]ष्णेन वारिणा ।। १०८ ।।

जीर्णेऽ[8]जीर्णे तु भुञ्जीत मा[9]षादिकृत भोजनम् ।
नाभिशूलमु[10]रः शूलं गुल्म–प्लीह[11]भवं जयेत् ।। १०९ ।।

सर्वशूलहरं चूर्णं जठरानलदीपनम् ।
* परिणामजशूलस्य विशेषेणेदमौषधम् ।। * ११० ।।

मातुलुङ्गाम्लेन बहुशः परिभाव्याक्षमात्रां गुटिकां
कारयेत्, ततः प्रातरेकैकां वातविकारी भक्षयेत् ।
एष योगः कासश्वासगुल्मोदरारोचकहृद्रोगाध्मान—
पार्श्वोदरवस्तिशूलानाहमूत्रकृच्छ्रप्लीहार्शस्तूनी—
प्रतूनीरपहन्ति।।"
अ० हृ०
'हिङ्गुवचाविजयापशुगन्धा-दाडिमदीप्यकधान्यकपाठाः ।
पुष्करमूलशठीहपुषाग्निक्षारयुगत्रिपटुत्रिकटूनि ।।
साजाजिचव्यं सहतिन्तिडीकं सवेतसाम्लं विनिहन्ति चूर्णम् ।
हृत्पार्श्वबस्तित्रिकयोनिपायु-शूलानि वाय्वामकफोद्भवानि ।।
कृच्छ्रान् गुल्मान् वातविण्मूत्रसङ्गं कण्ठेबन्धं हृद्ग्रहंपाण्डुरोगम् ।
अन्नाश्रद्धाप्लीहदुर्नामहिध्मा-वर्ध्माध्मानश्वासकासाग्निसादान् ।।

1 क. समुद्रादिचूर्णं: 2 क., चक्र. च क्षारो 3 ग. नि. रामठं 4 वृ. वै. विलम् 5. क. तिमृत् सूरण 6 क. तोयैश्च 7 क. पिबेदुष्टोनुवारिणा 8 वृ. वै. जीर्णे तत्प्रति 9 ग. नि. 'मांसादिस्निग्धभोजनम्; यो. र., मै. र., बृ. यो. त, चक्र., वृ. वै. च 'मांसादिघृतसाधितम्' 10 क. मुरशूलं, बृ. यो. त., यो. र. च हृच्छूलं; मै. र. प्लीह; चक्र. वृ. वै. र. र. च-'यकृच्छूलं' 11 क. भवे; यो. र., च यत्; मै.र. यकृत्गुल्मकृतं च यत् + र.र. 'प्लीह' *-* क. 'परिणामशूलसंज्ञस्य अग्निसंदीपनं परम्' (छन्दो भङ्गः) । अस्मात् परं यो. र., बृ. यो. त., मै. र. च 'विद्रध्यष्ठी* लजं हन्ति कफवातोद्भवं तथा । * वृ. यो. त. विद्रध्यष्ठीलिकातङ्कं इति ।

टीका:— समुद्रलूंण, सीधो, साजी, जवाखार, सौंचल, विड, लवणमीठो (रोमक) दांतणी, सार, (लोहभस्म) थ (और) कांटी (मण्डूर). निशोथ, सूरण उसा (औषधियां) सममात्र करि टां २।।, पछै सगला चूर्ण थी चऊ-गुणो दही, दूध, गोमूत्र भेला कीजै, मदाग्नि पचाजै, भरका (सूखने पर) करि चूर्ण उष्ण पाणी सौं दीजै । अग्नि घणी थोडी देखीजै, वो (औ) षध घाट बाधि दीजै । जिसडो भोजन रूचे तिसड़ो जीमीजै । नाभिशूल, उरशूल, गुल्म, प्लीह, सर्वशूल,हरस (अर्श) उदर री अग्नि दीपई । परिसगम (परिणाम) शूल जाई ।

यो. र., वृ. यो. त. च पाठान्तरम्

'हिङ्ग्वम्लत्रिपटूग्रषट्कटुसटीवृक्षाम्लदीप्याम्लिका
पाठाजाज्यजगन्धमूलहपुसाद्विक्षारसारामयम् ।
हिघ्माध्मानविबन्धवर्ष्मकसनश्वासाग्निसादारुचि—
प्लीहार्शोखिलशूलगुल्मगलहृद्रोगाश्मपाण्डुप्रणुत् ।।

पाठान्तरम्—ग. नि.

"हिङ्ग्वग्निचव्यलवणत्रयवेतसाम्ल—
क्षारद्वयं त्रिकटुदाडिमतिन्तिडीकम् ।
सग्रन्थिकाग्निकशटीहपुषाजगन्धा —
पाठाभयाससितजीरकपुष्कराह्वम् ।।
सोग्रं सधान्यकमिति प्रविधायचूर्णं ।
भूयः प्लुतं हि फलमूलसुरारसेन ।
उष्णोदकादि—परिपीतमिदं निहन्ति
शूलानि गुल्मगुदजग्रहणीविकारान् ।

शा. पाठान्तरम् —

"हिङ्गु पाठाऽभया धान्यं दाडिमं चित्रकः शठी ।
अजमोदा त्रिकटुकं हपुषा चाम्लवेतसम् ।।
अजगन्धा तिन्तिडीकं जीरकं पौष्करं वचा ।
चव्यं क्षारद्वयं पञ्चलवणानि विचूर्णयेत् ।।

(२९) [अथ चित्र[1]काद्यं चूर्णम्]

चित्रकः पिप्पलीमूलं पिप्पली गजपिप्पली ।
हिङ्गु पुष्करमूलञ्च दाडिमं कृष्णजीरकम् ।। १११ ।।

[2]विडं धान्यं च हपुषा शताह्वा हिङ्गुपत्रिका ।
चव्याम्लवेतसाजाजी[3]–बस्तगन्धा–शटी–वचाः[4] ।। ११२ ।।

तुम्बरुश्[5]चाजमोदा च य[6]वानी त्व[6]क् ससैन्ध[6]वम् ।
समभागानि सर्वाणि सर्वं[7]स्तुल्यं तु नागरम् ।। ११३ ।।

प्राग्भोजनस्य मध्ये वा चूर्णमेतत्प्रयोजयेत् ।
पिबेद्वाजीर्णमद्येन तक्रेणोष्णोदकेन वा ।।
गुल्मे वातकफोद्भूते विड्ग्रहेऽष्ठीलिकासु च ।
हृद्वस्तिपार्श्वशूलेषु शूले च गुदयोनिजे ।।
मूत्रकृच्छ्रे तथाऽऽनाहे पाण्डुरोगेऽरुचौ तथा ।
हिक्कायां यकृति प्लीह्नि श्वासे कासे गलग्रहे ।।
ग्रहण्यर्शोविकारेषु चूर्णमेतत्प्रशस्यते ।
भावितं मातुलुङ्गस्य बहुशः स्वरसेन वा ।
कुर्याच्च गुटिका बह्वीर्वातश्लेष्मामयापहाः ।।

पाठान्तरम् — चक्र.

'सामुद्रसौवर्चलसैंधवानि
क्षारं* यवानीमजमोदकञ्च ।
सपिप्पलीचित्रकशृङ्गवेरं हिङ्गु विडञ्चेति समानि कुर्यात् ।।
एतानि चूर्णानि घृतप्लुतानि भुञ्जीत पूर्वं कवलं प्रशस्तम् ।

* म. प्र. क्षारौ

1 क, चित्रकाद्यचूर्णः 2 ग. नि. 'विडङ्ग-हपुषा-धान्य 3 क. चाश्वगंधा (बस्तगन्धा—अजवाइन) 4 क. वचा 5 क. मजमोदा 6 क. जवानीत्वक, ग.नि यवानी रुचकं तथा (त्वक्-दालचीनी) 7 क. सर्वंतुल्यंनागरं (छन्दोभङ्गः)

सूक्ष्मचूर्णं त[1]तः कृत्वा मातुलु[2]ङ्गेन भा[3]वयेत् ।
ततो[4] बिडालपदकं पिबेदुष्णेन वारिणा ।। ११४ ।।

मद्येन म[5]स्तुना वापि यूषेनाथ रसेन वा ।
जयेत्सर्वाङ्गजं शूलं कोष्ठ[6]गं कुक्षिगं तथा ।। ११५ ।।

अर्शोज[7]ठरगुल्मघ्नं दीपनीयं विशे[8]षतः ।
चित्रकाद्य[9]मिदं चूर्णमामवातहरं परम् ।। ११६ ।।

टीका:— पीपलामूल, चित्रक, पीपलि, गजपीपलि, हिंगु, पुहकरमूल, दाडिमसार, कालोजी ड (श्याहजीरा) लूंण, धाणा, होंह (हपुषा), सोवा, हिंगु-पत्री, चविक, अम्ववेतस, जीरो, असगंधी, सठि, (वचा) तूंबरु, अज-मोद, अजवाइन, तज, सींधव, उषध सममात्र, उषधां थी बराबरि सूंठि घालीजै । पछै बिजोरा रा रस की भावना ३ दीजै । चूर्ण टां २।। उष्ण पाणी सुं लीजै भावे मठा सुं लीजै भावै (मद्य) मुषंस उ लीजै, भावै मांस रा रस सों लीजै । सगला ही अंगारी शूल जाई । हरस (अर्श), वात, गुल्म, दीपन, आमवात जाई ।।

(३०) [अथ सुण्ठ्यादिचू[10]र्णम् (पञ्चसमं चूर्णम्)

शुण्ठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलन्तथा ।
समभागानि सर्वाणि सू[11]क्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।। ११७ ।।

ज्ञेयं पञ्चसमं चूर्णमेतच्छूलहरं परम् ।
आध्मानजठरार्शो[12]घ्नमाम[13]वातहरं परम् ।। ११८ ।।

---

1 क. तत्कृत्वा 2 क. मातुलिंगे 3 क. ततो वयेत् 4 ग. नि. ततः कर्षमितां मात्रां 5 क, मुस्तना 6 क. कोपं जंतुजं तथा 7 क. अर्शज्वरादिगुलमघ्न 8 क. विसेषतः 9 क. चित्रकादिमिदं

10 क. चूर्णः 11 क. सूक्षिम 12 क. जठरासौं 13 क. मानवात

पाठान्तरम् ग. नि.

'पथ्या-नागर-जीरकाख्यरुचकैः श्यामान्वितैः पञ्चभि—
श्चूर्णं पञ्चसमं समस्तगदहृत्कायाग्निसन्दीपनम् ।

टीकः— सुंठी, हरडै, पीपलि, निशोथ, सौंचल, उषध सममात्र वांटि टां II उन्हे पाणी सुं लीजै । आफरो, हरस (अर्श), आमवात, इतरा रोग जाई ।

(३१) [अथ विज[1]यचूर्णम्]

त्रिक[2]त्रयं वचा हिङ्गु पाठा क्षा[3]रो निशा[4]द्वयम् ।
चव्यतिक्ताकलिङ्गा[5]ग्नि-शता[6]ह्वालव[7]णानि च ।। ११९ ।।

ग्रन्थिबिल्वाजमोदाश्च ※गणोऽष्टाविंशतिर्मतः ।※
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।। १२० ।।

एरण्डतैलसंयुक्तं सदा लिह्या[8]त्ततो नरः ।
बिडालपदमात्रं च पिबेदुष्णेन वारिणा ।। १२१ ।।

श्वा[9]सं हन्यात्तथा [10]शोथमर्शांसि च[11] भगन्दरम् ।
हृच्छू[12]लं पार्श्वशूलं च बस्ति[13] शूलमरोचक[14]म् ।। १२२ ।।

[15]प्लीहाकासप्रमेहांश्च काम[16]लां पा[16]ण्डुरोगताम् ।
आम[17]वातमुदावर्त्तमन्त्रवृद्धिं गु[18]दक्रिमीन् ।। १२३ ।।

प्राणोत्साहविवर्धनं रुचिकरं गुल्मघ्नप्लीहापहं—
प्रत्याध्मान-गरादिरोगशमनं सामानिले पूजितम् ।।

1 क. अथविजदायादि नांम चूर्णः 2 क. कटुत्रियं 3 क. क्षारं, चक्र., भै. र., टो. च क्षार; ग. नि. क्षारो; भा. प्र. क्षारौ 4 क. निसा 5 भा. प्र. कलिङ्गानि 6 क. गजाह्वा; भा. प्र. शक्राह्वा; भै. र., ग. नि., टो. च 'शताह्वा' 6 क. लवर्णानि

※-※ 'गणोऽष्टाविंशतिर्मतः' अस्मिन् स्थाने क. ग्रन्थे 'त्रिफला जीरकद्वयम् । वैद्यविद्याप्रमाणोऽयं गणाष्टाविंशको मतः' इति पाठः । 8 क. लिह्याकृतौ 9 क. स्वाहं "श्वासं ⋯ भगन्दरम्" अस्मिन्स्थाने भा.प्र. 'हन्यादर्शांसि सर्वाणि श्वासशोषभगन्दरान्' इति पाठः; 10 टो, ग. नि. च 'शोष'; चक्र., भै. र. च 'कासं हन्यात् तथा शोथ⋯.' 11 क, मर्शासिश्च 12 क. उरशूलं 13 क. चास्थिशूलं; जक्र., भै. र., टो, भा. प्र. च 'वातगुल्मं तथोदरम्'; ग. नि. बस्तिशूलंमरोचकम् । 14 क. मरोचिका 15 क. प्लीहकासप्रमेहघ्नं टो. चक्र. भै र. भा, प्र. च 'हिवकांश्वासं (कासं) प्रमेहांश्च 16 भा. प्र. पाण्डुरोगं सकामलाम् 17 टो. 'आमामयमुदावर्तं; चक्र. आमान्वयमुदावर्तं; भै. र. आमाशयमुदावर्तं 18 क. वृद्धिमहागदां

हन्या[1]च्च ग्रह[2]णीरोगान् ये मया परि[3]कीर्तिताः ।
महाज्व[4]रोपसृष्टानां भूतोपह[5]तचेतसाम् ॥ १२४ ॥

अप्रजानां च नारीणां प्रजावर्धनमुत्त[6]मम् ।
विजयो नाम चूर्णोऽयं कृ[7]ष्णात्रेयेण पूजितः ॥ १२५ ॥

टीका:-- सुठि, मिरच, पीपली, (हरड़, बेहडा, आंवला, त्वग्, एला, पत्रक), वच, हींग, पाठा, जवखार, (साजीखार मूलपाठ में नहीं है किन्तु टीकाकार ने लिखा है) हलद, दारुहलद, चविक, कटुक, इन्द्रजव, चित्रक, गजपीपली, सीधोलूणं, सूंचल, विडलूंण, समुद्रलूंण, कचलूणं, पीपलामूल बीलगिर, अजमोद, हरड, बेहडा, आंवला, धवलो जीरा, कालोजीरौ (हरड से कालाजीरा तक संशोधित पाठ में नहीं है) उषध सममात्र चूर्ण टां २॥ एरण्ड रा तेलि सूं लीजै तथा उष्ण जल सूं लीजै । स्वास, सोफ, हरस (अर्श), भगंदर, जंघाशूल, पार्श्वशूल (जंघा के स्थान पर संशोधित पाठ में हृच्छूल है) गुदावर्त्ति (उदावर्त) अंडवृद्धि, मोटा रोग, मोटो मोटो ताव (अरोचक, बस्तिशूल, प्लीहा, कास, प्रमेह कामला पाण्डु, आमवात, गुदक्रिमि, ग्रहणी) भूतव्यंतर हरियो हुवे (भूतोपहतचेतस) इतरा रोग जाई । वयर जिका छोरु न जणती होइ सो पिण जणै ।

(३२) [अथ अलम्बु[8]षाद्यं चूर्णम्]

अलम्बुषा–गोक्षु[9]रकं त्रिफलानागराऽमृताः[10] ।
यथोत्तरं ❀भागवृद्ध्या श्यामाचूर्णञ्च तत्समम् ॥ १२६ ॥

1-3 क. हन्या च गृहिणी रोगं चक्र. मै. र. भा. प्र. च., अन्ये च ग्रहणीदोषा भिषग्भिर्ये प्रकीर्त्तिताः' । टो. 'अनेन ग्रहणीदोषा भिषग्भिर्ये प्रकीर्त्तिताः' । टो. 'अनेन ग्रहणीञ्चदोषा ये मया परिकीर्तिताः, ग. नि. 'हन्याच्च ग्रहणीरोगान्' 4 क. महाज्वरोसृष्टानां 5 क. भूतोपहितचेतसम 6 अन्यसर्वेषु ग्रन्थेषु 'मेव च' । 7 क. कृष्णात्र्येण; ग. नि. सर्वव्याधिहरः परः ।

8 क. अथालम्बुषादिचूर्णं: 9 क. गोषुरकः; ग. नि. श्वदंष्ट्रा च 3 क. मृता
❀ "यथोत्तरं"अस्मात्परं क. ग्रन्थे 'निहन्त्याशु सशोथं पाण्डुरोगिणा' इत्येव पाठः किन्तु भा. प्र., ग. नि. आदिषु:—"भागवृद्‌ध्या ... वयं क्रमः". पाठोऽयमधिकमुपलभ्यते, पाठोऽयं क. ग्रन्थे नोपलभ्यते ।

पिबेन्मस्तुसुरातक्र – का[1]ञ्जिकोष्णोदकेन वा ।
[2]पीतं जयत्यामवातं सशोथं वातशोणितम् ।। * १२७ ।।

त्रिकजानूरुसंधिस्थं ज्वरारोचकनाशनम् । ×
पथ्याऽक्षधात्र्यस्त्रिफला भागवृद्धावयं क्रमः ।। + १२८ ।।

टीका:— मुण्डी टां १, कांटी टां २, हरड टां ३, (मूलग्रंथ में टीकाकार ने त्रिफला को व्युत्क्रमेण लिखा है), बेहड़ा टां ४, आँवला टां ५, सुंठी टां ६, गिलोईसत टां ७, निशोथ टां २८, समस्त वाँटि चर्ण कृत्वा टां २।। प्रमाण लीजं । अनोपान मठो गाइ रो दही रो, भावै मद भावे छाछि तथा मांस रो रस लेणो । आमवात बहिलौ जाई, सोजा सहित पांडु रोग जाइ ।

---

1 ग. नि. 'पयो मांसरसादिभिः' 2 यो. र, भा. प्र. च 'आमबातं जयत्याशु; ग. नि. आमवातं निहन्त्येतद् सशोषं....'

* 'पीतं ... वातशोणितम्' अस्माद् परं भा. प्र., ग. नि. च

"अलम्बुषाऽऽदिकं चूर्णं रोगानीकविनाशनम्" पाठोऽयं अधिकमुपलभ्यते ।

× 'त्रिकजानू....नाशनम्' पाठोऽयं भा. प्र. नोपलभ्यते ।

+ 'पथ्याऽक्ष....वयं क्रमः' पाठोऽयं चक्र., मै. र. च अधिकमुपलभ्यते ।

किन्तु पाठोऽयं भा. प्र. नोपलभ्यते । तत्र अस्मिन्स्थाने—
'हरीतक्यक्षधात्रीभिः प्रसिद्धा त्रिफला क्रमात् ।
प्रत्येकं तेन वा युञ्ज्याद्भागवृद्धि यथोत्तरम् ।। इति पाठः

पाठान्तरम्— चक्र., भा. प्र. वृ. वै., र. र. च

'अलम्बुषां गोक्षुरकं गुडूचीं वृद्धदारुकम् ।
पिप्पलीं त्रिवृतां मुस्तं वरुणं सपुनर्नवम् ।।

त्रिफलां नागरञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
मस्त्वारनालतक्रेण पयो मांसरसेन वा ।।

आमवातं निहन्त्याशु श्वयथुं सन्धिसंस्थितम् ।
प्लीह-गुल्मोदरानाह.दुर्नामानि विनाशयेत् ।।

अग्निञ्च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धि बलं तथा ।
वातरोगाञ्जयत्येष सन्धिमज्जगतानपि ।।'

(३३) [अथ पटोलाद्यं[1]चूर्णम्]

पटोलं रज[2]नीं नि[3]म्बं बिडङ्गं त्रिफला[4]त्वचम् ।
काम्पि[5]ल्लको नीलि[6]नी च त्रिवृताञ्चेति चूर्णयेत् ।। १२९ ।।

षडा[7]द्यान् का[8]र्षिकानन्त्यांस्त्रीं[9]श्च द्वि–त्रि–चतुर्गुणान् ।
कृत्वा चूर्णमतो[10] मु[11]ष्टिं ग[12]वां मूत्रेण वै[13] पिबेत् ।। १३० ।।

विरक्तो जा[14]ङ्गलरसैरोदनं मृदु भोजयेत्[14] ।
[15]मण्ड पेयां च पीत्वा[15] वा सव्योषं षडहं पयः[16] ।। १३१ ।।

[17]शृतं पि[18]बेत्ततश्चूर्णं पिबेदे[19]वं पुनः पुनः ।
हन्ति [20]सर्वोदराण्येतच्चूर्णं[20] जातोदकान्य[21]पि ।। १३२ ।।
कामलां[22] पाण्डुरोगञ्च श्वयथुं चाप[23]कर्षति । ※

अन्य पाठान्तरम् भां. प्र.

'अलम्बुषा गोक्षुरकं मूलं वरुणकस्यच ।
गुडूची नागरञ्चेति समभागानि कारयेत् ।।
काञ्जिकेन तुतत्पेयं विडालपदमात्रकम् ।
आमवाते प्रवृद्धे च योगोऽयममृतोपमः ।।

अन्य पाठान्तरम् ग. नि

'अलम्बुषाऽमृता शुण्ठी चित्रकस्त्रिफला कणा ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि वृद्धदारु च तत्समम् ।।
सूक्ष्मचूर्णीकृतान्सर्वान् स्वेच्छाहारविहारिणः ।
पिबतो मदिरातक्रकाञ्जिकोष्णोदकंर्जयेत् ।।
प्लोहानमामवातञ्च यकृत्पाण्डुविसूचिकाः ।
उक्तं काङ्कायनेनेदं चूर्णमग्निकरं परम् ।।'

1 क. अथ पटोलादिचूर्णः 2 क. रजनी 3 क. निंब 2-3 च सं, 'पटोलमूलरजनी 4 क. त्रिफला त्वच 5 क. कंघिल्लकं 6 क. नील नींब 7 क. षडाधा 8 क. त्वर्षिकातानां 9 क. स्त्री च 10 क. ततो 11 क. मूंत्र 12 क. गवा 13 क. पावयेत् 14 14 क. जां जांगलरसैः रोदनं मृदु भोजयेत्; च. सं. मृदु मुञ्जीत भोजनं जाङ्गलैः रसैः; चक्र जाङ्गलरसैर्भुञ्जीत मृदुमोदनम् ※, ※चर. सं. पाठान्तरेण मृदु ओदनम् । 15-15 क. मंड पेयं च पित्वा 16 क. पय 17 क. सृतं 18 पयस्ततश्चर्च 19 क. षिवेदेयं 20-20 क. विसर्वोपधरण्यंतः छूंर्ण 21 क. नि. च 22 क. कामला 23 क. चापि ※ 'कामलां.....चापकर्षति' अस्मात्परं चरके 'पटोलाद्यमिदं चूर्णमुदरेषु प्रपूजितम्' इत्यधिकः पाठ ।

टीका:— (मूलग्रंथ में टीका नहीं मिलती अत: पाठानुसार टीका दी जा रही है ।) पटोल, रजनी, (हल्दी), नीम, चरकादि ग्रंथों में. पटोलमूल, हल्दी, बिडंग और त्रिफला ये आद्य छ द्रव्य

पाठान्तराणि—

(1) वृ. वै. अ. हृ. पृ. च

'पटोलमूलं त्रिफलां निशां वेल्लञ्च कार्षिकम् ।
कम्पिल्ल-नीलिनी-कुम्भभागान्द्वित्रिचतुर्गुणान् ।।
पिबेत्सञ्चूर्ण्य मूत्रेण पूर्वं पेयां ततो रसैः ।
विरिक्तो जाङ्गलैरद्यात्ततः षड्दिवसं पयः ।।
शृतं पिबेद्व्योषयुतं पीतमेवं पुनः पुनः ।
हन्ति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ।।'

(2) वृ. यो. त. "पटोलमूलं1 रजनीं विडङ्गं त्रिफलात्वचः ।
कम्पिल्लकं नीलिनीं च त्रिवृतां चेति चूर्णयेत् ।।
षडाद्यान्कार्षिकानन्त्यांस्त्रींश्च द्वि-त्रि-चतुर्गुणान् ।
कृत्वा-चूर्णं ततो मुष्टिं गवांमूत्रेण वा पिबेत् ।।
विरिक्तो2जांगलरसै रेचनं* मृदु भोजयेत्2 ।
मण्डं पेयां च पीत्वा वा सव्योषं षडहं पयः ।।
शृतं पिबेत्ततश्चूर्णं पिबेदेवं ततः पुनः ।
हन्ति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ।।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्वयथुं चापकर्षति ।।
"अत्र पटोलादेः षड्भागाः कार्षिका, अन्येषां
कम्पिल्लादीनां द्वि-त्रि-चतुर्गुणा भागा ग्रहणीयाः" ।।

1 यो. र. मिन्द्रं 2-2 यो. र. मृदु भुञ्जीत भोजनं जांगलै रसैः ।।
(मिन्द्रं—इन्द्रयवम्) *चक्र. भुञ्जीत

(3) ग. नि.

"मूलं पटोलस्य तथा रजन्यौ फलत्रिकञ्चेति समानि षट् च ।
स्यान्नीलिनी द्विस्त्रिगुणं विडङ्गं+कम्पिल्लकश्चापि चतुर्भिरंशैः ।।
त्रिवृत्तथा पञ्चगुणेति योगं चूर्णीकृतं मुष्टिमितं पिबेद्धि ।
कुष्ठेषु मूत्रेण तु रोहिणीनां श्वित्रे गरे वाऽथ हलीमके च ।।
जातोदकान्यप्युदराणि हन्यात् पाण्ड्वामयार्शः श्वयथुप्रमेहान् ।
एनं प्रयोगं प्रपिबंश्च कुष्ठी भुञ्ज्या-द्रसैर्धन्वमृगद्विजानाम् ।।

+ ग. नि. चूर्णाधिकारे 'विशालां' पठिता-(विशाला—इन्द्रायण इति लोके)

गिने गये है (विडंग व त्रिफला के बक्कल) प्रत्येक १–१ कर्ष, कमीला २ कर्ष, नीलीबीज ३ कर्ष, त्रिवृता ४ कर्ष, इनका चूर्ण करके एक मुष्टि प्रमाण (मुष्टि = पल) गोमूत्रानुपान से पीवे। जब इस चूर्ण से विरेचन हो जाय तब जाङ्गल पशुपक्षियों के मांस रस से नरम भोजन करें अथवा मण्ड और पेया पीकर ६ दिन तक त्रिकटुयुक्तक्वथित दूध पीवे व उसके पश्चात् पुनः चूर्ण लेवे। इस प्रकार तब तक बारंबार करता जाय जब तक कि उदररोग नष्ट न हो जाय। यह चूर्ण सभी उदररोगों को, चाहे वे जलयुक्त हों, नष्ट करता है। कामला पाण्डु रोग व शोथ में भी लाभप्रद है। (अधुना मात्रा १ से २ ग्राम ही पर्याप्त है।)

(३४) [अथ नारायणचूर्णम्[1]]

द्वौ क्षारौ लवणानि पञ्च हवुषाधान्याजगन्धाशटी–
व्योषाजाज्युपकुञ्चिकाक्रमिजितः[2] कङ्कुष्ठकुष्ठाग्नयः[3]।
उग्राग्रन्थिककारवीमिशि[4]युतं योज्यं फलानां[5] त्रयं
मूलं पुष्करजं यवान्यपि भवेदेतानि तुल्यान्यथ[6] ॥ १३३ ॥

त्रिवृद्विशाले[7] द्विगुणे[8] च दन्तिनी
त्रिसङ्गुणा[9] स्याद्यवतिक्तका भवेत्।
चतुर्गुणा, चूर्णमुदाहृतं[10] जनै–
रिदं हि नारायणमौषधं बुधैः ॥ १३४ ॥

---

(4) ग. नि.
'पटोलमूलधात्र्यक्षत्रायन्तीरजनीसमम्।
दन्त्यंशं बिडंगं कम्पिल्लं त्रिवृच्चापि चतुर्गुणा ॥
पथ्याष्टगुणितंचूर्णं पीतं दोषवलं प्रति।
क्षीराम्बुमूत्रैर्जठरप्लीहश्वयथुनाशनम्' ॥

चक्र. पादटि.
'विरेचनदिने जीर्णे भेषजे मृद्वोदन-मण्ड-पेयानामन्य–
तममग्निबलापेक्षयोपयोक्तव्यं, तत ऊर्ध्वं षडहं यथोक्त–
पयोवृत्तिना भवितव्यम्। ततः पुनः सप्तमेऽहनि पटोलादि–
चूर्णं पेयमिति शिवदासः'

1 क. नारायणचूर्णः 2 क. क्रमिजित् 3 क. कुष्टाग्नियः 4 क. मिसि 5 क. फलाना 6 क. यथा 7 क. विशालो 8 क. द्विगुणोथ 9 क. त्रिसंगुणास्या 10 क. मुदाहृतं

उष्णोदकेन यवको[1]लकुल[2]त्थतोयै—
स्तक्रेण मद्य—दधि—मस्तुसुरासवैर्वा[3] ।
नारायणं [4]प्रपिबतः सकलोदराणि
नश्यन्ति[5] विष्णुमिव दैत्यगणा द्विषन्तः[6] ।। १३५ ।।

पाठान्तरम्— च. सं. म. प्र. च

'यमानी हवुषा धान्यं त्रिफला चोपकुञ्चिका ।※
कारवी पिप्पलीमूलमजगन्धा शटी वचा ।।
7 शताह्वा× जीरकं 7 व्योषं स्वर्णक्षीरी सचित्रकम्
द्वौ क्षारौ पौष्करंमूलं + कुष्ठं लवणपञ्चकम् ।।
विडङ्गञ्च समांशानि दन्त्या भागत्रयन्तथा ।
8 त्रिवृद् विशालयोर्द्वौ 8 द्वौ शातला स्याच्चतुर्गुणा ।।
एतन्नारायणं नाम चूर्णं रोगगणापहम् ।

+ म. प्र. पिप्पलीमूलं (पुनरुक्तं)
नैतत्प्राप्यातिवर्तन्ते रोगा विष्णुमिवाऽसुराः ।।※
तक्रेणोदरिभिः पेयं गुल्मिभिर्बदराम्बुना ।
आनद्धवाते1 सुरया वातरोगे प्रसन्नया ।।
दधिमण्डेन विट् सङ्गे 10 दाडिमाम्बुभिरर्शसि ।
परिकर्ते सवृक्षाम्लमुष्णाम्बुभिरजीर्णके ।।
भगन्दरे पाण्डुरोगे श्वासेकासे गलग्रहे ।
हृद्रोगे ग्रहणीदोषे कुष्ठे मन्देऽनले ज्वरे ।।
दंष्ट्राविषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे ।
यथार्हं स्निग्धकोष्ठन पेयमेतद्विरेचनम् ।।

× वृ. यो. त जीरके ※ अ. हृ वृ. वै. च शतपुष्पोपकुञ्चिका ।
7-7 वृ. वै. अ. हृ. चित्रकाजाजिकं
○ अ. हृ.; वृ. वै. च फलत्रयम्
8-8 ग. नि. द्विगुणे तु त्रिवृच्चित्रे

1 क. यवकोल 2 क. कुलद्ध 3 क. सुरा च सर्वैः 4 क. प्रावपिवतः 5 क. नस्यन्ति
6 क. द्विषन्तं

टीकाः— जवखार, साजीखार पांचोनमक, होंह (हवुषा), धणा, आसगंध, कचूर, त्रिगुडू (त्रिकटु), कालोजीरो, धवलो जीरो, बायबिडग, कंकोडा (कंकुष्ठ), कूठ, अरणी ? (चित्रक) वच, पीपलामूल, अजमोद (कारवी—अजमोदा इति चन्द्रटः) (मिसि) सोवा, त्रिफला, पुष्करमूल, अजमो, ए उषध सममात्र लीजै । निसोति, इन्द्रवारुणी उषधां थी बीमणी (दुगुनी) लीजै । सगला उबधा थी दांतिणी तिगुणी (३ भाग), कटुक चउगुणी (४ भाग) धालीजै । नारायण चूर्ण हूंती उदर विकार जाई । जिम कृष्णजी हुं ती दैत्य रा गण जाइ ।+

❀ चक्र. अहृ., वृ. वै., पा. 'नैनं प्राप्याभिवर्द्धन्ते । भा. प्र. म. प्र., बृ. यो. चि. 'एनत्प्राप्य निवर्तन्ते'

'नैतत्प्राप्या ...... मिवासुराः' पाठोऽयं यो. र. नोपलभ्यते

9 अ. हृ. वृ. वै. च आनाहवाते. ग. नि. सुरया बद्धवाते च 10 वृ. वै., म. प्र., भा. प्र. च वन्धे

अन्य पाठान्तरम् ग. नि.

'शतपुष्पावचाकुष्ठकारव्योऽजाजिधान्यकम् ।
द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं यवानी कुञ्चिका शटी ।।
स्वर्णक्षीर्यजगन्धा च विशाला चित्रकः समम् ।
वृहद्दन्ती सप्तला च देया द्वि-त्रि-चतुर्गुणाः ।।
नारायणमिति ख्यातं चूर्णं श्रेष्ठं विरेचने ।
गुल्मानाहविषाजीर्णश्वासकासगलग्रहान् ।।
शोफार्शोग्रहणीदोषभगन्दरगदाञ्जयेत् ।।'

शा.

'चित्रकस्त्रिफला व्योषं जीरकं हपुषा वचा ।
यवानी पिप्पलीमूलं शतपुष्पाऽजगन्धिका ।।
अजमोदा शठी धान्यं विडङ्गं स्थूलजीरकम् ।
हेमाह्वा पौष्करं मूलं क्षारौ लवणपञ्चकम् ।।
कुष्ठं चेति समांशानि विशाला स्याद्द्विभागिका ।
त्रिवृत् त्रिभागा विज्ञेया दन्त्या भागेत्रयं भवेत् ।।

+ दि यह पाठ तीसटाचार्योक्त है । चरक में कङ्कुष्ठ के स्थान पर स्वर्णक्षीरी और यवतिक्ता (कटुक के स्थान पर कालमेघ उपयुक्त होगा) के स्थान पर सातला पढ़ा गया है ।)

(३५) [अथ पञ्चनिम्बचूर्णम्[1]]

पिचुमन्दफलं पुष्पं त्वक्प[2]त्रं मूलमेव च ।
पञ्चैतानि सुसूक्ष्माणि समचूर्णानि कारयेत् ।। १३६ ।।

अष्टभागावशेषेण[3] खदिरासनवारिणा ।
भावयित्वा तु संयोज्य द्रव्याण्येतानि दापयेत् ।। १३७ ।।

चित्रकोऽथ बिडङ्गानि व्याधिघातश्च शर्करा ।
भल्लातक[4]-हरीतक्यौ[5] शुण्ठ्यामलक[6]गोक्षुराः ।। १३८ ।।

चक्रमर्दकबाकुच्यौ पिप्पलीं मरिचं निशाम् ।
लोहचूर्णसमायुक्तं समभागं प्रमाणतः ।। १३९ ।।

भावयेद् भृङ्गराजेन पुनः शुष्काणि कारयेत् ।
निम्बार्धं ❀सर्वमेतेषामेकीकृत्य निधापयेत् ।। १४० ।।

बिडालपदमात्रान्तु[7] सर्पिषा पयसाऽपि वा ।
प्रातः प्रातर्निषेवेत[8] खदिरासनवारिणा ।। १४१ ।।

परिहारो न यत्राऽस्ति[9] पञ्चनिम्बेऽवतिष्ठति[10] ।
मासमात्रप्रयोगेण कुष्ठं हन्ति रसायनम् ।। १४२ ।।

त्वग्दोषं नीलिकां व्यङ्गं तथैव तिलकालकान् । +
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी ।। १४३ ।।

चतुर्भागा शातला स्यात्सर्वाण्येकत्रचूर्णयेत् ।
पाचनस्नेहनाद्यैश्च स्निग्धकोष्ठस्य रोगिणः ।।

दद्याच्चूर्णं विरेकाय सर्वरोगप्रणाशनम् ।
हृद्रोगे पाण्डुरोगे च कासेश्वासे भगन्दरे ।।

1 क. चूर्णः 2 क. पत्रें 3 क. सेषेण 4 क. भलातक 5 क. हरीतक्यः 6 क. शुंठ्याम्लकगोक्षरां 7 क. मातँ ❀ बृ. यो. त. निम्बार्धचूर्ण 8 क. निषेवेत् 9 बृ. यो. त. चान्योऽस्ति 10 क. तिष्टति

+ 'त्वग्दोषं ˙˙ तिलकालकान्'-अस्मात् परं "अष्टादशविधं कुष्ठं सप्त चैव महाक्षयान्" इति पाठः यो. र., बृ. यो. त. च अधिकोपलभ्यते ।'

टीकाः— नींब पंचांग लीजै । जड, पान, छालि, मोर, फल, पांचे थोक (पांचो-द्रव्य) वांटि कपडिछाण कीजै । आ र माहे थोक पांच वराबरि करणी खयर रो छालि लेई न इहिमों आठ मउ पाणी रउरह इति वारै भावना ५ तथा ७ दीजै । पाठ मांही विगति कही नहीं छै । चित्रक, बायविडंग, किरमाली, साकर, भीलावां, हरड़, सूंठ, आंवला, कांटी, पमाड, बावचीमालवणी, पीपली, मिरच, हलद, लोहचूर्ण उषध सममात्र वांटि चूर्ण कीजै । चित्रकादि लोहचूर्ण अंत उसा सोलंहै छै । इयां नै भांगरा रा रस री भावना ५ तथा ७ दीजै । सूकई विन ई पछै चित्रकादि चूर्ण उसा १६? नींब रा थोक ५ हूं थी आधा भेलीजै। उषध

मन्दाऽग्नौ च ज्वरे कुष्ठे ग्रहण्यां च गलग्रहे ।
दद्याद्युक्तानुपानेन तथाऽऽध्माने सुरादिभिः ॥

गुल्मे बदरनीरेण विट्सङ्गे दधिमस्तुना ।
उष्णाम्बुभिरजीर्णे च वृक्षाम्लैः परिकीर्त्तिषु ॥

उष्ट्रीदुग्धेनोदरेषु तथा तक्रेण वा गवाम् ।ॐ
प्रसन्नया वातरोगे दाडिमाम्भोभिरर्शसि ॥

द्विविधे च विषे दद्याद् घृतेन विषनाशनम् ।
चूर्णं नारायणं नाम दुष्टरोगगणापहम् ॥

पाठान्तरम् चक्र.,

'पुष्पकाले च पुष्पाणि फलकाले फलानि च ।
सञ्चूर्ण्य +पिचुमन्दस्य ×त्वङ्मूलानि दलानि च ॥

द्विरंशानि समाहृत्य भागिकानि प्रकल्पयेत् ।
त्रिफलात्र्यूषणब्राह्मी-श्वदंष्ट्राऽरुष्कराग्निकाः ॥

विडंग सारवाराही-लोहचूर्णामृताः (क)समाः ।
हरिद्रा द्वयवागुत्री-व्याधिघाताः सशर्कराः ॥

कुष्ठेन्द्रयवपाठाश्च कृत्वा चूर्णं सुसंयुतम् ।
खदिराऽसननिम्बानां घनक्वाथेन भावयेत् ॥

सप्तधा पञ्चनिम्बन्तु मार्कवस्वरसेन तु ।
स्निग्धशुद्धतनुर्धीमान् योजयेच्च शुभे दिने ॥

+र. यो. सा., भा. प्र., र. र. च संग्रह्य, ×भा. प्र. मं. र., र. यो. सा., र. र. च पिचुमर्दस्य

टां २॥ तथा ३ लीजै घृत सूं भावे दूध सूं लेई ने इ उपरां खैर रा पाणी रा कुरला कीजै ? पथ्य भावै सो लीजै । मास १ सेवियो कोढ हरै । रसायन छई । चामडी रा दोष हरई । तिलकाला पिण सर्व व्याधि हरई । वर्ष ३०० ? जीवै ।

मधुना तिक्तहविषा खदिराऽसनवारिणा ।
लेह्यमुष्णाम्बुना वापि कोलवृद्ध्या पलं पिबेत् ॥
जीर्णे च भोजनं कार्यं स्निग्धं लघु हितञ्च यत् ॥*
विचर्चिकोदुम्बर-पुण्डरीक-कापालदद्रूकिटिमालसादि ।
शतारुविस्फोटविसर्प2पामा: कफप्रकोपं त्रिविधं किलासम् ॥
भगन्दरश्लीपदवातरक्त जाताान्ध्य3नाड़ीव्रणशीर्षरोगान् ।
सर्वान्प्रमेहान् प्रदरांश्च सर्वान् दंष्ट्राविषं मूलविषंनिहन्ति ॥
स्थूलोदर: सिंहकृशोदर:स्यात् सुश्लिष्टसन्धिर्मधुनोपयोगात ।
समो4पयोगादपि ये दशन्ति सर्पादयो यान्ति विनाशमाशु ॥
जीवेच्चिरं व्याधिजराविमुक्त: शुभे10—रतश्चन्द्रसमानकान्ति: ॥'

(क) र. यो. सा. 'लोहचूर्णं स्मृता:

1 भा. प्र., र. र., र. यो. सा. च 'निशाद्व्ययावल्गुजकं ; वृ. वै. 'निशाह्वया.....'
2 भा. प्र., र. र., र. यो. सा. च 'विसर्पमाला:'
3 भा. प्र., र. र., मै. र. र. यो. सा. च. 'जडान्ध', वृ. वै., निहन्ति
4 भा. प्र., र. यो. सा. च 'सदोपयोगा'

* 'जीर्णे च भोजनं... हितञ्चयत्' अस्मात् परं वृ. वै. 'आस्तिकेनाऽप्यकोपेन भाव्यं वै रोगिणा स्वयम्' इत्यधिक: पाठ:

ग. नि. पाठान्तरम् :

'रसायनं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणाऽमिततेजसा1 ।
प्रोक्तं2 यच्च्यवनादिभिरुपयुक्तं2 महर्षिभि: ॥
पुष्पकाले तु निम्बस्य कुसुमानि समाहरेत् ।
फलकाले फलञ्चैव मूलं पत्रं त्वचं तथा ॥
चित्रकोऽथ विडङ्गानि व्याधिघातकशक्रजौ ।
भल्लातको हरीतक्य: शुण्ठीं चामलकै: सह ॥
श्वदंष्ट्रा लोहचूर्णञ्च भृङ्गस्वरसभावितस् ।
अरिष्टखदिराभ्यांच भावयेत्पञ्चनिम्बकम् ॥
भावयित्वा पुन: पिष्टमेकस्थाने च कारयेत् ।
तत: कर्षमितां मात्रां सर्पिषा माक्षिकेन वा ॥

सुखाम्बुना वा तत्पीतं तत्क्षणादेव जीर्यति ।
हन्यात्कुष्ठानि सर्वाणि सप्तचैव महाक्षयान् ।।
अर्शांसि वातगुल्मं च खालित्यं पलितानि च ।
वातरक्तं विशेषेण श्वित्रं कुष्ठं तथैव च ।।
कुष्ठनाशनमेतद्धि ब्रह्मणा गदितं पुरा ।
वातातपसहो ह्येष न चात्र नियमः क्वचित् ।।
ग्राम्यधर्मं च कुर्वाणो भोजनं च यथेप्सितम् ।
मासमात्रोपयोगेन जीवेद्वर्षशतं पुमान् ।।
सर्वकामप्रसक्तोऽपि सर्वरोगैः प्रमुच्यते ।
षण्मासमुपयोगेन सर्पैरपि न दश्यते ।
वर्षमात्रोपयोगेन जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।।
नास्मात्परममस्त्यन्यत्कुष्ठरोगस्य भेषजम् ।।
साध्यानि यानि कुष्ठानि तान्येवामुं प्रकुर्वतः ।
निवर्तन्ते तथा क्रुद्धे सौपर्णे पवनाशिनः ।।

1 र. यो. सा, भा प्र. च. 'ब्रह्मणायदुदाहृतम्'
2 र. यो. सा., भा. प्र. च. "मार्कण्डेयप्रभृतिभिर्यत्प्रयुक्त"

❀ भा. प्र. टि. आस्यायमर्थः :—
निम्बस्य पुष्प-फल-त्वक्पत्र-मूलानि सर्वाणि समुदितानि द्विगुणानि चूर्णितानि भृङ्गराज-स्वरसेन सप्तवारान् भावयेत् । त्रिफलाऽऽदीनि पाठाऽन्तानिसमुदिताऽन्येकभागानि चूर्णितानि खदिरासननिम्बक्वाथेन भावयेत् । ततः सर्वमेकीकृत्य मध्वादिनाऽवलिह्यात् ।।

(३६) [अथ शृङ्गयादिचूर्णम्[1]]

शृङ्गीकटुत्रिकफलत्रयकण्टकारी—
भार्ङ्गी[3] सपुष्करज*टालवणानि पञ्च ।
चूर्णं पिबेदशिशिरेण[4] जलेन हिक्का—
[5]श्वासोर्द्ध्ववातकसनाऽरुचिपीनसेषु[6] ॥४४॥

टीका:— काकड़ासींगी, त्रिगड (त्रिकटु), त्रिफला, बैठी रींगणी, भांडगी, पुहकरमूल सोधो, सोंचल, विडलूण, कचलूण, समुद्रलूण उषध सममात्रा चूर्ण करि उष्ण पाणी स्युं लीजै। हिडकी (हिक्का), श्वास, उर्धवात, कफ, अरुचि, पीनस इतरा रोग जाइ ॥

(३७) [अथ कृष्णादिगणचूर्णम्[7]]

कृष्णा–ग्रन्धिक[8]–चव्य–चित्रक–वचा*—
विश्वौषधाजाजिभिः[9],
पाठा–रामठ–रेणुका–मधुरसैः
सिद्धार्थतिक्तोषणैः[10] ।
द्रेका[11] शक्रयवाजमोदत्रुटिभि—
र्भार्ङ्गीविडंगान्वितैः[12]—

1 क. शृंगादि चूर्णः । 2 क. फलश्र 3 क भागी 4 क. पिबेंदसिरेण 5 क. स्वासोर्ध-वात 6 क. कफजारुचि; वृ. यो. त. कफमारुत ।

* वृ. वं. पुष्करजटी (जटी-जटामांसी)

7 क. कृष्णांदिगणचूर्णः 8 क. गंधिक 9 क. विश्वोषधोजातिमिः 10 क. सिधार्थतिक्तावणैः * चक्र. टि. तथा वृ. यो. त. वचा स्थाने विषा पठितः 11 वृ. यो त. 'उग्रा', क. द्रेकासक्रयवात्रुटिभिः 12 क. बिडंगान्वितः

रेभिर्दीप्तिकरः कफामयहरः
कृष्णाऽऽदिरुक्तो गणः ॥ १४५ ॥

ठीका:— पीपलि, पीपलामूल, चित्रक, चविक, वच, सूंठी, जीरो, पाठ, हींग, रेणुका, मूरवा (मधुरस) सरिसव, कटुक, मिरच, वकाइने, इन्द्रजव, अजमोद, इलायची, भाडंगी, वार्यविडग, उसा वराबरि करि चूर्ण कीजै। टां २।. लोजै, दीप्ति करै, कफवात हरै।

पाठान्तरम्– सु. सं. (सू. अ. 38)

पिप्पली-पिप्पलीमूल-चव्य-चित्रक-शृङ्गवेर-मरिच-हस्तिपिप्पली-हरेणुकैलाज-मोदेन्द्रयवपाठा-जीरक-सर्षपमहानिम्बफल-हिङ्गु-भार्गी-मधुरसातिविषावचा-विडङ्गानि कटुरोहिणी चेति—

पिप्पल्यादिः कफहरः प्रतिश्यायनिलारुचीः ।
निहन्याद्दीपनो गुल्म-शूलघ्नश्चामपाचकः ॥

पाठान्तरम् भै. र.

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं गजपिप्पली ।
नागरं चित्रकं चव्यं रेणुकैलाऽजमोदिका ॥
सर्षपो हिङ्गु भार्गी च पाठेन्द्रयवजीरकाः ।
महानिम्बं वचा मूर्वा विषा तिक्ता विडङ्गकम् ॥
पिप्पल्यादिगणो ह्येष कफमारुतनाशनः ।
गुल्म-शूलज्वरहरो दीपनस्त्वामपाचनः ॥

अन्य पाठान्तरम्

कृष्णा चित्रकषड्ग्रन्था वासकं विकसा घनम् ।
ग्रन्थिकैले चातिविषा रेणुकं च कटुत्रयम् ।
यमानी गोस्तनी व्याघ्री भूनिम्बं बिल्वचन्दनम् ।
भार्ङ्गी श्यामा शिवा धात्री स्थिरा मूर्वा सजीरका ॥
सर्षपं हिङ्गु कटुकी विडंगं च समांशकम् ।
एष कृष्णादिको नाम गणो ज्वरविनाशनः ॥

(३८) अथ कृष्णाद्युद्धूलनम् चूर्णम्[1]

कृष्णा-सुपर्व[2]-विटपी[3]-सहनागरेण,
तिक्ता च दीपकयुता तनुलेपने[4] स्यात् ।
चूर्णं प्रशस्त[5]मतिजूर्तियुते शरीरे,
स्वेदं च शीतलतनुत्वमिदं निहन्ति ।।१४६।।

टीका:— पीपली[6], सुपर्व, विटपी, सूंठि, कुटक, अजमोद[7], एं उषध टां ५ कीजै । प्रस्वेद आवतौ होइ तो अंगलेप कीजै शांति होई ।।

(३९) अथ सितोपलादिचूर्णम्※

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशरोचना ।
पिप्पली स्याच्चतुष्कर्षा ह्येला[8] च स्याद् द्विकार्षिका[9] ।।१४७।।
एक[10]: कर्षस्त्वच: कार्यश्चूर्ण-येत्सर्वमेकत: ।
सितोपलाऽऽदिकं चूर्णं मधुसर्पि[11]र्युतं लिहेत् ।।१४८।।
कासश्वासक्षयहरं हस्तपादाङ्गदाहजित् ।
मन्दाग्निं शुष्कजिह्वां[12] च पार्श्वशूलमरोचकम् ।।१४९।।
ज्वरमूर्ध्वगतं[13] रक्तपित्तमाशु व्यपोहति ।।१५०।।

टीका:— मिश्री टांक १६०, वंशलोचन टां ८०, पीपलि※ टां. ४०, इलायची※ टां. २०, तज※ टां १०, एकत्र करि घृत मधु स्युं चूर्ण टां २।। अवलेही लीजै । कास, श्वास, क्षय, अंग री बलणि (जलन), मंदाग्नि, जीभ सूकती, लोहु थूकतो होई, पांशुली शूल, अरुचि इतरा थोक जाइ ।।

---

1 क. कृश्णालघुरूलनं चूर्णं। (सन्निपातज्वरे स्वेदप्रवृत्तिहरमुद्धूलनम्) 2 सुपर्व = वंश:, अथवा दूर्वा; शतपर्वा = वचा 3 विटपी = वट: 4 क. लेपन 5 क. ßसस्तमिति जायते शरीरे 6 क. टीका. पिप्पली के वाद 'कलूंजी' और 'कुलछ' ये २ द्रव्य क्रमश: सुपर्व व विटपी के लिये मिलते हैं । 7 क. अजमोद के पश्चात् 4 द्रव्य क्रमात् (1) अजमौ (2) काइफल, (3) कौडी और (4) वच अधिक मिलते हैं । गे द्रव्य उपलब्ध मूलपाठ में नहीं हैं ।

※ अष्टाङ्गहृदये 'त्वगेलादि' इति नाम

8 क. स्याचतुकर्ष: मेला 9 क. स्याद्विकर्षिकं 10 क. एक वर्ष 11 क. सर्पिधुतं 12 शा., यो. र आदिषु 'सुप्तजिह्वत्वं' 13 क. ज्वरमूर्छागतं रक्त: पित । इस ग्रन्थ में टीकाकार ने मिश्री व वंशलोचन क्रमश: 160 टां व 80 टां लिखे हैं किन्तु पिप्पली 10 टांक, इलायची 5 टां व तज २।। टां लिखे हैं ।

(४७) अथ न्यग्रोधादिचूर्णम्[1]

न्यग्रो[2]धोदुम्बराश्वथ[3] श्योनाकारग्वधा[4]ऽसनम् ।
आ[5]म्रं कपित्थं जम्बू[5]ञ्च प्रियालं[6] ककुभं धवम्[6] ।।१५१।।

[7]मधूकं मधुकं लोध्रं[7] वरुणं पारिभद्रकम् ।
[8]पटोलं मेषशृङ्गीं च दन्ती चित्रकमा[9]नकम् ।।१५२।।

करञ्जंत्रिफलाशक्र[10]-भल्लातकफलानि च ।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।।१५३।।

लिह्यन्मधुसमं पश्चात् फलत्रयरसं पिबेत् ।
न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मूत्रकृच्छ्राणि यानि च ।।१५४।।

प्रशमं वातवेगेन पिड़िका न च जायते ।।१५५।।

टीकाः— बड रा फल, उवर (उदुम्बर), पीपल रा फल, अरलू री छालि, किरमाला री फली, कपित्थ [असना], आंब री गूठली, जांबू री गूठली (न्यग्रोधाद्यमिदन्त्वत्र चाम्रजम्ब्वस्थिगृह्यते), चारोली, अरजनरूख री छालि (अर्जुन), घव री छालि, महुवा, महुलोठी, लोद, वरणा री छाल, नींब रा पान, पटोल, मेढासींगी, दांतिणी, चित्रक, आरहडी (आढकी), करंजफल, त्रिफलाछालि. इद्रजव, भीलावां फल उषध सममात्रा करि मधु स्युं अवलेही लीजै उपरि त्रिफला रो पाणा पीजै । मूत्रकृच्छ्र सहि (सारे) जाई ।

---

1 क चूर्ण: 2 क. निग्रोधो 3 क. श्वछ 4 क. ग. नि. च. रग्वधाः समम्, र. र, चक्र., भा. प्र., वृ वै. व. यो. त., यो. र. च 'रग्वधाऽसनम्' 5-5 क. आम्र कपिछ जंबू 6 क. कपिपालककुवं धवं 7-7 क. मधुकं लोध्रं वरुणं पारिभाद्रकं 8 ग. नि. पलाशो, क. पटोले 9 क. मीढकां, यो. र. पाटली, बृ. यो. त. मानकम् 10 क. शक्व 11 क. चूर्णसूक्ष्मानि ॐ 'एतानि ······कारयेत्' अस्मात्परं 'लिह्यन्मधुसमं ······जायते स्थाने "न्यग्रोधाद्यमिदंचूर्णं मधुनासह लेहयेत् । फलत्रयरसं चानु पिबेन्मूत्रं विशुद्ध्यति । एतेन विंशतिर्मेहा मूत्रकृच्छ्राणि यानि च ।। प्रशमं यान्ति योगेन पीडिका न च जायते ।।" इति. र. र., वृ. वै., बृ. यो. त,, चक्र. च पठितः ।

(४१) अथ बृहदग्निमुखं चूर्णम्

द्वौ क्षारौ चित्रकं पाठा कर[1]ञ्जं लवणानि च ।
सूक्ष्मैला पत्र[2]कं भा[3]र्गी क्रिमिघ्नं[4] हिङ्गु पुष्करम् ।।१५६।।

[5]शटी दार्वी त्रिवृन्मु[6]स्तं वचा शक्रयवास्तथा ।
धात्रीजी[7]रकवृक्षाम्लं श्रेयसी चोपकुञ्चिका ।।१५७।।

अ[8]म्लवेतसमम्लीका [9]दाडिमं कटुकत्रिकम्[9] ।
भ[9]ल्लातकाजमोदे च[9] यवानी सुरदारु च ।।१५८।।

अ[10]भयाऽतिविषा श्यामा हवुषाऽऽरग्वधं समम् ।
तिलमु[12]ष्ककशिग्रूणां कोकिलाक्षपलासयोः※ ।।१५९।।

क्षाराणि लोह[13]किट्टं च तप्तं गोमूत्रसेचितम् ।
समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।।१६०।।

मातुलुङ्गरसेनैव भा[15]वयेच्च दिनत्रयम् ।
दिनत्रयं तु तक्रेण[14] आर्द्रकस्वरसेन च ।।१६१।।+

---

1 टो. करज्जो, ग. वि. विडङ्गं 2 क. चित्रकं (युनरुक्तं), चक्र. पत्रकं, ग. नि. तगरं 3 क. भागी 4 ग. नि. कारवी 5 र. यो. सा. शुण्ठी 6 क. मुस्तां 7 क. क्षीरक 8 क. आम्ल 9-9 र. र, टो., चक्र., भैं. र. भा. प्र., र. यो. सा. च 'दाडिमं कटुकत्रयम् ।·········भल्लातकाजमोदे च ।' पाठोऽयं नोपलभ्यते, किन्तु वृ. वै., ग नि. च पाठोऽयं विद्यते । 10 क- अभिया 11 ग. नि. चव्या 12. क. तिलपुष्फशिग्रुणां ※ 'तिलमुष्कक·······पलासयोः' अस्मात्परं वृ. वै. 'आसनार्कधवाश्वत्थतिन्तिडीकार्जुनस्य च । चणकस्य तथा क्षारं लोहकिट्टं च शोधितम्' इत्यधिकः पाठः । ग. नि. "क्षारा अमूनि तुल्यानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । लोहकिट्टं च सप्ताहं तप्तं गोमूत्रसेचितम् ।। विद्वान् सुभावितं कृत्वा योगेऽस्मिन्प्रक्षिपेत्ततः ।।" इत्यन्य अधिकः पाठः 13 क. लोहकीटं 'क्षाराणि लोह··········सेचितम्' पाठोऽयं ग. नि, वृ. वै. च नोपलभ्यते । 14 चक्र. भा. प्र., भैं. र., म. प्र., र. यो. सा., र. र., ग. नि. च. शुक्तेन टो. चुक्रेण वृ. वै. शुक्लेन 15 टो. संघुट्य ※ क. क्षाराणि ··········सेचितम्' अस्मात् परं क. ग्रन्थे 'दिनत्रयं तु तक्रेण·······स्वरसेन च' तस्मात्परं 'अत्यग्निकारकं····समप्रभम्' -- अग्रे—"समभानि ····· कारयेत् ।" "मातुलिंगारसेनेदं'··········दिनत्रयम्" इति व्युत्क्रमेण पठितः ।

अत्यग्निकारकं चूर्णं प्रदीप्ताग्निसमप्रभम् ।
उपयुक्तं विधानेन नाशयत्यचिरा[1]द्‌गदान् ।।१६२।।

अजीर्णकमथो[2] गुल्मान् प्लीहानं गुदजानि च ।※
समान[3] व्यञ्जनोपेतं[4] भ[5]क्तं दत्वा सुभाजने[5] ।।१६३।।

दापये[6]दस्य चूर्णस्य बिडालपदमात्रकम् ।
गोदोह[7]मात्रात् तत्सर्वं द्रवी भवति सोष्मकम् ।।१६४।।

---

1 क. चिरानगदान् 2 क. अजीर्णमयोगुल्मम्
※ 'अजीर्णकमथो..........गुदजानि च । अस्मात् परं म. प्र , भै. र., टी., भा. प्र., र. र., चक्र., वृ. वै. र. यो. सा. च :—
'उदराण्यन्त्रवृद्धिं च अष्ठीलां वातशोणितम् ।
'प्रणुदत्युल्बणान् रोगान् नष्टमग्निं प्रदीपयेत् ।।'
3 क. सामान 4 क. पेत 5-5 क. भक्तवत्वा तु भोजनं 6 क. दापयेतस्य 7 क. गोदोहमात्रं ※ 'समस्तव्यञ्जनोपेतं ....सोष्मकम्' पाठोऽयं र. यो. सा. वृ. वै , भा. प्र., च नोपलभ्यते ।
+"दिनत्रयं तु .... रसेन च ।' अस्मात्परं ग. नि. :—
"सुभावितं ततः कृत्वा भक्तमध्ये प्रयोजयेत् ।
एषोऽग्निकल्पचूर्णस्तु नाशयत्यचिराद्‌गदान् ।
अजीर्णकं तथा ऽऽनाहं पञ्च गुल्मान् सुदुस्तरान् ।
ग्रहणी पाण्डुरोगांश्च श्वासकासांश्च दारुणान् ।।
प्रतिश्यायं क्षयं शोषं विद्रधिं कफवातजाम् ।
उदराण्यन्त्रवृद्धिं च ह्यष्ठीलां वातशोणितम् ।।
कुष्टानि च विशीर्णानि सन्निपातं सुदुर्जयम् ।
अर्शांसि वातरक्तञ्च कुष्ठमन्त्रस्य वृद्धिताम् ।।
अपस्मारं तथोन्मादं विभ्रमं च मदात्ययम् ।
प्रणुदत्युल्बणानेतान्नष्टमग्निं च दीपयेत् ।।
समस्तव्यञ्जनोपेतं भक्तं कृत्वा तु भोजने ।
प्रदद्यादस्य चूर्णस्य बिडालपदकं भिषक् ।।
ततस्तद्द्रवतां याति कोष्णत्वं च प्रपद्यते ।
एष चाग्निमुखश्चूर्णश्चूर्णराजो निगद्यते ।।
ब्रह्मणा निर्मितश्चैष ह्यश्विभ्यां परिकीर्तितः ।।"

टीका:— साजीखार, जवखार, चित्रक, पाठ, करञ्ज, सीधोलूंण, सउचल, बिडलूण, कचलूंण, समूद्रलूण, इलायची, मोथ[1], भाडंगी, बिडङ्ग, हींग, पुष्करमूल, शठी, दारुहलद निशोथ, पद[2]माख, वच, इन्द्रयव, आंवला हलद[3], तिंतडीक, गजपिप्पली, आम्लवेतस, आमली, दाडिमसार, त्रिगुडी, भीलावां, अजमोद, अजवाइन, देवदारु, हरडे, पतीस, प्रियंगु, हाऊबेर[4] किरमालौ, तिलां रा फूल रो खार, सूही[5]जणा रो खार[6], पलास रो खार काढ़ी लेई नै उन्हा गोंमूत्र स्युं मकरोई जै।[7] उसा सम मात्रा करि वांटि चूर्ण कीजै। उसा ने ई विजारा रा रस री भावना ३ दीजें आदा रा रस री भावना ३ दीजै। पांठांतरेण ? (पाठोक्त) रोग जाई ।।

(४२) अथ नारसिंहचू[8]र्णम्

प्रस्थं शतावरी[9]चूर्णं प्रस्थं गोक्षुरक[10]स्य च ।
वारा[11]ह्या विंशतिपलं गुडूच्याः पञ्चविं[12]शतिम् ।।१६५।।

भल्लातकानां[13] द्वात्रिंशच्चित्रकस्य [14]दशैव तु ।
तिलानां लुञ्चितानाञ्च [15]प्रस्थं दद्याद् विचूर्णितम् ।।१६६।।

त्र्यूषणस्य पलान्यष्टौ शर्करायाश्च[16] सप्ततिः[17] ।
माक्षिकं शर्कराद्धेन मधु[18]नाद्धेन वै घृतम् ।।१६७।।

पाठान्तरम् बृ. यो. त.

'क्षारौ जीरे मिसिनतचतुर्जात-षट्कद्विभावां-
भार्गीदार्वीन्द्रियवहपुषासारधात्र्या पटूनि ।
कुम्भाब्दोग्रानलपृथ्वीविषा पौष्कराम्लोऽम्लिदीप्यौ
पूती पथ्यार्ग्वधसटिवृकीवेल्लरीहिङ्गु वेल्लम् ।।
शिग्रोर्मुष्के क्षुरतिलवटोर्भस्मतप्तोऽ सकृद्वा
वाः सिक्तोऽयो-मल इति समैर्लुङ्गमुक्तार्द्रकाम्भः ।
त्रिस्त्रिः पीतोऽग्निमुख उदराजीर्णगुल्मग्रहण्या—
नानाहोन्मादश्वसनकसनार्शः खुडे.........'

1 पत्रकं = तेजपात अथवा चित्रक (मूलपाठानुसार) 2 मुस्तं = नागरमोथा 3 जीरक = जीरा 4 हाऊबेर टीका में नहीं हैं। 5 मोखाखार 6 तालमखाने का क्षार भी टीका में नहीं है। 7 मंडूर गोमूत्रमारित सब औषधियों के बराबर।

शतावरी-समं[13] देयं विदारीकन्दचूर्णकम् ।
[14]एतदेकीकृतं चूर्णं स्निग्धे[15]भाण्डे निधापयेत् ॥१६८॥

पलार्द्धमुपयुञ्जीत यथेष्टं चात्र भोजनम् ।
※ मासैकमुपयोगेन जरां हन्ति रुजामपि※ ॥१६९॥

वलीपलित-खालि[16]त्यं [17]प्लीहपाण्डुउरः क्षतम्[17] ।+
भगन्दरं मूत्रकृच्छ्रम[18]श्मरीं च भिनत्यपि[18] ॥१७०॥

अष्टादशैव कुष्ठानि मूत्रकृच्छ्राणि यानि च ।×
[19]प्रमेहं च महाव्याधिं पञ्चकासान्सुदारुणान् ॥१७१॥

अशीतिं वातजाँश्चैव चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
विंशतिः श्लैष्मिकांश्चैव संसृष्टान् सान्निपातिकान् ॥१७२॥

[20]अस्थिपर्वरुजं हन्ति[20] वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

सकाञ्चनाभो मृगराजविक्रम—
[21]स्तुरङ्गमञ्चाप्यनुयाति वेगतः[21] ।
स्त्रीणां शतं गच्छति हृष्टपुष्टो[22]
[23]निरालसो दैत्यगणे हरिर्यथा[23] ॥१७३॥

पुत्रान्सञ्जनयेद्धीमान्[24] नरसिंहनिभांस्तथा ।
नारसिंहमिदं चूर्णं ख्यात[26] रोग[26]गणापहम् ॥१७४॥

---

1. नारसिंहचूर्णः 2 क. चूर्ण 3 क. रस्तथा 4 क. वारात्ता 5 क. गुडूची 6 क. विंसति 7 क. भल्लतकानां 8 क. तथैव च 9 क. लुचितानां मै. र., चक्र, र. र. च शोधितानां 10 क. सर्करायाः 12 क. सप्तभिः; मै. र., चक्र., ग. नि. च 'सप्ततिः' 12 ग. नि. तदर्द्धेन 13 क. सतावरी 14 क. एतानि समभागानि 15 क. पांडे ※-※ क. अस्मिन् स्थाने 'प्रयोगेन रुजं हन्ति रोगमपि जरामपि' इति पाठः 16 क. खालित्य 17-17 क. प्लीह—पांडुररक्षिताम्; मै र., चक. च 'मेहपाण्ड्वाद्यपीनसान्'; ग. नि. प्लीहव्याधींश्च पीनसान् ॥

※※ 'मासैकमुपयोगेन ……… रुजामपि' अस्मात् परं र. र. न कोऽपि श्लोकः

टीका:— शतावरि, टां २५६, वाराहीकंद टां ३२०, गिलोइसत टां ४००, भिलावा टां ५१२, चित्रक टां १६० लोया (लुंचित) तिल टां २५६, सूंठि टां १२८, मिरच टां १२८, पीपलि टां १२८, निवात टां ११२०, सहित टां ५६०, गाई रो घृत टां २८०, बिदारीकंद टां २५६, उषधां सगलां ही रो चूर्ण करि निवात, सहित (शहद), घृत भेलो करी नै चीकरणा वासरिण में घातीजै। टां ५ तथा ७ प्राति (सुबह) लीजै। जिको मन भावै सो जीमीजै। इतरा रोग हणई (नष्ट होंगे) जरा, पलीसल (बलि-पलित), छाया, पाण्डु, तौड (क्षत) खैन (क्षय), भगंदर, मूत्रकृच्छ्र, पाथरो, कोढ १८, वीस प्रमेह महाव्याधि, पंच कास दारुण, असी बाव रोग, चौवीस ? (चालीस) पित्त रोग, वीस कफ रोग, तेरह (द्वंद्वज व त्रिदोषज), हाडां रो पीड जाई, जिम रूपानो वज्र सोमा री प्रभा, बाघ रो बल, घोड़ा रो वेग सो स्त्री सेवे। हरि डीकरा महाबली जामें नारसिंघ सरीखो पराक्रम।

(४३) अथ बिडरु[1]चकादिचूर्णम्

विडरु[2]चक यवानीजीरकं[3] द्वन्द्व पथ्या,
त्रिकटुक[4]हुतभुग्भ्यां वेतसाम्लाजमोदैः।

+ 'बलिपलित ....उरःक्षतम्' अस्मात्परं भै. र. चक्र. च "हन्त्यष्टादशकुष्ठानि तथाऽष्टावुदराणि च" इत्यधिकः पाठः। ग. नि. अष्टादशैव कुष्ठानि तथा ऽष्टावुदराणि च' ॥

1 क. 18 भै. र, चक्र. च अश्मरीं च भगन्दरम्

× 'अष्टादशैव .... यानि च' पाठो ऽयं भै. र., चक्र. च नोपलभ्यते।

19 भै. र. चक्र च. क्षयं

20-20 भै. र., चक्र. च 'सर्वानर्शोगदान्हन्ति'; ग. नि. 'एताः सर्वा रुजो हन्ति'।

21-21 ग. नि. 'तुरङ्गवेगी जलदौघनिःस्वनः'।

22 चक्र., भै. र. च सोऽतिरेकं; ग. नि. सोऽतिरम्यः

23-23 भै. र., प्रहृष्टपुष्टश्च यथा विहङ्गः; चक्र. प्रकृष्टदृष्टिश्च यथा विहङ्गः; ग. नि. 'सुरूपवान् सत्ववतां वरिष्ठः। 24 चक्र. धीरान् 25 क. ख्यातं 26 क. चूर्णं चेतिगणावहम् ॥; भै. र., चक्र. च 'सर्वरोगहरं नृणाम्' ॥ ग. नि. नारसिंहेति विख्यातश्चूर्णो रोगगणापहः ॥

1 क. रुचकादिचूर्णं 2 क. रुचिकजवानी 3 क. जीरके द्वे 4 टो. मथवह्निर्वेतसाम्लाजमोदे।

समवि[1]हितविडङ्गं धान्यकं तिन्तिडीकं[2]
पच[3]यति नगकूटं का कथा भोजनस्य ॥१७५॥

टीकाः— बिडलूण, सौंचल, अजवायण, जीरो, (दोनों जीरे), हरड, त्रिगडू, चित्रक, आम्लवेतस, अजमोद, विडंग (टां ३ लीजै), धणिया, डांसरिया, (समभाग चूर्ण), पहाड़ा रा टूक जरै तो जीमण री किसी कथा।

(४४) अथ वृषादि[4]चूर्णम्

वृषखदिरहरिद्रा-देव[5]दारु यवानी,
त्रिफलघनवराङ्गी कर्णिकारा सपाठाः।
गलित-मधुसनि[6]म्बं लेहयेत्प्रात[7]-रह्नि,
त्रिद[8]शमुनिभिरुक्तं हन्ति विं[9]शप्रमेहान् ॥१७६॥

टीकाः— अरडूसो, खयर, हलद, देबदुवार, अजवायणि, त्रिफला, मोथ, तज, किरमालौ, पाठ, निंब रा पान, उसा सममात्र करि सहित (मधु) सुं अवलेहि लीजै। वीस ही प्रमेह जाई। सखरां (उत्तम) सार (लोह भस्म) मार्‌यो भेलीजै पाठ बिना ही (यद्यपि पाठ में नहीं कहा गया है तथापि)।

(४५) तुम्बुर्वादिचूर्णम्[10]

तुम्बुरूण्य[11]भया हिङ्गु पौष्करं लवणत्रयम्।
यवानी च यवक्षारं विडंगं तु समानि च ॥१७७॥

त्रिवृत्[12] त्रिगुणितं चूर्णं सममुष्णाम्बुना पिबेत्।
आना[13]हमुदरं हन्यात्[14] विबन्धाग्निविनिग्रहः[15] ॥१७८॥
निहन्ति सर्वशूलानि तुम्बुर्वाद्यो[16] हि विश्रुतः[17] ॥

1 क. विहेति., टो. सममिति च 2 क. तिंतडीकं 3 टो. जरयति।
4 क. वृषादिचूर्णः 5 क. देवदपूजवानी 6 क. निंब 7 क. प्राति 8 क. त्रिदस
9 क. विसंति। 10 क, तुंबरादि चूर्णः 11 क. तुम्वरुमभया 12 क. त्रिबृतिगुणितं
13 क. अतनाहसुमुदंराग्य 14 क. चिवंधाग्नि 15 क. विनिग्रहात् 16 क तुंबराद्यौ
17 क. विश्रुत।

टीका:— तूंबरू, हरडै, हींग, पुष्करमूल, सीधौ, सौचल, वडलूण, अजमो, जवाखार, विडंग उषध सममात्रा कीजै। निसोत त्रिगुणी घालीजै। चूर्ण टां २।। उश्ण पाणी सूं लीजै। आफरो, उदर, विबंध, अग्नि रो निग्रह सर्वशूल जाई ।।

(४६) अथ पिप्पल्यादिचूर्णम्[1]

कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृता स्यात्पलोन्मिता ।
खण्डस्य च [2]पलं ज्ञेयं चूर्णमेकत्रकारयेत् ।।१७९।।

[3]कर्षमात्रं लिहेदेतत् क्षौद्रेणाध्माननाशनम् ।।१८०।।

टीका:—कर्ष (मात्रा) पिप्पली (टां २।।) निसोत टां १० खांड टां १० चूर्ण करि सहित (मधु) टां १५ उषध टां २।। अवलेहीजै, आफरो जाई ।।

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीनृसिंहभारती-तत् शिष्य-परमहंस-परिव्राज[5]काचार्य-श्रीआनंदभारतीविरचितायां आनन्दमालायां चूर्णाधिकार:। द्वितीयो[6]ध्याय: समाप्त:[7] ।।

पाठान्तरम्:— बृ. यो. त., यो. र. च

'चूर्णं तुम्बुरुरामठत्रिलवणक्षाराजमोदाभया-
वेल्लत्र्यूषणपुष्कराह्वयकृतं कुम्भत्रिभागान्वितम् ।
मन्दोष्णेन जलेन पीतमखिलं शूलं सगुल्मोदरा-
ध्मानाजीर्णविबंधमामपवनानाहौ च शीघ्रं जयेत् ।

शा.

"तुम्बुरूणि त्रिलवणं यवानी पुष्कराह्वयम् ।
यवक्षाराभयाहिङ्गु-विडङ्गानि समानि च ।।
त्रिवृत्त्रिभागा विज्ञेया सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
पिबेदुष्णेन तोयेन यवक्वाथेन वा पिबेत् ।।
जयेत्सर्वाणि शूलानि गुल्माध्मानोदराणि च ।।"

1 क. पिंप्पलादि चूर्णं: 2 क. पलविज्ञेय 3 क. कर्षालित 4 क. नासनम् 5 प्राजिका 6 क. द्वितीयो 7 क. समाप्ता:

ग. नि., चक्र. भै. र. च

'तुम्बुरूण्यभया हिङ्गु पौष्करं लवणत्रयम् ।
पिबेद्यवाम्बुना वात-शूलगुल्मापतन्त्रकी ॥

ग. नि.

'चूर्णं तदेतदिति तुम्बुरुपुष्कराह्व-
पथ्याम्लवेतसबिडं रुचकं सहिङ्गु ।
सिन्धूद्भवेन सहितं यववारिपीतं
शूलापतंत्रकविकारहरं यदुक्तम् ॥



अथ गुटिकाधिकारस्तृतीयः

अथ गुटिकाधिकारो लिख्यते

(१) [अथ वृद्धकामेश्वरगुटिका[1]]

कङ्कोलः श[2]रपुङ्खिकागजबला-वीरा[3]वरीन्दी[4]वरी-
[5]वासावत्सकबीज-वारणकणा विश्वोपकुल्योषणम् ।
बीजानि[6] त्रपुसत्रिकण्टकसणाऽध्यण्डेक्षुराणां[6] तथा,
[7]मज्वानो बदरीविभीतकशि[8]वाधात्रीपियालोद्भवाः ॥१॥

तालीसं शिव[9]कन्दलामृतलता-गाङ्गेरुकीबीजकं,
शृङ्गीधान्यकचित्रकं सु[10]सलिलं [11]मूर्वाशटीमेथिकाः ।
[12]दीर्घायुर्वृषभोऽथ मेदसुमहामेदे च काकोलिका
तद्वत्क्षीरकवायसी निगदिता [13]वद्धिस्तथा ऋद्धिका[13] ॥२॥

---

1. कल्पते वृद्धकामेश्वरगुटिकाः; र. यो. सा., बृ यो त. च महाकामेश्वरो मोदकः; बृ. पा. महाकामेश्वरः 2 र. यो. सा., बृ. पा., बृ. यो. त. च-बृहदेलिका 3 वीरा = महाशतावरी, 4 वरी = शतावरी, इन्दीवरी = नीलकमलं, क. वरंदीवरी इति पाठः; बृ. पा. वरेन्दीवरी इति पाठः (वरा = त्रिफला) 5 बृ. पा. श्यामा; बृ. यो. त., र. यो. सा. च वासा इति पाठः 6-6 क. त्रिपुसः त्रिकंठकसनाध्यडेछुराणां; बृ पा. त्रपुसः त्रिकण्टककणैरण्डेक्षुराणां; बृ. यो. त. त्रपुसः त्रिकण्टकसणामापेक्षुराणां 7 क. मजानो 8-8 क. रिवाधात्रीप्रियां लोद्भवाः 9 क. सिवकंदला; गग्रथे, र. यो. सा. च शिवलिङ्गिका (शिवकंदला = कर्पूरं किन्तु शिवलिङ्गिका = शिवलिङ्गिकाबीजानि) 10 बृ. यो. त., र. यो. सा. च, समुसली; बृ. पा. ससुलभं (सुलभा = तुलसी) 11 र. यो. सां. वीरा; बृ. यो. त., बृ. पा. च हीरा 12 क. दीर्घायुः छ. र यो. सा., बृ. यो. त. च दार्वीयुग् 13 क. स्पृद्धिस्तथा वृद्धिका; बृ. यो. त., र. यो सा. च. वृद्धिस्तथा मृद्धिका; बृ. पा. वृद्धिस्तथा ऋद्धिका ।

❀शालू[1]कद्वय-राजिकाद्वयपृथग्जीराजमोदाद्वयं,❀
×श्रीखण्डद्वयमब्धिशोषमुसली-वांशी-समांसी मिसिः ।×

[2]चातुर्जातक यो[3]निका ? कुमुदिका[4]जातीफलं यष्टिका,
⊕द्राक्षा-खा[5]खसवल्कलं मदनकं शृङ्गाटशु[6]श्रोषणम्⊕ ॥३॥

जम्बूपद्मकपुष्क[7]राह्वकदलीकन्दाश्वगन्धाबला:[8],
+वाराही च विदारिमर्कंकरभः काश्मीरकं दाडिमम् ।+
++मेथी-मोचरसा जयाश्च रसया ? देयाऽथ शुक्त्यंशकाः ॥४॥

---

1 क. सो लूकद्वय ❀-❀ 'शालूकद्वय .... अजमोदाद्वयं', अस्मिन्स्थाने बृ. पा. "शालूकाद्वय-रूमिकाह्वयकटूजीराजमोदाह्वयं" इति पाठः (रूमिका = रूमीमस्तङ्गीति लोके, शालूकं = पद्मकन्दः, कटू = कटुकी) ×-× 'श्रीखण्डद्वयं ... ... मिसिः', अस्मिन्स्थाने बृ. पा. "ह्वब्धेःशोषमुशीरकं च मुसली मांसी-सवासा-मिसिः ।" इति पाठः । क. 'श्रीखंडं द्वय मब्धिशोषमुसली वासी स-मांशी मिसि' इति पाठः । अस्मात् परं र. यो. सा., बृ. यो. त., बृ. पा. च 'जातीपत्रिलवङ्गमर्कंकरभः काश्मीरकं दाडिमम्', इत्यधिकः पाठः । 2 क. चातुर्पातक 3 बृ. यो. त. लोनिका; र. यो. सा. कोलिका 4 क. जाजीफलं 5 क. द्राष्या खस्युल 6 क. श्रृंगाटशुभोषणां; र. यो. सा. श्रृंगाटकं-त्र्यूषणम्; बृ. यो. त., बृ. पा. च शृंगाटशुश्रोषणं ⊕⊕ 'द्राक्षा.................. शुश्रोषणं', पादोऽयं र. यो. सा., बृ. यो. त., बृ. पा. च अग्रिमश्लोकस्य प्रथमो पादः 7 क. पुष्कराह्वः 8 'वला' स्थाने र. यो. सा., बृ. यो. त. च 'तिलाः' इति पाठः + 'वाराही च.............दाडिमम्', पाठोऽयं र. यो. सा., बृ. पा., बृ. यो. त. च. नोपलभ्यते । ++ 'मेथी मोचरसा .... शुक्त्यंशका', पाठोऽयं र. यो. सा., बृ. यो. त., बृ. पा. च नोपलभ्यते; अस्मिन्स्थाने बृ. यो. त., बृ. पा. च "माषाः शाल्मलिबीजवल्कलरसा-मूलञ्च पौनर्नवं; कर्षांशं विजयाऽखिलार्ध-तुलया देयाऽथ शुक्त्यंशकाः ।" इति पाठः; तदेव समीचीनः—यतः क. ग्रन्थे श्लोकोऽयं त्रिपादात्मक एव लभ्यते । 'कर्षांशं............शुक्त्यंशकाः' अस्मिन् स्थाने र. यो. सा. "कर्षांशं सकलं सुभृष्टविजया देया तु पादांशिका" इति पाठः ।

रस-कनक[1]-भुजङ्गास्तारतापीजवङ्गा-
गगनतरणिसारावेध[4]मुख्यास्तु साराः।
द्विगुणित[5]सितमेतच्चूर्णगो[6]लं विदध्या-
त्तदनु मधुहविर्भ्यां प्राश्य[7] पेयं [8]पयोऽनु॥५॥

यक्ष्माणं ग्रह[9]णीगदं गुदरुजामानाह-गुल्मोदरा
ण्युन्मादानल[10]साददीर्घकल[11]नापस्मार मेहाश्मरीः[12]।

---

1. र. यो. सा., बृ. यो. त., बृ. पाग्रन्थे च 'रस-रसक' इति पाठः। कनकं-सुवर्णं, किन्तु रसकन्तु खर्परी-खपरिया इति लोके। 2 क. भुजंगातार; बृ. पा. 'भुजङ्गस्ताल', र. यो. सा., बृ. यो. त. च 'भुजङ्गास्तार' इति पाठः। तारं-रजतं किन्तु तालं तु हरितालम्। 3 क. गगनि; गगनं = अभ्रम्, सारं = लोहम् तरणिः-ताम्रम्। 4 र. यो. सा. 'वेदमुख्यास्तु साराः' इति पाठः; क. ग्रंथे वेधमुख्यातुषाराः' इति पाठः बृ. पा., बृ. यो. त, च 'वेधमुख्यास्तुषाराः' इति पाठः। "वेधमुख्याः"—रसवेधविधाने रसग्रन्थेषु रस-कनकादयः वेधयोग्याः कीर्तिताः—तद्यथा—

'नागः करोति मृदुतां निर्व्यूढ़स्तां च रक्ततां च रविः।
तां पीततां च तीक्ष्णं काचस्तत्कालिकविनाशं च॥
वङ्गाभ्रं सितमाक्षीकं शैलं वा वाहयेत्सिते।
तत्तारं च दशांशेन तारोत्कर्षं करोति हि॥
रसकसमं सुध्मातं कनकं भुक्त्वा ततोऽर्कचन्द्रलेपेन।
माक्षिकसत्त्वं हेम्ना करोति जीर्णो रसः शतांशेन॥'

र. हृ. तं. 18/15-20

किंतु, 'वेधमुख्यातुषाराः' इति पाठे कस्तूरी-कर्पूरञ्च इत्यर्थः।
(वेदमुक्या = कस्तूरी; तुषारः = कर्पूरः।)
5 क. द्विगुणितसिमेतत् 6 क. गौलंविदध्यातदनु 7 क. प्रास्य 8 क. ययोनु ❋ 'तदनु .... पयोऽनु'; अस्मात्परं र. यो. सा. "भवति युवतिमत्तः कामरूपादरः स्याद्धरति सकलरोगान् कामदः कामुकानाम्॥" इत्यधिकः पाठः॥
9 क. गृहिणीगदां 10 बृ, पा., क, 'दाहोदरा'; बृ. यो. त. 'प्लीहोदरा' 11 क. नलस्मदकार्शकना 12 बृ. पा., बृ यो. त., च दीर्घकसना।

श्वासं शूलभगन्दरं[1] ज्वरमहो[2] रोगं[3] क्रिमिं कामलां
पाण्डुत्वञ्च हलीमकञ्च[4] जयति श्री[5]मानयं लीलया ।।६।।

रेत:[6] क्षीणमलङ्करोति मदनोन्मादेन[7] मन्दानलं
❋-युक्त्या[8] गुर्वशनस्य दीनवपुषं कान्त्या जडं मेधया❋[10] । ?
का[11]र्णाटीशतसङ्गसङ्गरजयोद्दामश्रिया कामिनं
×दुर्बीजं[12] शुभ[13]रेतसं सुत[14]नयं कुर्यात्त्वलङ्कारिणम् ×[15] ।।७।।

पारीन्द्रं[16] च पराक्रमेण तुरगं वेगेन तारापतिं[17],
कान्त्या[18] च[18] द्विरदं बलेन शिखिनं नादेन बुद्ध्या बुधम्[19] ।

+कर्णाद्यास्तरला: रतौ च कुशलश्चापात्तथामारत:,❋
⊕कामन्य: सुभगा भवन्ति नि[20]तरां कन्दर्पमादोन्मदा:[21] ।।⊕
⊖श्रीकामेश्वरसेवया गतवया अप्येति[22] यून:[22] श्रियम्⊖ ।।८।।

---

1 क. बृ. यो. त., बृ. पा., र. यो. सा. च 'मरोचकं' 2 बृ. यो. त., बृ. पा., र. यो. सा. च ज्वरमुरो' 3 क. रोग क्रमीं कामला 4 क. हलीमकं मुहरति 5 क. श्रीमान् यं हेलया; बृ. पा. श्रीमन्नयं लीलया 6 क. रेतक्षीण 7 र. यो. सा. मदनोन्मादं महाबुद्धिदं । 8 क. पक्वा 9 क. वपुषां; बृ. पा. रोगणमनं 10 बृ. पा. 'पुष्टिप्रदं कामिनाम्'; क. "कान्त्या जडं मेधय:" । ❋❋-'युक्त्या .... मेधया'; पाठोऽयं र. यो. सा. नोपलभ्यते 11. क. कर्णाटी 'कार्णाटी ...... कामिनं' पाठोऽयं र. यो. सा , बृ. पा च नोपलभ्यते । 12 क. दुर्वार्य 13 क. सुभ 14 क. सकुस्ते 15 क. श्रीमानयं हेलया । ×-× 'दुर्बीजं .... कुर्यात्त्वलङ्कारिणम्, पाठोऽयं र. यो. सा., बृ. पा. च नोपलभ्यते ।

16 क. यारीन्द्रं; बृ. पा पक्षीन्द्रं; र. यो. सा. नागेन्द्रं 17 क. तारापति 18 क. कान्त्यथद्धि ? 19-19 र. यो. सा, (कान्त्या) चैव मुडो: पतिं चलबलं नादे मयूरं धनं । 19-19 क. द्विरदं वलेन सिपिना नादेन बुध्या बुध: । +-+ कर्णाद्या: ....मारत:', अस्मिन्स्थाने क. ग्रन्थे "कर्णाद्यास्तरला: रतौ च कुशल: चापातयामास्व:" ? इति पाठ: । पाठोऽयं र. यो. सा., बृ. पा., बृ. यो. त. च. नोपलभ्यते । 20 क. वितरा 21 क. मदा ⊕-⊕ 'कामन्य:..... ...... मादोन्मदा:, अस्मिन् स्थाने र. यो. सा., बृ. यो. त., बृ. पा. च "नासत्यावधरीकरोति बपुषा लावण्यलक्ष्मीजुषा" इति पाठ: । र. यो. सा. 'जुषा' स्थाने "युत:" । 22-22 क. आप्येति यूत:; र. यो. सा. आप्नोति यून: । क. ग्रन्थे श्लोकोऽयं पञ्चपदात्मक: ।

टीका:— सुगन्धकंकोल, मासानी-जड़ ? (क. पाठ में शरपुंखिका है व अन्य ग्रन्थों में बड़ी इलायची कही गई है।) गंगेरण जड़ (नागबला), चक्रांक वरयारो ? चक्रांका तिण ने तुरकाणी में कांगही पीलवरणी ? कहे छै, बल री जड़ तिणने खरेटी कहीजै, सितावरी, (मूल पाठ में 'गजबला-वीरा वरींदीवरी' यह पाठ "शरपुंखिका" के बाद में है), अरडूसौ, इन्द्रजव, गजपीपलि, त्रिफला ? (मूल पाठ में 'विश्वोपकुल्योषणं'=त्रिकटु है), षयराड ? (यह मूल पाठ में नहीं है।), खीरा रा बीज, कांटी, सिण रा बीज, ('सण के बाद मूल पाठ में 'ऽध्यण्डेक्षुराणां' है; अध्यण्डा=कपिच्छुक और इक्षुर=तालमखाना), बोर री मींगी, त्रिगुडू ? (मूल में विभीतक-शिवा-धात्री है=त्रिफला), चारोली (चिरौंजी), तालीसपत्र, अमरकंद ? (मूल में 'शिवकंदला' पाठ है), गिलोई, गांगरेण रा फल (बीज), काकड़ासिंगी, धाणा, चित्रक, वालो। मूर्वा (हीरा), सठि, मेथी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, खीरकाकोली, राठ (राठ के स्थान पर मूल पाठ 'वायसी है) वायसी=मकोय). ऋद्धि, वृद्धि, सिरूक उ कसेरू (मूल में 'शालूकद्वय' पाठ है—शालूकद्वय=लाल व श्वेत कमलकंद) पटोलविन्होई ? (मूल में राजिकाद्वय दोनों राई है), दोन्यू जीरा, अजमोद, अजमौ, सूकडि, रतांजणी, समुद्रशोष, मूसली, वंशलोचन, छड़, सोवां, [जातीपत्र, लवंग, अकलकरा, केशर, अनारबींज] तज, तमालपत्र, इलायची, (मूल में 'चातुर्जात' है अत: नागकेशर भी होगी), मालकांगणी ? (यह मूल पाठ में नहीं है), खुरसाणी (मूल में 'योनिका' पाठ है; संभवत: योनिका को यवनिका मान लिया गया है; किन्तु र. यो. सा. में 'कोलिका' पाठ है व बृ. यो. त. व बृ. पा. के पाठों में 'लोनिका' है) (कुमुद की जड़—मूल पाठ में इसके बाद है), जायफल, जेठी-मध, द्राख, पुसतां रो क्वाथ (पोश्त डोडा), धतूरा रा बीज ('मदनकं' को "मैनफल" भी कुछ पूर्वाचार्यों नें माना है।). सिंघोडा, मिरच, कंकोल ? ('शुभ्रोषणम्' यह पाठ है), जांबू रा बीज, पदमाख, पोकरमूल, केलीकंद, आसगंध, वला (तिल-पाठांतर से) वारहीकंद, बिदारीकंद, कौंछ, (मूल पाठ में नहीं है), अकलकरा, केशर, अनारदाणा, (मेथी) मोचरस। उषध रो हिस्सो चउथो भागि भांग (पाठान्तरेण

⊖-⊖'श्रीकामेश्वर ………श्रियम्', अस्मात् परं र. यो. सा. "नारीणां च शतं शतं प्रतिदिनं वाजीवशक्तो रतौ" इत्यधिक: पाठ:।

आधा भाग) दूध मांही भेलीजे पछै दूध मांहि भेला करि अवटाई लापसी सरीखी कीजै (यह पाठ में नहीं है) जुदा राखीजै उषध, धातु टलत (धातुओं को छोड़ कर अन्य सभी द्रव्य) सममात्रा कीजै ? पाठ में यह नहीं है) पछै उषधां हूंति निवात (शक्कर) विमणी (दुगुनी) घातीजै। पछै पोश्त रे क्वाथ मांहें पाति करि नैं उषध सगला ही में भांगि भेलीजै (यह विधि टीकाकार ने कल्पित की है)। उपरि इतरी धातु भेलीजै ने गोली टां २।। री बांधीजै। पारो तोला १ सार तोला १ (मूल पाठ में स्वर्ण, नाग, रौप्य, माक्षिक, बङ्ग, अभ्रक और ताम्र, ये पारद व सार के अलावा कहे गये हैं), कस्तूरी तोलो १, कपूर तोला १। मधुघृत स्यू गोली बांधीजै। सन्ध्या ? गोली खाइजै ऊपरी दूध पीजै। पाठ मांहे कह्याछै तितरा गुण थाइ ।।

(२) [अथ अभ्रकादिल[1]घुकामेश्वरगुटिका]

सम्यङ्मारितमभ्रकं कटुफलं कुष्ठाऽश्वगन्धावला:[2]
मेथी मोच[3]रसो विदा[4]रिमुसलीगोकण्टकं[5] क्षीरकम्[6]।
रम्भाकन्दश[7]तावरीह्यजमुदामा[8]षास्तिला-धान्यकं,
यष्टी नागबला कचूरमदनं जातीफलं सैन्धवम् ।।६।।

भार्गी-कर्कट-शृं[9]गिभृङ्गत्रिकटु जीरद्वयं चित्रकं,
चातुर्जातिपुन[10]र्नवे गजकणा द्राक्षा[11] शणं वासक:[11]।

---

1 बृ. यो. त., भै. र., र. यो. सा., टो. (रसालङ्कारात्) च. 'कामेश्वरो मोदक:
2. बृ, यो. त, भै. र., र. यो. सा., च 'कुष्ठाश्वगन्धाऽमृता' 3 क. मोचरसं
4 क. विदार 5-6 र. यो. सा. गोकण्टकेक्षूरका:; टो. गोकंटकेक्षुरम्; बृ. यो. त. गोक्षूरकेक्षूरकम्; भै. र. गोक्षूरकं चेक्षुर: 7 क. सतावरीमजमुदा 8 भै. र. मांसी 9 क. शृङ्ग; भै. र. कर्कटशृंगकं; बृ. यो. त. शृङ्गिकात्रिकटुकं; र. यो. सा., कर्कटशृङ्गिभृङ्गत्रिकटु; टो. शृङ्गिकभृङ्गराजत्रिकटु 10 क. पुनर्नवा 11-11 बृ. यो. त. द्राक्षाभयावासकं, भै. र. द्राक्षा सटी बालकम्; क. द्राष्यासिणावासक, टो. द्राक्षासनं वासकं।

❀बीजं मर्कटशाल्मली त्रिफलकं चूर्णं समं कल्पयेत्,❀
+तु[12]र्यांशा विजया सिता द्विगुणिता[13] मध्वाज्यपिण्डीकृतम् + ॥१०॥

⊕कर्षार्द्धां वटिकां विलेह्यमथवा कृत्वा सदा सेवये-⊕
× [14]त्पेयं [15]क्षीरसितं च वीर्यकरणं स्तम्भोऽ[16]प्यलं कामि[17]नाम् । ×
⊖रा[18]मावश्यकरः सु[19]खातिसुखदः सङ्गेऽ[20] ङ्गनाद्रावकः,
क्षीणे पुष्टिकरः क्ष[21]ये क्षयहरः हन्या[22]च्च सर्वामयान् ॥११॥

कासश्वासमहातिसारशमनः श्लेष्माणमुग्रं जये[23]-⊖
++न्नित्यानन्दकरो विशेषकवितावाचाविलासप्रदः ।
[24]अर्शोहा ग्रहणीप्रमेहशमनो वातापहः पित्तनुत्,
सेव्योऽयं हितकाम्यया सुरगणैः कामेश्वरो मोदकः++ ॥१२॥

❀-❀ 'बीजं मर्कट..................कल्पयेत्' अस्मिन्स्थाने भै. र., र. यो. सा. च "शालमल्यंघ्रिफलत्रिकं कपिभवं बीजं समं चूर्णयेत्", इति पाठः; टो. "बीजं शाल्मलिकर्कटीभवमिदं चूर्णं समं कारयेत्" । इति पाठः । 12 भै. र., र. यो. सा., च चूर्णांशा; क. तुर्यांसं; 13 बृ. यो. त., भै. र., च. मध्वाज्ययोः पिण्डितम्; र. यो. सा. मध्याज्यमिश्रं तु तत् । +-+ 'तुर्यांशा विजया .... पिण्डीकृतम्' अस्मिन्स्थाने टो. "चूर्णांशादद्विगुणाभ्रकं सुविजयां दत्त्वा तु पादांशिकाम्" इति पाठः ।

⊕-⊕ 'कर्षार्द्धां .... सेवयेत्', अस्मिन्स्थाने "कर्षार्द्धां गुटिकामथद्विगुणितं संसेव्य पेयं पयः ।" इति बृ. यो. त. पाठः, 'कर्षांशा गुडिकाऽर्द्धकर्षमथवा सेव्या सदा कामिभिः'; इति भै. र. पाठः; टो. "द्वैगुण्येन सिता विचक्षणजनैर्मध्वाज्यपिंडीकृतम्" इति पाठः । 14 र. यो. सा. पेया, 14-15 बृ. यो. त श्वेताढ्यं प्रबलासु, भै. र. सेव्यं क्षीरसितं 16 भै र. प्ययं, बृ. यो. त. प्यसौ 17 क. कामिनी । ×-× 'पेयं .... कामिनाम्', अस्मिन् स्थाने टो. "मन्दाग्नौ प्रवरं सुपुष्टिकरण कर्षैकगोलं लिहेत्" इति पाठः 18 क रामा वस्यकरं, भै. र. वामावश्यकरः, र. यो. सा. श्यामावश्यकरः 19 र. यो. सा. समाधिसुखदः 20 बृ. यो. त. रम्याङ्गना; भै. र. बह्वङ्गनाद्रावणः 21 बृ. यो. त. क्षयक्षपकरं 22 बृ. यो. त. हन्त्याशुसर्वामयं । 23 भै. र. कामाग्निसन्दीपनो । बृ. यो. त., र. यो. सा. च मंदाग्निसन्दीपनम् ⊖-⊖ 'रामावश्यकरः ....श्लेष्माणमुग्रं जयेत्', अस्मिन्स्थाने "पेयं क्षीरसमं च वीर्यकरणं स्तम्भे च वै कामिनाम् । रामावश्यकरं सुखातिसुखदं रत्यङ्गनाद्रावकम्, क्षीणे पुष्किरं क्षये क्षयहरं हन्याच्च सर्वामयम् ॥ शूलश्वासहरं महार्तिशमनं मंदाग्निसंदीपनं" इति. टो. पाठः । 24 क. हर्षा संग्रही ++ 'नित्यानन्दकरो .... कामेश्वरो मोदकः' अस्मिन्स्थाने भै. र ....

टीका: — निश्चंद्र अभ्रक, कायफल, कूट, आसगंध, गिलोई ? (मूल पाठ में 'बला' है, अन्य ग्रंथों में अमृता ह ।), मेथी, मोचरस, विदारीकंद, मूसलीकन्द, कांटी, खीरकंद (तालमखाणा)' केलिकंद, सितावर, अजमोद, उड़द, तिल, धाणा, जेठीमधु, गंगेरण रा फूल, सठि, धत्तूरा रा बीज (मदनं), जायफल, सीधों (नमक), भाडंगी, काकडासिंगी, भांगरो, त्रिगडू, कालोजीरो, धवलो जीरौ, चित्रक, तज, तमालपत्र, नागकेसरि, एलची, साटी री जड़, गजपीपली, द्राख, सिण रा बीज, अरडूसौ, कौंछ बीज, (शाल्मली), त्रिफला, ऊषधां हुं ति चतुर्थांश भांगि घालीजै । उषध सममात्रा करि न इतीयां हूं विमणउ निश्चन्द्र अभ्रक

भै. र. "[1]दुर्नाम-ग्रहणी-प्रमेहनिचयश्लेष्मातिरेक[2]प्रणु-
❀न्नित्यानन्दकरोविशेषकवितां वाचां विलासोद्भवः❀ ।
+धत्ते सर्वगुणं महास्थिर[3]मतिर्बालो नितान्तोत्सव+
अभ्रासेन निहन्ति मृत्युपलितं कामेश्वरो वत्स[4]रात् ॥
सर्वेषां हितकारिणा निगदितः श्रीनित्यानाथेन सः,
वृद्धानां [5]मदनोदयोदयकरः[5] प्रौढाङ्गना सङ्गमे[6] ।
×[7]सिंहोऽयं [8]समदृष्टिप्रत्ययकरो भूपै[9]: सदा सेव्यताम् । इति पाठः × ॥

❀ नित्यानन्द.........विलासोद्भवः', पाठोऽयं टो. नोपलभ्यते । 1 र. यो. सा. ह्यर्शांसि; टो. अर्शः संग्रहणी इति पाठः 2 बृ. यो. त. रक्तप्रणुत्; र. यो. सा. श्लेष्मातिसारप्रणुत्, टो. रक्तातिसारं व्रणम् । 3-3 बृ. यो. त., र. यो. सा. च, दशां ध्यानावसानाकुल (र. यो. सा 'कुल' स्थाने भृशम्) + 'धत्ते सर्वगुणं.......... नितान्तोत्सव', पाठोऽयं टो. नोपलभ्यते.। 4 टो. मोदकः । अग्रे., 'गोप्योऽयं क्षिति-मण्डले मलधियां पाखण्डिनामग्रस्तः', इति. टो. अधिकः पाठः । 5 र. यो. सा.. बृ. यो. त. च. 'हि तनौ मनोभवकरः'; टो. "मदनोदये रतिकला" 6. टो. सेविता 7 बृ. यो. त.; र. यो. सा., टो च, सिद्धोऽयं 8 र. यो. सा , बृ. यो. त. ममदृष्टप्रत्ययकरो; टो. ममदृष्टिकारणकरो 9 टो. वीरैः; बृ. यो. त. राज्ञा ।

×-× 'सिंहोऽयं ....सेव्यताम् अस्मात्परः—

"इत्येतदुक्तं बहुवीर्यवर्द्धनं रात्रौ सदा क्षीरसितासमन्वितम् ।
भुक्तोत्तरं सेवितमाशुकामिनां विदग्धरामाकुलवश्यकारकम्" ॥

इति. र. यो. सा. अधिकः पाठः ।

घालीजै ? (यह पाठ के विरुद्ध है—अभ्रक तो कायफल आदि के जितना ही है)। सर्व उषधां थी विमणी निवात घालीजै पछै सहित (मधु) स्युं गोली बांधीजै। धृत सौं हाथ चोपड़ि नइ टां २।। री गोली बांधीजै। दिन अस्त हुआं पछै गोली १ खाईजै। उपरि दूध निवाति पीजै। अनेक स्त्री वस्य होई। वीजा ही गुण पाठ मांहे कह्या छै तितरा गुण होई ।।

(३) [अथ जातिफलादि-लघुमदनमोदकगुटिका]

जातिफलं जातिपत्रमेलात्वङ्[1]मूशलीशटीः[2] ।
आकारकरभो धा[3]न्यं मेथिका देवपुष्पकम् ।।१३।।

कपिकच्छु[4]प्रपुन्नाट[5] ?-(प्रपौण्डर्य)-धत्तूराक्षफलानि च ।
मुस्तकं कुंकुमञ्चैव द्वियवान्यश्वगन्धकम् ।।१४।।

*समस्तैश्च समं ग्राह्यं तिल[6]-रिक्तं सुवल्कलम् ।
सर्वाण्येतानि सञ्चूर्ण्य देयश्च द्विगुणो गुडः ।।१५।।*

अक्षप्रमाणगुटिका मदना कामवर्द्धिनी ।।

टीकाः— जाइफल, जावंत्री, इलायची, तज, मूसलीकंद, कचूर, अकलकरा, धाणा, मेथी, लवङ्ग, कौंछबीज, (प्रपुन्नाट), धतूरा रा बीज, बहेडा, मोथ, केसरि, अजमो, (दोनों) आसगंधि उषध सममात्रा गेरु+सगला

---

1 क. त्वक् 2 क. शटीति पाठः नोपलभ्यते-तत्र अक्षरद्वयस्याभावः, किन्तु ग. ग्रन्थे शटीति पाठः स एव समीचीनः 3 क. धंन्यं 4 क. कपिकछु 5 प्रपुन्नाटः— चक्रमर्दः कुष्ठबद्रक्तमीन्-कण्ड्वादीन् हरति; सः कामवर्द्धनगुणरहितः, प्रपौण्डरीकं तु शुक्लं, किन्तु तदपि सन्दिग्धद्रव्यम्। शुक्लगुणत्वादस्माभिरत्र 'प्रपुन्नाटः' स्थाने "प्रपौण्डरीकः" इति गृहीतः। -ग.- पुस्तके टीकाकारेण प्रपुन्नाट एव गृहीतः, किन्त्वसौ न साधुः— प्रपुन्नाटे शुक्रसम्बन्धिगुणाभावत्वात्। अस्मिन् योगे मूसली, आकारकरभः, मेथिका, कपिकच्छुक-अश्वगन्धादिद्रव्याणि शुक्लानि अथवा वाजीकरणानि; जातिफल स्तम्भनं। अस्तु प्रपुन्नाट अत्र अनुपयुक्तद्रव्यः प्रतीयते।
+ ग. 'सर्व सर्व समान तिल-गैरु'। (कामोद्दीपक गुण गैरु में नहीं हैं)। 'खाखसः खसतिल इत्युक्तः' खाखसफलोद्भूतवल्कल व्यवायि व स्तम्भक है। (सम्पादक)

उसा समउ गुल सर्व थी विमरा कीजै । गुटिका टां २।। कीजै स्यंध्या समै गोली खाइजै । स्त्री द्रवै । वीर्य वधई । और स्थंभन पिरा थाइ ।।

(४) [अथ चन्द्रप्रभागुटिका]

वि[1]ल्वव्योषफलत्रिकं त्रिलवरणं द्वि[2]क्षारचव्यानल-
श्यामा-पि[3]प्पलिमूलमु[4]स्तकसटी-माक्षीकधा[5]न्यतत्रचः ।
षड्ग्रन्थामरदारुवारणकरणा-भूनिम्बदन्तीनिशा-
पत्रैलातिविषाः पि[7]चुप्रतिमिता लोहस्य कर्षाष्टकम् ।।१६।।

त्वक्क्षीरी[8] पलिका[9] पु[10]राद्दश पलान्यष्टौ शिला[11]जन्मनो
माना[12]त्कर्षसमा कृतेति गुटिका संयोज्य सर्वं[13] भिषक् ।
तत्रैकां[14] प्रतिवासरं सह घृत[15]क्षौद्रेण लिह्या[16]दिमां
तक्रं[17] मस्तु च[18] गोघृतं[13] मधुरसं पश्चा[20]त्पिबेन्मात्रया ।।१७।।

अर्शांसि प्रदरं[21] ज्वरं च विषमं[22] नाडीव्रणानश्मरी-
कृच्छ्रं विद्रधिमग्निमांद्यमुदरं[24] पाण्डवामयं कामलाम्[25] ।
यक्ष्माणं च भगन्दरं सपिटिकां[26] गुल्मप्रमेहारुची
रेतोदोषमुरःक्षतं कफमरुत् पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ।।१८।।

- 'समस्तैश्च ....द्विगुणो गुडः', अस्मिन्स्थाने क. ग्रन्थे "रस मेतत्सवं समं, तिलगैरिक्तकवलकलं ? । ततः सर्वसमं भाग सर्वद्विगुणिते गुड ।" इति पाठः; ग. ग्रन्थे 'समतात् सर्वसमं तिलं गैरिकं वल्कलं ततः सर्वे सर्व समाभागाः सर्वाद् द्विगुणिते गुडः ।।' 1ति पाठः । 6 'तिलरिक्तं सुवल्कलम्' इत्यनेन 'खाखसफलस्य तिलरहितवल्कलंग्रहणम्' ।

1 यो. र., भैं. र. च. 'बेल्ल' 2 क. द्विषार-चग्व्यानल 3 क. पीपलि 4 क. मस्तक 5 भैं. र., यो. र., च 'धातु' 6 क. पत्रला 7 क. पिचप्रमितयो 8 क. त्वकक्षीर 9 क. पुलिका 10 क. थुरौद्रसू 11 क. सिलाजन्मयौ 12 क. मीनांक्षी कुडवोन्मितेत गुटिकाः; ग. ग्रन्थे स्तोतनां कुडवोन्मितेति 13 क. कुर्याद् 14 क. तत्रौकौं, ग. तत्रैकां 15 क. सहविषं 16 क. लिह्वादनु 17 क. क्षीरं 18 क. हिमं 19 क. पयोमधुसितं 20 क. तात्वलिहेन् 11 क. प्रदर 22 क. विपनांडी 23 क. कृच्छ्र 24 क. मुर्दरं 25 क. कामलं 26 क. सपिटकं ।

*खालित्यं पलितं बलीमपहरेद्दोषांश्च चन्द्रप्रभा,
प्राप्ता चन्द्रमसातिदिव्यतपसा खण्डेन्दुचूडामणेः ।
एतस्यां न निषिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमो मैथुनं,
स्त्रीणां स्तम्भकरं महार्तिशमनं मार्गविरोधादपि ।।१६।।*

टीका:— बीलगिर, सूंठ, मिरच, पीपलि, हरडै, बहेडा, ग्रावला, सीधो, सूचल. विडलूंण, साजी, जवखार, चित्रक, चविक, निशोथ, पीपलामूल, मोथ, सठि, सोवनमाखी, (स्वर्णमाक्षिक), धाणा, तज, धवलीवच, देवदारु, गजपीपली, कीराइतों, दांतणी, हलद पत्रज, इलायची, पतीस, उसा सममात्र टां २।। की लीजै। उपध री मात्रा कलिंग परिभाषा री मांडी छै। सार टां २०, वंशलोचन टां १०, गूगल टां १०० सिलाजीत टां ८०, निवात टां ४००, उषध वांटि चूर्ण करि धृत सहित सूं गोली टां २।। की बांधीजै। ग्रनोपान ईतरा। भावै गोली दूध सौ भावै दही सौं, भावै ठंडा पानीं सौं, भावै सहित सौं लीजे। हरस प्रदर, विषम-ज्वर, दुष्ट नाडीव्रण, पाथरी, मूत्रकृच्छ, विद्रधि, मंदाग्नि, उदर, पाँडु रोग. कामल, क्षय, भगंदर, पिटिका, गुल्म, प्रमेह, ग्ररुचि, वीर्यदोषो-रक्षत (उरःक्षत) कफ-वात-पित्त उग्रसूल पली इतरा रोग चंद्रप्रभा गोली हूंती जाइ। मुख (मुख्य) मुत्रकृच्छ, नै. छै।

(५) [ग्रथ जीरकादिवटी[1]]

जीरकञ्चाभयाशुण्ठी[2]-मागधीदाडिमीफलम् ।
लवङ्गममृतायष्टी-कत्तृणोशीरचन्दनम् ।।२३।।

- 'खालित्यं .... मार्गविरोधादपि'— ग्रस्मिन्स्थाने
"वृद्धं सञ्जनयेद्युवानमसमोजस्कं बलं वर्द्धये-
देतस्यां न निषिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमो मैथुनम् ।
विख्याता गुटिकेयमञ्चिततरा चन्द्रप्रभा नामतः
सान्द्रानन्दकरी तनोति च रुचिं चन्द्रेण तुल्यां तनौ ।।"
इति. यो. र., भै. र. च पाठः। ग्रस्मात्परं ग. ग्रन्थे 'इति चंद्रप्रभा खांडव गुटिका' इति पाठः ।।

1 क. जीरकादि 2 क. सुंठी ।

अजमोदा फलंधात्री भूनिम्बं वानरीफलम् ।
²लघुमूली स्तनी-द्राक्षा³ माग⁴धीमूलचित्रकम् ।।२१।।

पर्पटञ्च शटी मुस्ता मुसली च पटोलकम् ।
त्रिसुगन्धं देवकाष्ठं⁵ भृङ्गराज⁶ञ्च वेरकम् ।।२२।।

एतदेव समं चूर्णमा⁷र्द्रकेण पुटत्रयम् ।
⁸त्र्यजाक्षीरपुटान्येवं गुडेन त्रिपुटन्तथा ।।२३।।

⁹भोजने च प्रयुञ्जीत⁹ नित्यमेव विजानता¹⁰ ।
वातजं पित्तजञ्चैव दोषो¹¹त्थं कफजज्वरम्¹¹ ।।२४।।

द्वन्द्व¹²जांश्च प्रमेहांश्च ? रक्तज्वरमलं जयेत् ।
जीर¹³काद्यमिदं श्रेष्ठं सर्वज्वरहरं परम् ।।२५।।

टीका:— जीरौ, हरडै, सुंठी, पीपर, अनारदाणा, लवंग, गिलोईसत्व, जेठीमधु, रोहिष, उसीर, सूकडी, अजमोद, आंवला, किराइतौ, कौंछबीज, सालिपर्णी, पृष्टिपर्णी, दोन्यु रींगणी, कांटी, गोस्तनीदाख, पीपरामूल, चित्रक, पित्तपापडो, सठी, मोथ, ¹⁴कालीमूसली, पटोल, इलायची, तज, पत्रज, देवदारु, भांगरो (¹⁵और अद्रक या बेर), (सभी समभाग) आदा रा रस री भावना ३, गुल (गुड) पुराना री भावना ३ दीजै, छाली रा दूध री भावना ३ दीजै। भोजन स्मै (समय) टां २।। लीजै¹⁶ । पाठ में कह्या छै तितरा रोग जाई ।।

(६) [अथ योगराजगुग्गुलुः¹⁷]

चित्रकं पिप्पलीमूलं¹⁸ यवानी¹⁹ कारवीयुता²⁰ ।
विडङ्गमजमोदा च जी⁴रकं सुरदारु च ।।२६।।

---

1 क. अजमोद 2 क. मधुसूली 3 क. द्राष्या 4 क. मागधा 5 क. केवकाष्टं 6 क. भृङ्गराजं वेरकं; ग. भृङ्गारं शृङ्गवेरकम् 7 क. माद्रकेण 8 क. अजाक्षीर-पुटत्रीनि 9-9 क. भोजनेन प्रियंजीत 10 क. विजानतं 11 क. दोषीछकफज्वरं; ग. त्रिदोषत्वंकफज्वरं 12 क. द्वंद्वजं च 13 जीरकादिमिदं 14 ग. मूसलीकंद 15 ग. और अद्रक 16 ग. वात, कफ, प्रमेह, रक्तज्वर एतेज्वर सर्व जाई ।। 17 क. गुगलः 18 क. पीपलीमूलं 18-19 क. जवानीकरवी 20 भा. प्र. जीरेके ।

चव्यैलासैन्धवं कुष्ठं[1] रा[1]स्नागोक्षुरधान्यकम् ।
त्रिफला मु[2]स्तकं व्योषन्त्व[3]गुशीरं यावग्रजम् ।।२७।।

※तालीशपत्रं श्या[4]माकं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।※
या[5]वन्त्येतानि सर्वाणि ता[6]वन्मात्रन्तु गुग्गु[7]लुम् ।।२८।।

सम्मर्द्य [8]सर्पिषा गाढं स्निग्ध[9]भाण्डे निधापयेत् ।
ततो मात्रां[10] प्रयु[10]ञ्जीत यथे[11]ष्टाहारवानपि ।।२९।।

योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ।
×आ[12]मवाताढ्यव तादीन् दुर्नामानि [13]विनाशयेत् ।।३०।।×

[14]अग्निञ्च कुरुते दीप्तं[15] तेजोवृद्धिं[16] वलन्तथा ।
+वातरो[17]गाञ्जयत्याशु सन्धिमज्जागतानपि ।।३१।।+

टीका:— चित्रक, पीपलामूल, अजवाइणि. सोवा, वायविडंग, अजमोद. जीरौ, चविक, इलाइची, सींधौ, कूठ, राठ, कांटी, धाणा, त्रिफला, मोथ,

---

1-1 र. र. रास्ना तथा 2 क. मुस्ताकं 3 क. त्वकसरी 4 क. च जवाग्रजं, वृ. वै., भै. र., चक्र., भा. प्र., र. र. च पत्रञ्च 5 क. स्यामाक ।

※—※ 'तालीशपत्रं............कारयेत्', अस्मिन्स्थाने—

"तालीशपत्रं गोक्षूरं लवङ्गं सर्जिका शटी ।
दन्ती गुडूची हृपुषा वाजिगन्धा शतावरी ।।
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्याच्चतुष्कर्षमयोमृतम् ।
एतानि सुभिषक्पट्टे सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।।"

इति यो. र. (सारसंग्रहात्) पाठः

6 क. यावत्येतानि; वृ. वै. यावन्मात्रं चूर्णमिदं 7 क. तावन्मात्रास्तु 8 क. गुग्गलः 8 क. सप्पिषा 9 क. स्निग्धभाण्डेन धापयेत् 10-10 क. मात्रं प्रत्युजीतं 11 क. यथोष्टाहार 12 क. मामवाताढ्यवातादि 13 क. दुर्नामानिलनासन ×-× 'आमवाताढ्य............विनाशयेत्', अस्मिन्स्थाने भै. र., चक्र. च "आमवताढ्यवातादीन् कृमीन् दुष्टव्रणानि च" इति पाठः; भा- प्र: 'अग्निमान्द्यामवातादीन्.......' इति पाठः; र. र., यो. र, च "प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत्" इति पाठः। 14 क. आग्नेय 15 क. दीप्ति 16 यो. र. रेतो 16 क. वातरोग ।

त्रिगडू, तज, उसीर, जवखार, तालीसपत्र, निशोथ रातौ, उषध सम मात्रा करि उषध समान गूगल घालीजै । आमवात, वायगुल्म, मंदाग्नि जाइ ।। अग्नि दीपई. तेज बल वधई, संधि मजा मांहिला वाव जाई ।।

(७) [अथ अजमो[1]दादिवटकम्]

अजमोदा[2] विडङ्गानि सैन्धवं सुरदारु च ।
चित्रकः पि[3]प्पलीमूलं शत[4]पुष्पा च पिप्पली[4] ।।३२।।

म[5]रिचञ्चेति कर्षांशं प्रत्येकं[6] कारयेद्बुधः ।
कर्षास्तु पञ्च पथ्याया दश[7] स्युर्वृद्धदारुणः[7] ।।३३।।

नाग[8]रस्य दशैव[9] स्युः सर्वाण्येकत्र कारयेत् ।
पिबेत्कोष्णजलेनैव चूर्णं श्वयथु[10]नाशनम् ।।३४।।

❀समेन वा गुडेनास्य[11] वटकान्[12] कारयेद्बुधः[12] ।
आमवातरुजं हन्ति सन्धिपीडाञ्च गृध्र[13]सीम्❀ ।।३५।।

+-+ 'वातरोगान्.........गतानपि' अस्मात्परं यो. र.

"पादग्रहं क्रोष्टुशीर्षं मन्यास्तम्भं हनुग्रहम् ।
कर्णग्रहं कर्णशूलं शिरः शूलं मरुत्कृतम् ।।
रास्नाक्वाथेन हन्त्येष केवलो वा प्रशस्यते ।"
इत्यधिकः पाठो लभ्यते ।

'सम्मर्द्य सर्पिषा गाढमिति—। प्रथमं तावद् घृतं दत्वा केवलो गुग्गुलुः पेषणीयः पश्चादल्पगल्पं चूर्णं दत्वा पेषणीयः । सम्यक् चूर्णमिलिते तु स्निग्धभाण्डे निधेयः । मर्दनार्थे घृतमानन्तु यावताचूर्णं मिलितं भवति । अन्ये तु गुग्गुलोरर्द्धमान-मित्याहुः ।। इति त. चं. (चक्र)

1 क. अजमोदादि गोली, शा.; यो. र. च अजमोदाद्यं चूर्णम् 2 क. अजमोद, 3 क. पिपली-मूलं 4-4 क. शतपुष्पादि पिप्पली 5 क. मरचि 6 क. कर्षांश ७-7 क. दशास्युवृधदारू च 8 क. नागरादि 9 क. दसैवस्यु 10 क. नासनं 11 क. स्यु 12-12 क. वटिका कारयेबुधः 13 क. गृध्रसी ❀-❀ 'समेन.........गृध्रस्रीम्'. अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे "चूर्णं गुडसमेनैव गुटिका कर्षमात्रकं । वातरोगन् [तथा] सर्वान् विसूचिं हन्ति [दारुणम्]" इति पाठः ।

*कटिपृष्ठगुदस्थां च जङ्घयोश्च रुजं जयेत् ।
तू[14]नीद्वयञ्च विश्वाचीं कफवातामयाञ्जयेत् ॥३६॥*

टीका:— अजमोद टां १, विडंग टां १, सींधव टां १, देवदारु टां १, चित्रक टां १, पीपलामूल टां १, सोवा टां १, हरडै टां ५, वधायरो टां १०, सुंठि टां १०, चूर्ण करि वांट छाणि उषध समान गुड भेलि गोली टां २॥ बांधीजै । इतरा रोग जाई॥ आमवात, संध पीठा, ग्रंथिक, ठिपूठी ? (गृध्रसी), कटिपृष्ठ, गुद, जांघ विऊं री पीड, तूनीं, प्रतूनी, विश्वाची, कफ वाव रोग जावै ।

(८) [अथ वरुणादिगुटिका]

नो जग्धं[1] कृमिभिर्धनं सुत[2]रुणं स्निग्धं शुचिस्थानजं,
[3]घस्रे पु[4]ण्यनिरीक्षिते वरु[5]णकं छित्त्वा तुलां[6] ग्राहयेत् ।
संगृह्योशु चतुर्गु[7]णाम्भसि पचेत्पादा[8]वशेषं जलं,
तत्तु[9]ल्येन गुडेन[10] वै दृढतरे भाण्डे पचेत्त[11]त्पुनः ॥३७॥

ज्ञात्वैवं[12] घनतां गुडे[13] परिणते प्रत्येकमेषांपलं,
शुण्ठ्ये[14]र्वारुकबीजगो[15]क्षुरकणा-पाषाण[16]भिच्छीतलाः ।
कूष्माण्डत्रपुसाक्षबीजकुनटी[17]-वास्तूकशोभा[18]ञ्जन—
द्राक्षैलागिरिजा[19]भयाकृमिहृतान्[20] चूर्णी[21]कृतान्निक्षिपेत् ॥३८॥

पथ्याशी प्रतिवासरं गुड[22]ममुं युञ्ज्या[23]त्प्रमाणं नर[24]:,
खादेत्तस्य[25] समस्तदोषजनिताश्मर्यः प[26]तन्ति द्रुतम् ॥

---

14 क. तनू द्वयं *-* 'कटिपृष्ठ ………… मयाञ्जयेत्', पाठोऽयं ग. ग्रन्थे नोपलभ्यते ।

1 क. दग्धं 2 क. सुवर्णं 3 क. प्रस्ते 4 क. पुन्यनिरीक्ष्यते, ग. पूयनिरीक्षते 5 क. ग. वरुणांकं 6 क. तुलं 7 क. गुणाभसि 8 क. पादावसेषं 9 क. ततुलेन वा 10 क. गुलेन वा 11 क. पंचेतत्पुनः 12 क. शात्वेवं घनता 13 क. गुडेन परिणते 14 क. शुण्ड्यैर्चातुक 15 क. गोक्षर 16 क. पापाणभिच्छीतलं 17 क. ग. नकुटी 18 क. ग. सौभाञ्जनं: 19 क. गिरिला 20 क. ग. कृमिहृतैः 21 क. चूर्णीकृतैर्विषिपेत्, ग. चूर्णीकृतैर्भिक्षिपेत् 22 क. गुडममु 23 क. योज्यं प्रमाणं 24 क. निरं:. ग. नरे: 25 क. षादेतस्य 26 क. पातति द्रमः, ग ……… दुमं ।

टीका:— अरणवल्यौ (नो जग्धं = न खाया हुआ—कृमिभि: = कृमियों से) [तरुण] लट अरणखाधो, चीकरणौ, पवित्र जाइगा री वरुणा री छालि टां १६००, प्रमाण मागध परिभाषा रो छै। पाणी टां ६४०० गुल (गुड) पुराणो टां १६००, सूंठी टां १६०० (१६) क्षीरां रा बीजां री मींगी टां १६, कांटी टां १६, पीपलि टां १६, विष्णुकान्ता-नीलपुष्पा टां १६, (शीतल: = पद्माख) (और) (पाषाण-भित् = पाषाणभेद) पेठा रा बीजां री मींगी टां १६, काकडी रा बीजां री मींगी टां १६, बेहडा री मींगी टां १६, सोधामरणसिल ? टां १६, (कुनटी = ❋धनिया व मन:शिला) वथुरा रा बीज (वथुआ) टां १६, सोहींजरणा रा बीज टां १६, [मुनक्का] इलायची टां १६, शिलाजीत टां १६, हरडै टां १६, वायविडंग टां १६, उषध भेला करनै गुल सूं गोली बांधीजै प्रमाण टां २।। तथा ३ री, प्रभात समय शीतलोदकेन सह पाणी रोग (अश्मरी) जाई ।।

(६) [अथ बृहद् विजयादिगुटिका]

❋विजया पलतुर्या स्यात् तद्द्विधं चित्रकं पुनः ।❋
ग्रन्थिकं व्योषमेलाब्दकेशरन्तु पलाष्टकम् ।।३६।।

त्वक्पत्रञ्च विषं गन्धं रसञ्च पलमात्रिकम् ।
तुम्बुरु[1] पुष्करं भार्ङ्गी[2] कट्फलञ्च पलार्द्धकम् ।।४०।।

लोहा[3]भ्रके पले[4] द्वे द्वे गुडस्या[5]र्द्धं पलं क्षि[6]पेत् ।
मर्दये[7]च्च भिषक्प्राज्ञः कोलमात्रा वटी कृता ।।४१।।

एकैकां भक्षयेत्प्रातः भोजनान्ते विशेषतः ।
चि[9]त्तेप्सितं सदाहारं[10] नैव[11] किञ्चित्परि[12]त्यजेत् ।।४२।।

❋धनिया मूत्रजनक है 'धान्यकं तुवरं स्निग्धमवृष्यं मूत्रलं लघु'। मन:शिला में यह गुण नहीं है अत: यहां धनिया अर्थ होगा !

❋-❋ 'विजया पल............ चित्रकं पुनः, अस्मिन् स्थाने—क. ग्रन्थे—"विजया पलचत्वारि पलचत्वारि चित्रक" इति पाठः। 1 क. तुंबरं 2 क. भार्ग्रं 3 क. लोहाभ्रंके 4 क. द्विपलकै 5 गुडस्यार्द्धतुलां, इति समीचीनः प्रतीयते, टीकाकारेण तु सर्वं समं गुडं गृहीतं। 6 क. दहेन, 7 क. मर्दयेच 8 क. विसेषतः 9 क. चिटेप्सित 10 क. सदाहारि 11 क. नैक 12 क. त्यज्येत् ।

[13]हन्त्यष्टादशकुष्ठानि पञ्च[14]कासान् क्षयं तथा ।
अ शी[15]तिवातजान्रोगान् मूत्रकृच्छ्रं[16] च गृध्र[17]सीम् ।।४३।।

विंशतिःश्लैष्मि[18]कांश्चैव प्रमेहा[19]नपि विंशतिः ।
[20]चतुरो ग्रहणीरोगान् षड्विधानर्शसां गदान् ।।४४।।

[21]शिरो-रोगं नेत्ररोगं कर्णरोगं तथैव च ।
उद[22]राति हर[22]त्येषा सर्वामयविनाशनी[23] ।।४५।।

पारावत[24]समः कामी हयो[25] वेगे[25] बले गजः ।
विषस्य[26] च गदं हन्ति स्थावरं जङ्गमं तथा ।।४६।।

परमायुर्नरो जीवेत्[27] शरी[28]रञ्च निरामयम् ।
सत्यं हि कथितं ह्ये त[29]च्चरकेण प्रभाषितम् ।।४७।।

टीकाः— हरडइ टां ४०, चित्रक टां ४०, पीपरांमूल टां ८०, सुंठि टां ८०, मरिच टां ४० [८०], पीपलि टां ८०, इलायची टां ८०, मोथ टां ८०, नागकेसरि टां ८०, तज टां १०, पत्रज टां १०, मुहरो (विष) टाँ १०, गंधक टां १०, पारो टां ५ [१०], तूंबरू टां ५, पोहकरमूल टाँ ५. भाडंगी टां ५, कायफल टां ५, सार टां २०, अभ्रक टां २१ [२०], गुल बरावरि सेर ५ (?) [७५० टां], गोली बेरजिवडी बांधीजै । पथ्य टालीजै काइ बात नहीं । इतरा रोग जाई—अठारै कोढ, पचकास, क्षय, असीवाय (वात) मूत्रकृछ, गृधसी, २० श्लेष्म रोग, वीस प्रमेह, च्यार ग्रहणी, हरस (अर्श) प्रकार छई, सिर रोग. नेत्ररोग, कर्णरोग उदर रोग, सर्व जाई। पारेवा (कबूतर) सारीखो कामी, घोडा रो वेग, हाथी रो बल, थावर जंगम विष हरइ । आऊषो पूरो भोगवै सरीर निरोग हुवै । चरक रा वचन सत्य ।

---

13 क. हन्तिष्टादसकुष्टानि 14 क. पंचकाशा 15 क. असीतिवीतजा रोगान् 16 क. मूत्रकृछ्र 17 क. ग्रध्रसा 18 क. श्लेष्मिकांचैव 19 क. प्रमेहानां च विंसति 20 क. चत्वारो 21 क. सिरो 22-22 क. उदराणि हरिद्रेतत् 23 क. विनासनं 24 क. पारापंत 25-25 क. हयवेगो 26 क. विषस्याद्यांगदं 27 क. जीवे 28 क. सरीरं 29 क. ह्ये तुच्चरणेकं ।

(१०) [अमरसुन्दरी[1]वटी]

सूतं गन्धं च लोहञ्च विषं चित्रकपञ्चकम् ।
बिडङ्गं रेणुकां मुस्तमेलाग्रन्थिकपिप्पलीम्[2] ।।४८।।

केशरञ्च त्रिकटुकं त्रिफला शु[3]ल्वभस्मकम् ।
एतानि स[4]मभागानि गुडं वै द्वि[5]गुणं क्षिपेत् ।।४९।।

च[6]णकाभां वटीं कुर्यात् खादयेत्[7] शुद्धदेहिनम् ।
का[8]सेश्वासे क्षये गुल्मे चार्दिते[9] विषमज्वरे ।।५०।।

तृष्णायाँ[10] ग्रहणीरोगे शूले पाण्ड्वामये तथा ।
[11]मूढगर्भेर्शसो-रोगे वातरोगे गलग्रहे ।।५१।।

हृद्रोगे गण्डमालायां हिक्कामूर्च्छाप्रकोपके ।
उन्मादे कर्णरोगे च रक्तपित्ते सुदारुणे ।।५२।।

अश्मर्यां[14] सन्निपाते च सर्प[15]दंष्टे च दारुणे ।
हस्त[16]-पादादिदाहे च गुटिकां ह्यमरसुन्दरीम् ।।५३।।

टीका:— पारौ, गंधक सारमार्‌यो, बछनाग, चित्रक, पत्रज, विडंग, रेणुका, मोथ, इलायची, पीपलामूल, नागकेशर, त्रिगुडु, त्रिफला, ताँबेसर (ताम्र भस्म) उषध समभाग। उषधां सगला हूंती गुड बिमणो (दुगुना) कोटि (घोटकर) गोली चिणा प्रमाण कीजै। प्रभात समय गोली १ लीजै। (17) पाठ मांहे जितरा रोग कह्या है तितरा सही (सारे) जाइ ।।

---

1 क. अमरसूंदरी गोली। 2 क. पिप्पली 3 क. शूलभस्मकं 4 क. सर्वंभागानि 5 क. गुडंग, ग. गुडं द्विगुणितं 6 क. चिणाकप्रमाणगुटिका ग. चणकाभावटी कुर्यात् 7 क. खादेत्सुद्धदेहिनां 8 क. काशे 9 चार्दिति 10 क. तृष्णाया 11 क. गूढगर्भ अर्शोरोगू ग. गूढगर्भे ………… 12 क. हृदोरोगंडमालायां 13 क. पिते 14 क. अश्मर्यो-संनिपाते, 15 क. सर्पदष्टे 16 क. हस्तपादगले रोगे, ग. हस्तपादगते रोगे।
(17) ख. पुस्तक में कुछ रोगों के नाम दिये हैं:—'एते रोग जाहि–कांस–स्वास–क्षयरोग–गुलम–विषमज्वर–तृषा, ग्रहणी इत्यादि, पाठ मधे कफस्तुति'। यह ख. पुस्तकोक्त अविकल पाठ है।

(११) [अथ मरिच्यादिगुटिका[1]]

कर्ष: कर्षांश:[2]पलं पलद्वयं स्यात्ततोऽर्द्धकर्षञ्च[3] ।
मरिचस्य पिप्पलीनां दाडिमगुडयावसूकानाम् ।।५४।।

[3]सर्वौंषधैरसाध्या ये कासा[4]: सर्ववैद्यविनिर्मुक्ता: ।
अपि पूयं छ[6]र्दयतां तेषामिदमौषधं पथ्यम् ।।५५।।

टीका।— मिरच टां ४, (१ कर्ष) पीपली टां १, (२ कर्ष] नासपाल (अनारफल का छिलका टाँ १६, (एक पल) गुड पुराणो (टां ३२) (२ पल) जव-खार टां २ (कर्षार्द्ध) प्रमाण । २।। टाँ प्रमाण गोली कीजै । प्रभाति गोली १ लीजै । जिकै कास सगला ही उषधां आगे असाध्य होइ रह्या हूवे अनै सगला ही वैद्य हाथ छाडिया होवे अर मुहडो सेती राध थूकता हुइ तियां नै मोटो उषध पथ्य: ।। +

(१२) [अथ एलादिगुटिका[7]]

एलापत्रत्वचोऽर्द्धाक्षा:[8] पिप्पल्यर्द्धपलन्तथा ।
*सितामधुकखर्जूर[9]-मृद्वीका: स्यु[10]: पलोन्मिता:[11] ।।५६।।

---

1 क. मरिच्यादि गोली; चक्र., वृ. यो. त., भा. प्र., यो. र., र. र. च 'मरिच्याद्यं चूर्णम्' इति नाम; ग. नि. 'मरिच्याद्यावर्त्तिः' इति नाम। 2 ख. 'कर्ष: कर्षे द्विपले । पलद्वियस्ता तथो द्वकर्षश्च, क. 'कर्षांस: पलं द्वयं ततोर्द्ध कर्षं: । ग. "कर्ष: कर्षोर्द्ध पलं पलद्वयंस्तथोर्धकर्षस्य"; ग. नि. कर्ष: कर्षोऽर्धपलं पलद्वयं स्यात् तथाऽर्धकर्षश्च ?, वृ. वै. पले; यो. र., वृ. यो. त., भा. प्र. च 'कर्ष: कर्षांशपलं पलद्वय स्यात्ततो-ऽर्द्ध कर्षञ्च । इति. अत्र कर्षांशो कर्षद्वयम् । 3 ख. 'सर्ववौंषधीरसाध्या । एकास सर्व वैद्य परिमुत्त्का', 3 क. सर्वोषधैः रसाध्या 4 क. कास 5 क. निर्मुक्ता: 6 क. छर्दियतो

- 'अपि..........पथ्यम्' अस्मात्परं क. ग्रंथे 'मरिचादिगुटी सर्वकासेषु' इत्यधिक: पाठ: ।। *-* ग. 'अपि पूयमसृक् छर्दिजातां तेषां इदमौषधं परम्' इति. ख. 'अपि पूयमसृक छर्दि । तेषां मिदमोषधं पामं' ।। + ख. इसमें द्रव्यों के तोल इस प्रकार हैं "मिरच टां २।।, पीपलि टां २।।, नासापाल टां ५, गुड टां २०, जवाखार टां १०" ।

7 च. सं. एलादिगुलिका 8 ख. 'एलापत्रत्वचोरद्राक्षा', क. त्वचोद्धोक्षा; र. र., वृ. वै. टो. अपरे योगे 'एलापत्रत्वचोलाक्षा. इति पाठ: वृ. यो. त. च 'त्वचोद्राक्षा' टो. * यो. र. शिवा 9 क. खर्जूरी 10 क. स्यु, 11 क. पलोन्मिता ।

सञ्चू[6]र्ण्य मधुसंयुक्तां[7] गुटिकां[8] सम्प्रकल्पयेत् ।
अक्षमात्रां[9] ततश्चैकां भक्षयेच्च दिने दिने ।।५७।।

कासं [10]श्वासं ज्वरं हिक्कां[11] [12]छर्दिं मूर्च्छां[14] मदं[14] भ्रमम्[15] ।
रक्तनि[16]ष्ठीवनं तृष्णां पार्श्व शूलमरोचकम् ।।५८।।

शोषं प्ली[17]हामवातांश्च स्वरभेदं क्षतक्षयम्[17] ।
गुटिका [18]तर्पणी वृष्या रक्तपित्तञ्च नाशयेत्[18] ।।५९।।

टीका:— इलायची[19] टां १, पत्रज[20] टां १, तज[21] टां १, पीपलि टां ५ (टां ४), निवात[22] टां १० (८) येठीमधु[23] टां १०(८), खारिक टां १ (८)[24], द्राख टां १० (टां ८) चूर्ण करि सहित स्यु गोली टां २।। प्रमाण बांधीजै। गोली १ प्रभाति खाईजै । पाठांतरेण (पाठोक्त) रोग जाई ।।[25]

(१३) [अथ गङ्गाधर-वटी[26]]

मुस्ता वत्सकबीजं[27] मोचरसो[28] बिल्व-धातकी[28]-लोध्रम् ।
❋गुडमथितसम्प्रयुक्तं गङ्गामपि [29]वेगवाहिनीं रु[30]न्ध्यात् ।।६०।।❋

टीका:— मोथ, इन्द्रजव[31], मोचरस, वीलगिर, धावै रा फूल, लोद, उसा सम मात्रा वांटि गुल मांहि घाति गोली बांधीजै । गोली टां २।। । प्रभाति लीजै, पेटुषो साजो थाय ।+

---

6 क. संचुर्णं ख. संचूर्णं 7 क. ख. संयुक्ता 8 क. ख. गुटिका क. 9 'वात्रा' 10 क. स्वासं 11 क. हिक्का 12 क. छर्द्दि 13 क. मूर्छा 14 क. मद 15 क. भ्रम 16 क., ख. नष्टीवनं 17-17 ख. "शोषप्लीहामवाताश्च । सुभे दक्षितं क्षयं ।" 8 क. संतर्पणी । 18-18 ख. 'संतर्पिणी । वृज्ञा । रक्तपित्तं च नाशयेत् ।'

19-20-21 ग. तज, पत्रज, इलायचीं १।-१। टां 22 ख. मिश्री टां १० 23 ख. महुलोठी टां १०, 24 ख छुहारी टां १०, ग. छुहारा टां १०, 25 ख. 'एता रोग जाहि ।। कास स्वास । ज्वर । छर्दि । हिक्का । मूर्च्छा । फलस्तुति पाठ मधे' ।

26 क. अथ गंगाधर गोली ; भा. प्र. द्वितीयगङ्गाधरचूर्णम् 27 क. वछक 28 क. धातुकी लांध्र 28-28 ख. 'मोचरसे विलु धातुकी लोदं' 29 क. गङ्गामपि वाहिनीं ❋-❋ ख. 'गुडमिश्रस्तुप्रयुक्तं । गंगामपि वाहिनीं० । ध्यातु ।' 30 क. रुध्यात् 31 क. इन्द्रवज
+ भा. प्र. के अनुसार उक्त 6 औषधियों का चूर्ण गुड मिले हुए मथितसंज्ञक दही से लेना चाहिये । ख. 'प्रवाहिका जाय, अतीसार जाय ।'

(१४) [अथ रामबाणगुटिका]

[1]पारदामृतलवङ्गगन्धकं भागयुग्म[2]मरिचेन मिश्रितम् ।
❀अत्र जातिफलम[3]र्द्ध भागिकं ति[4]न्तिडीफलरसेन मर्दितम्❀ ।।६१।।

×माषमात्रमनुपान योगतः सद्य एव जठराग्नि-दीपनम् ।×
+सेव्यतां सकलरोगनाशनं[5] रामबाणगुटिका रसायनम्+ ।।६२।।

पाठान्तरम्ः—

(i) बै. जी. 'इन्द्रजमेघमदाकुसुमश्रीरोध्रमहौषधमोचरसानाम् ।
चूर्णमिदं गुडतक्रसमेतं हन्त्यचिरादतिसारमुदारम् ।।'

(ii) शा. 'मुस्तमिन्द्रयवं बिल्वं लोध्रं मोचरसं तथा ।
धातकीं चूर्णयेत्तक्रगुडाभ्यां पाययेत्सुधीः ।।
सर्वातीसारशमनं निरुणद्धि प्रवाहिकाम् ।
लघुगङ्गाधरं नाम चूर्णं सङ्ग्राहकं परम् ।।

(iii) यो. र. तथा 'मोचरसमुस्तनागरपाठारलुधातकीकुसुमैः ।
वृ. यो. त. चूर्णं मथितसमेतं रुणद्धि गङ्गाप्रवाहमपि ।।'

1 क ख. 'पार्दामृत' 2 क. मिरचेन ख. 'मरिचेन मिश्रीतं' 3 क. मर्द्ध भावितं ख. 'मर्ध भावितं' 4 क. चिंचनीफल ख. 'चिंचणी फरसेन' ❀ 'अत्रजातिफल ……… मर्दितम्' अस्मात्परं र. क. ल., वृ. यो. त. च "वह्निमान्द्यदशवक्त्रनाशनो रामबाण इति विश्रुतो रस. ।,' पाठोऽयं विशेष उपलभ्यते ।

र. यो. सा. तु 'मर्दयेत्सकलमातपे खरे बीजपूरभवनागरङ्गजैः ।
दाडिमोद्भवसदाकुसुमजैः श्रृङ्गबेरकरसैश्च मर्दितम् ।
नूतनञ्च यदि वा पुरातनं सन्निपातमपि पातकोद्भवम् ।।
सेव्यतां सकल-रोगनाशनं रामबाणममृतं रसायनम् ।
श्लेष्मा चाऽऽर्द्रकवारिणाऽथ पवनो निर्गुण्डिकाया द्रवैः,

टीका:— पारो टां १, गंधक टां १, मिरच टां २, बछनाग टां १, जाइफल टां २।।, पारो गंधक मर्द काजली कीजै। वछनाग मिरच भेलो मर्दीजै, लवंग टां १, जाइफल टां १ जूं जूं वांटि, पछै सगला ही उषा भेला करि आमली रा रस मांहि मर्दीजै। गोली मसूर रा कण (मूल में

पित्तं धान्यजलैस्तथा त्रिकटुकैर्वासोद्भवैः श्वासजाः।
शुण्ठीसिन्धुहरीतकीभिरुदरं क्वाथैश्च पौनर्नवैः,
शोथाः पाण्डुगदाः प्रयान्ति सकला मूत्रेण माषोन्मितः।।
व्योषोत्थैश्च फलत्रिकैः क्षयमथो क्षौद्रेण संसेवितः,
वातार्तिः सकलास्तथैव विषमा वातारितैलैर्युतः।।'

पाठोऽयमधिको दृश्यते।

×-× 'माषमात्र........दीपनम्' अस्मिन् स्थाने भा. प्र. "माषमात्रमनुपानसेवितं रामबाणगुडिकारसायनम्।" इति पाठः। अस्मात्परं भा. प्र. "बिल्वपत्रमरिचेन भक्षितं सद्य एव जठराग्निवर्द्धितम्।। वातो नाशमुपैति चार्द्रकरसैर्निर्गुण्डिकाया द्रवैः, पित्तं नाशमुपैति धान्यकजलैर्वासा त्रिदोषं हरेत्।

श्लेष्मा सिन्धुहरीतकीभिरुदरं क्वाथैश्च पौनर्नवैः
शोथं, पांडुगदं निहन्ति गुडिका रोगार्त्तिविध्वंसिनी।
वह्निमान्द्यदशवक्त्रनाशनो रामबाण इति विश्रुतो रसः।
संग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकमामवातखरदूषणं जयेत्।।
दीयते तु मरिचानुपानतः सद्य एव जठराग्निदीपनः।
रोचनः कफकुलान्तकारकः श्वासकासवभिजन्तुनाशनः।।"

भा. प्र. पाठोऽयमुपलभ्यते।

×-× 'माषमात्र.......... दीपनम्' अस्मात्परं बृ. यो. त., र. क. ल. च।

"रामबाणममृतं रसायनं नागपत्रमरिचेन भक्षणम्।
संग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं सामवातखरदूषणं जयेत्।।
दीयते तु चणकानुपानतः + सद्य एव जठराग्निदीपनः।
रोचकः कफकुलान्तकारकः श्वासकासवभिजन्तुनाशनः।।"
इति पाठः ⊕ र. क. ल., 'मानत!'

'माष' = उड़द है) जिसड़ी बांधीजै। पानां सूं खवाडीजै। जठराग्नि दीप्ति होइ ॥※

(१५) [अथ शङ्खवटी[1]]

⊕चिञ्चाक्षार[2] निखिललवणं नि[3]म्बुतोयेन पिष्ट्वा-⊕
×दग्धं शङ्खं पुनरपि पुनर्भावयेत्सप्तवारम्। ×
तस्मिञ्शङ्खो भवति शिथिलो मर्दयेत्तेन सार्द्धम्-
⊖हिङ्गु व्योषं नि[5]गडसहितं पादमानेन कुर्यात्⊖ ॥६२॥

+तत्तुर्यांशं विषरसबलीन्योजयित्वा च सम्यक्,
कृत्वा गोलान् बहुबलकरान् बादरास्थिप्रमाणान्।
गुल्मेऽजीर्णे विषमविशिखे पक्तिशूलेऽन्यशूले,
प्रातर्देयं बहुबलकरं वैद्यकैः पुष्टिसिद्ध्यै ॥६४॥+

+-+ 'सेव्यतां ·········रसायनम्' पाठोऽयं र. यो. सा., बृ. यो त., भा. प्र., र. क. ल. च नोपलभ्यते। अस्मिन्स्थाने

भै. र. तु "सङ्ग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं सामवातखरदूषणं जयेत् ॥ वह्निमान्द्यदशवक्त्र-नाशनो रामबाण इव विश्रुतो रसः" इति पाठः।

※ ख. पुस्तक का पाठ "पारो, विष, लवंग, गंधक, इण चहूं तैं दूणी मिरच, सव ही तैं आधे जायफल। आंविली के रस सौं मर्दीजै। उड़द प्रमाण गोली बांधीजै। पान सौं खवाजे। सर्वरोग जांहि। सर्व गुण करै।

1 क. संष वटी गुटिका 2 क. क्षार 3 क. निम्बतोयेन 4 क. पिष्टं।

⊕-⊕ 'चिञ्चाक्षारं ········ पिष्ट्वा', अस्मिस्थाने ग. ग्रन्थे "पलं च चिञ्चाक्षारं पंचलवणं धल तथा निम्बरसे भवने त्रीणि" इति पाठः। ×-× 'दग्धं शंखं ········ सप्तवारम्', अस्मिस्थाने ग. ग्रन्थे "पलं क्षिपेत् निम्बुकस्य भवने ? सप्तदग्धं संखं विभावयेत्" इति पाठः। टोडरानन्दे तु अस्मिन्स्थाने 'शंखं तप्तं योजयेत् सप्तवारम्' इति पाठः। 5 क. निगुडि ⊖-⊖ 'हिङ्गु व्योषं ·········कुर्यात्', अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे "कटुत्रयं पलार्द्धं च पलप्रमाणे लवङ्गके पारदं विष वत्सनागं इति पाठः। टो. अस्मिन्स्थाने 'हिङ्गु व्योषं पादमानेन दत्त्वा' इति पाठः। +-+ 'तत्तुर्यांशं ········· पुष्टिसिद्ध्यै', अस्मिन् स्थाने टो. "चतुर्थांशं विषरसबलिं योजयित्वाऽथ कुर्याद्गोलं घोंटाबीजमानेन वैद्यः। आमाजीर्णे वह्निमान्द्यादिदोषे शूले गुल्मे योजयेत् वह्निमान्द्ये॥" इति पाठः। अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे, 'पलानां द्वादश नागक सर्वं लेह्य

टीका:— आंबिली (इमली) री राख (मूल पाठ में चिञ्चाक्षार है), १ सेर, लूण पांच सेर, (मूल पाठानुसार पांचो नमक) नींबू रो रस सेर ५ तथा ७ तथा १० तांई (आवश्यकतानुसार) (ये) थोक (द्रव्य) ३ कूंडा मांहि घाती नै संख सेर १ लेइ नै तवाइ (तपा कर) अग्निवर्णकर नइ वार ७ कुंडा माँहि बुझाईजै, भावै (अथवा) शंख वलि (जल कर) राख हुवै त्यां लगि बुझाईजै, पछे कुंडा मांहि संख वाल्यां रौ चूर्ण हुवै (शंख-भस्म) सो मर्दीजै। पछै हींग, सूंठि, मिरच, पीपरि-थोक ४ पाव एक भेल करी नै संख वाला चूर्ण मांहि घाति नै संभालू रा रस री भावना ३ दीजै ('संभालू ·· ········ दीजै, यह पाठ मूल ग्रंथ में 'निगंड' के स्थान पर—प्रमादवश "निर्गुंडि" लिख दिये जाने के कारण टीकाकार ने निर्गुंडी मानकर जोड़ा है, जो अवास्तविक है।) पछै पारौ टाँ ३, गंधक टां ३, बछनाग टां ३ (मूल पाठ में पारदादि इन द्रव्यों को 'तत्तुर्यांशं' कहा गया है) भेला करी नै दिन १ तथा २ मरदन कीजै। झाडबोर प्रमाण गोली बांधीजै, गोली १ प्रभाति लीजै। गोली १ संध्या लीजै, (सुबह-शाम १-१ गोली लेना मूल पाठ में नहीं कहा गया है)॥ बलकरणी, गुल्महरणी, अजीर्णनासनी, रुचिकरणी, पार्श्व-शूल, (पक्तिशूल), सर्वाङ्ग (अन्यशूल) शूलनाशनी, पुष्टिकरणी, समस्त उदरविकार नासनी॥

निम्बुद्रावे बदरास्थिवटी कृतं। भक्षयेत् सर्वधीमान् सर्वाजीर्ण प्रशान्तये। सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूले शोफे तथैव च। अग्निमांद्ये पे जीर्णेपि विहिना शंखवटीरिमा' इति पाठः। ख. ग्रन्थे भावप्रकाशोक्त एव पाठ.—पादटिप्पण्यां द्रष्टव्यः।

पाठान्तरम्—

टो. (अपरयोगे), भा. प्र., बृ. यो. त., र. यो. सा., ख. पुस्तके च

‡ "पलं चिञ्चाक्षरं पलमितमिदं पञ्चलवणं,
द्वयं सम्यक्पिष्टं तदनु लघुनिम्बूफलरसैः।
ततः पिष्टं तस्मिन्पलपरिमितं शङ्खशकलं,
क्षिपेद्वारान्सप्त[1] प्रमृदितमनेनैव विधिना॥
पलप्रमाणं[2] कटुकत्रयञ्च [3]पलार्द्धमानं बच-हिङ्ग भागः[3]।

(१६) [अथ अजीर्णकण्टकीवटी[5]]

शुद्धसूतं विषं गन्धं समञ्चूर्णञ्च कारयेत् ।
॥मरिचं सर्वतुल्यञ्चार्द्रकनारङ्गजैर्द्रवैः ।।६५।।॥

विषं पलद्वादशभाग[4]युक्तं तावद्रसो गन्धक एव चोक्तः ।।
बदरास्थिप्रमाणेन वटीमेतस्य कारयेत् ।
भक्षयेत्सर्वदा धीमान् सर्वाजीर्णप्रशान्तये ।।
॥ सर्वोदरेषु शूलेषु विसूच्यां विविधेषु च ।
अग्निमान्द्येषु गुल्मेषु सदा शङ्खवटी हिता ।।॥ ╫

1. बृ. यो. त. सद्यः 2 टो. पलार्द्धमानं 3-3 टो. पलस्य पादेन च हिङ्गुभागः 4. टो. द्वादशमंशभागं ॥-॥ 'सर्वोदरेषु .... हिता', अस्मिन्स्थाने टो. "गुल्म शूलोदरे पाण्डौ हिता संखवटी त्वियम् ।।" इति पाठः ╫-╫ 'पलं चिञ्चाक्षारं ... . शंखवटी हिता", अस्मिन्स्थाने ख. ग्रन्थे "पलं चिंचीक्षारं । पलपरमित । पंचलवणम् । द्वयं सम्यक् पिष्टं भवति । खलु निम्बुकरसैः । ततः संतप्तं तप्तं पलपरिमितं । संखकलं । क्षिपेनारासप्तद्रवति तदनैनेन विधिना । पलार्ध-मात्रं कटुकं । त्रिपुं स्यात । पलप्रमाणेन । लवंग चूर्णं । विषं पलद्वादश । भागमानं । ता चंद्रसो गंधक एवमेव । बदरास्थि प्रमाणेन । वटिका कुर्या सदा बुध । भक्षयेत सर्वा दाधीमान । सर्वाजीर्ण प्रसांतये । सर्वोदरेषु गुल्मेषु । हिता संख वटी सदा ।। इति विचित्रपाठः ।।

अन्यपाठान्तरम् 'चिञ्चाक्षारपलं पटुव्रजपलं निम्बूरसैः कल्कितं,
तस्मिञ्शङ्खपलं प्रतप्तमसकृन् निर्वाप्य शीर्णावधि ।
हिङ्गुव्योषपलं रसाऽमृतवलीन्संक्षिप्य निष्कांशकान्,
बद्धा संखवटी क्षयग्रहणिकारुक्पक्तिशूलादिनुत् ।।'
(बृ. यो. त., यो. र., भैं. र. च)

5 क. अजीर्णकंटकी वटी गुटिका, ख., भै. र., र. यो. सा., शा.. यो. र., र. क. ल. च 'अजीर्णकण्टको रसः इति नाम । ॥-॥ 'मरिचं .... नारङ्गजैर्द्रवैः,, अस्मिन् स्थाने क. ग्रंथे "मरिचं सर्व्वतुल्यस्यादृकं नारंगजें द्रवैः' इति पाठः; शा., भैं. र., यो. र., र. यो. सा. च 'मरिचं सर्वतुल्यांशं कण्टकारीफलद्रवैः' इति पाठः ।

मर्दयेद्भावयेत्सर्वमेकविंशतिवारकम् ।
²कृतं वटीद्वयं खादेत्² सर्वाजीर्णप्रशान्तये ॥६६॥
+आनन्दभैरवश्चाथ देयं गुञ्जाचतुष्टयम् ॥+

टीकाः—संस्कार करसोडियौ पारो टां १, गंधक टां १, वछनाग टां १ तीनिवौषधां वरवरि (तीनों के बराबर) मरिच । उषघ वांटि ने नारंगी री भावना २१ और आदा री भावना २१ दीजै । पछै मुंग प्रमाण (टीकाकार की कल्पना है—मूल पाठ में ऐसा उल्लेख नहीं है) गोली बांधीजै । गोली १ प्रभाति लीजै । (यह भी टीकाकार की कल्पना है) सर्व अजीर्ण जाई ॥ अपर नाम आणंद भैरवरस, अथवा गोली ४ खवाडीजै । (ग्रंथकार ने रोगाधिकारानुसार तो ग्रंथरचना नहीं की है, किन्तु उनका आशय शायद यह रहा होगा कि अजीर्ण के रोगी को 'अजीर्णकंटक' अथवा उसके अभाव में अजीर्णरोगाधिकार में कहा गया आनंद भैरवरस ४ रत्ती देना चाहिये ।)

(१७) [अथ नागार्जुनीगुटिका]

⊕त्रिकटु¹त्रिफला¹ एलाजातीफललवङ्गकम् ।⊕
×भूनिम्बश्वेतविप्रोऽपि ? कुचिलाविषकं≠ समम् ॥६७॥×

- 'मर्दयेत्.........वारकम्', अस्मिन्स्थाने क. ग्रंथे "मर्द्दतं भावगत्सर्वमेकविंसतिवारकं" इति पाठः 2-2 'कृतं वटीद्वयं खादेत्' अस्मिन्स्थाने क. ग्रंथे "वटी कृत्वा द्वयं खादेत्" इति पाठः; भै. र. "गुञ्जामात्रां वटीं खादेत्' इति पाठः; शा., र. यो. सा., यो. र. च 'गुञ्जात्रयमिदं खादेत्" इति पाठः । +-+ आनंदभैरव.............. चतुष्टयम्", अस्मिन्स्थाने शा., भै. र. च "अजीर्णकण्टकः सोऽयं रसो हन्ति विषूचिकाम्" इति पाठः; यो. र. तु 'सर्वोपद्रवसंयुक्तां विषूचीमपि नाशयेत्' इति पाठः; र. यो. सा. पाठोऽयं नोपलभ्यते । ग्रन्थकर्त्तुश्चात्राशयोऽयं स्यात्—'अजीर्णकण्टकरसस्थाने आनन्दभैरवरसोऽपि प्रयोजनीयः', किन्तु ग्रंथकृता बहुविधयोगशाल्युक्तरसस्य कश्चिदपि योगो नैवात्र प्रदर्शितः ॥

1-1 क. त्रिकटुस्त्रिफला ⊕-⊕ 'त्रिकटु त्रिफला.........लवङ्गकम्', अस्मिन्स्थाने ख. ग्रंथे 'त्रिकटु । त्रिफला । एलादाणां । जातीफल । लवंगकं ।' इति पाठः । ≠ क. विषकृत्समम् ।

[2]वासाजलेन पिष्टञ्च[2] छायाशुष्कन्तु कारयेत् ।
※चरणकाभां गुटीं कृत्वा ह्येकैकां भक्षयेन्नरः ॥६८॥

सन्नि[3]पातानजीर्णानि हन्ति रोगान्[4] समस्तकान्[4] ।
[5]वातवलासकान्रोगान् वह्निदीपन[6]मुत्तमम् ॥६९॥

टीकाः— सूंठि, मिरच, पीपली, त्रिफला, ईलायची, जाइफल, लवंग, किरायतो, सपेद[7]रींगणी ?, कुचीला, वचनाग, मात्रा समान, अरडूसा रो रस सुं गोली चिणकप्रमाण बांधीजै। छांहडी सुखाईजै। गोली १ खाईजै। सनिपात, अजीर्ण, सकल रोग जाई। अग्नि दीपन थाई ॥

(१८) [अथ सञ्जीवनी गुटिका]

बिडङ्गं[8] नागरं कृष्णा पथ्या[9]ऽऽमलबिभीतकम् ।
वचा गुडूची[10] भल्लातं सविषञ्चात्र योजयेत् ॥७०॥
एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत्[11] ।
गुञ्जाभा[12]-गुटिका कार्या दद्यादा[13]र्द्रकजैरसैः ॥७१॥
⊕एका [14]ह्यजीर्णे दातव्या द्वे विसूच्यां भिषग्वरः[15] ।
तिस्रश्च सर्पदष्टे च [16]चतस्रः सान्निपातिके[17] ॥७२॥⊕
गुटिका जीवनी नाम्नी सञ्जीवयति मानवम्[18] ॥

×-× 'भूनिम्ब .... कृत्समम्', अस्मिन्स्थाने खः ग्रन्थे "भूनीवंस्तेतविप्रो। कुचिलाविषत्वकिमं।" इति पाठः। 2-2 ग. वासाजलेन संपिष्टं; ख. वासाउलेन पृष्टं ※-※ 'चणकाभां .... भक्षयेन्नरः', अस्मिन्स्थाने क. ग्रंथे—"गुटिकाश्चनकामात्रा एकैकं भक्षयेन्नर।" ख. 'वटिका चणकमात्राभि। रेकेकं भक्षयेनर।" इति पाठः 3 क. ख. सन्निपातमजीर्णानि 4 क. ख. रोग समस्तकं 5-5 क. ख. वातवलासकं रोगं 6 क. दीपनि 7 ग. श्वेतबरवा, ख. सेतवड्डया।

8 क. विडंग 9 क. ख. ग्रंथयोः पथ्यामलविभीतिका; यो, र., बृ. यो. त., यो. त. च पथ्या वह्निर्विभीतकः 10 क. गडूची 11 क. गोमूत्रेणक पीषयेत्। 12 क. गुंजाभी 13 क. दाद्रूकजैः 14 क. एकामजीर्णे 15 क. भिषास्वरः 16 चतस्र 17 क. सन्निपातके ×-× 'एका ह्यजीर्णे .... सान्निपातिके', अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे "अजीर्णे च वटी एक द्वे दातव्य विषूचिकाम्। त्रीणि सर्पदष्ट सा चतु सन्निपातिके। इति पाठः 18 क. मानवः।

टीकाः— विडंग, सूंठि, पीपली, हरडै, बेहैडा, आवला, वच, गिलोई, भिलावां री मींगी, महुरो (वच्छनाग), मात्रा समान उसा, गोमूत्र सूं पीसीजै, गुन्जा समान गोली कीजै। अजीर्ण वाला नै १, विसूचिका वाला नै २, साप रा षाधा नै ३, सनिपात वाला नै ४ आदा रा रस सौं दीजै। संजीवनी गोली।

(१९) [अथ धात्र्यादिवटी[1]]

धात्रीकपि[2]त्थतिलमो[3]चरसाम्बुवाह-
[4]लज्जावतीदहनव[5]ल्लभबिल्वलोध्रैः[6]।
चूर्णेन[7] तुल्यविजयारजसा निबद्धा[8],
क्षौद्रेण हन्ति गुटिका सहसातिसारम् ।।७३।।

टीकाः— आंवला, कठौडी, तिल, मोचरस[9], मोथ[10], सूंठि+, लजालू. राल, वीलगिर, लोद[10] वीजा (सारा ?) ही उसा सममात्र। उसा सगलां ही बराबरि भांगि। सहित (मधु) सौं गोली बांधीजै। अतिसार जाई।।

(२०) [अथ चित्रकादि-वटी[11]]

❀चित्रमूलहरीतक्यौ वज्री? दन्तो च सैन्धवम्।
अजमोदं तथा[12] व्योषं गुटिकां समभागतः ।।७४।।
कुबेरा[13]क्षमितां कुर्यात्[14] पञ्चगुल्मनिवृत्तये[15] ।❀
हरते सर्वं रोगांश्च ज्ञानज्योतिमुने[16]-र्वचः ।।७५।।

---

1 क. धात्री आदि गोली 2 क. कपिछ 3 क. सुंचलजांबुवाह, ग. मोचरसोंदुवाह 4 क. लजावती 5 क. बलभ 6 क. लोद्रैः, ग यस्य 7 क. चूर्णन 8 क. निबधा 9 क. सौंचल 10-10 क. 'तज, कशर, वेलुकागौंद, सूंठ ? सम भाग + क्योंकि क. व ग. दोनों प्रतियों के मूल पाठों में तो 'सूंठ' नहीं कही गई है, किंतु दोनों के टीका भागों में 'सूंठ' आई है, अतः 'रसाम्बुवाह' के स्थान पर "रसाम्बुविश्वं" किया जा सकता है।

11 क. चित्रकादि गोली ❀-❀ 'चित्रमूल ....निवृत्तये' अस्मिन्थाने ग. ग्रन्थे 'चित्रकमूलं कुर्जात् पञ्चगुल्मनिवर्तयेत्' इत्येव अपूर्णपाठः।। 12 क. व्योषन... कं 13 क. कुबेराक्षी 14 क. कुर्या 15 क. निवृतये 16 क. मुनेवच।

टीका: — चित्रक, हरडै, थोहरि । दांतरिण, सीधो, अजमोद, त्रिगडू, उषध समभाग गोली बोर (कुबेराक्ष) प्रमाण कीजै । गुल्म पांच जाई । सर्व रोग जाई । रिषि (ऋषि-ज्ञानज्योति) (के) वायक (वाक्य) थी (के अनुसार) ।

(२१) [अथ सूर्यप्रभागुटिका]

श्रेष्ठा[2] व्योषविडङ्ग-चित्रकनिशा[3]-[4]दार्वीकरञ्जाऽमृता:,
देवाह्वाऽतिविषा त्रिवृत्सकटुका [5]कुस्तुम्बुरु: कारवी ।
द्वौ क्षारौ लवणत्रयं गजकणा चव्यं तथाऽ[6]रुष्करं,
तालीसं कणमूलपुष्करजटा[7]-भार्ङ्गीशटीतिक्तकम्[7] ।।७६।।

❀ [8]दन्तीपद्मकवासकं[9] सजटिला[10] जीरं[11] तथा[12] तुम्बुरू,❀
×-[13]पिष्ट्वैतानि समाक्षकानि[14] सकलान्याचूर्ण्य[15] शैलञ्जतु ।×
+-दत्त्वा पञ्चपलं पुरस्य[16] च तथा लोहस्य[17] पञ्चैव वै[18],+
⊕-चातुर्जातपलप्रमाणकथितं वंशोद्भवं वै पलम्⊕ ।।७७।।

---

1 क. सौहण्ड रो खार ।

2 क. श्रेष्टा; बृ. यो. त., यो. र. च 'दार्वी' 3 क. बृ. यो. त., यो. र. च 'वचा'; क. 'निसा' 4 क बृ. यो. त , यो. र. च 'पीता' 5 क. कुसुम्बरु 6 क. यो. र. 'पुष्करं' 7-7 र. यो. सा. "पुष्करशठी कुष्ठं किरातं धनम्"; क. 'जटार्भागीसठितिक्तकै:' इति पाठ: । 8 र. यो. सा. 'भार्गी' 9 र. यो. सा. 'बीजकं 10 र. यो. सा. 'सकुटजं' 11 र. यो. सा. 'दन्ती' 12 र. यो. सा. 'वचा' ❀-❀ 'दन्तीपद्मक ……… तुम्बुरू' अस्मिन्स्थाने बृ. यो. त:, यो. र. च "भार्ङ्गीपद्मकजीरकोशकुटजं दन्ती वचा भद्रकं" इति पाठ: । 13 क. मेतात्पष्य, ग मेतमन्यक्ष 14 क. समासकानि 15 क. त्याचूर्ण ×-× 'पिष्ट्वैतानि ……… शैलञ्जतु' अस्मिन्स्थाने र. यो. सा. "श्रृङ्गीकर्कटकस्य कर्षकमिता: सर्वा: समाना: मता:"; किन्तु बृ. यो. त., यो. र. च "सर्वंकर्षसमांशकं सुभिषजा सूक्ष्मं च सञ्चूर्णितम्" 16 ग. पुरास्य च तथा 17-18 क. लोहादिक्षिप्तपंच बै ग. ……… क्षिप्त च +-+ 'दत्वापंच ……… पञ्चैव वैं' अस्मिन्स्थाने र. यो. सा. लोहस्य द्विपलं पुरस्य च पलान्यष्टौ प्रदद्यात्ततो", किन्तु बृ. यो. त., यो. र, च "तद्वत्पंचपल वरं गिरिजतु स्यात् पंचमुष्टि: पुरो ।। ⊕-⊕ 'चातुर्जात …… पलं' अस्मिन्स्थाने र. यो. सा. "वांश्यास्त्वेकपलं शिलाजदशकं ताप्यं तु वांशीसमम्" किन्तु यो. र., बृ. यो. त. च "लोहस्य द्विपलं पलद्वयमयो ताप्यस्य सम्मिश्रितम्" इति पाठ: ।

❀सर्पिर्माक्षिकसंयुतञ्च[1] गुटिकां तां[2] भक्षयेन्नित्यशः-❀
×कास[3]श्वासभगन्दरान्गुदरु[4]जान् षाण्ढ्यं [5]यकृत्प्लीहताम् ।
गुल्मं विद्रधिपार्श्वशूलमुदरं पांडुक्रमी कामलाम्,
कुष्ठं मूत्ररुजं ज्वरञ्चविषमं सा गण्डमालां जयेत्× ॥७८॥

---

1 क. संयुतं गुटिकां 2 ग. तं ❀-❀ 'सर्पिर्माक्षिक............नित्यशः', अस्मिन्स्थाने र. यो. सा. "मत्स्यण्डीपलपञ्चकं घृतपले द्वे द्वे च माक्षीकतो, हेम्नोऽथ त्रिसुगन्धकस्य च पलं दत्त्वा गुटी निर्मिता । सूर्यार्थं परमेष्टिना भगवता सूर्यप्रभा नामतः ।" इत्यधिकः पाठः ॥; बृ. यो. त., यो. र. च—

'क्षिप्त्वा पञ्चपलानि शुभ्रसिकता वांशीपलं योजित-
मंकैकं त्रिसुगन्धिवस्तुपलिकं क्षौद्रैर्घृतैर्लेहवत्
एकीकृत्य समांशमेव गुटिका कार्या सुवर्णोन्मिता,
सा च ब्रह्ममुखाम्बुजप्रकटिता सूर्यप्रभानामतः ॥' इति पाठः

3 क. काश 4 क. गुदरुजं 5 क. च यत्प्लीहतां 4-5 ग. ज्वरं च षढ्यं यत् प्लीहितां ×-× 'कासश्वास..............जयेत्', अस्मिन्स्थाने र. यो. सा.

"कासश्वासभगन्दरोदरक्रमीन्पाडुत्वषण्ढक्षयान् ॥
गुल्मं विद्रधि पार्श्वशूलतमकान्सश्लीपदान् कामलाम्,
स्वेदं सर्वगतं त्रयोदशविधं सा सन्निपातं हरेत् ।
वातोद्भूतमशीतिसन्धिकगदं सश्लेष्मपित्तोद्भवम्,
कुष्ठार्शो-विषमज्वरानरुचकं मूत्रग्रहान्नाशयेत् ॥
सर्वान्रोगगणान्निहन्ति गुटिकामक्ष प्रमाणां बुधो,
यूषक्षीररसैः प्रयुज्य बलवान् स्त्रीष्वक्षयो जायते ॥" इति पाठः;

यो र., बृ. यो. त. तु—

'शोषं कासमुरः क्षतं सतमकं पाण्ड्वामयं कामलां,
गुल्मं विद्रधिपार्श्वशूलमुदरं स्त्रीषु क्षयं च क्रमीन् ।
कुष्ठार्शोविषमज्वरग्रहणिका-मूत्रग्रहं नाशयेद्-
भुक्त्वैकां गुटिकां प्रहृष्टमनसा योज्यं यथेष्टाशनम् ॥
नास्त्येतत्सममौषधं त्रिजगतीचक्रे हितं प्राणिना-
मुद्दामप्रमदामदद्विपदराट्सिंही तु सूर्यप्रभा ॥' इति पाठः ।

दत्त्वा चाक्ष[1]समां कृतां च गुटिकां भुञ्जीतनि[2]र्यन्त्रण:,
क्षीरै[3]र्मांसरसैर्विभुज्य सततं स्त्रीषु क्षमो वीर्यवान् ।
धीमांश्च स्मृतिपूजितोऽतिबलवान् [4]वृद्धोऽपि मातङ्गतां,
❀यातश्चेतसि नामयञ्च मनुते मुक्तोऽखिलव्याधिभिः ।।७९।।❀

×ख्यातैषा गतशुक्रवीर्यंकरणी सूर्यप्रभा नामत:,×
सूर्यस्यैव रुचिं ददाति गुटिका वीरा[5]धियोगाह्वया ।।८०।।

टीका:— श्रेष्ट नांम त्रिफला रो छै, त्रिगडु, विडंग, चित्रक, हलद, दारुहलद, करंज, गिलोई, देवदारु, पतीस, निशोथ, कटुक, धाणा, कालौजीरौ, जवखार, साजीखार, सींधौ, सौंचल, विडलूंण, गजपीप्पलि, चव्यिक, भीलावां, तालीसपत्र, पीपलामूल, पोहकरमूल, भाडंगी, सठि, किराइतौ, दांतणि, पदमाख, अरडूसौ, छड[6], जीरौ, तूंबरू उषध सह (सारे) टां २।। प्रमाण लीजै, चूर्ण करि छाणीजै । सीलाजीत टां ५०,[7] सार टां ५ (पाठ में ५० है) (गुग्गुल ५० टां), तज टां २।।, तमालपत्र टां २।।, नागकेशर टां २।।, इलायची टां २।।, वंशलौचन

---

1 क. चाक्षसमायुक्तं 2 क. निर्यंत्रिण 3 क. मासरसै 4 क. बृद्धी ❀-❀ 'यातश्चेतसि ……………व्याधिभिः', अस्मिन्स्थाने क. "पातश्चैतसिनामपंच मनुते मुक्तो बलव्याधिमिः" इति पाठः; ग. 'यातश्चेतसि नामयं च मनुते मुक्तो बलाव्याधिमिः', इति पाठः ×-× 'ख्यातैषा ……………नामतः', अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे 'ख्यातौ क्षयगतशुक्रवीर्यंकरणी' इति पाठः 5 क. वीरादिगुटिकाह्वयं; ग. वीराधि-योगेध्रुवम् ।।

6 ग. चर्वंट 7 ग. (शिलाजीत व सार के बीच में) गुग्गुल 50 टां 1 टि:, र. यो. सा में इस ग्रन्थ में कथित 4 द्रव्य नहीं मिलते—तद्यथा—(1) अडूसा (2) छड (3) जीरा व (4) नागकेशर । वहीं क. ग्रन्थ में र. यो. सागरोक्त 9 द्रव्य नहीं हैं; (1) कुष्ठ, (2) घन (3) कुटज (4) वचा (5) शृङ्गी (6) ताप्या और (7) स्वर्ण, (8) त्रिसुगन्ध (9) शक्कर। इसी प्रकार यो.र.व.बृ.यो.त. में क. ग्रन्थ में कहे गये 7 'द्रव्य नहीं मिलते—(1) त्रिफला (2) सटी (3) अड्सा (4) छड (5) तुंबरु व (6) नागकेशर । यो. र. में अरुष्कर के स्थान पर पुष्कर है । वहीं इन दो ग्रंथों के 6 द्रव्य (1) शक्कर (2) मोथ (3) वच (4) जावत्री (5) कुडाछाल व (6) स्वर्णमाक्षिक ऐसे हैं जो क. ग्रंथ में नहीं मिलते । . ग. नि. के पाठ के 4 द्रव्य—

टां १०, सहित (मधु), निवात (शक्कर) (घृत-मूल में सर्पिर्माक्षिक है - शक्कर नहीं है) सु गोली बांधीजै । बहेडा प्रमाण गोली दूध स्यु अथवा मांस रस सु लीजै । पाठ माहे गुण कह्या छै तितरा रोग जाई ।।

(२२) [अथ शिवगुटिका[1]]

※(त्रीन्वारान्प्रथमं शिलाजतुजले भाव्यं भवेत् त्रैफले,
निःक्वाथे दशमूलजेऽथ तदनुच्छिन्नोद्भवाया रसे ।
+वाट्यालक्वथने पटोलसलिले यष्टीकषाये पुन-
र्गोमूत्रेऽ थपयस्यथापि च गवांमेषां कषाये ततः)※ ।।८१।।

द्राक्षाभीरु विदारिकाद्वयपृथक्[2]पर्णीस्थिरापौष्करैः
पाठा-कौटजकर्कटा[3]ख्यकटुकारास्नाम्बुदालम्बुषैः[4] ।
दन्तीचित्रकचव्यवारणकणावीराष्ट[5]वर्गौषधै-
[6]रब्द्रोणे चरणस्थितैः[6] पलमितैरेभिः पृथग्भावयेत् ।।८२।।

धात्रीमेषविषाणिकात्रिकटुकैरेभिः पृथक्पञ्चभि-
र्द्रव्यैश्च द्विपलोन्मितैरपि पलं चूर्णं[7] विदारीभवम्[7] ।
तालीसात्कुडवं [8]पलद्वयमितं प्रक्षिप्यते[9] सर्पिष[10]-
×स्तैलस्य द्विपलं पलाष्टकमथ[11] क्षौद्रा[12]द्भिषग्योजयेत् ।।८३।।

---

(1) वच, (2) कुडाछाल (3) अभ्रक व (4) स्वर्णमाक्षिक क. ग्रन्थ में नहीं मिलते किंतु क. ग्रंथोक्त 6 द्रव्य ग. नि. में नहीं कहे गये हैं; तद्यथा—(1) करंज (2) भिलावा (3) अडूसा (4) छड (5) जीरा और (6) नागकेशर । द्रव्यो के तोलों में भी अन्तर है । (सम्पादक)

1 क. सिव + टी. व्यालक्वाथेन ? ※-※ 'त्रीन्वारान्..........कषाये तत.' श्लोकोऽयं क. ग. ग्रन्थयोर्नोद्धृतः, परममु विना योगोऽयं सर्वथा ह्यपूर्णः स्यादतोऽत्रास्माभिरुद्धृतः । यो. र, बृ. यो. त., टो. च श्लोकोऽयं वर्तते । 2 क. पृथकपर्णी 3 क. कर्कटीर 4 क. दालंबुषैः 5 क. वर्गोषधै 6-6 क. ग. आद्रोणैश्चरण 7-7 चूर्णद्विदारी भवेत् 8 यो. र., बृ. यो. त., टो. च 'चतुष्पलमिह' 9 क. प्रक्षप्यते 10 क. सर्पिषा 11 क. मथा × ग. तोलस्या 12 ग. क्षौद्रं च संयोज्यते ।

तुल्यं पलैः❋ षोडशभिः सिताया-
[1]स्त्वक्क्षीरिका-पत्रक[2]केशरैश्च ।
+विल्वां[3]शकैस्त्व[4]क्त्रुटिसम्प्रयुक्तै-+
×रित्यक्षमात्रा गुटिका प्रकल्प्याः[5]× ॥८४॥

तासामेकतमां प्रयोज्य विधिवत्प्रातः पुमान्भोजनात्-
ǂप्राग्वा[6] मुद्गदलाम्बुजाङ्गलरसं शीतं शृतं वा जलम् ।ǂ
⊕माक्षीकं[8] मदिरामगुर्वंश[9]नभुक्पीत्वा पयो वा गवां-⊕
⊖प्राप्नोत्यङ्गमनङ्गवत्सुभगतां[10] सम्पन्न[11]-म.नन्दकृत् ॥८५॥⊖

शोफ[12]ग्रन्थ्यधिमन्थवेपथुवमीपाण्ड्वा[13]मयश्लीपद-
प्लीहार्शः प्रदरप्रमेहपिटिकामेहाश्मरी[14]शर्कराः ।
हृद्रोगार्बुदवृद्धिविद्रधि[15]यकृद्योन्यामयाः सानिला-
ऊरुस्तम्भभगन्दरं ज्वररुज[16]स्तूनीं प्रतूनीं तृषाम्[10] ॥८६॥

वातासृक्प्रबलं प्रवृद्धमुदरं कुष्ठं किलासं कृमीन्-
कासश्वासमुरः क्ष[18]तक्षयमसृक्पित्तं सपा[19]नात्ययम् ।

❋ ग. पलौ 1 क. सितायात्वक ग. सितायात्क्षीरिकापत्रकेसरौश्च 2 क. केसरश्च 3 क. बिल्वांसकै; टो. बिल्वाग्निकै 4 क. स्तुकत्रुटि +-+ "बिल्वांशकैः……… सम्प्रयुक्तै" पाठोऽयं ग. ग्रन्थे नोपलभ्यते । 5 क. प्रकल्पा ×-× 'रित्यक्षमात्रा………… प्रकल्प्याः' अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे "अक्षमान गुटिका प्रकल्पते" इति पाठः 6 क. प्रग्वापुद्गुलां 7 क. सीतं ǂ-ǂ 'प्राग्वा …………जलम्' अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे "पीत्वा मुट्व- ? पलावु जांगलरसं सिंधुश्रृतं वा जलम्" इति पाठः 8 ग., टो. च 'माध्वीका' 9 क. सन ⊕-⊕ 'माक्षीकं ………… गवां' अस्मिन्स्थाने गपुस्तके "माध्वीकं मदिरा व गुर्वंरान ? भक्पीत्वा ? पाययेत्" इति पाठः 10 क. भवतां 11 क. संपनमा ⊖-⊖ 'प्राप्नोत्यङ्ग ……………मानन्दकृत्' अस्मिन्स्थाने गपुस्तके "प्राजौ ? देहामनंगवत्सभगवत् ? संपन्नमानंदप्लुत" इति पाठः 12 ग. श्लेष्मग्रन्थिक मंद ?; क. शोफग्रन्थिवमंथ; यो. र. शोफग्रन्थिविमंथ 13 ग. पाण्ड्वामलक्ष्मीपदान् ? 14 क. मेहास्मरीशक्कंरी 15 क. यकृष्टो ससयान् सानिलान् 16 क. स्तनीत्ररूनी तृषा 17 ग. द्वयम् । 18 क. ज्वरश्च 19 क. समानात्ययम् ।

उन्मादं मदमप्यपस्मृति[1]मतिस्थौल्यं कृशत्वं तनोः[2]
सालस्यं च हलीमकं च शमयेन्मूत्रस्यकृच्छ्राणि च ।।८७।।

❀-झटिति जरया[3] सर्वश्वे तै[4]रकालजराकृतै-
र्वृत्त-[5]मलिकुलाकारैरेभिः शिरश्च शिरोरुहैः ।
[6]प्रसरति बलं व्यस्तातङ्कं[6] वपुश्च समुद्वहन्-
प्रभवति शतं स्त्रीणां गन्तुं[7] जनो जनवल्लभः[8] ।।८८।।

स्तिमितमतिर[9]प्यज्ञानान्धः सदस्यपटुः पुमा-
न्सकृदपि यया[10] ज्ञानोपेतः श्रुतिस्मृतिमान्भवेत् ।
व्रजति च यया युक्तो योगी शिवस्य समीपतां,
शिवगुटिकया कस्तामेतां[11] करोति न मानुषः[11]❀ ।।८९।।

टीकाः— (प्रथम शुद्ध शिलाजीत को तीन बार त्रिफला के जल से भावित करे। फिर दशमूल के क्वाथ, गुडूचीस्वरस, वाट्यालक्वाथ, पटोलपत्रस्वरस, यष्टीमधु का क्वाथ, गौमूत्र और गोदुग्ध से भावित करे।) (फिर)— द्राक्षा टां १०, सितावरि टां १०, विदारीकंद टां १०, क्षीरकन्द टां

---

1 क. स्मृतिस्थौल्यं 2 क. तनौ 3 क. जरयासवैः ? 4 क. खैतैर ? 5 क, कृतमलेकुला 6-6 क. वलिमदवलिव्यस्तातंक 7 क. गन्तु 8 क. वलभः 9 क. रपिजानांधः 10 क. व्या 11-11 क. मेनांकरोतिमानवः ❀ 'झटति जरया .... मानुषः' पाठोऽयं गपुस्तके नोपलभ्यते ।

श्लो. ८२ 1 अलम्बुषा लज्जालूभेद को भी कहते हैं 'अलम्बुषा खरत्वञ्च.........' भा.प्र. 2 'वीरा=मूसली', उशीर को तो वीरण कहा गया है टीकाकार ने इन्हें क्रमशः मुण्डी और उशीर कहा हैं । 3 अष्टवर्ग के प्रतिनिधि द्रव्य भा. प्र. में इस प्रकार कहे गये हैं:—

'मेदाजीवककाकोलीऋद्धिद्वन्द्वेऽपि चासति ।
वरी-विदार्यश्वगन्धावाराहींश्च क्रमात् क्षिपेत् ।।' ह. व. १४४

किंतु आजकल मेदादि के स्थान पर क्रमात् (1) बहमनश्वेत या गिलोय, 2 बहमनसुर्ख या लंबासालब या वंशलोचन, (3) सालममिश्री, (4) शकाकुलमिश्री या प्रसारिणी, कालीमूसली (6) श्वैतमूसली, (7) चिडियाकंद या बला या उटंगण के बीज और (8) सालब पंजा या महाबला या बीज़बंध काम में लेते हैं। (सम्पादक)

❀ ख. पुस्तिका में अष्टवर्ग के दो द्रव्यों 'जीवक' व 'ऋषभक' के स्थान पर ''माषपर्णी'' और ''मुदगपर्णी'' कहे गये हैं ।

१०, (वाराहीकंद) पीठवनी टां १०, शालिवनी टां १०, पुहकरमूल टां १०, पाठ टां १०, ईन्द्रजव टां १०, भोथ टां १०, काकडासींगी टां १०, गजपीपली टां १०, (कटुका) रांठ टां १०, मोथ टां १०, मुंडी टां १०, दांतणी टां १०, चित्रक टां १०, (चव्य टां १०), गजपीपली टां १०, उसीर[2] टां १०, जीवक टां १०, रिषभक टां १०, कांकोली टां १०, खीरकांकोली टां १०, मेदा टां १०, महामेदा टां १०, रिधि टां १०, वृद्धि टां १०, ए अष्टवर्ग रा उषध कहीजै सु कोस सहस्र एकर फेर इ मिलै नहीं तिवार इमही वैद्ये साटा (प्रतिनिधि) लिख्या छै सो घातीजै। तिण-रा नाम कहीजै छै। जीवक रिषभक री ठोड आसगंधि काकोली री ठोड बांझकंकोडी, भावै कुटक, मेद री ठोड मोथ, महामेद री ठोड गुडूसी (ची) रिधि री ठोड गिलांइ वृधि री ठोड जेठीमधु, खीरकाकोली री ठोड मुगदपर्णी ए अष्टवर्ग रा बदला मोटा वैद्य कह्याछै तालीसपत्र ×टां २०, तेल टाँ २०, सहित टां ८० निवात टां १२० (१६०), वंशलोचन टां १०, पत्रज टां १०. नागकेशरटां १०-×, गोली टां २।। (मूंग की दाल का यूष) भावै (चाहे) जांगलमांस रा रस सुं भावै मद (मद्य) सुं भावे उन्हा पाणी सूं भावै सहित सूं भावै वगनी ?सूं भावै दूध सूं गोली लीजै। जितरा पाठ माहै कह्या छै सो सर्व रोग जाई।।

---

1 पूर्वोक्त द्राक्षा से अष्टवर्ग तक के द्रव्यों को मूल पाठानुसार पृथक्-पृथक् १-१ पल (टां १० टीकाकार के मतानुसार) १ द्रोण (१६ सेर) जल में क्वार्थविधि से पाक कर चतुर्थांश (४ सेर) रहने यर उसी क्वाथ में उपर्युक्त भावित, शिलाजीत को भावनाएं दें। पश्चात् आंवला, मेंढासींगी, सोंठ, पीपर, मिरच इन पांचों के प्रत्येक द्रव्य २-२ पल लेकर चूर्ण करे और विदारीकंद का चूर्ण १ पल, तालीशपत्र चूर्ण एक कुडव (१६ तोला) गोघृत ४ पल, तिल तैल दो पल, मधु ८ पल लेकर शिलाजीत (पूर्वोक्त) के साथ मर्दन करे। फिर शक्कर १६ पल, वंशलोचन, तेज पात, नागकेशर, इलायची का चूर्ण, १-१ बिल्व = ४-४ तोला मिला कर वटी बनावें। इन सबके स्थान पर टीकाकार ने केवलः—तालीसपत्र टां २०, (मूल के अनुसार १ कुडव = १६ तोला होगा) तेल २० टां, मधु टां ८०, निवात (शक्कर) टां १२० (मूल पाठ में १६ पल = १६० टां है।) वंशलोचन टां १०, पत्रज टां १०, व नागकेशर टां १० ही लिखे हैं जो शुद्ध नहीं है। वटी बनाने की विधि से २ अक्ष = १ तोला (टां २।।) की गोली बनावें व प्रातः भोजन के पूर्व सेवन करे व मूंग की दाल का जूस, अथवा जांगलजीवों का मांस रस अथवा औटा कर शीतल किया जल अथवा मधु वा मदिरा को पीवै। आम (कच्चे)

(२३) [अथ वटप्र[1]रोहादिटिका]

वटप्ररोहं मधुकुष्ठ[2]मुत्पलं सलाजचूर्णं गुटिकां प्रकल्पयेत् ।
⁂मुखस्थिता प्रातरयं निहन्ति तृष्णां प्रवृद्धामपि सत्वरं ध्रुवम् ।।६०।।⁂

टीका:— वड़ रा छेहडला पान, सहित (मधु), कूठ, कंवलकाकड़ी, चावलां री खीली वरावरि औषध सहित सौं गोली बांधणी, मुख में राखी तृषां गमावै ।

व गुरुपदार्थों का सेवन न करे अथवा गौ का दूध पीवै ।। ×-× ख. तालीसपत्र टां १०, (पाठ में ४ पल), घी व तैल २०-२० टंक, ख. मधु टं २० मिश्री टं ४३०, वंशलोचन टं ५३, पत्रज टं ५३, नागकेसरि टं ५३ । इस पुस्तक के पाठ में भी 'आंवला, मेढासिंगी, त्रिकटु, २-२ पल व बिदारीकंद १ पल, नहीं कहे गये हैं, ये द्रव्य मूल पाठ में हैं ।'

1 क. वटप्रमोहादि 2 वृ. यो. त. (ख) मधुनीलमुत्पलं ⁂-⁂ 'मुखस्थिता ...... ध्रुवम्' अस्मिन्स्थाने ग. नि., वृ. वैं., यो. र. (योगशतात्) च "सुसंहिता सा वदने च धारिता तृष्णां सुवृद्धामपि हन्ति सज्वराम्" । (वृ. यो. त. 'हन्त्यशेषत:'; ग. नि 'सत्वरम्' । इति पाठः)

पाठान्तरम्—यो. र. (राजमार्तण्डात्)

'नीलाम्बुजाब्दमधुलाजवटावरोहैः
श्लक्ष्णीकृतैर्विरचिता गुटिका मुखस्था ।
तृष्णां निवारयति तत्क्षणमेव तीव्रां
मृत्योः स्पृहामिव यतेः परमार्थचिन्ता ।।'

अब्द = नागरमोथा,

वैद्यजीवने:—'रुग्लाजाऽब्ज-वटप्ररोहमधुकैर्मध्वन्वितैः कल्पिता ।
उग्रामाशु तृषां भृशं प्रशमयेदास्यान्तरस्था वटी ।।'

मैं. र., 'वटशुङ्गामयक्षौद्रलाजनीलोत्पलैर्दृढा ।
चक्र. च गुडिका वदनन्यस्ता क्षिप्रं तृष्णामुदस्यति ।।"

यो. र. (चि. सारात्)
'वटप्ररोहयष्ट्याह्वकणामधुकृता वटी ।
मुखस्था चिरकालोत्थां तृष्णां हन्यात्सुदुस्तराम् ।।'

(३४) [विडङ्गादिवटी[1]]

विडङ्गभल्लातकचित्रकामृता:[2] [3]सनागरास्तुल्यगुडेन सर्पिषा[3] ।
[4]लिहन्ति ये मन्दहुताशना[5] नरा भवन्ति ते वाड[6]वतुल्यवह्नय: ।।६१।।

टीका:— विडंग, भिलावां, चित्रक, गिलोई, सूंठि मात्रा समान गोली गुल (गुड) घृत सूं वांधणी टां २।।, वडवानल सरीखी अग्नि वीति थाई ।।

(२५) [अथनिरासगुटिका[7]]

नागवल्ली[8]दलद्रावै: सप्ताहं शु[9]द्धसूतकम् ।
[10]संशोष्य क्षालये[11]दम्लैश्चतुर्निष्कप्रमाणत: ।।६२।।

विषकन्द[12]गतं कृत्वा[12] विषेणैवावरोधयेत् ।
तत: शूकरमांसस्य गर्भे क्षिप्त्वानुशोषयेत् ।।६३।।

सन्ध्याकाले बलिं दत्त्वा[13] मद्यकुक्कुटसंयुतम् ।
ततश्चुल्ल्यां[14] लोहपात्रे[14] तैले[15] धत्तूरसम्भवे[15] ।।६४।।

क्षिप्त्वा वंशगले[16] पाच्यं तद्रसं मांसपिण्डगम्[16] ।
सन्ध्यामारभ्य मन्दाग्नौ यावत्सूर्योदयं[17] भवेत् ।।६५।।

---

1 क. विडंगादिगोली; यो. र. चक्र च 'विडङ्गावलेह' इति नाम स्थापित: 2 क. मृता; ग. नि., यो. र. च 'भया' 3-3 टो. 'सहरीतकी अजीर्णहरो योगो भक्षित:' इति पाठ: 4 यो. र. अश्नन्ति; वृ. वै. निहन्ति 5 क. हुताशनश्च 6 क. खांडवतुल्यवह्निय:; वृ. वै वालकतुल्य वह्नय:; टो. वाडवाग्नितुल्यवह्नय: !

7 वृ. यो. त. वीर्यरोधिनी गुटिका इति नाम 8 क. नागवली 9 क. शुध, ख. स्तद्ध 10 वृ. यो. त. मर्दयेत् 11 क. ख. दम्ले 12 ख. विषकुंदगतं, क. विषंनुदंगतं सूतं ग. विषतुदगतं 13 क. दद्यान् 14 क. मद्यकुकुट, ख. मधुकुर्कट, 14-14. क. शूल्याम-यपात्रे, ग. श्वल्वमये पात्रे 15-15 क. 'तैल धतूर ··· ··· ···, वृ. यो. त. तैले धत्तूरजे पचेत् । 16 क. वंसनानलेपाचयादशयां सपिण्डक:; ख, वंश्यनले पाच्यं ········· ; ग. वंशनालेन पाचयेत् 17 क. सूर्योदये ।

हठा[18]ज्जागरणं कुर्यादन्यथा नैव सिद्ध्यति ।
प्रात[19]रुत्थाय गुटिकां [20]क्षीरभाण्डे[21] विनिक्षिपेत् ।।६६।।

❋-तत्क्षीरं क्षापयेच्छीघ्रं जायते प्रत्ययो महान् ।❋
रतिकाले मुखे[22] धार्या गुटिका वीर्यरोधिनी[23] ।।६७।।

क्षीरं पीत्वा[24] रमेत्कान्तां कामातुरबलान्वित:[25] ।
× मुखस्था[26] गुटिका यावत् ताव[26]द्वीर्यं स्थिरं भवेत् ।।४८।। ×

टीका:— शुद्धपारौ जिणनै संस्कार सगला ही कीधा हुवै, सौ पारौ टा ४ पांन रा रस मांहै दिन ७ मर्दीनै पछै नींबूवां रा रस सुं पारो पखली (धोके) पछै वछनाग री चोखी गांठी कोरि ने ((गांठ में खड्डा कर) तिण मांहै पारो घातीजै । गांठि महिलो चूर्ण गांठि रे ई मुहडइ दीजै पछै वेडि सूवर रौ मांस कोरिनइ तिण मांहि घातीजै । मांस सूकर तिवारइ वांस री नली मांहि घातीजै । संध्याकाल रै विषै पारा आगलि कूकडी अनै मद री बली दीजइ । पछैइ धतूरा रो तेलि लोह रा कडाहा मांहि घातीजै नै दिन रा आथमण हुंती मंदाग्नि देवतां-देवतां सूर्य रा उदा लगि (तक) दीजै । मांस पिंड रहे तो निरास-गोटको वधई । पछ दूध सेर १० मांहै गोटकौ घातीजै । दूध नै सोस जाई, मद माँहै मूकीजै तो मद सोस जाई (मद में डालने की बात मूल पाठ में नहीं है ।) पछै तेलि सोखी जाई (तेल घी की वात भी मूल पाठ में नहीं है—टीकाकार की ही कल्पना है) तिवारइ सिधि होइ जाणीजै । गोटको सगलो काम घातीजै (रतिकाल में इस गुटिका को मुंह में रखने पर्यन्त स्तम्भन होता है ।) इति निरास गोटकौ ।

---

18 क. ख. संध्या जागरणं 19 क. प्रातरुछाय, ग. प्रातरुत्थाय ततः 20 क. क्षीरं 21 ग. मध्ये ।

❋-❋ 'तत्क्षीरं ……… महान्', अस्मिन्स्थाने क. पुस्तके "तत्क्षीरं क्षापयेत् शीघ्रं-जयते ………" इति पाठ:; खं. 'तक्षरं क्षीयते शीघ्रं जप्रतियो महान्' । इति पाठ: पाठोऽयं ग. ग्रन्थे नोपलभ्यते । 22 क. मुख्ये 23 क. रोधनी 24 क. पित्वा 25 क. मुखस्प 26 क. तावधीयं ×-× 'मुखस्था……… स्थिरं भवेत्', अस्मिन्स्थाने त्रृ. यो. त.—"मुखस्थां धारयेद्दन्तैस्तदा वीर्यं न मुञ्चते ।" इति पाठ: ।

(२६) [अथ विन्दुनाथकृत[1] फिरंगबाव री गोली]

अनुभूत

पारद टां २ कुंवाररस सौ मर्दीजै[2]। नि. कं[3] (नि: कंचुक ?) कंचन होइ। तठा पाछै पान थोन (नग) १६, अतिपाका मर्द्दि पारा[4] मांही भेलीजै, आकलकरो टां २।।, जाइफल टां २।।, लवंग टां २।।, सुंठि टां २।।, हरड[5] री मींजी टां २।।, अतरा उसा पारा मांहि भेलि वांटि पछै गुल पुराणौ टां १२ भेलि गोली १४ कीजै। साता (परहेज ?) रखवाडीजै। निर्वाति थान (स्थान) की राखीजइ। दालि भाति अलूणा जीमाडीजइ। फिरंग बाव जाई। लिखणहार अनुभूत करि लिख्यउ छै।

अथ फिरंगबाव री धूणी

हींगलू[6] टां २।।, वाइविडंग टां २।।, मिरच टां २।।, विरहाली[7] (सौंफ) टां २।।, जीरो टां २।।, छुहारी टां २।।, पान ६—केला[8] रा, अरड[9] (एरण्ड) वास्यौ (वासा ?) रे कोयकत्र ? (कोयला ?) धूणी दीजै दिन ६. भलो होइ[9]।।

अथ बाव री फांकी

पारौ टां ३, जीरो टां[10] २।, हलद[11] टां १२, खुरसाणी अजमोद टां १२।।, बकाइ[12] (ण) टां १२, भिलामा (भल्लातक) टां १२।।, अकलकरो टां १२, नींबू[13] टां १२।। ?, गुल पुराणो टां १२।।, एकत्र करि फांकी दिन ७[14] टां ? १५ दिन प्रति लीजै, निर्वातथानकि रहै, पथ्य[15] दूध भाति[15] खवाडीजै।

---

1 क. विंदकनाथ 2 ग. दिन एक 3 ग. निकंचुकी 4 ग. मिडि मेलीजे ? ता पाछे 5 ग. हरडे री बकली 6 ग. शिंगरफ 7 ग. × (बिराली नहीं कही गई है) 8 × (केले के पान नहीं कहे गये हैं) 9-9 ग. पान. 6 अरंड अरडूसा के कुइला एकत्र करि धूणी दीजै। दिन 6, आरोग्य होई।।

10 ग. जीरो टां १२।।, 11 ग. हरडै टा १२।।, 12 ग. बकाइन री छाल टां १२।।, 13 ग. नीम री छाल टां १२।।, 14 ग. फांकी २।। टां 15-15 ग. अनुपान गोदुग्धनु

अथ बाव री करकरी[1] मल्हिम

नीलोथुथौ टां ३, [2]कली चूनौं टां ३, जीरौ टां ३, जांगी[3]हरडै टां ३ उषध वांटि नै सरसव[4] रा तेलि सु पीसिक कल्क कीजै। लालां (लारें) मेल्है इती वारइ हूबौ जाणीजै। ति वारै उतार राखीजै, बाव रा सर्व क्षत जाइ। फोडा चंगा होइ।।

अथ धूणी[5] बाव री

अकलकरौ[6] टां २।।, राल[7] टां २।।, एरण्ड रा पान टां २।।, पारसपीपलि री छालि टां २।।, एकत्र करि चूर्ण कीजै। तिण री पुडी ७ करीजै, नित्यप्रति धुणी दीजै, भलौ थाइ।।*

अथ पच-बाव[8] रा उपरि लावण रा उसा

थुथो टां ६, खयरसार[9] टां ६, सोपारी रो खार टां ६, आंवला रो खार टां ६, पानां रो खार टां ६, कली चूनो टाँ ६, उसा एकंत्र करि गाय रा माखण सु घसी जिवारइ लालां छाडइ तिवारइ पचा उपरि लावीजई दिन ३ तथा ४। बाव रा पच साजा थाइ।।

अथ बाव रा मल्हिम

पारौ टां २।।, सुरसाणी बेरजो टां ३, राल[10] टाँ ३, साख[11]जराहति (संगजर्राति) टां ३, ऊंबर[12] (उदुम्बर) री छालि टां ३, कपीलो[13] टां ३, गाइ[14] रो घृत टां १५, ए उसा सहि (सारे) जूदा जूदा खरलीजै, पारौ गंधक

---

1 ग. कर्ककी 2 ग. काथो टां ३ व कली चूनो टां ३, 3. हरड जंगली 4 ग. करियेरा 5 ग. अथ दूजी धूवणी 6 ग. अकलकरो टां २, 7 ग. खूजे ? के फूल टां २।।
* 'भलो थाई' के आगे ग. में 'निश्चो संदेह जाई।' यह पाठ अधिक है।

8 ग. अथ मलम बाइ रो 9 ग. खोरू 10 ग. सागपजरा ? (सर्जरस ?) 11 ग. सागपज 12 ग. उमरि की छालि टां ६, 13 ग. कामेलो 14 ग. गोघृत टां २५।

भेला करि बांटीजै, काजलो हुवै तठा पछै तुलछी रा पान पाँच-सात घातीजै । बले (फिर) ही खरलीजै । ईण प्रकार पारो खरलीजै । तिण मांही घृति खरलि खरलि नै जोईजै (देखें) तिवारइ तार छूटइ तिवारइ मलिम हुवो जाणीजै । पछ बाव री करक हुवै तवइ चोपडीजे दिन ५ तथा ७ । रूडौ थाय ।

बाव[1] रो उबटणौ

पारौ[2], मस्तङ्गीगूंद टां ३, आकलकरौ टां ३, मिरच टां ३, सूंठि टां ३, कूठ टां ३, खुरसाणी अजमोद टां ३, बायबिडंग टां ३, थूथो टां ३, काकडा-सींगी टां ३, सोहगी[3] टां ३, गंधक आंमलासारौ टां ३, कपीलौ टा ३, त्रिफला[4] टां ३, खयरसार[5] टां ३, गाई री घृत[6] सेर ।।, उषध एकंत्र करि नै वांटि छाणि घृत सौं भेलि गाढो[7] वांटि वांटि उबटणो कीजै । करक जाइ ।।

---

1 ग. अथ उबटनो करक रौ 2 ग. पारो टां ३, 3 ख. ग. सुहागो 4 ग. त्रिफला टां ६ 5 ग. खोर, ख. खैर 6 ग. घृत टां ५०, 7 ख. लगाइजे ।।

केवल ग. प्रति मे उपलब्ध अतिरिक्त-योग

(1) 'अथ दक्षिणी धुवनी वाइचितौ करक पीर उपरि

पारो टाँ १, गंधक टं १, इगरु (हिङ्गुल ?) टं १, हरताल टं १, मनसिल टं १, वंगुमारि(बङ्गभस्म) टं १, सीसै मारो (नाग भस्म) टं १, तामौ मारौ टं १, कांसै (कांस्य भस्म) टं १, आकलकरहा टं १, केसूल के फूल टं १, फिटकड़ीटंक १, अजवानि टं १, अजमोदु टं १, सितावरी ? टं १, अछाछारै ? रो खार टं. १०, (अपामार्ग क्षार ?) तज टं १, पत्रज टं १, लौंग टं १, जाइपत्री टं १, सुहीजना का बीज टं १, लोगडी (लोकी ?) बीज टं १, सिरसबीज टं १, ससकैलौडिटी ? टां १०, समस्त एकत्र करि पिंडु कीजै. बांटि छाणि पाणी सौं । तापाछै बहेरे के ठुन ऊभी तरफ लारि पिंड मेलो मुख महि बहेरे की ढींडा २ सुदै काठ को ? (बहेड़े की लकड़ी में गढ़ढा कर उसमें औषधि का पिण्ड रख कर उस गढ़ढे को बेहड़े की ही लकड़ी के डांट से बंद करे ? ।) कपरौटी ७ कुम्हार के हाथ की माटी की प्रलेप दो, सूखै ग्रजपुट आंच प्रहर ८ । स्वांग शीतल भये तो लेइ ताकी पुरिया मासै १ प्रमाण करौ । घी से मिश्रीत करि अरंड को कुइला व खैर का कुइला थी धुवनी देइ अंग तेल लगाई सर्वांग देई । दिन १४ । पथ्य थूली, गाइ को दूध, खारौ खाटो बचवावो । रुवार नये वइ फिरौ सबही ?

इति वाइ री धुवणी।

वाताऽरिगन्ध(म्)

1. 'विषं ससूतं नवसारकञ्च मयूरग्रीवां करभं हयाली।
सर्पोविलासं दशवर्षयुक्तं ? वाताऽरिगन्धं मुनयो वदन्ति ।।' ?

टि. अस्य श्लोकस्य पाठः ग. पुस्तके यथालिखितस्तथैवात्र दर्शितः ।

टीका:— विसु, पारौ, नवसादर, थुथौ, अकरकरहा हिरंबी, मिरच ?, चन्दन, सोरा? समभाग, धतूरे के रस से गोली बांधीजै ? वाइ री करक जाई ।

2. अथ उवटनौ दूजौ

बेरजा टं 18, भिलावा टं 18, रार टं 18, काथू टं 18 पारो टं 3, रुहीरु ?टं 3, रोरी टं 3, अकलकरहा टं 3, तूथ टं 3, गाइ कौ घी, करिवे की विधिः—रार, बेरजो, काथु, तीनूं चूर्ण करै छानि वांटि राखै । तापाछै भिलावा री मुहडी तोड राखो वांटि चूर्ण करौ । पारो भेलि रुहिरु ? भेलो मर्दीजै । जब पारौ मूच्छि जाय ता पाछै थूथो, रोरी, अकलकरहो भेलि मर्दीजै । चूर्ण एकत्रित करि घी में सानीजै । अंग मूड (मुंह) तै उबटनौ करौ । मर्द नै धाम बैठो । अथ जहां पीर हो तहां सुद गैरु मर्दीजै । पीर जाई । पथ्य पुराणो चावल, गेंहूं, गाय घी व दूध, अरौनी (नमकरहित) रोटी खायनी । नीको होय दिन 7 व 9 करौ ।

इति उवटनौ

4. ❀-'कर्चिका ? पलदश ज्ञेयं अजा मूत्रे चतुर्गुणं पचेत्' ।
त्रिहं पाचं पुनः सूष्य मूर्च्छितं पारदं पलम् ।।
अथवा पारदं गंधं कौमारीरसकज्वली ।
त्रिकटु पलं पलं देयं पलं देयं कट्फलम् ।।
हयावलद्विपलं योज्यं द्विपलं करीरमूलकम् ।
सर्वचूर्णं कृत्वा भृंगरारसभावितम् ।।
भाव्यं यामचत्वारि चनमात्रं वटीं कृतम् ।
यथाकाले वटी खादेत् यथाबलं ।।
वातरोगेषु सर्वेषु कफे सन्निपातिके ।
गूटवाते तथा मूके मतिर्यस्य च विह्वला ।।'❀

❀-❀ पद्यान्येतानि केवलं ग. पुस्तक एव दृश्यन्ते-नान्यत्र । अस्माभिरविकलमत्रोद्धृतानि ।

अथ बृहत् सौभाग्यशुण्ठी[1]

प्रस्थत्रयं शुद्ध[2]महौषध[3]स्य :
तत् पाचयेद्‌गव्यघृते समे च ।

टीका:— कुचीला (मूल पाठ में कचिका) टंक 100, अजामूत्र चौगणो दौ । पचवौ दिन 3, ता पाछै सुखावौ । रसकपूर या रससिंदूर पारौ टं 1; जौ रसकपूर या रससिंदूर न होइ तो पारौ टं.10 गंधक टं 10, गुवरी रस (घींग्वार ?) से कजरी कीजै घरी 4 । ता पाछै सौठ टंक 10, मिरच टं 10, (पीपर टं 10) काइफर टं 10, आंवली टं 10, ? (मूल में हयाल ? टं 20 है), करीर री जड़ वल्कल टं 20, समस्त चूर्ण करि धमरे ? (भांगरा मूल पाठ में है), के रस में खलीजै दिन 2; वटी चना मात्र बाँधीजै । वटी 1 दिन 7 वा 14 ? वातु व्याधि वाला कुं तनु नु वृधु विचार देइ । वाइ प्रकोपु, सन्निपात, संधिकु, सर्वांग, पारा ? (एकाङ्ग ?) गृध्रसी, गठिया, चीतौ री पीर, फिरङ्गी वाइ कखूती रकु ? जाइ ॥

(ये योग ख. प्रति में नहीं हैं)

केवल ख. प्रति में उपलब्ध अतिरिक्त योग

(कृ.मि के लिये योग)

1. अनार की जड़ सेर 1, पाणी घड़ा 1, घालि ओटाइजे । जब सेर 1 रहे तब उतारीजै । प्यावणां, किरम जा.हे ।

(पथरी के लिये)

2. बीछी (वृश्चिक) तीन काले, सिरावा मांहि घालि संपुट दे करि आंच देणी । जलाय करि गुड सेति गोली 3 बांधणी, दिन 3 खुवाजै । पथरी गले सही ।

(फिरङ्ग रोग पर)

आंवलासार गंधक टां 5, बकरा की चर्बी सेर 1, चर्बी मांहै गंधक घालि पलेटीजै । गोली करिजै । कुल्हडी में घालीजै, हेठी छेक दीजै । आंच दे के चिकाइ लेणा । अंगि लगावणा, फिरङ्ग जाइ ॥

1 क. सुंठि, ख. सुंठी 2 क. ख. सुध 3 क. महौषधस्या ।

चतु[1]र्गु ुणं चैव सिता सुदुग्धं[1],
[2]संशुद्धताम्रायसजे कटाहे[2] ।।९९।।

प्रत्येकजाती[3]फलत्रैफले चा-
जाजीद्वयं[4] धान्यशताह्व[5]के च ।
एलोपकुल्याघन[6]वालकं च,
द्राक्षाविदारीघ[7]नसारकञ्च ।।१००।।

खर्जू रिका चैव पल[8]प्रमाणं,
पलाष्टकं शीर्ष[9]फलं विदध्यात् ।
तत्पा[10]दमानेन शिलायसौच[10],
द्विपादयुक्तं मिसिचारुबीजम् ।।१०१।।

[11]त्रिवृत्पलाष्टौ ? शुभ[12]मेक-पिण्डं,
[13]गन्धाढ्यमाधुर्यंविमिश्रितञ्च ।
[14]शिवाशिवप्रीतिकरी च शुण्ठी[14],
[15]वेधोमुखोक्ता मुनिनारदाय[15] ।।१०२।।

[16]भुक्ता च शुण्ठी कुरुते नरस्य[16],
स्थिरं[17] बलं कान्तियुतं शरीरम्[18] ।
सौभा[19]ग्यमेधास्मृतिमिष्टवाक्यं,
[20]सौभाग्य सौन्दर्यमृदुञ्च गात्रम्[20] ।।१०३।।

1-1 क. चतुर्गुणं क्षीरसमं च खंडं; ख. चतुर्गुणं घृतं च खण्डं 2-2 क. सुधताम्रायसजे कग्हे, ख. संशुधताम्रायसजे कटाहे 3 ख. जाजीफलत्रयेन 4 क. द्वये 5 ख. धान्यसिताहुकेन 6-7 ख. धन 8 क. पलार्द्धप्रमाणं ख. पलप्रमाणं 9 क. सीर्षफलं, ख. शीर्षपलं 10 क. पादांस दताश्मजदायसेन, ख. पादांसदत्तास्मजिदायसोनां 11 क. त्रिविलाष्टौ 12 ख. सुभमेकपिंडी 13 ख. गन्धाढ्या 14-14 क. शम्भोरमाप्रीतिकरी च पिंडी 15-15 क. ब्रह्मामुखे शृण्वति नारदेन, ख. ब्रह्मामुखे सावीति नारसय ।

16-16 क. शंभुक्तं भक्षित कालकायां, ख. शंभक्तं भक्षति कालिकायां 17 क. स्थिरी 18 क. ख. सरीरं 19 ख. सौभागि 20-20 ख. सौभाग्य सौंदर्य विमृस्य गात्रं ।

[1]काठिन्यभाग्योनिकुचप्रदेशो,[1]
[2]वातानशीतिः कफविंशतिश्च[2]।

[3]दशाधिकात्रिंशसुपित्तजाता[3]-
[4]श्चाऽष्टौ ज्वराः मिश्रितयद्विकाराः[4] ।।१०४।।

टीकाः— सूंठि टाँ ७६८, गाइ रो घृति टां ७६८, गाइ रो दुध टां ३०७२, चीणी खांड टां ३०७२, जाइफल टां १६, त्रिफला टां ४८, कालौ-जीरौ [दोनों जीरे] टां १६, धाणा टां १६, सोवा टां १६, इलायची टां १६, पीपली टां १६, मोथ टां १६, वालो टां १६ द्राष टां १६, बिदारीकंद टां १६, कपूर टां १६, छुहारा टां १६, गिरी टां १२८, सिलाजीत सत टां ३२, सार मार्‍यो टां ३२, चारली टां ६४, निशोत टां १२८, ए उषध एकठा करि वांटि छाणि पछै घृत मांहि पचावींजे ? पछै दूध मांहि पचावीजै ? पछ ईं खाड री पाति करि नै उषध घातीजै । टां २।। प्रमाण गोली कीजै । गोली करतां किस्तूरिकादि घातीजै । मतिवंत थाइ । चेत घणु आवै । मीठा वचन बोलै । शरीर को दरद जाइ । सुंदर थाइ । स्त्री की योनि कठनि थाय । वातरोग २० (८०), पितरोग २४ (४०) (कफ के २० रोग) ज्वर द्वन्द्वज (द्वन्द्वजादि) ८, सनिपात १३ जाय ।

1-1 क. काठिन्य योनिस्तनर्विबदेशे, ख. कठिनयोन्यस्तनर्विवदेश । 2-2 क. असीति-वातानि कफरोगविंसति, ख. मशीतिवातां कफरोगविंशति 3-3 चत्वारिंसत् पितभवाश्च ये यु, ख. चत्वारिभीसातुपितवीभिश्च ये स्यु । 4-4 ख. क. रष्टौज्वराः मिश्रित ये विकाराः ।

टि. पद्यान्येतानि क्वचिदप्यन्यग्रन्थेषु नैत्रोपलभ्यन्ते; अतोऽस्माभिर्यथाबुद्धिसंशोध्यात्र प्रदर्शितानि ।

अथ लघुसौभाग्यशुण्ठीपाक:[1]❀

नागरस्य [2]पलान्यष्टौ घृतस्य [3]पलविंशतिम् ।
×[4]क्षीरं द्विप्रस्थसंयुक्त[4] [5]खण्डस्यार्द्धं तुलां पचेत् ×[5]।।१०५।।

+[6]व्योषं त्रिजातकञ्चैव[6] प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।
[7]निदध्याच्चूर्णितं तत्र खादेदग्निबलं प्रति+[8] ।।१०६।।

आमवातप्रशमनं[9] [10]बलपुष्टिविवर्धनम्[10] ।
□[11]वर्ण्यमायुष्यमोजस्यं वलीपलितनाशनाम् ।।१०७।।

टीका:— सुंठि टां १२८, घृतगाइ रो टां ३२०, गाइ रो दूध टां ५१२, खांड टां ८००, सुंठि टां १० (१६), मिरच टां १६, पीपलि टाँ १६, इलायची टां १६, तज टाँ १३, पत्रज टां १६, ए उषध पहिली सूंठी कीधी तिण विधि कीजै । टां २।। खाईजै । आमवात जाइ, बलपुष्ट बधइ, वर्ण भलो थाइ, आयु वधइ, पली जाइ, देही की शूल जाइ ।।

---

1 क. सुंठि ❀ योगोऽयं भा. प्र. 'खण्डशुण्ठी', बृ. पा. 'शुण्ठी खण्ड:', बृ. यो. त. 'शुण्ठी खण्डपाक:' इति नामभि: आमवाताधिकारे प्रसिद्ध:; वृ. वै. योगोऽयं किञ्चित्परिवर्द्धितरूपेण लभ्यते । अयमेव योग:, किञ्चित्परिवर्द्धित: सूतिकारोगाधिकारे यो. र. 'तृतीय-सौभाग्यशुण्ठी'; यो. त. "सौभाग्यशुण्ठी", बृ. यो, त. 'मध्यमसौभाग्यशुण्ठ्यवलेह:' इति नाम्ना लभ्यते । 2 क. वलान्यष्टौ 3 क. फलविंसति; बृ. यो. त. (सू. रो.) च चतुष्पलं, बृ. यो. त. (ग. ग्रन्थे) 'घृतस्य पलविंशतिम्', बृ. पा. 'कुडवं तथा' 4-4 बृ. वै. 'क्षारं' (द्विप्रस्थक्षीरसंयुक्त" ?), बृ. यो. त., 'क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तां, बृ. पा. 'क्षीराढकसमायुक्तं'; बृ. यो. त., यो. त. च (सू. रो.), यो. र. (सू. रो.) 'क्षीराढकेन संयुक्तं 5-5 भा. प्र. 'खण्डस्यार्द्धं शतं पचेत्', बृ. यो. त. 'खण्डस्यार्धतुलां न्यसेत्', बृ. पा. खण्डस्यार्द्धं शतं पलम्'; वृ. वै. 'खण्डस्यार्द्धं शतं न्यसेत्' 6-6 भा. प्र., बृ. पा. बृ. यो. त. च'व्योषत्रिजातकद्रव्यात्', क. व्योषं………… 7. बृ. पा. 'निक्षिपेत्', क. निदद्या 8 बृ.पा. 'यथा' क. प्रदं ×-× "क्षीरं …… पचेत्" अस्मात् परं यो. र. बृ. यो. त. च (सू. रो.)

'शताह्वाजीरकव्योषत्रिसुगन्धियवानिका: ।
कारवी-मिशिचव्याग्निमुस्तानां च पलं पलम्' । इति पाठ:

× अस्मिन्स्थाने यो. त.—

"शताह्वाजीरकव्योषत्रिसुगन्धियवानिका: ।
ग्रन्थिकं कृष्णजीरं च मधुकं च विडङ्गकम् ।।
लवङ्गं धान्यकं मांसी तालीशं नागकेशरम् ।
कारवीमिसिचव्याग्निमुस्तानां च पलं पलम्" इत्यधिक: पाठ:

अस्याग्रे वृ. यो. त.—

'शुद्धाभ्रकाय संयोज्यं त्रिपलं च पृथक् पृथक् ।
स्वर्णं तारं ततो योज्यं यथा चाग्निबलं भवेत् ।। इत्यधिक पाठः

(कारवीमिशि.......... पलंपलम्) अस्मिन्स्थाने वृ. वै.—

"कारवीवंशमुस्तञ्च नागाह्वञ्च पलं पलम् ।
त्रिजातकं पचेदम्बुपलांशमुपकल्पयेत् ।।
बल्यमायुष्करञ्चैव वलीपलितनाशनम् ।" इति पाठ:

अस्मात्परं—लेहीभूतमिदं शुद्धघृतभाण्डे निधाययेत् ।
तद्यथाग्निबलं खादेत् सूतिका तु विशेषत: ।।
बल्यं वर्ण्यं तथा ऽऽयुष्यं वलीपलितनाशम् ।
वयस: स्थापनं हृद्यं मन्दाग्नेर्दीपनं परम् ।।
आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ।
मक्कलशूलशमनं सूतिकारोगनाशनम् ।।

पाठोऽयं यो. र., यो. त., बृ. यो. त. च अधिकमुपलभ्यते । बृ यो. त. 'युष्यं' स्थाने 'पुष्टं' ।

9 क. प्रशमनं 10-10 बृ. पा. 'धातुपुष्टिकरं परम् 11 भा. प्र., बृ. पा. च बल्य

+--+'व्योषं त्रिजातकं..........बलं प्रति' पाठोऽयं वृ. वै., यो. त. (सू. रो.) बृ. यो. त. (सू. रो), यो. र. (सू रो.) च नंवोपलभ्यते ।

□-□ 'वर्ण्य ....नाशनम्' अस्मात् परं भा. प्र. :—
"आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम्" इत्यधिक: पाठ:

अथ सुरतिवल्लभो[1] नाम पूगः

हेमाम्भोध[2]रचन्दनं त्रिकटुकं धात्री[3] प्रियालं कुहू[4]-
मंज्जा[5] च त्रिसुगन्धिजीरयुगलं शृङ्गाटकं वंशजम्[6] ।
जातीको[7]शलवङ्गधान्य[8]कयुतं प्रत्येक[9]कर्षद्वयं,
[10]हव्यं गोः कुडवं[11] सिताद्धं तुलया धात्रीवरी[12] द्व्यञ्जलिम् ।।१०८।।

पूगस्याष्टप[13]लान्युलूखलवरे सङ्कुट्य[14] चूर्णीकृतं[14],
❀क्षीरस्याढक[15]संयुतं नियमितं मन्दाग्निना[15] तत्पचेत् ।❀
×खादेत्प्रातरिदं ज्वरामयहरं दाहञ्च पित्तञ्जयेत्,×
+नासाऽऽस्याक्षिगुदप्रवाहरुधिरं यद्रोमकूपोद्भवम्+ ।।१०९।।

---

1 क. सुरतवल्लभो नाम पुंगः; बृ. यो. त. पूगपांसुः, यो. त., पा. ग्र. च. पूगीपाकः; बृ. पा., यो. र. च. 'पूगपाकः' इति नाम स्थापितः । 2 बृ. पा. रुह 3 क. जाणिती 4 क. कुहं, यो. र. कटुं, बृ. पा. कुहा, ग. कुहान् 5 क. मजा च त्रिसुगन्ध; बृ. पा. मज्वानत्रिसुगंधि; बृ. यो. त., यो. र. च. लज्जालुस्त्रिसुगंधजीरकयुगं, पा. ग्र. मज्जा-त्रीणिसुगंधजीरकरजः यो. त. मंज्वानस्त्रिसुगंधिजीरकयुतं; ग. ग्रंथे 'मज्जाम्बुत्रिसुगन्ध ....' 6 क. वंसजं ।

7-8 क. जातीकोसलवग ....; ग. जातीकोशलवङ्गधान्यहिमं, बृ. यो. त., यो. र. च. जातीकोशलवङ्गधान्यबहुलाः 9 बृ. यो. त., यो. र. च. मक्षोन्मिताः 10 क. हेयं गो, ग. हैंपैः गो, यो. त., बृ. पा. च 'दद्याद् गोः'; बृ. यो. त., यो. र. च. गोसर्पिः 11 क. कुडव 12 बृ. पा., पा. ग्र. च. धात्रीवरा 13 क. फलान्युदूष-लवणे, बृ. पा., बृ, यो. त., यो. त., यो. र. च. पलं विचूर्ण्य च पयः; पा. ग्र. फलं उलूखलवरे 14-14 क. संकुट्य चूर्णं कृतं; यो. त., बृ. पा. च. प्रस्थत्रये सर्पिषः, बृ. यो. त., यो. र. च. प्रस्थत्रये संपचेत् 15-15 क. संयुत नियमितं मंदाग्निना तं पचेत्; ग. सम्मितं तदनुकं मंदाग्निना संपचेत् । ❀-❀ 'क्षीरस्याढक .... तत्पचेत्' अस्मिन्स्थाने बृ. यो. त., यो. त. यो. र. बृ. पा. च. 'मन्दाग्नौ विपचेत् भिषक्शुभदिने सुस्निग्धभाण्डे क्षिपेत्' । इति पाठः ×-× 'खादेत्प्रात .... जयेत्' अस्मिन्स्थाने बृ. पा. 'यः खादेदनिशं प्रभातसमये मेहांश्च जीर्णज्वरं; पा. ग्र. 'सेव्यं तद्वासरादौ ज्वरमदसदने दाहशूलाम्लपित्ते । इति पाठः ।। +-+ 'नासाऽऽस्याक्षि.... कूपोद्भवम्' अस्मिन्स्थाने क. ग्रंथे "नास्यंस्यक्षिगुदप्रवाहरुधिरं दद्रू सकूपोद्भवम्"; बृ. यो. त.; यो. र. च 'पित्तं साम्लमसृक्स्रुति च गुदजां वक्त्राक्षिनाससुच ।' यो. त., गुददृशोर्वक्त्राक्षि, पा. ग्र. 'नासास्यास्यगुदांत्रवाहिरुधिरं यद्रोमकूपोद्भवम् । इति पाठः ।. ग. 'नासास्वाक्षि.... ....' इति पाठः ।

*यक्ष्माक्षीणबलक्ष[1]याग्निविलयं छर्दिप्रमेहार्शसां[2],
[3]हृद्रेतोगदनुद्र[3]सायनपरं गर्भप्रदं योषिताम् ।
×-मूत्रा[4]घातविनाशनं बलकरं शुष्का[5]ङ्गपुष्टिप्रदं,×
+पूगीपाकमिदं प्रश[6]स्तदिवसे कार्यं च ग्राह्य[7]म्बुधैः+* ॥११०॥

टीकाः — नागकेसरि टां ५. मोथ टां ५, चंदन टां ५, त्रिगडु टां १५, आंवलां री मींजी टां ५, चारोली[7A] टां ५, (बेर की मींजी टां ५)[8], तज टां ५, (तेज पात ५ टां), इलायची टां ५, जीरो टां ५, कालोजीरो[9] टां ५, सिंघोडा टां ५, वंशलोचन टां ५, जावंत्री टां ५, लवंग टां ५, धाणा[10] टां ५, गोघृत[11] टां ४००, निवात[12] टां ८००, आंवला टां ६४, सितावरी टां ६४, वांकडी सुपारी[13] टां १२८, गाइ रो दुध[14] टां १०२४। उषध

---

1 क. बलक्षिताग्नि 2 क. प्रमेहार्शसः 3 क. रेतो वृधिकरं 4 क. मूत्राधाति विनासनं 5. वृष्याङ्ग 6 क. प्रसस्त दिवसं 7 क. ग्राह्यावुधैः। *-* 'यक्ष्माक्षीण……… ग्राह्यम्बुधैं', अस्मिन्स्थाने—

"मन्दाग्निञ्च विजित्य पुष्टिमतुलां कुर्याच्च शुक्रप्रदं (1)।
(2) पूगं गर्भकरं (3) परं गदहरं (3) स्त्रीणामसृग्दोषजित्" इति यो.त., बृ.पा. च पाठः। (1) यो.र., बृ.यो.तः च 'शुक्रप्रदो' इति पाठः (2) यो.र., बृ.यो त. च 'योगो' (3) यो. र., बृ. यो. त. च 'गर्भकरः परो गदहरः' इति पाठः

- अस्मिन्स्थाने पा. ग्रन्थे—

'विंशन्मेहनि पीडिते क्षयतमः श्वासादियुक्ते नरे, रेतोव्याधि हरं रसायनमिदं गर्भप्रदं योषिताम् ॥' इति पाठः

×-× :मूत्राघात ………पुष्टिप्रदं', अस्मात्परं ग. ग्रंथे—

"स्त्रीणां वल्लभ-कामदेववपुसा धत्तो बृंहणम् ।
प्रदरपाद्धविताशकारकवदनं चन्द्रमरीचि विवार्जि" ? इति पाठः

+-+ 'पूगीपाकमिदं ………ग्राह्यम्बुधैः', पाठोऽयं ग. ग्रन्थे नोपलभ्यते।

7A ग. चिरोंजी 8 ग. बेर की मींगी टां ५, पारो टां ५ (पारा मूल पाठ में नहीं है) 9 ग. इसमें केवल एक ही जीरा है। 10 ग. धाणा व कपूर 11 ग. गोघृत टां ४० ? व खदिरबबूल गोंद टां ६४ धाय के फूल टां ६४ (खदिरगोंद व धाय के फूल मूल पाठ में नहीं हैं)। 12 ग. इस टीका में शर्करा नहीं दी गई है। 13 ग. टां ८०, 14 ग. टां सेर १० टां २४।

सहि वांटि छाणि दूध मांहि पचाइजै। पछै गाइ र। घृत मांहि भेलीजै। टां ३ प्रमाण लीजै। गुण पाठान्तर (पाठ में) कह्या छै सो सर्व जाई (होइ)।

अथ खण्डपिप्पली[1]

कणाचूर्णस्य कुडवं षट्पलं[2] हविषस्तथा।
※श[3]तावरीरसस्याऽष्टौ प[4]लान्यत्र प्रदापयेत्※ ॥१११॥
×[5]खण्डप्रस्थं समादाय[5] क्षीर[6]प्रस्थद्वये पचेत्× ।
⊕त्रिजातमुस्तधान्याकं शुण्ठीमांसी-द्विजीरकम्⊕ ॥११२॥
⊖अभयाऽऽमलकञ्चैव चूर्णं द्वादशमाषकम्[7]⊖ ।
▭[8]तदर्द्धं मरिचं नाग[9] सारं खदिरमेव च▭ ॥११३॥
+मधुनस्त्रि[10]पलञ्चैव प्रक्षिप्याशु प्रयोजयेत्+ ।
शूलारोचकहृ[11]द्दाहच्छर्दिपित्ता[12]म्लपित्तनुत् ॥११४॥
++अग्निसञ्जननो हृद्यः खण्डपिप्पलिसंज्ञकः++ ॥

---

1 क. पीपली; वृ. वै. 'क्षीरपिप्पली' इति नाम। 2 क. षट्पल; ग. कट्फलं 3 क. सतावरी; ख. स्तावरी 4 क. पलनेत्र। ※-※ 'शतावरी .... प्रदापगेत्' अस्मिन्स्थाने यो. र. "पलषोडशकं खण्डं शतावर्याः पलाष्टकम्" इति पाठः। र. र. 'वरीरसात् पलान्यष्टौ क्षीरप्रस्थद्वयं तथा' इति पाठः। 5 वृ. वै. खण्डप्रस्थौ समादाय 6 पा. ग्र. क्षीरप्रस्थचतुष्टये ×-× 'खण्डप्रस्थं .... पचेत्" अस्मिन् स्थाने "क्षीरप्रस्थद्वये सार्द्धे लेहीभूते तदुद्धरेत्" इति यो. र. पठितः, किन्तु र. र. 'खण्डप्रस्थं पचेत्तत्र सिद्धे सञ्चूर्ण्य धान्यकम्' इति पाठः, अस्मात् परं 'क्षीरेपक्त्वा घनीभूते सितां पश्चाद्विनिक्षिपेत्'' इति पा. ग्र अधिकः पाठ.। ⊕-⊕ 'त्रिजातमुस्त ...... द्विजीरकम्' अस्मिन्स्थाने र. र. "शुण्ठी-द्विजीर-पथ्याब्द-मांसी-धात्री-त्रिजातकम्" इति पाठः। 7 क. द्वादशमाक्षिम्; यो. र. द्वादशकार्षिकम्। ⊖ ⊖ 'अभया......... माषकम्' अस्मिन् स्थाने "पृथक् द्वादशमासं हि षण्मासं नागकेशरम्" इति र. र. पाठः 8 क. तदर्घ 9 यो. र. भागं, 8-9 वृ. वै. मरिचं नागपुष्पञ्च ▭-▭ 'तदर्द्ध .... खदिरमेव च' अस्मिन्स्थाने र. र. 'खदिरं मरिचं शीते क्षिपेत्क्षौद्रपलत्रयम्' इति पाठः। +-+ 'मधुन .... प्रयोजयेत्' अस्मिन्स्थाने "मधुत्रिपलसंयुक्तं खादेत् सिद्धं यथाबलम्" इति यो. र. पाठः; र. र., वृ. वै. च पाठोऽयं नोपलभ्यते,। 10 क. मधुना त्रिफलं चैव; ग. मधुना त्रिपलं चैव। 11 यो. र. हृल्लास 12 ग. छर्दिमूर्च्छाम्लिपित्तनुत्। यो. र. छर्दिपित्ताम्लरोगनुत्। ++-++ 'अग्निसंजननो

.........संज्ञकः, अस्मिन् स्थाने, "अग्निमान्द्यं बलभ्रंशं क्षैण्यञ्चापि क्षणोति च । वातश्लेष्मगदोन्मूली खण्डपिप्पलिसंज्ञितम्" इति पा. ग्र. पाठः ।

वृ. वै. "अग्निञ्च कुरुते दीप्तं क्षीरपिप्पलिकाभिधः ॥" इति पाठः; यो. र. तु "अग्निसन्दीपनी हृद्या खण्डपिप्पलिका मता:" इति पाठः र. र. "शूलारोचक...... पिप्पलिसंज्ञकः" अस्मिन्स्थाने 'शूलाम्लपित्तवान्त्यग्निमान्द्यजित् खण्डपिप्पली' इति पाठः । ग. ग्रन्थे "अग्निसञ्जननं दद्यात् बलकान्ति देहवर्धनः ।" इति पाठः । अस्मिन् योगे भै. र. मांसी स्थाने वांशी पठितः

पाठान्तरम् वृ. यो. त., यो. र., भै. र. च

'पिप्पल्याः कुडवं चूर्णं घृतस्य कुडवद्वयम् ।
पलषोडशकं खण्डाच्छतावर्याः पलाष्टकम् ॥
शिवायाः स्वरसस्यापि पलषोडशकं मतम् ।
क्षीरप्रस्थद्वये साध्ये लेहीभूतेऽत्र निक्षिपेत् ॥
त्रिजातकाभयाजाजी-धान्यमुस्तशिवातुगाः ।
एतेषां कार्षिकं चूर्णं कर्षार्धं कृष्णजीरकम् ॥
नागरं नागकं जातीफलं समरिचं हिमम् ।
दत्त्वा पलत्रयं क्षौद्रं स्निग्धभाण्डे विनिक्षिपेत् ॥
प्रातर्यथाबलं लिह्यादम्लपित्तप्रशान्तये ।
हृल्लासारोचकच्छर्दिपिपासादाहनाशनम् ॥
शूलहृद्रोगशमनं हृद्यं चेदं रसायनम् ॥'

र. र. "पिप्पल्याः कुडवं चूर्णं पलषोडशकं घृतम् ।
वरीरसात्पलान्यष्टौ षोडशामलकीरसात् ॥
खण्डप्रस्थं पयः प्रस्थद्वये पक्त्वाधिकं क्षिपेत् ।
धात्री-धान्याभयाजाजी-त्रिजाताम्बुसुचूर्णितम् ॥
कर्षार्द्धं जीरकं कुष्ठं नागरं नागकेशरम् ।
जातीफलं मरीचं च शीते मधुपलत्रयम् ॥
अम्लपित्तारुचिश्छर्दि-श्वासकासज्वरापहम् ।
अग्निसन्दीपनं हृद्यं खण्डपिप्पलिनामकम् ॥"

टीका:— पीप्पली टां ४०, गाइ रो घृत टां ६०, सतावरि रो रस टां ८०, चीणी खांड टां २५६, गाइ रो दूध टां ५१२, तज टां ३, पत्रज टां ३, इलायची टां ३, मोथ टां ३, धाणा टां ३, सुंठी टां ३, छड टां ३, कालोजीरो टां ३, धवलो जीरो टां ३, हरडै टां ३, आवला टां ३, मरिच टां १।।, नागकेसरि टां १।।. खयरसार टां १।।, सहित (मधु) टां ४८, उषध वांटि छाणि भेला करि पींडी कीजै । टां ३ खाईजै । शूल, अरुचि हृदय दाह जाइ, छर्दि, पित्त, आम्लपित्त जाइ, अग्नि करइ, चित्त रुचै ।

अथ वृद्धनारिकेलखण्डः[1]

द्विप्रस्थो नारि[2]केलो[3] घृतमपि च समं [3]चारुबीजं द्विप्रस्थं,
सूक्ष्मं तद्द्वितयं[4] सुपि[5]ष्टमसकृत् कृत्वानु तं शोषयेत्[6] ।
❋गोदुग्धन्तु[7] शतद्वयं[8] विपचितं म[9]त्स्यडिकार्द्धाढकं,❋
जातीपत्रफलन्तु[10] देवकुसुमं शृङ्गाटकं[11] कच्छुरम्[12] ।।११५।।

[13]जाती[13]चम्पकधान्यकं[14] मदनिकां गाङ्गेरुकीं दाडिमं,
वाराही च विदारिगोक्षुर[15]शटी-मां[16]स्यश्वगन्धासमम् ।
[17]चातुर्जातशतावरीत्रिकटुकं मुस्तं हिमं त्रैफलं[18],
[19]मिश्रेयाकुशकासकं[20]सुकुटितं भाव्यं रसैः शालमलैः[21] ।।११६।।

---

1 क. वृधिनालकेर 2 क. नालिकेरो, ग. नारिकेलस्य, ख. नालिकेरौ 3-3 ख. घृतसमरुलया, ग. गोघृतस्य तद्विय 4 क. तद्वितयं 5 ख. सुष्टमसकत् त्वां च 6 ख. शोषये 7 क. गोदग्धं तु 8 क. सत 9 क. मत्संडिका ❋-❋ गोदुग्धन्तु ………… अर्द्धाढ़कम् अस्मिन्स्थाने ग. ग्रंथे "गोदुग्धपाचनं मत्संडिकार्द्धाढकम्" इति पाठः, ख. ग्रंथे मस्त्यंडिका द्वीढकम् ।। 'द्व्याढकं' इति बृ. पा. 10 क. फलं तदेव, ग. पलं तु देवकुसुमं; बृ. पा. पलं च देवकुसुमं 11 शृंगादकं 12 क. कछुरा, ख. कछरा; बृ. पा. वानरी । 13 क. ख. जाजीपंचक 14 क. धान्यका, ख. धानिका 15 ख. गोक्षिर 16 क. ग. मांसस्य गंधसमाः, ख. मार्सस्य गंधा समा 17 क. चातुर्यातिसतावरी, ख. चातुर्यातिस्तावरीत्रिकतुकं 18 ख. हिमैः त्रैफलं 19 क. मिश्रीयं, ख. श्रेयं 20 क. कुसकासचूर्णतमिदं, ख. ………… चूर्णतमिदं 21 ख. रसै सालम्लै ।

पात्रे ताम्रमये[1] प्रक्षिप्य[2] मथितं[2] सुस्निग्ध[3]भाण्डे क्षिपेत्[4],
[5]खादेत्तस्य पलद्वयं प्रकुरुते [6]वर्णाग्निवीर्यं बलम्[6] ।

❀अत्यन्तं शुक्रवृद्धि[7] भृश[8]मपिकुरुते जायते [9]वर्णपुंस्ता,
पित्तं रक्तभवं[10] प्रणश्यति[11], नरो गच्छेत्तु[12] नारीशतम्❀ ।।११७।।

टीका:— गिरि टां ५१२, गाइ रो घृत टां ५१२, चारोली टां ५१२, गाइ रो दूध टां[13] २०००, निवात (शर्करा[14]) टां २०४८, जावंत्री टां २।।, जायफल[15] टां २।।, (लवङ्ग टां २।।), सिंघोडा टां २।।, कौंछ बीज टां २।।, जीरो[16] टां २।।, चम्पा रा फूल टां २।।, धाणा टां २।।, कस्तूरी टां २।।, गाँग-

---

1 ख. ताम्रभवे 2-2 बृ. पा. विपाच्यमपि तं 3 क. सुस्नेग्ध 4 ख, क्षपेत् 5 क. ख. खादेतस्य; ग. पादे तस्य 6-6 क. वर्णाग्निवीर्यं बलाम्; ख. जायते वर्ष पुंसां; ग. वर्णाग्नि बीजं बिलं 7 क. वृधि 8 क. भृसमपिकुरते ग. भृशमपिकरुते 9 क. वर्ष पुंसां, ग. वर्णपुंसु 10 क. भयं 11 क. प्रनस्यति, ख. प्रनसिति 12 क. गछेतु, ख. गछिति ❀-❀ 'अत्यन्तं .... नारीशतम्' अस्मिन्स्थाने—

"एतस्यानुपिबेत् तदेव क्वथितं दुग्धं यथेष्टं सुधीः ।" इति बृ. पा. पाठः

टि:— अस्मिन् योगे प्रथमश्लोकस्याद्यस्तथान्तिश्लोकस्य तृतीयश्चरणः स्रग्धराच्छन्दसा बद्धः; अवशिष्टाः सर्वेऽपि चरणाः शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसि गुम्फिताः वर्तन्ते । अस्य प्रथमश्लोकस्याद्यत्रयचरणानां स्थाने बृ. पा. निम्नाङ्कितः पाठो वर्तते:—

"द्वौ प्रस्थौ किल गोलकान् घृततुलां प्रस्थं च चारूद्भवम्, गोदुग्धे च तुलाद्वये परिपचेच्छुभ्रासिता चाढकम्" अविशिष्टो योगभागः बृ. पा. ग्रन्थेऽपि क. ग्रन्थोक्तपाठवद्धि प्रायो लभ्यते । (सम्पादकः)

13 ग. दूध सेर २०, (ख. में दूध का नाम ही नहीं है ।) 14 ग. मिश्री टाँ ५१२; बृ. पा. में घृत १ तुला व शक्कर एक आढक कहे गये हैं । 15 यदि शुद्ध पाठ 'जातीपत्र पलं च देवकुसुमं' है तो जायफल के स्थान पर लवङ्ग होना चाहिये व प्रक्षेप की सभी औषधियों का तोल १-१ पल होना चाहिये । ख. प्रति की टीका में 'जायफल, जायपत्री व लवंग कहा गया है । दोनों ही प्रतियों में प्रक्षेप के सभी द्रव्यों का तोल २।।-२।। टांक कहा गया है । मूल पाठ में यदि 'जातीपत्रफलं च देवकुसुमं' पढ़ें तो इस योग में प्रक्षेप के द्रव्यों का तोल नहीं मिलता 16 क. व ख. में 'जाजी' कहा गया

वलि* टां २॥, दाडिसार (दाडिमसार) टां २॥, वाराहीकन्द टां २॥, बिदारीकंद टां २॥, काँटी टां २॥, सठी टां २॥, छड़ टां २॥, (जटामांसी), ग्रासगंधि टां २॥, पत्रज टां २॥, तज टा २॥, एलची टां २॥, नागकेसरि टां २॥, सितावरी टां २॥, सूंठि टा २॥, मरिच टां २॥, पीपली टां २॥, मोथ टां २॥, कपूर टां २॥, हरडै टां २॥, बहेडा टां २॥, ग्रांवला टां २॥. (मिश्रीय ग्रथवा मिश्रेया=सौफ या सोवा टां २॥), डाभ री जड़ टां २॥, कांस री जड़ टा २॥, उषा सही (ग्रौषधियां सभी) वांटि छाणि सैंवल रा रस री भावना ७ दीजै (भावनाग्रों की संख्या टीकाकार द्वारा कल्पित है।) तांवा रा कडाहा मांहें; पछ इ सिध उषध (ने) चीगटा (चिकने) वासण में घातीजै । प्रातः स्मय लीजै । ग्रनइ माष (मागधी) भाषा मांहे टां ३२ कह्याछै (८ तोला=३२ टां)। कलिंग भाषा मांहे टां 2० कह्यौ छै। पिण जिसड़ी काया मांहि सकति हुए तिसड़ो उषध लीजै। टां ५ तथा ७ लीजै। इतरा थोक री वृधि (वृद्धि), वर्ण, ग्रग्नि, वीर्य, बल, वधई। नपुंसकपणौ जाइ। रक्त पित्त जाइ। ग्रस्त्री १०० स्युं क्रीड़ा करै।

है किंतु वृ. पा में 'जाती' है। क. व ख. की ठीका में 'जीरा' जाजी का ग्रर्थ किया गया गया है किंतु जीरे को ग्रजाजी कहते हैं न कि जाजी। जाति=चमेली।

* ग. महुरेठी

टि.:—जावित्री से कांस री जड़ तक के समस्त द्रव्यों को यदि २॥-२॥ टंक ही लिया जाय तो ३५ द्रव्यों का कुल वजन ३५ तोला कलिङ्गमानानुसार होगा। यदि प्रत्येक का तोल १-१ पल मानें तो ३५ द्रव्यों का तोल १४० तोला बनेगा। इस योग में नारिकेल, घृत व चिरौंजी, प्रत्येक १२८-१२८ तोला हैं (तीनों का तोल ३८४ तोला), गोदुग्ध ८०० तोला है जो खोग्रा बनने पर लगभग २०० या १६० तोला रह जावेगा, शक्कर मागधमानानुसार इसमें ५१२ तोला है। (कुल ३८४+२००+५१२=१०९६ तोला) ग्रतः प्रक्षेप के प्रत्येक द्रव्य का मान १-१ पल माना जा सकता है।

क. में टीकाकार ने गिरी, चिरञ्जी व घृत के मान मागधमानानुसार, व दूध का मान कलिङ्ग परिभाषानुसार क्यों माना, इसका उत्तर इस पुस्तिका में नहीं मिलता। शर्करा का मान मूल पाठ क. में ग्रर्घ ग्राढक है व ख. में 'द्व्याढकं' (दो ग्राढक) है। टीकाकार ने क. में २०४८ टां लिखा है। मागधमानानुसार यह २ ग्राढक होता है। बृ. पा. के पाठ में १ ग्राढक शर्करामान कहा गया है। ख. ग्रन्थोक्त पाठ ग्रतिभ्रष्ट है। टीका में वहाँ घी, चिरौंजी, दूध ग्रौर शक्कर का कोई उल्लेख ही नहीं है। (संपादक)

अथ आम्रखण्डः[1]

पक्वाम्रस्य[2] रसो द्रोणः पादः[3] स्यात् शुद्ध[4]खण्डतः ।
※घृतमर्द्ध[5] ततो ग्राह्यं[6] चतुर्थांशञ्च नागरम्※ ॥११८॥

×तदर्द्धं मरिचं देयं तदर्द्धा पिप्पली शुभा× ।
⊖तोयं खण्डसमं देयं सर्वमेकत्र संस्थितम्⊖ ॥११९॥

+तत्पचेन्मृण्मये पात्रे भिषक् दर्व्या[7] प्रचालयेत्+ ।
⊕[8]त्वगेलादेवकुसुमं [9]शशिपलचतुष्टयम्⊕ ॥१२०॥

[10]ग्रन्थिकं चित्रकं मुस्ता [11]धान्यकं जीरकन्तथा ।
धात्री तालीसचूर्णञ्च पृथग्द[12]द्यात्पलं पलम्⊕ ॥१२१॥

---

1 भा. प्र., यो. र., पा. ग्र, बृ, पा. च 'आम्रपाकः'; भै. र. च. 'खण्डाम्रकः' इति नाम। 2 ख. पक्वाम्रसि; बृ. पा., भै. र., र. र. 'पक्वचूत' 3 क. ख. पादः 4 क. ख. सुध 3-4 पा. ग्र., यो. र., भा. प्र. च 'सिताभाढ़कसम्मितम्' ग. तदर्धं शुद्धखण्डकम् ।; भै. र., र. र. च. पात्रं स्यात् शुद्धखण्डतः। 5 क. घृतमृद्ध, ख. घृतमर्घं 6 ख. ग्राज्यं ※-※ 'घृतमर्द्धं.........नागरम्' अस्मिन्स्थाने "घृतं प्रस्थमितं दद्यान्नागरस्य पलाष्टकम्" इति भा. प्र., यो. र., पा. ग्र. च पाठः। ×-× 'तदर्द्धं ...... शुभा' अस्मिन्स्थाने "मरिचं कुडवोन्मानं पिप्पली द्विपलोन्मिता" इति भा. प्र., यो. र., पा. ग्र. च पाठः । ⊖-⊖ 'तोयं खण्ड ... . संस्थितम्", अस्मिन्स्थाने "सलिलस्याऽऽढकं दत्वा सर्वमेकत्र कारयेत्" इति भा. प्र., यो. र. पा. ग्र. च पाठः । 7 क. द्रव्या; ख. ग. दर्वी +-+'तत्पचेन् ......प्रचालयेत्', अस्मिन्स्थाने "पचेत्तन् मृन्मये पात्रे दारुदर्व्याप्रचालयेत्" इति यो. र., भा. प्र. च पाठः; भै. र., र. र. च ' विपचेन्मृन्मये पात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम्" इति पाठः; 8 ग. त्वगेले देवकुसमं 9 ख. शसा; ग. शर्सा; क. शसी 10 ख. ग्रन्थिकं 11 ख. धानिकं 12. ख. पृथदृधा ⊕-⊕ 'त्वगेला .... पलं पलम्' अस्मिन्स्थाने "चूर्णान्येषां क्षिपेत्तत्र घनीभूतेऽवतारिते । धान्यकं जीरकं पथ्यां चित्रकं मुस्तकं त्वचम् ॥ बृहज्जीरकमप्यत्र ग्रन्थिकं नागकेशरम् । एलाबीजं लवङ्गं च पृथग्जाती पलं पलम् ॥ इति भा प्र. पाठः; यो. र. पथ्या स्थाने चित्रं, चित्रकस्थाने पत्रकं, तथा एलाबीजं स्थाने एलां पत्रीं; जाती पलं स्थाने जातीफलं इति पाठः । पा. ग्र. भावप्रकाशोक्त एलाबीजं स्थाने एलाद्वन्द्वं इति पाठः; तथा 'जाती पलं पलम्' स्थाने "जातीपत्रीफलं पलम्" इति पा. ग्र. पाठः

+-[1]सिद्धे शीते च मधुनः[1] प्रस्थन्तत्सर्वमेकतः[2] ।+
+[3]शनैः पिण्डं तु तत्कृत्वा[3] स्निग्धभाण्डे निधापयेत्+ ।।१२२।।

❀भोजनादौ च तत्खादेत्[4] पलमात्रप्रमाणतः❀ ।
×ह[5]न्त्यरोचकमत्युग्रं श्वासं कासं तमं[6]क्षयम् ।।१२३।।

[7]पीनसञ्च प्रतिश्यायं[7] प्लीहानञ्च[8] हृदामयम् ।
[9]अम्लपित्तञ्च धातूनां[9] [10]क्षीणत्वञ्च ज्वरापहम्[10] ।।१२४।।

सर्वदुर्नामरोगञ्च त्वग्वर्णं पाण्डु[11]कामलम् ।
[12]हृच्छूलञ्च शिरः शूलमानहमतिदारुणम्[12] ।।१२५।।

⊕-⊕ 'त्वगेला देवकुसुमं ………… दद्यात्पलं पलम्', अस्मिन्स्थाने

"चूर्णान्येषां ततो दद्यात्पत्रं पलचतुष्टयम् ।
ग्रन्थिकं चित्रकं मुस्तं धान्यकं जीरकद्वयम् ।।
त्र्यूषणं जातितालीशं चूर्णमेषां पलं पलम् ।
त्वगेलाकेशराणां च प्रत्येकं च पलं तथा ।।" इति भैं. र. पाठः

किन्तु बृ. पा तु "चूर्णान्येषां क्षिपेत्पक्वे जातीफललवङ्गकम् ।
ग्रन्थिकं मुस्तकं चव्यं धान्यकं जीरकद्वयम् ।।
त्रुटीभं केशरं त्वक्च तालीसञ्च पृथक्पलम् ।।" इति पाठः

1-1 क. सिधे शीतेन मधुना; ख. सिवेर्स्प्ते ते तु मधुना । 2 भै. र. प्रस्थं, दत्त्वा विघट्टयेत्; ख. प्रस्थं तु सर्वमकत्; ग. प्रस्थं तत्सर्वमेकत्र कारयेत् ।। +-+ 'सिद्धे-शीते…………सर्वमेकतः', अस्मिन्स्थाने "सिद्धशीते प्रदद्याच्च मधुनः कुडवद्वयम्" इति यो. र., पा. ग्र., भा. प्र. च पाठः ।। र. र. तु "सिद्धशीतेन मधुनः प्रस्थार्द्धं सर्वमेकतः" इति पाठः ।। 3-3 ग. लोलयेत् पिण्डं कृत्वा; ख. शनैः पिण्डं तु तकृत्वा; र. र. संधाय पिष्टवत्कृत्वा; बृ. पा. सन्नीय पिण्डवत्कृत्वा; भै. र. तत्सर्वमेकतः कृत्वा । +-+ 'शनैः………… निधापयेत्' पाठोऽयं भा. प्र., यो. र., पा. ग्र. च नोपलभ्यते ।। 4 क. खादौत, ख. तत खादे; । ❀-❀ 'भोजनादौ ……… प्रमाणतः' अस्मिन्स्थाने भा. प्र., पा. ग्र., यो. र. च "भक्षयेद्भोजनादर्वाक् पलमात्रमिदं नरः ।।" इति पाठः । 5 क. हंति रोचकमग्रं 6 ख. चमक्षयं 7-7 क. पानस्यं च प्रतिस्यायं । 8 क. ख. प्लीहाना । 9-9 ख. आम्लपित्ताश्च पित्ते च; क. आम्ल-पित्तश्च धातूनां । 10-10 क. क्षीणत्व ज्वरापहम्; ख. धातुना च ज्वरापहं, ग. तीव्रज्वरविनाशयेत् 11 ख. पाण्ड 12-12 ख. हृद् सूलं सिरोसूलं च मानाहतिम-दारुणम् ।।

कण्डूं दद्रूञ्च कुष्ठञ्च विबंधानाहरोगहृत्[1] ।
[2]संवर्द्धते बलं तेजं [3]वृद्धोऽपि तरुणायते ।।१२६।।

नरः[4] सर्वगुणोपेतः[5] नारायणपरायणः ।
रक्तपित्तं विशेषेण[6] नाशयेदम्लपित्तकम्[6] × ।।१२७।।

---

1 ग. नुत्, ख. हृत 2 ख. संसेवितो दंजे च., 3 क. वृधौ, ख. वृधोपि 4 ख. ग. चिरं, क. वरं सर्वंगुणे पेतं; 5 ख. पेति 6-6 क. विसेषेण नासयेदम्लपितकम्; ख.………… नाशयेदमपित्तकं । ×-× 'हन्त्परोचकमत्युग्रं……………नाशयेदम्लपित्तकम्' ।

अस्मिन् स्थानेः— पा. ग्र. "क्रमेण जायते नृणां बलवर्णाग्निदीपनम् ।
स्त्रीषु हर्षं परं कुर्याद् वाजीकरणमुत्तमम् ।।
ग्रहणी नाशयेदेतत् क्षयं चाममरोचकम् ।
अम्लपित्तं श्लेष्मपित्तं कामलां पाण्डुतामपि ।।"

भा. प्र. यो. र. च "अथवा नियता नात्र मात्रां खादेद्यथाऽनलम् ।
मानवः सेवनादस्य वाजीव सुरते भवेत् ।।
समर्थोः बलवान्पुष्टो नित्यं स स्यान्निरामयः ।
ग्रहणीं नाशयेदेष क्षयं श्वासमरोचकम् ।।
अम्लपित्तं महाश्वासं रक्तपित्तञ्च पाण्डुताम् ।।

भै. र. "र.च्छेत्कन्दर्पदर्पान्धो रागवेगाकुलेन्द्रियः ।।
शतं वापि तदर्द्धं वा रमेत्स्त्रीणां पुमानयम् ।
संसेव्य भेषजं ह्येतद्वन्ध्यायां जनयेत्सुतम् ।।
वीरं सर्वंगुणोपेतं शतायुश्च भवेदयम् ।
मृतवत्सा च या नारी याचं गर्भोपघातिनी ।।
साऽपि सूते सुतं सत्यं नारायणपरायणम् ।
*वन्ध्याऽपि लभते पुत्रं वृद्धोऽपि तरुणायते ।।
कुरङ्ग इव संहृष्टो मातङ्ग इव विक्रमः ।
सदा भेषजसंसेवी भवेन्मारुतवेगवान् ।।
हन्ति सर्वामयं घोरं कासं श्वासं क्षयं तथा ।
दुर्नामाजीर्णकं चैव अम्लपित्तं सुदारुणम् ।।
तृष्णां छर्दिं च मूर्च्छां च शूलमष्टविधं जयेत् ।।

टीका:— पाका आम रो रस[1] टां ४०९६, खांड[2] टां १०२८ (१०२४) घृत[3] टां ५१४ (५१२), सुंठि[4] टां १२८, मरिच[5] टां ६४, पीपली[6] टां ३२, पाणी[7] टां १०२८ (१०२४) तथा जितरा पाणी मांही भीजै पाक कीयौ जाइ तितरो घातीजै। माटी रा पात्र मांही पचाइजै, पछ कुडछी सुं चालवीजै। तज[8] टं ४०, इलायचो[8] टं ४०, लवंग[8] टं ४०, कपूर[8] टां १०, पीपलामूल[8] टां १०, चित्रक[9] टां १०, मोथ[10] टां १०, धाणा[10] टां १०, जीरौ टां १०, आमला टां १०, तालीस-पत्र टाँ १०, उषध उतारि नइ पछैइ सहित टां २५६, भेली पछइ जिमण समइ टां १० तथा १५ खाईजै, पछइ जीमण जीमीजै। अरोचक,

---

खण्डाम्रकमिदं प्रोक्तं भार्गवेण स्वयम्भुवा।
वयस्यं मेध्यमायुष्यं सर्वपापविनाशनम्॥

ग्रहरक्षः पिशाचघ्नमपस्मारविनाशनम्।
पाण्डुरोगं प्रमेहञ्च मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत्॥

वश्या योषिद्भवेत्पुंसां पुमान्वश्यश्च योषिताम्।
दृष्टं वारसहस्रं च कथमत्र विचारणा❀॥

❀-❀ र. र. 'वन्ध्याऽपि लभते ...... कथमत्र विचारणा, पाठोऽयं नोपलभ्यते।

1 ख. मण १ टं ९६, (मूल में १ द्रोण आम्र रस है=१२ सेर १३ छ. ४) भर) 2 ख. मिश्री सेर २४ (मूल मे आम्ररस से ¼ मिश्री है १०२४ टां) ग. ग्रंथ में आम्ररस से आधी खांड कही गई है। 3 ख. गोघृत सेर ५ (मिश्री से आधा घी मूल पाठ में है; अत: ५१२ टां) 4 ख. सूठि सेर १ अरु टं १३ (मूल पाठ में चतुर्थांश है=१२८ टाँ) 5 ख. मिरच सेर १।। (मूल पाठ में सोंठ से आधी मिरच है=६४ टां) 6 ख. पिपली सेर २।। (मूल पाठ में मिरच से आधी पीपर है=३२ टां) 7 ख. पानी सेर २० टं २४ (मूल पाठ में पानी शक्कर के बराबर है=१०२४ टां) 8 ख. तज, एला दाणा, लवंग, कपूर, पीपरामूल, प्रत्येक टं ६४-६४, 9 ख. चीतो टं १६, 10 ख. मोथो, धणो, जीरो, आंवला, तालीस—प्रत्येक टं १६-१६।

टि. मूल पाठ में तज, एला व कपूर ४-४ पल हैं; ग्रंथिक, चित्रक, मुस्त, धाना, जीरा, धात्री, व तालीश १-१ पल हैं। भावप्रकाश आदि ग्रंथों में आम्ररस, शक्कर, घी व सोंठ के तोल भिन्न है किंतु मिरच, पीपर व पानी के वजन आनंदमाला में कहे गये मानों के बराबर ही हैं। प्रक्षेप के द्रव्यों में भा. प्र. में (1) कपूर (2) आंवला (3) तालीसपत्र ये तीन द्रव्य नहीं हैं व (1) हरड,

स्वास, खास, तम, क्षय, पीनस, प्रतिश्याय, प्लीह, हृद्रोग, आम्लपितु, धातुक्षीणुपणो, ज्वर, हरस (अर्श) पांडु, कामल, हृदयशूल, सिरशूल, आनाह, अतिदारुण खाजि, कुष्ट जाइ। इण सेवतां बल, तेज, वृध तरुण थाय। विशेष करि रक्तपित्त, आम्लपित्त जाइ ।।

अथ वृद्धसूरणमोदक:[1]

षोडशशूरणभागा वह्नेरष्टौ महौषधस्यात:[2] ।
अर्द्धेन भागयुक्तिर्मरिचस्य[3] ततोऽपि चार्द्धेन ।।१२८।।

त्रिफला कणा समूला तालीसा[4]रुष्करक्रिमिघ्नानाम् ।
भागा[5] महौषधसमा[5] दहनांशा[6] तालमूली च ।।१२९।।

भाग:[7] शूरणतुल्यो दातव्यो[7] [8]वृद्धदारकस्याऽपि ।
त्वगेले[9] मरिचांशे [10]सर्वाण्येकत्र करयेच्चूर्णम्[10] ।।१३०।।

द्विगुणेन[11] गुडेन युत: सेव्योऽयं[11] मोदक: प्रकामधनै: .
गुरुवृष्य[12] भोज्यरहितेष्वितरे[12]षूपद्रवं कुरुते[13] ।।१३१।।

---

(2) कलौंजी (3) नागकेशर व (4) जायफल, ये 4 द्रव्य अधिक हैं। आनंदमाला में तज से कपूर तक के द्रव्य ४-४ पल व शेष १-१ पल हैं किन्तु भा. प्र. में कहे गये ये सभी द्रव्य १-१ पल हैं। (संपादक)

1 क. वृध 2 क. स्याद्, वृ. वै., ग. नि. च स्याऽपि 3 भै. र. चक्र. च. मरिचस्य च ततोऽपि.; क. मरिचस्य ततो चार्द्ध. 4 क. ग. तालीसपुष्करक्रिमिघ्नानां. अस्मिन् एव ग्रन्थे टीकायां 'भीलावा' इति पाठः। 'भिलावां'—अरुष्कर:। अन्येषु सर्वेषु ग्रन्थेष्वपि 'तालीसारुष्करक्रिमिघ्नानां' एव पाठ: । अयमेव पाठस्साधु: । 5 क. नभागा 6 क. महौषधस्यमादहनसमा; टो. श्यामा दहनांशा ग. समा दहनांशामानलमूली । 7 क. भागा शूरणतुल्यौ दातव्यौ, ग. प्रदातव्यो 8 क. वृधदारुकस्यापि 9 भै. र. टो. चक्र. गनि., भा. प्र., वृ. वै. च. 'त्वगैले' स्थाने "मृङ्गले" पठित: 10-10 ग. नि. चूर्णेऽस्मिन्योजयेन्मतिमान्; वृ. वै. सर्वाण्येकत्रकारयेद्वैद्य; टो., भै. र., चक्र. च. सर्वाण्येकत्र संचूर्ण्यं 11-11 वृ वै. चूर्णाद्विगुणेन गुडेन सेव्योऽयं 12 वृ. वै. गुरुवृष्य-मिष्टरहितेष्वितरेषू; भा. प्र. गुरुवृष्यभोजनरतैरितरेषू; 13 चक्र:, भै. र. च. कुर्याद् ।

भस्मकमनेन जनितं [1]पूर्वमगस्त्यस्य योगराजेन[1] ।
※भीमस्य मारुतेरपि महाशनाः[2] येन[2] ते जाताः ॥१३२॥※

अग्नि[3]बलमात्रहेतुर्न केवलं[3] शूरणो महावीर्यः ।
×प्रभवतिशस्त्र [4]क्षाराग्निभि[5]र्विनाऽप्यर्शसामेषः[5]× ॥१३३॥

⊕श्व[6]यथुश्लीपद[6]जिदयं ग्रहणीं च [7]कफानिलोद्भूताम्⊕ ।
नाशयति[8] वलीपलितं मेधां[8] कुरुते च वृष्यत्वम् ॥१२४॥

+हिक्कां कासं श्वासं[9] सराजयक्ष्मं प्रमेहञ्च[9]+ ।
≠प्लीहानं च तथोग्रं हन्ति[10] च रसायनं पुंसाम्≠ ॥१३५॥

---

1 क. पूर्वमरूपसे योगराज्येन 2 महासनैस्तेन; ※-※ 'भीमस्य..........जाताः' अस्मिन्स्थाने वृ. वै. "भीमस्यानिलसूनोरेतौ यस्मान्महाशनौ जातौ"; टो. चक्र., भै. र. च. भीमस्य मारुतेरपि तौ येन महाशनौ जातौ ।" ग. नि. '..........येन हिते महाशना जाताः ॥'

3 क. अग्निवलमीत्रहेतुर्न; टो., ग. नि., भै. र. च 'अग्निबलवृद्धिहेतुर्न' चक्र. 'अग्निबलवुद्धिहेतुर्न."; वृ. वै. 'केवलमग्निबलानांवृद्धनो' 4 क. शस्त्रज्वराग्निभिः 5 क. विनार्मसामेषः ॥ ×-× 'प्रभवति..........प्यर्शसामेषः' अस्मिन्स्थाने भा. प्र. 'हन्ता शस्त्रक्षारानलैर्विनाऽप्यर्शसामेषः' इति पाठः 6-6 क. स्वयथु श्लीपद.जददयं 7 क. तथा कफानलं ⊕-⊕ 'श्वयथु.......... कफानिलोद्भूताम्' अस्मिन्थाने वृ. वै. "श्वयथुश्लीपदजेता ग्रहणीनुद्वात.पंत्तकफकाञ्च ।" भै. र., चक्र. च "श्वयथुश्ली-पदजिद् ग्रहणीमपि कफवातसम्भूताम्", टो., ग. नि. च 'श्वयथुश्लीपदगरजित् तथा कफानिल-जाम्' (ग. नि. 'निलजाताम्') भा. प्र. 'श्वयथुश्लीपदमदहृत ग्रहणीं च कफानिलो-द्भूताम् ।' इति पाठः ॥ 8 क. नासपघलीपलितं मेधं; वृ वै. 'वलिपलितं नाशयति मेधां, भा. प्र. 'नाशयति वलीपलितं मेधां कुरुते जरां च हरेत् । 9-9 भा. प्र. श्वासञ्च राजरोगं प्रमेहांश्च । +-+ 'हिक्कां.......... प्रमेहञ्च' पाठोऽयं वृ. वै. नोपलभ्यते । 10 भा. प्र. हन्त्याशु । टो. हन्याद् रसायनं पुसांम् ≠-≠ 'प्लीहानं..........पुंसाम्' अस्मिन्स्थाने वृ. वै. "यत्नेनेमं मोदकमार्यं रचयेद्भिषग्विद्वान्" इति पाठः क. 'प्लीहानां च तथा ग्राहं तचेयं रसायनं पुंसाम् ।' इति पाठः ।

टीकाः— शूरण टां १६, चित्रक टाँ ८, सुंठि टां ४, मरिच※ टां ३, हरडै टां ४, वहेडा टां ४, आवलां टाँ ४, पीपली टां ४, पीपलामूल[1] टां ४, भीलावा टां ४, सितावरि[2] टां ४, निसोत टां ४, तज[3] टां ४, इलायची टां २, गुल (गुड) टां १७५ ए उषध एकत्र करि चूर्ण कीजै। प्राति लीजै। गुण पाठान्तरेण विचारि लेणां ॥

शूरणवटिका[4]

[5]चूर्णीकृताः षोडशशूरणस्य भागास्ततोऽर्द्धेन[6] च चित्रकस्य ।
+महौषधाद्[7] द्वौ मरिचस्य चैको गुडेन[8] दुर्नामजयाय पिण्डी+॥१३६॥

टीका।— [जमीकन्द का चूर्ण १६ भाग, चित्रकमूल चूण ८ भाग, सोंठ[9] २ भाग कालीमिरच[10] १ भाग और वृद्धवैद्यों की परम्परा के अनुसार दुगना गुड मिला कर ३ से ६ ग्राम तक की पिण्डियां बनावें। यह योग अर्श दुर्नामनाशक है] (सम्पादक)। ×उषध टां ४ खाईजै। हरस (अर्श) जाई।×

※ मूल पाठ के अनुसार मरिच 2 टां होनी चाहिये। 1. पीपरांमूल के बाद तालीसपत्र व बाद में शुद्ध मिलावा होना चाहिये : भिलावे के पश्चात् बायविडंग 4 टां होनी चाहिये। 2. सितावर 4 टां के स्थान पर शाहमूसली 8 टां होनी चाहिये। तालमूली शाहमूसली को कहते हैं। इसके बाद मूल पाठानुसार विधारा 16 टां (शूरणतुल्य) होना चाहिये। मूल पाठ में निशोथ है ही नहीं। 3. तज व इलायची दोनों ही मूल पाठानुसार 2-2 टांक होनी चाहिये। गुड सब औषधियों से दूना होना चाहिये अर्थात् 180 टां होना चाहिये।

4 टो. शूरण-पिण्डीति नाम., ग. नि. लघुसूरणवटिका इति नाम 5 क. चूर्णः, ख. चूर्णीकृता षोडश सूर्णस्य 6 क. ततोर्द्धेनव चित्रकस्य, ख. चित्रकसि 7. भै. र. महौषधाव्दौ, ख. महौषधाष्टौ 8 क. ख. गुडस्य +-+'महोषधाद्...........पिण्डी' अस्मात्परं टो., भै. र. चक्र. च 'पिण्ड्यां गुडो मोदकवत् पिण्डोत्पत्तिकारकः। (भै. र., चक्र. च पिण्डत्वापत्तिकारकः) इति पाठः। ×-× 'उषध टां 4 खाईजै। हरस जाई।' क. ग्रन्थ में टीका रूपेण केवल इतना ही उल्लेख मिलता है। ख. प्रति में टीका नहीं मिलती।

अथ काङ्कायनगुटिका[1]

शटीं[2] पुष्करमूलञ्च दन्तीं[3] चित्रक[4]माक्षिकम् ।
शृङ्ग[5]वेरं वचां चैव प्रत्येकं[6] पलमाहरेत्[6] ।।१३७।।

-त्रिवृतायाः पलं[7] कुर्यात् पलं[8] कुर्याच्च हिङ्गुतः[8] ।
यवक्षारं पले[9] द्वे च पले[10] द्वे चाम्लवेतसः[10] ।।१३८।।

यवा[11]न्यजाजीमरिचं धान्यकं[12] सीतवर्तिकम् ? ।
उप[13]कुञ्च्यजमोदाभ्यां [14]तथैवाष्टमिकामपि ।।१३९।।

मातु[15]लुङ्गरसेनैव गुटिकाः कारयेद्भिषक्[15] ।
[17]तासामेकां[18] पिबेद्[19] द्वे वा तिस्रो वाऽथ सुखाम्बुना[19] ।।१४०।।

---

1 क. काकायनी; भै. र., चक्र. च कांकायनगुडिका 2 क. ख. सठी 3 क. ख. दन्ती; चक्र., भै. र, र. र. च दन्तीं; ग. नि. वह्नि 4 ख. चित्रमाषिकम्; भै. र., चक्र, र. र. च चित्रकमाढकीम् (आढकी=तुवरी–'अरहर' इति लोके; माषः=उरद इति लोके, माक्षिकं=स्वर्णमाक्षिकं); ग. नि. लवणपञ्चकम् ।। 5 क. शृंगवेरवचाचैव 6-6 क. पलकानि समाहरेत्, ग. पलौ चैकं 7 क. पलकुर्यात्; ख. पलं कुर्या; भै. र., र. र. च पलं चैकं, चक्र. पलञ्चैव 8 8 क. पलं कुर्या च हिङ्गुतः ख. कुर्या च हिङ्गुकं, भै. र., चक्र. च कुर्यात् त्रीणि च हिङ्गुनः; र र. कुर्यात् त्रीणि च हिङ्गुलः; ग. नि. त्रीन् कर्षानथ हिंगतः *-* 'त्रिवृताया.........हिङ्गुतः' पाठोऽयं ग. ग्रन्थे नोपलभ्यते । 9 क. पलार्द्धं च, ख. पलद्वे च 10-10 ख. द्वे पलं चाम्लवेतस । 11 क. जवान्याजी मिरचं, ख. जवानी जाजी मिरचं 12-12 ख. धानिकं सीतवर्त्तिकं, भै. र, चक्र., र. र. च धान्यकं चेति कर्षिकम् ग. नि. धन्याकं शीतपुष्पकम् 13 क. ख. उपकुंचाजमोदाभ्यां 14 क. तथैवाष्टमिकामला, ख. मता, ग. तथा । भै. र., चक्र. च तथा चाष्टमिकामपि ।; र. र. पृथगर्वं पलं भवेत्; ग. नि. ह्येषामष्टमिकां तथा ।

12 टि. क. ग्रन्थे टीकाभागे सीतवार्तिकस्यार्थः 'सौंफ' इति गृहीतः, किन्त्वस्य पर्याय-शब्देषु क्वचिदपि निघण्टुसंग्रहे ''सीतवार्तिक'' नाम नैव दृश्यते । तथैव, ख. टीकाया-मस्योल्लेखो ऽपि नो विहितः । (संपादकः)

15 क. ख. मातुलिंग 16 ख. कारयेद्बुधः 17 क. ख. तेषां, भै. र. आसां 18 क. पिबेद्वापि तिस्तो वातसुषांबुना; ख. पिबेद्वापि तिश्री वात सुषंबुना ।

अम्लैश्च[1] मद्यैः पातव्या[1] घृतेन पयसा तथा[2] ।
एषा[3] काङ्का[4]यनेनोक्ता गुटिका[5] गुल्मनाशिनी[6] ।।१४१।।

[7]अर्शोहृद्रोगशमनी[7] [8]क्रमीणामपि नाशिनी[8] ।
❋गोमू[9]त्रयुक्ता शमयेत्[9] कफगुल्मञ्चिरो[10]त्थितम् ❋ ।।१४२।।

क्षीरेण पित्त[11]गुल्मञ्च मद्यै[12] रम्लैश्च वातिकम्[12] ।
त्रि[13]फलारसमूत्रैश्च[13] नि[14]हन्यात् सान्निपातिकम्[14] ।।१ऊ३।।

+'रक्तगुल्मे च नारीणामुष्ट्रीक्षीरेण पाययेत्'+ ।।

टीका:— सठि[15] टां १०, पुहकरमूल टां १०, दातणी टां १०, चित्रक टां १०, सोवनमाखी टां १०, वच टां १०, (वच से पहले मूल पाठ में शृङ्गबेर[16]=अद्रक भी है), निशोथ[17] टां १०, हींग टां १०, "जवखार[18] टां १०, (संशोधित पाठानुसार टां २०) (मूल पाठ क में यवक्षारं पलार्द्धं" है), चूक[19] (अम्लवेतस) टां १० (२०), अजवाइन[20] टां १० (भै. र. आदि ग्रंथों में 'सीतवर्तिकं' के स्थान पर 'कार्षिकं' अर्थात् एक तोला कहा गया है ।), जीरो टां ५, (मिरच[21] टां ५—मूल पाठानुसार) धाणा टां ५ (अजवाइन, जीरा व धाणा का तोल मूल पाठ में एक सा है किंतु टीका में १०-५-५ क्रमशः इनके तोल भूल से दे दिये

1-1 क. अम्लेभ्वमद्यैः पीतव्य; ख. आम्लैश्च मद्ये पीतव्यं; भै. र., चक्र, च अम्लैर्मद्यैश्च यूषैश्च; र. र. अम्लैर्द्रव्यैश्च यूषैश्च 2 भै. र., चक्र., र. र. च. ऽथवा 3 क. एषां 4 ख. कंकायने............'; क. .... प्रोक्ता 5 भै. र., चक्र. च गुडिका 6 क. नासिनी, ख. नाशनी ।

7-7 क. असों हृद्रोगसमनी, ख. अर्शहदोग समये 8-8 ख. कफगुल्मचिरोछितं 9-9 क, मूत्रकृच्छ्रं तु समयेत्; ❋-❋ 'गोमूत्रयुक्ता............ चिरोत्थितम्', पाठोऽयं ख. ग्रन्थे नोपलभ्यते । 10 क. चिरोछितं 11 क. पित 12-12 ख. मथै आमलैश्च वातकं 13 ख. त्रिफलारसमूत्रेश्च 14 क. नियछेत्सानिपातिकं, ख. निपछं सनिपातकं +-+ 'रक्तगुल्मे............ पाययेत्'. पाठोऽयं ख. ग्रंथ एव लभ्यते ।

15 ख. कचूर 16 ख. सूंठि 17 ख. टाँ १ 18 ख. टाँ २० 19 ख. अमलवेत को रस टां २।। 20 ख. अजवाणी टां ५ 21 ख. मिरच टां ५ ।

गये हैं।), सौंफ टां ५ (टीका में 'सीतवार्त्तिकं' का अर्थ सौंफ[1] किया गया है जो उचित नहीं है) कालोजीरो टां ५, अजमोद टां ५, वोषद (औषधियों को) वांटि, कपडछाणि करि बिजोरा रस सुं गोली टां २।। प्रमाण बांधीजै। ज्वरजठरगुदार्शोंसु वह्निमांद्यक्षया स्युः ? (यह अपपाठ इस स्थान पर नहीं होना चाहिये, मूल पाठ में यह नहीं कहा गया है।) [2]मूत्रकृच्छ्र ? कफगुल्म घणां दिहाडां (दिनों) रो जाइ। दूध सूं पित्तगुल्म जाई। मद्य व अम्लों से (टीका भाग में क. में 'मदन इ आंवला स्सुं लिखा है) वात गुल्म जाइ। गौमूत्र अनइ-त्रिफला रा रस स्युं सन्निपातज जाइ। स्त्री रा रक्तगुल्म सांडि (ऊंट) रा दूध मुं जाई।

अथ वर्द्धमानपिप्पली[1]

※'त्रिवृध्या पञ्चवृध्या च सप्तवृध्या तथा कणा।
एवम्पीतं दशदिनं पिप्पलीवर्धमानिका ।। सुनिरोगा यान्ति'※

---

1 ख. टीका में सीतवार्त्तिकं को लिखना भूल गये हैं। 2 'मूत्रकृच्छ्र से .... क्षया स्युः', तक का पाठ ख. ग्रंथ में नहीं है। इसके स्थान पर उसमें, "प्रथम सा तो ? १ ऊंटणी का दूध सों दीजै। गोली १ प्रात। गोली १ सांड। स्त्री को रक्तगुल्म जाई।।"

1 क. वृद्धमानपिप्पलिः; क. ग्रन्थे पाठस्यास्याऽभावः ख. ग्रन्थोक्तपाठस्तस्मादत्र प्रदर्शितः। ※-※ 'त्रिवृध्या...... ...यान्ति', अस्मिन्स्थाने ग. ग्रन्थे—

"क्रमवृद्ध्या पञ्चवृद्ध्या वा सप्तवृद्ध्या तथा कणा।
एवं पीतं दशाहानि पिप्पलीवर्द्धमानकम्" ।। इति पाठः

मल्लप्रकाशे—

'त्रिभिरथ परिवृद्धं पञ्चभिः सप्तभिर्वा,
दशभिरिति प्रवृद्धं पिप्पली वर्द्धमानम्।
इति पिबति नरो यस्तस्य नो श्वासकास—
ज्वरजठरगदार्शो वह्निमान्द्यं क्षयाः स्युः।।"

अथ रसोनपिण्ड:[1]

पलं शतं रसोनस्य[2] गुटिका[3] अकुलीकृता: ।
+तदुग्रन्धनाशाय[4] रात्रौ तक्रे विनिक्षिपेत् ।।१४४।।

प्रात: सूक्ष्मतरं पिष्ट्वा तिलस्य कुडवन्तथा ।+
हिङ्गु[5] त्रिकटुकं[6] क्षारौ[7] द्वौ[8] पञ्च[8] लवणानि च ।।१४५।।

गदनिग्रहे पाठान्तरम्—

"क्रमवृद्ध्या दशाहानि दशपैप्पलिकं दिनम् ।
वर्द्धयेत् पयसा सार्धं तथैवापनयेत्पुन: ।।
जीर्णे जीर्णे च भुञ्जीत षष्टिकं क्षीरसर्पिषा ।
पिप्पलीनां सहस्रस्य प्रयोगोऽयं रसायन: ।।
पिष्टास्ता: बलिभि: सेव्या शृता मध्यबलैर्नरै: ।
शीतीकृता चाल्पबलैर्वीक्ष्य दोषामयान् प्रति ।।
दशपैप्पलिको ज्येष्ठो मध्यम: सप्तभि: स्मृत: ।
यस्त्रिपिप्पलिपर्यन्त: स कनीयान् स चावलै: ।।
बृंहणं स्वर्यमायुष्यं प्लीहोदरविनाशनम् ।
वयस: स्थापनं मेध्यं पिप्पलीनां रसायनम् ।।"

अपरञ्च—ग. नि.

"पञ्चाष्टौ सप्त दश वा पिप्पलीर्मधुसर्पिषा ।
रसायनगुणान्वेषी समामेकां प्रयोजयेत् ।।"

1 क. लसणप्पंड: 2 क. लसोनस्या 3 क. गुटिकान्यकुलीकृता:; ग. गुलिका विकुन्नीकृम् *-* 'पलं शतं .... कृता:' अस्मिन्स्थाने "रसोनस्य पलशतं तिलस्य कुडवन्तथा" इति भै. र., ग. नि., चक्र. भा. प्र., र. र., च पाठ:; वृ. वै. 'तुला सम्यग्रसोनस्य तिलस्य कुडवन्तथा' इति पाठ: । 4 क. नाशाय +-+'तदुग्रगंध ...... कुडवंतथा' पाठोऽयं चक्र., भै. र., वृ. वै., ग. नि. भा. प्र., र. र. च नोपलभ्यते । "तदुद्रगंध..........प्रात: सूक्ष्मतरं पिष्ट्वा" पर्यन्त एव पाठ: गग्रन्थे दृश्यते । तत्र 'तिलस्य कुडवन्तथा' इति पाठ: नोपलभ्यते । 5 क. हिंगु 6 क. त्रिकटुकं 7. क. क्षीरं—टीकाभागे 'जीरा' इति गृहीत: 8-8 क. क्षाराणि किंतु टीका भागे द्वौ क्षारावेव पठितौ ।

शतपुष्पा[1] तथा[2] कुष्ठं पिप्पलीमूलचित्रकौ[3] ।
अजमोदा यवानी च धान्यकञ्चापि बुद्धिमान् ।।१४६।।

प्रत्येकञ्च[5] पलञ्चैषां[6] सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
घृतभाण्डे दृढे[7] चैतत्[8] स्थापयेद्[8] दिनषोडशम्[9] ।।१४७।।

प्रक्षिप्य कटुतैलस्य[10] प्रस्थार्द्धं काञ्जिकस्य च ।
खादयेत्[11] कर्षमानञ्च [12]तोयमेरण्डजं पिबेत्[12] ।।१४८।।

❀[13]अजीर्णमातपं रोषमतिनीरं पयो गुडम्[13] ।
[14]रसोनमश्नन् पुरुषस्त्यजेदेतन्निरन्तरम्[14] ।।१४९।।

आमवाते[15] तथा[16] शोथे सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रये ।
अपस्मारेऽनले मन्दे श्वासकासगदेषु[17] च ।।१५०।।
सोन्मादे वात[18] भङ्गे च शूले जत्रुषु[19] शस्यते ।।+

टीका:— लसण छोलि गुली करि[20] टा १००० राति छाछि मांहि घाति राखीजै । परभाति लसण पीसीजे; वीजा ही उसा सहि वांटि छाणि भेला कीजइ तियां रा नामः— तिल टां ४०, हींग टां १०, त्रिफला[21]

---

1 क. शतपुष्फा, ग. 'शतपुष्पा तथा कुष्ठं' इति पाठस्तत्र नोपलभ्यते । 2 ग. नि. वचा; भा. प्र. निशा 3 क. चित्रकै: 4 क. बुधिमान् 5 क. प्रत्यकं 6 क. चापलं 7-7 क. दृढ चोपि 8 क. स्थापये 9 क. षोडशः ।

10 भै. र., वृ. वै., ग. नि., चक्र., भा. प्र., र. र. च 'तैलमानीञ्च' 11. खादयेत् 12-12 भै. र., वृ. वै., ग. नि., चक्र., भा. प्र., र. र., च 'तोयं मद्यं पिबेदनु' 13-13 क. 'अजीर्णमातपरोपमतिनीर पयो गुडम्' 14-14 क. लसोनमुष्णत् पुरुषस्त्यजेदेत निरंतरं, ग. लशोनमश्नुतपुरुष तेजो देता निरंतरं । ❀-❀ 'अजीर्णमातपं ....निरन्तरम्' पाठोऽयं र. र., चक्र., भै. र., भा. प्र., ग. नि., वृ. वै. च नोपलभ्यते । 15 क. आमवातं 16 भै. र., वृ. वै., ग. नि., चक्र., र. र., च तथा वाते; भा. प्रा. वातरक्ते 17 भै. र., चक्र, भा. प्र. गरेषु च; वृ. वै. भगन्दरे, ग. नि. गलामये; र. र. ज्वरेषु च 18 क. बातभागं 19 क. तुषु प्रशस्यते; ग. नि. जत्रुषु शस्यते । + अस्य योगस्य मूल पाठः ख. ग्रन्थे नोपलभ्यते ।
20 ख. लसण सेर १०, 21 ख. त्रिफला का उल्लेख नहीं है, मूल पाठ में भी नहीं है ।

टां ३०, त्रिगडू टां ३०, जीरो[1] टां १०, जवखार टां १०, साजी टां १०, सीधो टां १०, सौंचल लूंण टाँ १०. विडलूंण टां १०, कचलूंण टां १०, समुद्रलूंण टां १०, सोवा[2] टां १०. कूट टां १०, पीपलामूल टाँ १० चित्रक टां १०, ऋजमोद टां १०, अजमो टां १०, [3]सरिसव रो तेलि टां १२८, कांजी टां १२८, लसण उसा—तैल कांजी भेली करि घृतइ चीकणइ वासण मंई दिन १६ राखीजै पछै[4] टां ३ तथा ४ उपध एरण्ड रा क्वाथ स्युं लीजई। इतरा थोक टालीजइ। अजीर्ण, तावड़ौ, रोस, अधिकउ पाणी। कलिंग भाषा रो निबंध टां २।। कर्ष कहीजै अयर टां १० पल थाइ तथा मागव रै मत्त: कर्ष रा टां ४ अर मागध रे मत पल टां १६ थाइ। अठे लसण पिंड रे विषै कलिङ्ग परिभाषा रो निबंध लिखीयाँ छै। पिण लोक कहै छै मागधी रा पल लीजै अस महादेव मिश्र पातीसाही छै। सु कहै छै जू कलिंग हीज रूडौ। दूध गुड़ निरन्तर टालीजई। गुण आंब वाव सोथ सर्वांग, अपस्मार, मदाग्नि, तिलक ? श्वास, कास, उन्माद[5], वाव रउ भाग, शूल एता जाइ।

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीनृसिंहभारती-तत् शिष्य परमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीआनन्दभारती—विरचितायां (आनन्द-मालायाः) गुटिका (धिकारस्तृतीयः[6]) ।।❀



1 क. व ख. के टीकाकारों ने 'क्षीर' का अर्थ जीरा किया है जो उचित नहीं है। 2 ख. सौंफ 3 ख. धाणा-मूल पाठ में धाणा है, क. की टीका में भूल से नहीं कहा गया है। 4 ख. टं २।। खवाजे 5 ख. गुदादोष-उन्माद-ख. के टीकाकार ने मूल पाठ के 'गदेपु' को 'गुदेपु' पढ लिया होगा 6 क. गुटिकारस्नतियः ❀ ख. 'इति श्रीयोग सास्त्रे योगज्ञाने आनंदकृत सिधिकृत गुटिकाधिकारो नाम चतुर्थोध्याय। स्माप्ता।।'

अथ लेपाधिकारश्चतुर्थः

अथ दशाङ्गलेपः[1]

शिरीषयष्टीनतचन्दनैला-मांसीहरिद्राद्वयकुष्ठ[2]वालेः[3] ।
लेपो दशाङ्गः[4] सघृतः [5]प्रयोज्यो विसर्पकण्डू×व्रणशोथहारी[5] ॥१॥

टीका—सिरीसि की छालि टां २।।, महलोठी टां २।।, तगर टां २।।, रक्तचन्दन टां २।।, एलादाणा टां २।।, छड टाँ २।।, हलद टां २।।, दारुहलद टां २।।, कूठ टाँ २।।, वालौ टां २।।, इन औषध समान[6] गोघृत लीजै। औषध पीसीजै। अंगि मर्दन कीजै। षत, गूमडौ, कण्डू, जलनी (?) दाह (?) एते रोग जाहि।

---

1 क. दसांग 2 वृ.वै. यव 3 क. जालै; ग.नि. तोयैः 4 ख. दसांग 5-5 'प्रयोज्यो ··· ··· हारी', क.ख. पाठोऽयं न दृश्यते। × यो.र. कण्डू स्थाने 'दुष्ट' इति पाठः, वृ.यो.त. 'वुष्ठ' इति पाठः 5-5 वृ.वै. कण्डूज्वरसर्पिहारी चक्र. व्रणस्थाने "ज्वर" ×भा.प्र. 'कण्डूव्रण' स्थाने "कुष्ठज्वर" इति पाठः

पाटान्तरम् शा०—

'शिरीषं मधुयष्टी च तगरं रक्तचन्दनम् ।
एला मांसी निशायुग्मं कुष्ठं बालकमेव च ॥
इति संचूर्ण्य लेपोऽयं पञ्चमांशघृतप्लुतः ।
जलेन क्रियते सुज्ञैर्दशाङ्ग इति संज्ञितः ॥
विसर्पान् विषविस्फोटान् शोथान्दुष्टव्रणाञ्जयेत् ॥'

6 शार्ङ्गधर में समस्त चूर्ण की अपेक्षा से स्पष्टतः केवल पञ्चमांश गोघृत मिलाने का आदेश है। वहीं साधारण नियम लेप में स्नेह मिलाने का इस प्रकार है:—

'षड्भागं पैत्तिके स्नेहं चतुर्भागं तु वातिके ।
अष्टभागं तु कफजे स्नेहमात्रां प्रदापयेत् ॥'

समान भाग घृत मिलाने की कल्पना टीकाकार की है। यह मूल पाठ में नहीं है।
(सम्पादक)

अथ पुनर्नवादिलेपः

पुनर्नवां दारु शुण्ठीं सर्षपः[1] शिग्रुरेव[2] च ।
पिष्ट्वाचैवारनालेन प्रलेपः[3] सर्वशोथहा[4] ।।२।।

टीका—साटी री जड़, देवदारू, शूंठी, सिरस्युं, सोहींजणा रा जड़ री छालि, उसा सर्व वांटि छाणि कांजी सूं लेप कीजै सर्वाङ्ग सोजो जाइ ।

अथ इङ्गुदीलेपः

×इङ्गुदिनिशावि[5]-शाला-रास्ना-सैन्धवदारुकुष्ठरविदुग्धैः ।×
[6]दत्त। क्रमेण लेपो हरति महाकर्णकग्रन्थिम्[6] ।।३।।

टीका—हिंगोराफल मांहिली मींजी, हलद, तूंबा री जड़, [रास्ना] सींधौ, देवदारु, कुठ, उपध सर्व वांटि छाणि अर्कदुग्ध मांहि भेली गांठियां कर्णकरियां उपरि लेप कीजइ कर्णक जाइ ।

अथ देवदार्व्यादिलेपः[7]

देवदारु नतं[8] कुष्ठं नलदं विश्वभेषजम् ।
Yलेपः काञ्जिकसम्पिष्टः सद्यो हन्ति शिरोरुजम् ।।४।Y

टीका—देवदारु, तगर, कूठ, वालउ,[9] [सौंठ]उपध सममात्रा वांटि कांजी स्यूं लेप कीजइ, सिरपीडा जाइ ।

---

1 ख. शर्षपा, ख. सर्षसी 2 क. सिग्रु, ख. सीग्र 3 ख. प्रलेपु 4 क. सर्वशोथकी, ख. सर्वसोथहा ×-× 'पिष्ट्वा ·· आरनालेन', अस्मिन्स्थाने भा.प्र. "अम्लपिष्टः सुखोष्णोऽयं", इति पाठः ग. हिंगोटीलेप, ग.नि. इङ्गुद्यादिलेपः 5 क. बाला *-* 'इङ्गुदि ······ दुग्धैः', अस्मिन्स्थाने ख. ग्रन्थे "इगुडि-निसाविसालारासना-सौधव दारुकुष्ठं । नलदं विश्वभेपजम् ।" इति पाठः ।। ग.नि. "इङ्गुदिनिशाविशालासैन्धव-सुरदारुकुष्ठरविदुग्धैः", इति पाठः; यो.र. 'हिङ्गु-द्विनिशाविशाला-सैन्धवसुरदारु-कुष्ठरविदुग्धैः ।', इति पाठः 6 क. दत; ख. 6-6 लेपकांजिकरविदुग्धै दत्तक्रमेण लेपो हरित महार्कणिकग्रथि । पाटान्तरम् भा.प्र., वृ.यो.त. च—

"निशाविशालाऽऽमयभाणिमन्थ-दार्वीङ्गुदीमूलकृतः प्रलेपः ।
प्रभाकरक्षीरयुतः प्रभावाद् व्यस्तः समस्तोऽप्यथ कर्णिकघ्नः ।।" इति

7 क. देवदारुलेप 8 वृ.वै. जलं Y-Y 'लेपः ········ शिरोरुजम्', अस्मिन्स्थाने "लेपः कांजिकसम्पिष्ट स्तैलयुक्तः शिरोर्त्तिनुत्" इति वृ.वै., यो.त., वृ.यो.त., चक्र च पाठः। 9 ख. उशीर ।

निम्बपत्रादिलेपः

निम्बपत्रं तिलं दन्ती-त्रिवृत्सैन्धवमाक्षिकैः ।
दुष्टव्रणप्रशमनो* लेपः शोधनकेशरी* ॥५॥

टीका—नीब रा पान, तिल, दांतिए, निशोत, सींधों, सहत सूं लेप कीजै । व्रण उपरि सोधन के करि (लिये) लेप कहीजै ।

दन्त्यादिलेपः

दन्ती चित्रकमूलत्वक् सुधार्कपयसी[1] गुड़ः ।
Pभल्लातकास्थि कासीसं[2] लेपो भिन्द्याच्छिलामपि[3]Y ॥६॥P

टीका—दांतणी री जड री छालि, चित्रक री जड री छालि, (थूहर का दूध[4]) अर्कदुग्ध, गुल, भिलावां री मोंजी, कासीस[5] उषध स्ममात्रा करि लेप कीजै । [6]सर्वरोगां नै गमावै । (यह लेप शिला को भी तोड़ डालता है)

- 'प्रशमनो .... केशरी', अस्मिन्स्थाने ग. ग्रंथे—"परिश्च लेपः शोथशोधनकेसरी" इति पाठ; : शा. "प्रशमनो लेपः शोधनरोपणः" इति पाठः ।

1 शा. यो.र.च. स्नुहृर्क; ख. सुधाकं 2 क. काशीथं 3 क. भिधाच्छिलामपि ग. भिधात् सिला मई । P-P 'भल्लातकास्थि ...... शिलामपि'; अस्मिन् स्थाने शा. "भल्लातकश्च कासीसं सैन्धवं दारणे स्मृतः" इति पाठः यो.र. भल्लातकास्थि-कासीससैन्धवैर्दारणः स्मृतः ॥' इति पाठः; 'भिन्द्याच्छिलामपि', इत्यस्याग्रेऽयं पाठः चरकसंहितायामधिकः—

'बहिर्मार्गाश्रितं ग्रन्थिं किं पुनः कफसम्भवम् ॥'

4 ख. गच, सुधा = सेहुण्डः 5 यो.र. में सैंधव भी है ।

Yपाठान्तरम् वृ. वाग्भटे—

'दन्ती-चित्रकमूलत्वक् कासीसार्कस्नुहीक्षीर-भल्लातकास्थि-भिरुष्णैर्लेपः शिलामपि भिनत्ति ।'

अथ प्रियङ्ग्वादि लेपः[1]

[2]प्रियङ्गवश्चन्दनलोध्रदारु,[2] [3]श्यामाकलिः पाण्डुवटस्य पत्रम्[3] ।
तोयेन[4] पिष्टं सुविलासिनीनां[4] [5]कुर्याच्च वक्त्राणि शशिप्रभानि[5] ॥७॥

टीका—प्रियंगु, रतांजनी, लोद, दारुहलद, (श्यामाकली[6] ?) पीला बड रा पान उषध सममात्र पीसि पांणी सुं लेप । [7]चन्द्रप्रभा समान बदन होइ[7] ॥

---

1 क. प्रियंगादि लेपः 2-2 क. 'प्रियंगु-रक्तचंदन-लोद्र-दारु' इति पाठः; ख.'प्रियंगु-वश्चंदन्-लोदमिश्र' इति पाठः । 3-3 क. 'श्यामाकली ·· ···· ' ख. 'कालीयकं पांडुवटस्य पात्रं' इति पाठः । टि. कालीयकं = पीतचन्दनम्, श्यामा = शारिवा ('शारिवायां निशि श्यामाश्यामौ च हरितासितौ'; "श्यामापदेन कृष्णा श्वेताऽपि शारिवा कथ्यते") अथवा प्रियङ्गुः । श्यामाकलिः = गन्धप्रियङ्गुकाकलिका, प्रियङ्गुर्द्विविधः- प्रियङ्गु-गन्धप्रियङ्गुका च । गन्धप्रियङ्गुकाया कलिकानि दाहघ्नानि ।

4-4 क. 'पिष्टानि विलासनीनां', ख. "प्रष्टा च विलसनीना" 5-5 क. 'कुर्वन्तु वक्रानिसप्रभानि', ख. "कुर्विति वक्राणि शशिप्रमाणि ।" 6 क. के 'श्यामाकली' व ख. के "कालीयकं" का अर्थ दोनों टीकाकारों ने नहीं लिखा है । 7-7 ख. मुप (ख) जोति होइ ॥ योगोऽयं ग. ग्रन्थे नोपलभ्यते ।

पाठान्तरम्—

1 'रक्तचन्दन-मञ्जिष्टा-कुष्ठलोध्रप्रियङ्गवः ।
वटाङ्कुरा मसूराश्च व्यङ्गघ्ना मुखकान्तिदाः ॥'
(भै.र., वृ.यो.त., यो.त., शा., ग.नि., वृ.वै., र.र., चक्र. च)

2 "वटस्य पाण्डुपत्राणि मालती रक्तचन्दनम् ।
कुष्ठं कालीयकं लोध्रमेभिर्लेपं प्रयोजयेत् ॥
यौवन-पिटिकानां तु व्यङ्गानां च विनाशनम् ॥" यो.र.

अथ लोध्रादिलेपः[1]

लोध्रधान्य[4]वचा[4]लेपस्तारुण्यपिटिकाऽपहः ।
अथवा कुङ्कुमं रक्तचन्दनान्वितमालिपेत् ।।८।।

टीका—[3]लोद्र, धाणा, वच, (इनका लेप तारुण्यपीटिकाओं का नाश करता है ।[3]
अथवा—) [4]कुंकुम, रक्तचंदन ईयां रो वांटि पाणी सेती लेप कीजई ।
मुष री षील मोटियारपणा री जाई[4] ।।

---

1 शा. चक्र च 'तारुण्यपीटिकाहरलेप' इति नाम । 2-2 र.र. नागबलालेपः; ग.नि. धात्रीवचालेपः । *-* 'अथवा ....मालिपेत्', अस्मिन्स्थाने शा., र.र., भै.र., चक्र०, यो.र., ग.नि., वृ.यो.त. च—''तद्वद् गोरोचनायुक्तं मरिचं मुखलेपनम्'' इति पाठः। 3-3 ख. लोद, धणीया, वचा लेप मुष कील जाई । अथवा 4-4 कुंकुम, रक्त-चंदनु लेपु मुष कील जाई ।।

इन योगों के पश्चात् 'ग' प्रति में अतिरिक्त योग—

1 पारो टं १, हिंगुलु टं १, विष टं १, कचूर टं. १, चूर्ण कीजे । अलंबुष पुट ३, निर्गुण्डी पुट ३, धतूरा पुट ३, इस प्रकार ६ पुट दीजै । लिंगाग्र (?) लेप करी । कठिन भयो । अथवा वाराहवसा लेपो, कठिन होइ ।

2 फिटकरी टं १, शोरा टं १, तुत्थ टं १, नींबू के रस से घिस कर लेवै (लेपै ?) स्त्री परहेज करै तब वाई फिरंग जाइ ।

3 माहिषी का माखण, कूठ, खिरेटी की जड, कुटकी, वच, सुरमा, हलद, एते सम भाग । महीषी घृत व तेल (?) मांई 21 दिन ना सु लेइ।। स्त्री पतित स्तन उन्नत होइ ।। कठिन विस्तीर्ण होइ ।।*

* (भै.र.–'महिषीभवनवनीत व्याधिबलोग्रा तथैव नागबला ।
पिष्ट्वा मर्दनयोगात् पीनं कठिनं स्तनं कुरुते ।।'
"गोमहिषीघृतसहितं तैलं श्यामाकृताञ्जलिवचाभिः ।
त्रिकटुनिशाभिः सिद्धं नस्यं स्तनवर्द्धनं परम् ।।")

इति लेपाधिकारः

— * —

अथ पञ्चमोऽधिकारः

अवलेहाः

अथ महाभल्लातकावलेहः[1]

निम्बगोपाऽरुणाकट्वी[2]त्रायन्तीत्रिफलाघनम् ।
पर्पटाऽवल्गुजानन्ता[3]-वचाखदिरचन्दनम्[4] ॥९॥

पाठाशुण्ठी [5]शटीभार्ङ्गीवासाभूनिम्बवत्सकम्[5] ।
[6]श्यामेन्द्रवारुणीमूर्वा-[7]विडङ्गेन्द्रविषानलम्[7] ॥१०॥

[8]हस्तिकर्णामृता चैव[8] पटोलं रजनीद्वयम् ।
कणाऽऽरग्वधसप्ताह्व[9]-[10]कृष्णा चैवोच्चटाफलम्[10] ॥११॥

---

1 क. महाभल्लातकावलेह; भै.र. महाभल्लातकगुड । 2 वृ.यो.त. (ग.) मृद्वी *-* 'निम्बगोपारुणा ········ घनम्', पाठोऽयं ग.नि. नोपलभ्यते । 3 क. पर्पटा-वल्युजा; भै.र., र.र.च. 'पर्पटी ······ '; वृ.वै. पर्पट्यवलगुजा, 4 क. चारखदिर, (अवल्गुजा = बापचीति लोके) 5-5 क. भागी वासाभूनिम्बजासकं । र.र., भा.प्र., यो.र, भै र., यो.त., बृ.यो.त., वृ.वै.ग.नि.च. 'जासकं' स्थाने "वत्सकम्" पठितम् । 6 क. श्यामंद्र । 7-7 क. विडंगै चविकाठलं, ग. चविकानलम्; र.र. विडगं तु विसानलम्; भां.प्र. विडङ्गेन्द्रयवानलम्; यो.र विडंगातिविषानलम्; बृ यो.त. विडंगानिविषानलम्; ग.नि. बिडङ्गेन्द्रयवं जलम् । ('विडङ्गेन्द्रविषानलम्' = बिडङ्ग-इन्द्रयवं, अतिविषा, चित्रकञ्च;), विडङ्गं चविकानलं = (बिडङ्ग-चव्यं-चित्रकञ्च); 'बिडङ्गं तु विसा (षा) नलम्' = (बिडङ्गं अतिविषा, चित्रकञ्च); 'बिडङ्गेन्द्रय-वानलम् = (बिडङ्गं, इन्द्रयवं, चित्रकञ्च); 'बिडङ्गानिविषानलम्' = बिडङ्ग— (अतिविषा चित्रकं च), बिडङ्गेन्द्रयवं जलम् = (बिडङ्ग, इन्द्रयवं, मुस्तकञ्च ।) 8-8 क. हस्तिकर्णामृताश्चैव; वृ.वै., भा.प्र., भै.र.च. 'हस्तिकर्णामृताद्रेका; र.र. हस्तिकर्णमृतात्रेका ?' बृ.यो.त., यो र.च. हस्तिकर्णामृताब्दाह्व; ग.नि. हस्ति-कर्ण्यमृताद्राक्षा; यो त. हस्तिकर्णामृताद्रेष्का । ('हस्तिकर्णामृताचैव' = हस्तिकर्णपलाशं अथवा रक्तएरण्डअमृता च; 'हस्तिकर्णामृताद्रेका' = हस्तिक. प.—अमृता – महानिम्बं च; 'हस्तिकर्णामृताब्दाह्व' = ह.क प.—अमृता-मुस्तकञ्च; 'हस्तिकर्ण्यमृताद्राक्षा' = हस्तिकर्णी-अमृता-द्राक्षा च; त्रेका—गोरखमुण्डी) 9 क. सप्तानां; र.र. सप्ताश्च, भा प्र., यो.र, भै.र., वृ.यो.त., वृ.वै., ग.नि., यो.त. च सप्ताह्व (र.र. शालिग्राम-महोदयैः सप्ताश्च = अर्कः कथितः, सप्ताह्वः = सतोना इति लोके) 10-10 क. कृष्णा

[1]मञ्जिष्ठा लाङ्गली रास्ना[1] नक्तमालः[2] पुनर्नवा[2] ।
[3]दन्ती बीजकसारञ्च भृङ्गराजं कुरण्टकम्[3] ॥१२॥

※कालशाखोटकं[4] चैव द्विपलांशं प्रकल्पयेत् ।※
×जलद्रोणे विपक्तव्यं चतुर्भागावशेषितम् ॥१३॥×Y

(गतांशः)
चैवो वटाफलं; ग. कृष्णाचैवोत्वट्फलं, र.र. भै.र., वृ वै., कृष्णवेत्रोच्चटाफलम्, भा.प्र. त्रिवृद्वेत्रोच्चटाफलम्; यो.र., बृ.यो.त. च शिरीषं चोच्चटाफलम्; ग.नि. बिल्वश्योनाकपाटलाः; यो.त, कृष्णामूलोच्चटाफलम्' । (कृष्णामूलं=पिप्पलीमूलं, उच्चटाफलं=श्वेतगुञ्जाफलं, कृष्णवेत्र=कालीबेत इति लोके, शिरीषं=शिरीषत्वक्; कृष्णामूल=पिप्पलीमूलं) ग नि. 'बिल्वश्योनाकपाटला' इति पाठस्याग्रे—'एषां द्विपलिकान् भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ॥ अष्टभागावशेषन्तु कषायमवतारयेत्' इत्यधिकः पाठः ।

1-1 भै.र., बृ.वै. च 'मञ्जिष्ठा लाङ्गली रास्ना' स्थाने "भूकन्दं तृणपर्णं च" इति पाठः; र.र. 'तृणपर्णं' स्थाने "तिलपर्णं" पठितः (भूकन्द=सूरणं, तिलपर्णं= रक्तचन्दनम् 2-2 भै.र.; बृ.वै.च 'नक्तमालः पुनर्नवा' स्थाने जिङ्गी पद्माटमूपली' इति पाठः; र.र. 'पद्माट' स्थाने "पद्मा च" इति पाठः, (पद्माट=चकवडबीजानि किन्तु पद्मा=स्थलकमलं 3-3 'दन्ती बीजकसारं ····· कुरण्टकम्' अस्मिन्स्थाने र.र., बृ वै, भै.र.च "विष्वक्सेना च कैटर्यं शरपुङ्खाऽथ कञ्चुकी" इति पाठः (दंती=दंतीमूलम्, बीजकसारं=विजयसारं, भृङ्गराजः=भांगरा इति लोके, कुरंटकं= कटसरैया इति लोके; किन्तु विष्वक्सेना=प्रियङ्गुपुष्पाणि, कैटर्यंकट्फलं, कञ्चुकी=शिरीषत्वक्)
14 क. कालसोपोटकं, ग. कङ्काल साखटकं, भा.प्र. अंकोटकञ्च शाखोटं । 15 भा.प्र. पृथक् पृथक् ※-※ 'काल-शाखोटकं ····· प्रकल्पयेत्' पाठोऽयं र.र. यो.र., भै.र., यो.त., बृ.यो.त., बृ.वै.च नोपलभ्यते । ×-× 'जलद्रोणे ·· भागावशेषितम्' अस्मिन् स्थाने—

"एतेषां द्विपलान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
अष्टभागावशिष्टञ्च कषायमवतारयेत्" इति, यो.र., र.र., भै.र., यो.त., बृ.यो.त. बृ.वै.च पाठः; भा प्र. 'अङ्कोटकं पृथक् पृथक्' अस्याग्रे—
"गृह्णीयात्तानि सर्वाणि जलद्रोणे पचेच्छनैः।
अष्टमांशावशेषन्तु कषायमवतारयेत् ॥
विधाय वाससा पूतं स्थापयेद् भाजने दृढे, ॥' इति पाठः

ग. ग्रन्थे 'जलद्रोणे ·· च सोषितं (शेषितम्) अस्याग्रे "विधाय वाससा पूतं स्थापयेद्भाजने दृढे" इत्येव पाठः । Y-Y "मञ्जिष्ठा लाङ्गली·················चतुर्भागावशेषितम्', पाठोऽयं ग.नि. नास्ति ।

भल्लातकसहस्राणि[1] च्छित्वा अष्टगुणेऽम्भसि[2] ।
पचेदष्ट'वशेषं[3] तत् कषायमवतारयेत् ॥१४॥

+द्वौ कषायौ समादाय वस्त्रपूतौ च कारयेत् ।+
⊕गुडस्य च तुलां दत्त्वा लेहं संसाधयेद्भिषक् ॥१५॥⊕

[4]भल्लातकसहस्राणां मज्जानं तत्र दापयेत्[4] ।
त्रिकटु त्रिफला मुस्त [5]विडङ्गञ्चित्रकन्तथा[5] ॥१६॥

+सैन्धवं चन्दनं कुष्ठं[6] [7]पलमात्राणि दापयेत्[7] ।+
❀सौगन्ध्यार्थञ्च दातव्यं चातुर्जातम्पलम्पलम् ॥१७॥❀

---

1 ग. सहस्रेकं, 2 र.र. यो.त च त्रीण्यर्मणेऽम्भसि, भा.प्र (च्छित्वा तु) त्र्यर्मणाम्भसि, यो.र. बृ.यो.त.च क्षिपेच्छित्त्वाऽर्मणेऽम्भसि; भै.र. बृ वै.च (भल्लातकसहस्राणि त्रीणि च्छित्त्वाऽर्मणेऽम्भसि किन्तु गदनिग्रहे 'छित्वा द्रोणमितेऽम्भसि' इति पाठः 3 ग. खचेदष्टावशेषेण; र.र., यो.र., भै.र., यो.त., बृ.यो त., बृ.वै., ग.नि.च 'चतुर्भागावशिष्टं तु'; +-+ 'द्वौ कषायौ ……… कारयेत्' अस्याग्रे यो.र., यो त.च "एकीकृत्य कषायौ तौ पुनरग्नावधिश्रयेत्" इत्यधिकः पाठः ; भा.प्र. अस्मिन्स्थाने "तच्च वस्त्रेण संशोध्य द्वौ कषायौ विमिश्रयेत्" इनि पाठः

⊕-⊕ 'गुडस्य……… भिषक्' अस्मिन्स्थाने ग. पुस्तके "गुडस्य चतुः पलं देयं मज्जाभल्लातकं तथा" इति पाठः । भा.प्र. गुडं शतपलं दत्वा लेहवत् तत्पचेच्छनैः ।' यो.र. बृ.यो.त., यो.त.च 'गुडस्यैकतुलां ……।' बृ.वै., भै.र.च "गुडस्य तु तुलां ताभ्यां कषायाभ्यां पचेद्भिषक्"

4-4 क. 'भल्लातकसहस्राणां मजानां‥'; 'भल्लातक……दापयेत्', अस्मिन्स्थाने ग. पुस्तके "संप्पस हस्त मज्जा च गुडमज्जा प्रदापयेत्" इति पाठः '5-5 'बिडंगं चित्रकं तथा'. अस्मिन्स्थाने भै.र.. र.र, यो.त., बृ.वै,. ग.नि.च "सैन्धवानां पलं पलम्" इति पाठः। 6 क. कुष्ठां 6 ग…प्रदापयेत् । 7-7 भा.प्र., यो.र., बृ.यो.त. च "दीप्यकञ्च पलं पलम्" इति पाठः +-+र.र., भैर.. बृ.वै. च 'दीप्यकस्य पलञ्चैव चातुर्जातं पलं तथा' । यो.त. "विडङ्गं चित्रकं कुष्ठं चन्दनञ्च पलं पलम्'' इति पाठः ❀-❀सौगन्ध्यार्थं…… पलम्' अस्मिन्स्थाने "चातुर्जातं च सञ्चूर्ण्य घृतभाण्डे निधापयेत् ।
सौगन्धिकस्य दातव्यं चूर्णं पलचतुष्टयम् ।।" इति
यो.र., बृ.यो,त. च पाठः ; 'सौगन्धिकस्य दातव्यं चूर्णं पलचतुष्टयम् । दीप्यकस्य पलञ्चैव चातुर्जातं पलांशकम् ।।' इति ग.नि., यो.त. च पाठः । अस्मिन्स्थाने भै.र. 'सञ्चूर्ण्य प्रक्षिपेदत्र गन्धकं च चतुः पलम् ।' बृ.वै. "कन्दकञ्च" इति पठित;

❀सञ्चूर्ण्य[1] प्रक्षिपेत्, लेहं[2] घृतभाण्डे निधापयेत् ।❀
महाभल्लातको ह्येष[3] महादेवेन निर्मितः[4] ।।

प्राणिनाञ्च हितार्थाय, जयेच्छुघ्र[5] निषेवितः ।
चित्रमौदुम्बरं[6-7] दद्रुमृष्यजित्[8] किन्नु काकणम्[8] ।१९।।

पुण्डरीकं[9] च चर्माख्यं[9] विस्फोटं रक्तमण्डलम्[10] ।
कण्डू[11] कपालकं कुष्ठं[11] पामानं च[12] विपादिकाम्[12] ।।२०।।

+वातरक्तमुदावर्त्तं[13] पाण्डुरोगं व्रणं[14] क्रिमीन् ।+
अर्शांसि षट्प्रकाराणि[15] कासं श्वासं भगन्दरम् ।।२१।।

समाभ्यासेन[16] पलितमामवातं च दुर्जयम् ।
❀एष निर्यन्त्रणः प्रोक्तः सर्वकाले प्रशस्यते ।।२२।।❀

---

1 पो. त. सम्मेल्य 2 ग. नि., यो. त-च 'कोष्णे', र. र. सिद्धे । ❀-❀'सञ्चूर्ण्यं ....निधापयेत् अस्मिन् स्थाने भै. र., वृ. वै. च "स्निग्धभाण्डे विनिक्षिप्य स्थापयेत्कुशलो भिषक्" इतिपाठः, पाठोऽयं वृ-यो.त. न दृश्यते । 3 क ह्येष 4 क. निर्मितं; भा.प्र. भावितः 5-5 क. जयेदेतन्निषेवनात् ग. जयेदेतानि सेवनात् ।। 6 र.र.. भै. र., वृ. यो. त., वृ. वै., ग. नि. च चित्रस्थाने श्वित्र-इति पाठः । 7 ग. नि. दद्रु-स्थाने 'सिध्मं' इति पाठः । 8-8 'ऋष्यजिह्वं सकाकणम्' इति ग' पुस्तके, र. र., यो. र.. वृ-यो.त. च पाठः

9-9 क. मुंडीकं च तु चामय्यं; वृ वै. चर्माख्यं स्थाने मर्माख्यं पठितः 10 र. र., भै. र., वृ. वै. च मण्डलं तथा । 11-11 क. कुचुकपालकुटं च; ग. कण्डु-कपाल-कुष्ठानां, यो. र., वृ. यो. त., यो. त. च 'कृच्छ्रं कापालिकं कुष्ठं इति पाठः, ग. नि 'कुष्ठं' स्थाने "कृष्ण" इतिपाठः, वृ. वै. कण्डूं कपाल—गण्डूञ्च, इति पाठः 12-12 क. ग. चर्चिकादिकं 13 षडर्शांसि 14 यो. र. वमीन्, ग. नि., यो. त. च वमि++-'वातरक्त ....क्रिमीन्' पाठोऽयं वृ-यो.त. न दृश्यते 15-15 भा. प्र. रक्तपित्तमुदावर्तं ।

37 'सदाभ्यासेन' इति र,र., भा. प्र; 'तदभ्यासेन' इति भै. र., वृ-वै. च । क. समाभ्यासनपलितः ❀❀ 'एष ....प्रशस्यते', अस्मिन्स्थाने भा. प्र.
"निर्यन्त्रणस्तु कथितो विहाराहारमैथुने ।

पाठोऽयं भै. र., वृ. वै., ग. नि च नोपलभ्यते ।

कुरुते परमां कान्तिं दीपयेज्जठरानलम्।
×अनुपानं[1] प्रयोक्तव्यं छिन्नातोयं[2] पयोऽथवा ॥२३॥×

टीका :—नीमछालि, गोरीसर, अलसी, कटुक, त्राहमाण, हरडै, बहड़ा, आंवला, मोथ, पित्तपापडौ, जवासो, बावची, बच, खयरसार, चंदन, पाठ, सुंठी, (शटी) भाडंगी, अरडूसौ, किराइतौ, जासूफूल ? निसोत, पुवणि री जड़ (इन्द्रवारुणी), मूर्वा, विडंग, चविक, चित्रक, रातो एरंड (हस्तिकर्ण) गिलोइ, पटोल, हलद, दारुहलद, पीपली, किरमालौ, सोवा ? (सप्ताह्व) उटींगण ?, (मूल पाठ क. पुस्तक का, "कणारग्वधसप्तानां कृष्णा चैवोवटाफलम्" है । टीकाकार का 'कणारग्वध' तक का अर्थ उपयुक्त है किंतु 'सप्तानां' को "सोवा" व 'उवटाफल' को उटींगण कहना उचित नहीं है । अन्य ग्रंथों का पाठ, 'कृष्णवेत्रोच्चटाफलम्' है । कृष्णवेत्र=कालीवेत व उच्चटाफलम्=श्वेतगुञ्जाफल) मजीठ, राठागारी ? (लांगली=कलिहारी), राठ, करज री जड़, साटी, दांतणि, विजैसार, भांगरौ, कंटासेलीयौ, (क. के पाठ में इसके पश्चात् 'कालसोषोटक' चैव भी है, व ग. के पाठ में 'कंकालसाषटकं चैव है । भाव प्रकाश में इसके स्थान पर 'अङ्कोटकं च शाखोटं' है । अङ्कोटक=ढेला या अंकोल, शाखोट=सहेरा) उषध सम मात्रा टां २० करणां, पाणी टां ४०९६ (एक द्रोण), तिण रो चातुर्थांस लीजै, भीलावां एकसहस्र तिणहुंती आठगुणो पाणी घाति उकालीजे । अष्टावशेष लीजै । पछै बेवरियां कषाय (दोनों कषायों को) छाणि नइ एकंत्र कीजै । गुड टां १६००

---

1 ग., र. र., भै-र. भा. प्र, वृ-वै., गनि. च अनुपाने 2 ग., र.र., भै.र., वृ.वै. च; क्वाथं × × 'अनुपानं .... पयोऽथवा', अग्रे—र. र. "अम्लं च सर्वथा त्याज्यं शाकमेव विशेषतः । इति पाठ। ; भा. प्र. 'भोजने तु सदा त्याज्यमुष्णमम्लं विशेषतः' इति पाठः, बृ. यो. त. यो, र. च भोजने न सदा योज्यमुष्णं चाम्लं विशेषतः । इति षाठः; भै. र. 'भोजने च तथा योज्यमुष्णं चान्नं विशेषतः ।। इति पाठ; वृ. वै. 'भोजने व सदा भोज्यमुष्णं चान्नं विशेषतः ।' इति पाठ; ग. नि. भोजने च सदा त्याज्यमुष्णं चाम्लं विशेषतः इति पाठः ।

(१ तुला) भेला करिनै पाती कीजै । पछै वले भिलावा सहस्रएक भांति करि तियां री मींजी मांहि भेलीजै । (जो उबाले गये थे उनहीं हजार भिलावों की मज्जा मिलावें) पछै उपरा उषध वीजा भेला कीजै —यथा—त्रिगडू, त्रिफला, मोथ, वाइविडंग, चित्रक, सीधौ, सूकडी, वूठ, टां १०, एलचो, तज, तमालपत्र नागकेशर टां १० एता उषध भेला करि चीकटे बासणी मांहिघाली राखीजै । अठारह कुष्ठ जाई । वीजा ही जिकै गुण कह्या छै सु षरा जाणीजै ।

अथ अमृतभल्लातकावलेहः

सुपक्वभल्लात-फलानि[1] चैव
द्विधा विदार्याढकसम्मितानि[2] ।
विपाच्य[3] तोयेन चतुर्गुणेन चतुर्थशेषंव्यपनीयतानि[4] ।।२४।।

पुनः[5] पचेत्क्षीरचतुर्गुणेन
घृतांशयुक्तेन घनं[6] यथा स्यात्[7] ।
सितोपला षोडशभिः पलैश्च
विमिश्र्य[8] संस्थाप्य दिनानि सप्त ।।२५।।

ततः प्रयुज्याग्निबलेन[9] मात्रां[10]
जयेद्विकारानखिलान्[11] गुदोत्थान्[11] ।
केशान्[12] सुनीलान्[13] घनकुञ्चितांश्च[14]
सुपर्णदृष्टिं[15] च शशांककान्तिम्[16] ।।

---

1 क. सुपकभलात 2 क. विदार्यादक 3 क. विपच्य 4 क. चतुर्थसेप; ग. चतुर्थशेष्या 5 क. पठे 6 क. घन 7 ग. वत् 8 ग. तिमिश्र, क. विमिश्र 9 क. प्रजुज्या 10 क. ग. मात्रं 11-11 क. 'जयेद्विकांकाशानखिलान गुदोद्धान्' । ग. 'जयेत् काशान् अखिलान् गुदोक्षदोषः' । 12 क. केशान, कसेन् 13 क. सुलीलान 14 क. कुचिता च 15 ग. सुपूर्णद्रष्टि 16 क. सशांककानि ।

वेगो[1] हयानाञ्च बलं[2] गजानां
स्वरो[3] मयूरस्य हुताशदीप्तिः ।
स्त्रीवल्लभत्वं विविधां प्रजां च
नीरोगतां द्वि-त्रिशतायुषञ्च ॥२७॥

न चान्नपाने परिहार्यमस्ति[4]
न[5] चातपे चाध्वनि[5] मैथुने च ।
प्रयोगकाले सकलामयानां
राजाह्वयं[6] सर्वरसायनानाम् ॥२८॥

टीका :—भिल्लावां टं १०२४, द्विधा करि पाणी टां ४०९६ पचाईजे, वले (फिर) चतुर्गुणदूध माहे पचावीजई । पछै चीकणाई वासणे घाति राषी जइ । गुण पाठ मांहे विचार जोवणा । (मूल पाठ में दूध में घृत १ अंश डाल कर पचाने का, फिर मिश्री १६ पल मिलाने का आदेश है)

---

1 क. वेगं 2 क. ग. बल कुंजराणां 3 क-स्वयं 4 क, ग. परिहारमस्ति 5-5 क. न चाग्रपेताध्वनि, ग. न चातपेन ध्वनि, 6 क. राजहृवयम्, ग. राजो ह्वयं ।

पाठान्तरम् भ. प्र.—

'भल्लातकप्रस्थयुगं छित्वा द्रोणजले क्षिपेत् ।
प्रस्थद्वयं गुडूच्याश्च क्षुण्णं तत्राम्भसि क्षिपेत् ॥
चतुर्थांशावशेषं तु कषायमवतारयेत् ।
वस्त्रपूते कषाये तु वक्ष्यमाणं विनिक्षिपेत् ॥
शरावमात्रकं सर्पिर्दुग्धं स्यामाढकं तथा ।
सितां प्रस्थमितां दद्यात्प्रस्थार्द्धं माक्षिकं क्षिपेत् ॥
सर्वाण्येकत्रभाण्डे तु पचेन्मृद्वग्निना शनैः ।
सर्वद्रवे घनीभूते पावकादवतारयोत् ॥
तत्र क्षेप्याणि चूर्णानि ब्रूमो बिल्वविषामृताः ।
वाकुची चाथ दद्रुघ्नः पिचुमर्दो हरीतकी ॥
प्लक्षो धात्री च मञ्जिष्ठा मरिचं नागरं कणा ।
यवानी सैन्धवं मुस्तं त्वगेला नागकेशरम् ॥

अथ दशाङ्गामृतहरीतकी[1]

द्वौ भागौ च हरीतक्या चतुर्भागो[2] विभीतकः[3] ।
अष्टौ चामलकानान्तु सिता चामलकीसमा ॥२६॥

---

1 क. दशांगमृत 2-2 क. चतुर्भागा विभीतको 3-3 अष्टाचामलकानां

पर्पटं पत्रकं बालमुशीरं चन्दनं तथा ।
गोक्षुरस्य च बीजानि कर्चूरो रक्तचन्दनम् ॥
पृथक्पलार्द्धमानानां चूर्णमेषामिह क्षिपेत् ।
पलमात्रमितं प्रातः समश्नीयाज्जलेन हि ॥
नाशयेदवलेहोऽयं पथ्यान्यन्नानि खादतः ।
कुष्ठानि वातरक्तानि सर्वाण्यर्शांसि सेवितः ।
व्यायाममातपं वह्निमम्लं मांसं दधिस्त्रियम् ।
तैलाभ्यङ्गं तथाध्वानं नरो भल्लातकी त्यजेत् ।

पाठान्तरम् भै. र.—

भल्लातकानां पवनोद्धतानां वृन्तच्युतानां च यदाढकं स्यात् ।
तच्चेष्टकाचूर्णकणैर्विघृष्य प्रक्षाल्य शोषाय सृजेत् प्रवाते ॥
शुष्कं पुनस्तद् विदलीकृतं च ततः पचेदप्सु चतुर्गुणासु ।
तत्पादशेषं पुनरेव शीतं क्षीरेण तुल्येन पुनः पचेत्तु ॥
तत्पादशेषं पुनरेव शीतं घृतेन तुल्येन पुनः पचेत्तु ।
तदर्द्धया शर्करया विकीर्णं ततः खजेनोन्मथितं विधाय ॥
तत्सप्तरात्रादुपजातवीर्यं सुधारसादप्यधिकत्वमेति ।
प्रातर्विशुद्धः कृतदेवकार्यो मात्रां च खादेत् स्वशरीरयोग्याम् ॥
न चान्नपाने परिहार्यमस्ति न चातये चाध्वनि मैथुने च ।
यथेष्टचेष्टो विहितोपयोगाद्भवेन्नरः काञ्चनराशिगौरः ॥
अनन्यमेधा नरसिंहतेजा हृष्टेन्द्रियोऽव्याहतबुद्धिसत्त्वः ।
दन्ताश्च शीर्णाः पुनरुद्भवन्ति केशाश्च शुक्लाः पुनरेव दिव्याः ।
विशीर्णकर्णाङ्गुलिनासिकोऽपि कृम्यर्दितो भिन्नगलोऽपि कुष्ठी ।
सोऽपि क्रमादङ्कुरिताग्रशाखस्तरुर्यथा भाति नवाम्बुसिक्तः ॥

यष्टी च पिप्पली चैत्र स्नु[1]-(तुक् ?) क्षीरी चैकभागिका[2] ।
भक्षयेन्मधुसर्पिभ्यां रात्रौ खादेत्तु[3] यत्नतः ॥३०॥

एषा चक्षुः प्रदाऽवश्यं[4] विशेषान्नेत्ररोगिणाम्[5] ।
तिमिरे[6] पुष्पे[7](?) तथा काचे[8] पटले[9](?) अर्बुदेऽपि[10] च ॥३१॥
सर्वेषु नेत्ररोगेषु दशामृतहरीतकी[11] ॥

-टीका :—हरडै भाग २, बहेडा भाग ४, आवला भाग ८, निवात (सिता) भाग ८, जेठीमधु भाग १, पिप्पली भाग १, वंशलोचन भाग १, उषध बांटि छाणि सहत अरु भेला घृत लीजै। उषध टां ४ तथा ५ लीजै।

अथ अगस्त्यहरीतकी[12]:

हरीतकी शतं भद्रं[13] यवानामाढकन्तथा[13] ।
पलानि दशमूलस्य विंशतिः सन्नियोजयेत् ॥३२॥

चित्रकं पिप्पलीमूलमपामार्गः शठी तथा ।
कपिकच्छुः[14] शङ्खपुष्पी भार्ङ्गी च गजपिप्पली ॥३३॥

---

1 क. स्नुक्षीरी ? 2 क. चैव 3 क. खादेतु 4 क. वस्याद् 5 क. विशेषानेत्ररोगिणम् 6 प्रथम-द्वितीयतृतीयपटलगतरोगविशेषः 7 पुष्पे ?— पिष्टं—'शुक्ले पिष्टं समुन्नतम् ? पिल्लं ? पक्ष्मशातं ? 8 काचः तृतीय—चतुर्थपटलस्य रोगः 9 क. पलटे 10 वर्त्मार्बुदः 11 क. दसा.

टि- ग्रन्थकृता 'दशाङ्गामृतहरीतकी'ति नामनि योगे नवद्रव्याण्येव चोक्तानि— दशमद्रव्यस्य नामोल्लेखोऽपि नऽकारि।

12 क. अगस्तिहरीतक्यावलेह 13 क. चन्द्रं 13 क. जवानी माढकं 14 क. कपिकच्छु

बला[1] पुष्करमूलञ्च पृथक् द्विपलमात्रया ।
पचेत् पञ्चाढके तोये[2] यवै: स्विन्नै: शृतं नयेत्[2] । ३४॥

[3]तच्चाभया शतं[3] दद्यात् क्वाथे तत्र विचक्षण:[4] ।
सर्पिस्तैलाष्टपलकं[5] क्षिपेद्[6] गुडतुलां तथा ॥३५॥

पक्त्वा[7] लेहत्वमानीय[7] सिद्धे[8] शीते[8] पृथक् पृथक् ।
क्षौद्रं च पिप्पलीचूर्णं दद्यात्कुडवमात्रया[9] ॥३६॥

हरीतकी द्वयं खादेत् तेन लेहेन नित्यश: ।
क्षयं कासं ज्वर श्वासं हिक्कार्शोऽरुचिपीनसान्[10] ॥३७॥

ग्रहणीं[11] शमयत्येष[11] वलीपलितनाशन:[12] ।
बलवर्णकर: पुंसामवलेहो रसायन: ॥३८॥

विहितोऽगस्त्यमुनिना सर्वरोगप्रणाशन: ॥३९॥

---

1 क. वचां 2 क. चतुर्थाशं सृतं नयेत्, शा., यो. तच., ग 'यवै: स्विचनै: ....' 3-3 क. दभयगां शृतं 4 क. विनिक्षिपेत् 5 क. पलाकं 6 क. क्षिरवां 7 क. पक्त्वालैहत्वमानीया 8-8 क, सिधं, शीतं 9 क. कुहच 10 क. पानशात् । 11 क. ग्रहणीसामयत्येष 12 क. नासनं ।

पाठान्तरम् :—यो. र. वृ. वै., चक्र, भै. र., र, र. ग. नि. च ।

"दशमूलीं स्वयंगुप्तां शङ्खपुष्पीं शटीं बलाम् ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्ग—पिप्पलीमूलचित्रकान् ॥

भार्ङ्गी पुष्करमूलञ्च द्विपलांशं यवाढकम् ।
हरीतकी शतंचैव जले पञ्चाढके पचेत् ॥

(ग. नि. र. र., चक्र-च 'हरीतकी शतञ्चैकं')

यवै: स्विन्नै: कषायं तु पूतं तच्चाऽभयाशतम् ।
पचेद्गुडतुलां दत्वा कुडवञ्च पृथग्घृतात् ॥

तैलात् सपिप्पलीचूर्णात् सिद्धे शीते च माक्षिकात् ।
कुडवं, पलमानञ्च चातुर्जातं समावपेत् ॥

लिह्याद् द्वे चाभयेनित्यं तत: खादेद्रसायनात् ।
तद्वलीपलितं हन्यात् वर्णायुर्बलवर्द्धनम् ॥

टीका :—हरडै मोटी टां १००, ग्रजवाइण टां १०२४ (ग्रजवाइण के स्थान पर; ग. प्रति में व शार्ङ्गधर में, जिससे ग्रंथकार ने पाठ लिया है, 'यव एक ग्राढक' पाठ है—वही शुद्ध पाठ है क्योंकि यो. र. चक्र; वृ. वै., यो. त., ग. नि., भै. र. र, व बृ. यो. त. में भी 'यव' ही कहा गया है), पाटला टा २०, टीटू टां २०, सालिवनि टां २०, पीठवनी टां २०, रींगणी वेऊ (दोनों) टाँ ४०, वीलगिर टां २०: ग्ररणी टां २० काँटी टां २०, गंभारी टाँ २०, चित्रक टां २०, पीपलामूल टा २० ग्राजाभ्राडौ (ग्रपामार्ग), सठि टां २०, कौंछबीज टां २०, संषाहोली टाँ २०. भाडंगी टां २०, गजपीप्पलि टाँ २०, बच टां २०, पूहकरमूल टां २०, पाणी टां ५१२०, (वच के स्थान पर ग. में बला है व ग्रन्य ग्रंथों में भी बला ही कही गयी है।) चाढीजई। जिवारइ पाणी चाढीजै तिवारै उषध पण माहि घालोजै। पछै पाणी रो भाग ४ (चतुर्थांश) रहै तिण मांहि गुड टां १६०० भेली पाती कीजै पाति करि नै घृत टां ४० ? सरसव रो तेल टां ४० ? (मूल पाठ में 'सर्पिस्तैलाष्टपलकं' है) भेलीजै। (मूलपाठ में यहां पर शहद व पिप्पली चूर्ण १-१ कुडव ग्रौर है) पछे लेह मांहै हरडै छै सु विछाईजै। थोडी सी पाती ही साथि वाटीजै। पाठ मांहि गुणछै सु सही जाणीजै।

पञ्चकामान् क्षयान् श्वासान् हिक्काञ्च विषमज्वरान्।
हन्यात्तथा ग्रहण्यर्शो हृद्रोगारुचिपीनसान्॥

(ग. नि. हन्यात्तथा स्थाने 'गुल्ममेह' इति पाठः)
ग्रगस्त्यविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम्॥"

'ग्रगस्त्य ·········रसायनम्' ग्रस्मात् परं बृ. वै.—

"यथोद्दिष्टं गुणं कुर्वन् पितं प्रकुरुते यदि।
तदा साय गुडो योज्य एष एवाऽल्पमात्रया॥" इत्यधिकः पाठः,

र. र. ग. नि. च टि. 'यवहरीतक्योः श्लक्ष्ण—पोट्टलीं बद्ध्वा निक्षिपेत्। पश्चात् स्विन्नहरीतकीं घृततैलाभ्यां भर्जयेदिति'—

अथ भाङ्ग्र्याद्यवलेहः[1]

शतं[2] सङ्गृह्य[3] भाङ्ग्र्यास्तु दशमूल्यास्तथा परम्[4] ।
शतं हरीतकीनाञ्च पचेत्तोये चतुर्गुणे ।।४०।।

पादशेषे[5] ततस्तस्मिन्[5] रसे वस्त्रपरिस्रुते[6] ।
आलोड्य[7] च तुलां पूतां गुडस्य त्वभयास्ततः[8] ।।४१।।

पुनः पचेत्तु[9] मृद्वग्नौ यावल्लेहत्वमाप्नुयात् ।
शीते च मधुनस्तत्र[10] षट्पलानि प्रदापयेत् ।।४२।।

त्रिकटुत्रिसुगन्धञ्च पलिकानि पृथक् पृथक् ।
कर्षद्वयं यवक्षारं[11] सञ्चूर्ण्य[12] प्रक्षिपेत्ततः[13] ।।४३।।

भक्षयेदभयामेकां लेहस्यार्द्धपलं लिहेत् ।
श्वासं सुदारुणं हन्ति कासं पञ्चविधं तथा ।।४४।।

❀स्वरवर्णप्रदो ह्येष जठरानलदीपनः[14] ।❀
हरीतकी शतंकस्यवारिप्रस्थमिहाऽधिकम्[15] ।।४५।।
हरीतकीशतं तद्वत् साधयेद्भिषगुत्तमः ।।४५।।

पादशेषे कषायेऽत्र स्विन्ना विद्याद्धरीतकीः ।
भर्जितास्तिलतैलस्य कुडवे गोघृतस्य वा ।।

पचेताम्रमये पात्रे ह्यापाकाल्लोहितोदयात् ।
फलानां तु शतं संख्या चातुर्जातं पृथक्पलम् ।।
बद्ध्वा पोटलके पथ्या यवान् स्विन्नांश्च कारयेत् ।

1 क. भाडंगादि अवलेह, ख. भरंग्यावलेह, भै. र. भार्ङ्गीगुड. 2 क. सतं 3 क. संगृह्या 4 ग., भै. र., भा. प्र. च. शतम् 5-5 ग., भा. प्र., चक्र., भै. र. वृ. वै. च. पादावशेषे तस्मिंस्तु 6 क. परिप्लुते 7 क. आलोड्या, ख. 'आलो-अचरुतिपूता' 8 क. त्वभवातत:, ख. त्वभवानतः 9 क. पचेतु 10 क. मधुना चात्र 11 क. जवक्षारं 12 क. सञ्चूर्णं 13 क. प्रक्षिपेत्तत्, ख. प्रक्षेपतत्त 14 क. दीपनं ❀❀'स्वरवर्ण ··· दीपनः', अस्मातपरें ग. ग्रन्थे, भा. प्र., भै. र, च "नाम्ना भार्ङ्गीगुडः ख्यातो भिषग्भिः सकलैर्मतः ।" इत्यधिकः पाठ', भा. प्र. 'दीपम्', अस्मात् परं "अर्शांस्य रोचकं गुल्मं शकृद्भेदं क्षयं तथा" इत्यधिकः पाठः, अग्रे नाम्ना ········· सकलैर्मतः' इति पाठः 15 क. चत्रारिप्रस्थ प्रियाहधिकं । चक्र. टि. 'पलोल्लेखागते माने न द्वैगुण्यमिहेष्यते । हरीतकी शतस्यात्र प्रस्थत्वादाढकं जलम्' इति पाठः ।

टीका— भाडंगी टां '१०००, दशमूलो टां १०००, हरडै थान (अदद) १००० (मूलपाठ में ये १००-१०० हैं) पाणी टां ४००० अथवा टां १६००० ? (उसमें १ तुला गुड डाल कर हरड़ों को मृद्वग्नि से लेह बनने तक पचावे, शीतल होने पर) सहित टां ६०, सूंठी टां १०, मिरच टां १०, पीपली टां १०, तज टां १०, पत्रज टां १० एलची टां १०, यवखार टां १० (मूल पाठमें 'कर्षद्वय' है=टां ५) (ये द्रव्य उक्त लेह में मिलावें)। हरडै १ खाईजै अथवा टां ५ खाईजै। पाक पाक री विधि कीजै। (१ हरड़ खाकर आधा पल यह लेह खावें)। गुण पाठ माहि कह्या छै सु थाई ।।

अथ कण्टकार्यवलेहः[1]

कण्टकारीं तुलां नीरद्रोणे पक्त्वा[2] कषायकम् ।
पादशेषं[3] गृहीत्वा च तस्मिंश्चूर्णानि[4] दापयेत् ।। ४६ ।।

पृथक् पलांशान्ये[5]तानि गुडूचीचव्यचित्रकाः ।
मुस्ता कर्कटशृङ्गी च त्र्यूषणं धन्वयासकम् ।। ४७ ।।

भार्गी रास्ना शटी चैव शर्करा पलविंशतिः ।
प्रत्येकञ्च पलान्यष्टौ [6]पिप्पलीनां चतुष्पलम्[6] ।।४८।।

(अगस्त्यहरीतकी)

पाठान्तरम् ग. नि.—

'द्विपञ्चमूलेभकणात्मगुप्ताभार्गीशटीपुष्करमूलविश्वाः ।
पाठामृताग्रन्थिकशङ्खपुष्पी—रास्नाग्न्यपामार्गबलायवासान् +।।
द्विपालिकानेव यवाढकं च हरीतकीनां च शतं गुरूणाम् ।
द्रोणे जलस्याढकसंयुते तु क्वाथीकृते पूतचतुर्थभागे ।।
पचेत्तुलां शुद्धगुडस्य दत्वा पृथक्सतैलात्कुडवं × घृताच्च ।
चूर्णं च तावन्मगधोद्भवानामनेकरोगौघमथाशु हन्यात् ।।

1 क. कंटकार्यविलेह 2 क. क्वाथ 3 क. पादेसेपं 4 क. तस्मिन् चूर्णनिधापयेत् 5 क. पलांशानेतानि 6 6 पिप्पलीनां चतुष्पलं', अस्मिन्स्थाने ख. ग्रन्थे, भा. प्र., यो. र. भै. र., शा. च "प्रदद्याद्घृततैलयोः" इति पाठः । **'प्रत्येकं .... चतुष्पलम्, अस्मात् परं भा.प्र., यो.र., शा, ख. पुस्तके च 'पक्त्वा लेहत्वमानीयं शीते मधु पलाष्टकम् । चतुष्पलं तुगाक्षीर्याः पिप्पलीनां चतुष्पलम् । इत्यधिकः पाठः ।
+यवासानु = जवासा इति लोके × कुडवं = ४ पल

क्षिप्त्वा निदध्यात् सुदृढे मृण्मये भाजने शुभे ।
लेहोऽयं हन्ति हिक्कार्त्ति-कासश्वासान् विशेषतः ।।४६।।

(अगस्त्यहरीतकी)

यद्राजयक्ष्मग्रहणीप्रदोषःशोफाग्निमान्द्यस्वरभेदकासान् ।
पाण्ड्वामयश्वासशिरोक्षिरोगान् हृद्रोगहिक्काविषमज्वरांश्च ।।
मेधाबलोत्साहमतिप्रदं च चकार चैतं भगवानगस्त्यः'

पाठान्तरम् वृ. यो. त.

'शङ्खाख्या-दशमूल-पुष्करशठी-कासस्वगुप्नाबला—
पामार्गेभकणामृतौषधवृकीग्रन्थ्यग्निभार्गीरसाः ×
आप्राप्थ्यशतं यवाढकमपां पञ्चाढकं वा यव—
स्वेदात्पाच्यमिमाः शिवाः स च रसो गौडीतुलाव्यञ्जलिः ।
कृष्णातैलघृतात्पुनः कुडविकक्षौद्रैरगस्त्याभयाः ।।
कासार्शोग्रहणीक्षयज्वरजराश्वासप्रतिश्यारुचौ ।
× रसा—पाठा अथवा रास्ना

पाठान्तरम् ग. नि.— (कण्कार्यवलेहः)

'समूलफलशाखान्तु कुट्टयेत्कण्टकारिकाम् ।
तां पचेत्सलिलद्रोणे चतुर्भागावशेषिताम् ।।
कषायं च परिस्राव्य पुनरग्नावधिश्रयेत् ।
युक्त्या घृतं च दातव्यं कल्कं चैषां प्रदापयेत् ।।
दुरालभा गूडूची च त्र्यूषणं चित्रकस्तथा ।
रास्ना कर्कटशृङ्गी च पिप्पलीमूलमेव च ।।
एतान्येकपलिकानि तथा फाणितशर्कराम् ।
पलानां विंशतिं दत्त्वा तं लेहं सान्द्रमुद्धरेत् ।।
शीते दद्यात् पिप्पलीनां चूर्णं चात्र गुडान्वितम् ।
कुडवं तु तुगाक्षीर्या मधुनः कुडवं तथा ।।
तं लिह्यान् मात्रया लेहं पञ्चकासनिवारणम् ।
हृद्रोगानाहहिक्काश्च श्वासं चैवापकर्षति ।।'

टीका— बैठी रींगणी टां १६००, पाणी टां ४०९६, गिलोइ टां १०, चविक टां १०, चित्रक टां १०, सठि टां १० मोथ टां १०, काकडासिंगी टां १०, त्रिफला टां ३०, धमासो टां १० भाडंगी टां १०, राठी टां १०, शठि टां १०, निवात टां २००, गाइ रो धृति टां ८०, सरसव रो तेलि टां ८०, सहित टां ८०, वंशलोचन टां ४०, पीपली टां ४० (गाय का घी, सरसों का तैल व मधु क. ग्रंथ के पाठ में नहीं हैं, किंतु अन्य ग्रंथों में है। प्रतिलिपिकर्ता श्लो ४८ को ठीक तरह न लिख सका है) पाकां री करण षावण री विधि एक हीज छइ। गुण पाठ माहे जोय लेणा।

अथ च्यवनप्राशावलेह:[1]

पाटलाऽरणिकाश्मर्य[2]—बिल्वारलुकगोक्षुरा:[3]।
[4]पर्ण्यौ बृहत्यौ पिप्पल्य:[5] शृङ्गीद्राक्षामृताभया:[6] ॥५०॥

बला भूम्यामली वासा ऋद्धिर्जीवन्तिका शठी।
जीवकर्षभकौ मुस्तं पौष्करं काकनासिका ॥५१॥

मुद्गपर्णी[7] माषपर्णी विदारी च पुनर्नवा[8]।
[9]काकोल्यौ [10]कमलं [11]मेदे सूक्ष्मैलागुरुचन्दनम् ॥५२॥

एकैकं पलसम्मानं [12]स्थूलचूर्णितमौषधम्[12]।
एकीकृत्य महापात्रे[13] पञ्चामलशतानि च ॥५३॥

[14]पञ्चद्रोणं जलं क्षिप्त्वा ग्राह्यमष्टावशेषितम्[15]।
ततस्तु [16]तान्यामलानि निष्कुलीकृत्य वाससा ॥५४॥

---

1 क. च्यवनप्राशनावलेह: 2 क. काश्मर्या 3 क. गोक्षुरां 4 पर्णा 5 ग. द्वौ पल्या 6 क. मृताभया **'बला .... शठी,' अस्मिन्स्थाने क. पुस्तके "वातारि-भूम्यावलीकं स्याद्धिजीवंतिका शठी" इति पाठ:; ग. पुस्तके "बला भूम्यामलीकं स्यात् द्विजीवन्तिका शटी" इति पाठ: 7 क. मुग्धपर्णी 8 पुन्नर्नवा 9 क. काकोली 10 क. कमले 11 क. मेदा 12-12 क. अशस्याभाव:। ग. ग्रंथे 'सूक्ष्मचूर्णीकृतोषधम्'; 13 क. मृड्डत्पात्रे 14 ग. शा. च 'पचेद् द्रोणजले' इति पाठ: 15 क. शेषत: 16 क. 'ताभ्यां मलामीनि:कुलीकृतवासस: इति पाठ:, ग. ग्रंथे 'तत्रामलं पुन: ग्राह्यं समस्त निकुलीकृतम्' इति पाठ:।

दृढ़हस्तेन [1]सम्मर्द्य क्षिप्त्वा [2]तत्र ततो घृतम्[2]।
✽पलसप्तमितं तानि किञ्चिद्भृ[3]ष्ट्वाऽल्पवह्निना ॥५५॥ ✽

ततस्तत्र[4] क्षिपेत्क्वाथं [5]खण्डं चार्द्धतुलोन्मितम्[5]।
लेहवत् साधयित्वा च चूर्णानीमानि[6] दापयेत् ॥५६॥

पिप्पली द्विपला देया[7] तुगाक्षीरी चतुष्पला[8]।
+प्रत्येकञ्च पलं (?) प्रोक्तः[9] षट्पलं मधु प्रक्षिपेत्[9] ॥५७॥+

[10]इत्येतच्चवनप्रोक्तः[10] [11]च्यवनप्राशसंज्ञकम्[11]।
लेहं वह्निबलं दृष्ट्वा खादेत्[12] क्षीणो[12] रसायनम् ॥५८॥

×बाल-वृद्ध-क्षत-क्षीणा नारीक्षीणाश्च ये नराः[13]।×
हृद्रोगिणः[14] स्वरक्षीणा ये [15]नरास्तेषु युज्यते[15] ॥५९॥

---

1 क. सम्मर्द्य, 2-2 ग. सप्तपलं घृतं । 3 क, भष्टा ✽✽पलसप्तति .... वह्निना' अस्मिन्स्थाने ग. ग्रंथे "मद्वह्नि पाचायेद् किंचित् हस्तैर्मर्द्य शनैः शनैः । 4 ग. तततसो 5-5 क. काथं पंडस्यार्द्धतुलेन्मितं ग. क्वाथ खंडस्यात् तुलार्धकम् 6 क. चूर्णनामानि, ग. चूर्णानां तत्र 7 ग. देयं, शा. ज्ञेया 8 क. चतुपला

+ – +'प्रत्येकञ्च .... प्रक्षिपेत्', अस्मिन्स्थाने ग्र. ग्रथे
"चातुर्जातं पुनःदेयं पलानां त्रितीयभागकम् ।
मधुना षट्पलं चात्र ह्येकीकृत्य समाहरेत् ॥ इति पाठः
शार्ङ्गधरसंहितायाम्
"प्रत्येकञ्च त्रिशाणं स्यात् त्वगेलापत्रकेशरम् ।
ततस्त्वेकीकृते तस्मिन् क्षिपेत्क्षौद्रं च षट्पलम् ॥" इति पाठः
9-9 क. 'षट्पलमधुना शिपेत्' ।

10-10 क. 'इत्येता नावन प्रोक्त'; ख. रसायनं रसो दिव्यं
11-11 ग. प्रोक्तश्च्यवनसंज्ञकः'; क. 'च्यवनप्राशसंज्ञितं'
12-12 क. खादे क्षीणा; ग. खादेत् क्षीर

×–×"बालवृद्ध .... ये नराः", अस्मिन्स्थाने क. ग्रन्थे 'बालवृधिक्षणानारी क्षयक्षीणाश्च ये नराः' इति पाठः 13 शा. शोषिणः 14 क. हृद्रोगिण 15-15 ग. ग्रंथे धातुनाक्षीणमाचरेत् ।

❀कासश्वासं पिपासार्तं[1] वातार्शं[2] रजसो[3]ग्रहम्[4] ।❀
×वातं पित्तं श्लेष्मदोषं शुक्रदोषञ्च नाशयेत् ॥६०॥×

मेधां स्मृतिं[5] स्त्रीषु हर्षं[6] कान्तिं[7] वर्णं प्रसन्नताम्[8] ।
अस्य[9] प्रयोगादाप्नोति नरो जीर्णविवर्जितः[10] ॥६१॥

टीका— पाढल टां १०, इन्द्रवारुणी टां १० (अरणी), सिवनी टां १०, बील टां १०, अरलु टां १०, कांटी टां १०, सालिवनी टां १०, पीढवनी टां १०, उभी रींगणी टां १०, बैठी रींगणी टां १०, पीप्पलि टां १०, काकडासीगी टां १०, दाष टां १०, गिलोई टां १०, हरडै टां १०, एरण्डजड़ टां १०, (शोधित पाठानुसार बला), भूमीआमली टां १०, डोडी टां १०, (वासा, ऋद्धि और जीवन्ती), कचूर टां १०, जीवक टां १०, ऋषभक टां १०, मोथ टां, १०, पुहकरमूल टां १०, काकजंघा टां १०, मुद्गपणी टां १०, माषपणी टां १०, बिदारीकंद टां १०, साटी टां १०, काकोली टां १० (व क्षीरकाकोली टां १०) कंवलडोडा टां १०, मेदा टां १० (और महामेदा टां १०) लहुडी इलायची टां १०. अगर टां १०, सूकडि टां १०, आवला काचा थान ५००, पाणी मण ५ (पांच द्रोणजल), (अष्टमांश शेष रहे तब क्वाथ उतार कर छाने व आंवलों की गुठलियां निकाल कर दृढ हाथ से मर्दन कर वस्त्र से छान लें। फिर घृत सात पल में मंद अग्नि पर सेक लें। फिर उनमें पूर्वोक्त क्वाथ डाल दें व) षांड टां ८०० (अर्द्ध तुला)। (लेह की तरह उसे साध कर निम्नलिखित द्रव्यों के चूर्ण मिलावें) पीपलि टां २०, वशलोचन टां १०, (वंशलोचन ४० टां) (दाल-चीनी, इलायची, तेजपात व नागकेशर-प्रत्येक ३-४ शाण) सहित(मधु) टां ६०, अवलेही री विधि छै सो कीजै। जले थाहर राषीजइ। पाठ थकी विचारि लेज्यौ।

---

1 क. प्रियासार्त्तं, ग. पिपासार्तं ।

2 क. वातसे, ग. वातार्शं 3 क. रिजसो 4 ग. ग्रहः ❀ – '❀ कासं .... ग्रहम्', पाठोऽयं शा. नोपलभ्यते × – × 'वातं पित्तं ....नाशयेत्', अस्मिन्स्थाने क. ग्रंथे "वात पित्तं श्लेष्मदोषं ...." इति पाठः, ग. ग्रंथे 'वातपित्तज-शुक्रदोषांश्मरीदोषनाशनम्' इति पाठः; शा. "वातं पित्तं शुक्रदोषं मूत्रदोषं च नाशयेत्" इति पाठः । 5 क. स्मृति 6 क. हर्ष 7-8 क. कांतिवर्णा प्रसनता, ग. कांति वर्णं प्रदाययेत् । 9 9 क. अस्यानुयोगमाप्नोति 10 क. विवर्जित् ।

अथ खण्डखाद्यावलेहः[1]

शतावरी छिन्नरुहा[2] वृषमुण्डितिकाबला[3]: ।
तालमूली च गायत्री [4]त्रिफलायास्त्वचस्तथा[4] ॥६२॥

भार्गी पुष्करमूलञ्च पृथक् पञ्चपलानि च ।
जलद्रोणे विपक्तव्यमष्टभागावशेषितम्[5] ॥६३॥ ❀

पाठान्तरम् यो. र. (चिकित्साकलिकातः) — (च्यवनप्राशः)

'द्विपञ्चमूलीजलसिद्धमाज्यं
वासाघृतं वाप्यथ षट्पलञ्च ।
पेयं हि तच्छागलगव्यतोऽथ
प्रयुज्यते नागबलाभिधानम् ॥
शृङ्गीतामलकीफलत्रिकबलाच्छिन्नाविदारीसटी,
जीवन्तीदशमूलचन्दनघनैर्नीलोत्पलैलावृषैः ।
मृद्वीकाष्टकवर्गपौष्करयुतैः सार्धं पृथक्पालिकै—
रष्टोनानि शतानि पञ्च विपचेद्धात्रीफलानामपः

उद्धृत्याऽऽमलकानि तैलघृतयोः षड्भिश्च षड्भिःपलैः—
भृष्टान्यर्धतुलां निधाय विधिवन्मत्स्यण्डिकायाः पचेत् ।
शीते षण्मधुनः पलानि कुडवो वांश्याश्चतुर्जाततो
मुष्टिर्मागधिकात्पलद्वयमयं प्राश्यः स्मृतश्च्यावनः ॥

न शोषः साफल्यं व्रजति वपुषि क्षीणमनसो,
न मूर्च्छा नो छर्दिस्तदपि च न च श्वासकसनम् ।
न चालक्ष्मीर्विघ्नः क्वचिदपि च न व्यापदभयं,
प्रयोगादेतस्मान् मनसिजधियो बिभ्रति मनः ॥

1 भा. प्र. खण्डखाद्यलोहम्; भै. र., यो. र., र. यो. सा. च खण्डकाद्यलोहम्
2 ग. नि. गुडूची च 3 ग. वृषाबला मुण्डनिका तथा बृ. यो. त. सिंहास्यो मुण्डिकाबला; ग. नि. वृषमुण्डितिकाभयाः 4 क. त्रिफला च त्वचस्तथा ।
5. क. ० भागाविशेषितम्
❀ टि. यो. र., हारीतसंहितायांच क्वाथे 'बृहत्योरधिकः पाठो दृश्यते ।

❀[1]दिव्यौषधिहृतस्याऽपि माक्षिकेण हृतस्य वा ।
पलद्वादशकं[2] देयं[3] रुक्मलोहस्य[4] चूर्णितम् ।।६४।।❀

खण्डतुल्यं घृतं देयं[5] पलं[6] षोडशिकं[7] बुधैः ।
पचेत्ताम्रमये[8] पात्रे गुडपाको मतो यथा ।।६५।।

(काकडासिंगी, भुंईग्रांवला, हरड़ बेहडा, ग्रांवला, बला, गिलोय, बिदारीकंद, नरकचूर, जीवन्ती, दशमूल, रक्तचंदन, मोथा, नीलोफर, इलायची, ग्रडूसा, मुनक्का ग्रष्टवर्ग, पुष्करमूल प्रत्येक ४-४ तोला, ४६३ ग्रांवला लेकर पोटली में उन्हें ६४ शराव=५१२ पल) जल में क्वाथ करें । १/४ शेष रहने पर उतार कर क्वाथ-छाने व ग्रांवलों को टाट से छानें । गुठली शिरा फेंक दें । छने गूदे को ६ पल घी, ६ पल तैल में भूनें । लाली ग्रावे तब पाक विधि के ग्रनुसार ५० पल मिश्री में पूर्वोक्त क्वाथ का पाक कर लेह समान होने पर उतारे । शीतल होने पर ६ पल मधु मिलावें व वंशलोचन ४ पल (१ कुडव) इलायची, दानचीनी, तेजपात, नागकेशर १-१ मुष्टी (प्रस्थ) पीपर २ पल, मिलावें)

पाठान्तरम् वृ. यो. त.

द्राक्षैलाब्धदशाङ्घ्रिजी+वनबला-शृङ्ग्युच्चटायः कणा—
पथ्याकान—(काक?) नसाब्जपुष्करशठीछिन्नाविदारीवृषम् ।
वर्षाभूहिममाम्रकंजलघंटे धात्रीशतैः पञ्चभिः
पक्त्वा+व्यस्थिशिवायुतं ×यमकतो द्विः षट्पले भर्जितम् ।
सश्वेतार्धतुलां पचेन्मधुतुगा-कृष्णा-चतुर्जाततः
षड्-द्वि-ह्येकपलान्वितश्च्यवनकप्राशो—जरामृत्युजित् ।।
कासश्वासखुडज्वरक्षयतमोहृन्मूत्रशुक्रार्तिजित् ।
सक्षौद्रोंऽशशताजमूत्र+शतजः कासे कफश्वासहा ।।
इति च्यवनप्राशविभीतकावलेहो ।

+बृ. यो. त. 'क.' 'जीवकर्षभकौ मेदा-काकोल्यौ द्वौ च योजिते । द्वे शूर्पपर्ण्यौ जीवन्ती मधुकं चेत्ययं गणः ।।'

×बृ. यो. त. क. 'द्वाभ्यां घृततैलाभ्यां यमकः' ।

+बृ. यो. त. क. तुलतः

(श्लोक सं. ६४-६५) 1 क. दिव्यो. 2 क. पलं द्वादशके 3 क. जेयं 4 क. रुक्मलोहस्य; वृ. वै. चारुलोहस्य, भै. र. कान्तलोहस्य 5 क. देय 6-7 क. पलै षोडसिकं 8 क. 'पचे न ताम्र पये' ।

❀ टि. यो. र. 'सुवर्ण-लोहयो' पलं पलमित्यधिकः पाठः

प्रस्थार्द्धं मधुनो [1]दद्यात् शुभाश्मजतुकं[1] त्वचम् ।
शृङ्गी बिडङ्गं कृष्णा च शुण्ठ्यजाजी[2] पलं पलम् ॥६६॥

त्रिफला धान्यकं पत्रं द्व्यक्षं[3] मरिचकेशरम् ।
चूर्णं दत्त्वा[4] सुमथितं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥६७॥

यथाकालं प्रयुञ्जीत विडालपदकं[5] ततः ।
गव्यक्षीरानुपानञ्च सेव्यं मांसरसं तथा[6] ॥६८॥

गुरुवृष्यान्न[7]-पानानि स्निग्धं मांसादिबृंहणम्[8] ।
रक्तपित्तं प्रदुष्टञ्च[9] क्षयं[10] कासं विशेषतः ॥६९॥

वातरक्तं प्रमेहञ्च शीतपित्तं वमिं क्लमम्[11] ।
श्वयथुं पाण्डुरोगञ्च कुष्ठं प्लीहोदरन्तथा ॥७०॥

आनाहं रक्तसस्रावमम्लपित्तं[12] निहन्ति च ।
चक्षुष्यं बृंहणं[13] वृष्यं मङ्गलं प्रीतिवर्द्धनम् ॥७१॥

आरोग्यं पुत्रदं[14] श्रेष्ठं कामाग्नि[15]-बलवर्द्धनम् ।
श्रीकरं लाघवकरं खण्डखाद्यं प्रकीर्त्तितम् ॥७२॥

1-1 भा. प्र. ग. देयं शुभाश्मजतुकस्य च 2 क. शुण्य 3 ग०, भा. प्र० च कणा; ग. नि. त्र्यक्षं 4 क. दद्यात्वा 5 वृ. वै. विडालचरणांशकम् 6 ग०, भा. प्र., र. र०, चक्र., भै. र., बृ. यो. त, वृ. वै०, ग. नि च. 'पयः' 7 क. वृक्षान्न; र. र, चक्र., भै. र. आदिषु 'गुरुवृष्यानुपानानि' 8 र. र. भोजनम्; वृ. वै. नित्यशः 9 भा. प्र., र. र., चक्र. भै. र., बृ. यो त, ग. नि. च 'क्षयंकास' 10 भा. प्र. पार्श्वशूलं, र. र., चक्र., भै. र., बृ. यो. त., ग. नि. च. पक्तिशूलं; वृ. वै. क्षयं कार्श्यं ।

11 ग., र. र., चक्र. च क्रिमीन् 12 क. रक्तस्रावं च अम्लपित्र; ग., र. र., बृ. यो. त., वृ. वै. च रक्तसंस्रावमम्ल ···; भा, प्र., ग. नि. च मूत्रसंस्राव 13 क. बृहगा 14 र. र. पुष्टिदं, 15 क., बृ. यो. त., वृ. वै. ग. नि. च. कायाग्नि ।

छागं पारावतं[1] मांसं[2] तित्तरिः क्रकरःशशः[2] ।
कुरङ्गः[3] कृष्णसारश्च मांसमेषां प्रयोजयेत् ।।७३।।

नारिकेलपयः पानं सुनिषण्णकवास्तुकम् ।
शुष्कमूलकजीवाख्यं[4] पटोलं बृहतीफलम् ।।७४।।

फलं वार्त्ताकिपक्वाम्रं[5] खर्जूरं स्वादुदाडिमम् ।
❀ककारपूर्वकं यच्च मांसं चानूपसम्भवम् ।।७५।। ❀

× वर्जनीयंविशेषेण खण्डखाद्यं प्रकुर्वता ।।७६।। ×

टीका— सितावरी टां ५०, गिलोइ टां ५०, अरडूसौ टां ५०, मुण्डी टां ५०, बला टां ५०. धमासो टां ५०, खयरसार टां ५०, हरडै टां ५०, बहेडा टां ५०, आवला टां ५०. तज टां ५०, भांडगी टां ५०, पुहकर-मूल टां ५०, पाणी टां ४०९६ (१ द्रोण) पाणी इतरा माहे इतरा उषध घालीनै हिंसो आठमौं पाणी रहइ तिवार इ उतारिनइ खांड घृत तांबा रा ठाम मांहे पाती करनइ स्वर्णं आदि दे उषध सुभे लोजै तियां रा नाम सोनउ मारियो ||स्वर्णभस्म टां १२० ? सार मारयउ टां, १२० खांड टां १६०, घृत टां १६०, सहित टां १२० (प्रस्थार्ध) सिलाजीत टां १०, तज टां १०, काकडासींगी टां १०, बिडंग टां १०, पीपलि टां १०,सूंठि टां १०, जीरो टां १०,हरडै टां १०, वहैडा टां १०

---

1 क. पारापति　2-2 क. तितरिक्तकरादयः, वृ. वै. तैत्तिरं कौक्कुटं तथा 3 क. शशा, ग. नि०, वृ. वै., वृ. यो. त. च कुलिङ्ग　4 र. र. बीजाख्यं, चक्र० जीराख्य　5 वृ. यो. त. पक्वान्नं ❀-❀ 'ककार ...... सम्भवम् ।' अस्मिन्स्थाने वृ. वै.

"ककारपूर्वकं यच्च यच्च क्षीणक्षते हितम् ।
शालिषष्टिकनीवारवनमुद्गमसूरकाः ।।
अन्यान्यपि च वस्तूनि शास्त्रोक्तानि हितानि च ।"
इत्यधिकः पाठः

|| मूल पाठ में 'दिव्यौषधियों से मारा गया, अथवा माक्षिक से मारा हुआ रुक्मलोह ही कहा गया है । स्वर्ण है ही नहीं ।

×-× हरड़ै से नागकेशर तक के द्रव्यों का तोल मूल पाठ में 'द्व्यक्षं' है ।

आंवला टां १०, धाणा टां १०, पत्रज टां १०, मिरच टां १०, नागकेसरी टां १०×, चीकणइ वासणि घाति राखीजइ टां ४ प्रमाण खाईजै । पाठमांहे गुण छै अनुपान छै तिम कीजै ।

अथ वासाऽवलेहः

वासकस्य रसप्रस्थं प्रस्थार्द्धं मधुशर्करा[1]
पिप्पली द्विपलं साज्यं सम्यग्लेहं विपाचयेत् ॥७७॥

(पिछले पद्यांक ७६ की पादटिप्पणी)

×-× 'वर्जनीयं...... ...प्रवर्तता', अस्मात्परं चक्र. भा. प्र. चः—

"लोहान्तरवदत्रापि पुटनादिक्रियेष्यते ।
न पुनर्माक्षिकेणैव शिलयैव हि मारणम् ॥ इति टि.

चक्र. 'न पुनर्माक्षिकेणैव...... ... मारणम्' पाठोऽयं न दृश्यते ।

र. र. अस्मिन्स्थाने 'दिव्यौषधिर्मनःशिला जीवाख्यं शाकमारिषम् ।
एतच्च पूर्वं युक्तिप्रयोगादिदानीन्तु त्रि–चतुः–पञ्चरक्तिकाद्यारम्य रक्तिवृद्ध्य लोहान्तरवत् ॥ इति. टि.

पाठान्तरम् यो. र.—

'शतावरीमुण्डनिकाबलामृता—फलत्वचः, पुष्करमूलभार्ङ्गी ।
वृषो वृहत्यो खदिरस्यमूलं पृथक् पृथक् पञ्चपलानि चात्र ॥
पक्वं जलद्रोणमितेऽष्टमांशं यावद्भवेच्छेषमथैव पूतम् ।
विमूर्च्छितस्यापि निधाय धीमान् पलानि च द्वादश माक्षिकस्य ॥
पलं सुवर्णस्य च लोहजस्य विद्याद्धितं खण्डघृतं च तुल्यम् ।
देयं पलं षोडशकं विधिज्ञो विपाचयेल्लोहमये कटाहे ॥
गुडेन तुल्यं च यदा भवेत्तदा तुगा विडङ्गं मगधा च शुण्ठी ।
द्वे जीरके कर्कटकं फलत्रिकं धान्यं मरीचं सकणं सकेशरम् ॥
पलप्रमाणं विदधीत तत्पृथकसुघट्टितं चूर्णमिदं घृतेन ।
स्निग्धे कटाहे प्रणिधाय युञ्ज्यात्कर्षप्रमाणं विहितावलेहम् ॥

1 र. र. मधुस्थाने क्षीरः ।

बासाऽवलेह इत्येष राजयक्ष्मनिषूदनम् ।
कास-श्वासहरः प्रोक्त उरक्षतहरस्तथा ॥७८॥

शस्यते पार्श्वशूलेच रक्तपित्ते विशेषतः ॥७६॥

टीका— अरडूसा रो रस टां २५६, सहित (मधु) टां १२८, पीप्पलि टां २०, घृति टां ८० ? (२० ?) गाय रो । पाठ मांहे विधि छइ । (टीका में शर्करा प्रस्थार्ध नहीं है; मूल पाठ में वह है)

अथ गोक्षुराद्यवलेहः[1]

गोकण्टकं सदलमूलफलं[2] गृहीत्वा,
सङ्कुट्टितं पलशतं क्वथितन्तु तोये[3] ।
[4]पादस्थितेन च जलेन पलानि[4] दत्वा ।
पञ्चाशतं तु[5] विपचेदपि शर्करायाः ॥८०॥

पाठान्तरम् यो. र.. ग. नि. च

'तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले ।
तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥

चूर्णानामभयानान्तु खण्डात्पलशतं तथा ।
द्वे पले पिप्पलीचूर्णात् सिद्धे शीते च भाक्षिकात् ॥

कुडवं, पलमानन्तु चातुर्जातं सुचूर्णितम् ॥
कासश्वासगृहीतश्च यक्ष्मणा च विशेषतः ।

टि० : 'कासश्वास ······· विशेषतः', अस्मिन्स्थाने ग. नि. "श्वासकासक्षतच्छ-दीर्यक्ष्माणं च नियच्छति" इति पाठः ।

1 क. गोक्षुरकाश्रवलेहः 2 क. सदलमूलं गृहीत्वा च 3 क. तोयं 4-4 ग. पादावशेषे तज्जलेन पलानि 5 क. पंचासतस्तु ।

तस्मिन् घनत्वमुपगच्छति[1] चूर्णितानि[1]
दद्यात्पलद्वयमितानि सुभेषजानि ।
❀ शुण्ठीकणात्रुटिय[2]-वाग्रजकेशराणि ❀
[3]सुजातिकोश-ककुभत्रपुसीफलानि[4] ।।८१।।

[5]वांशी[5]-पलाष्टकमिह प्रणिधाय नित्यं
[6]लिह्यात्सुसिद्धं पलसम्मितञ्च[6] ?
हन्त्याशु मूत्रपरिदाहविबंधकृच्छ्र[7]
[8]मूत्राश्मरी-रुधिरमेहमधुप्रमेहान् ।।८२।।

टीका— कांटी पंचांग टां १६००, पाणी टां ८००० ? मिश्री + टां ५००, ? सूंठि टां ३२, पीपलि टां ३२ ×, =एल ची टां ३२, जवषार टां ३२, केशरि टां ३२, जावंत्री टां ३२, अर्जुन टां ३२, षीरा रा बीज टां ३२, वंशलोचन टां १२८, पाकविधि प्रसिध । एता रोग जाइ मूत्रदाह, मूत्रठंभ, मूत्र री पाथरी, लोहीमूत्रप्रमेह, मधुप्रमेह । उषध टां १० अथवा १६ षाईजै अग्नि सारू ।

अथ कुटजावलेहः[9]

कुटजत्वक् पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ।
चतुर्भागावशेषञ्च[10] कषायमवतारयेत् ।।८३।।

(गोक्षुराद्यवलेह.)

1-1 क. गछति चूर्णतान 2 ग. ०यवत्रुटि 3 ग. सजविकेश कुकुभ 4 ग. लतानि 5 क. बंसी 6-6 'लिह्यात्……………सम्मितञ्च', अस्मिन् स्थाने भा० प्र० "लेह्यं तु शुद्धममृतं पलसम्मितन्तु ।" 7 भा. प्र. ० शुक्र 8 भा. प्र. कृच्छ्रा । 9 क. कुटस्था अवलेहीः ।
❀-❀ 'शुण्ठी ………केशराणि', अस्मिन्स्थाने भा. प्र.
"शुण्ठीकणामरिचनागदलत्वगेला-जातीयकोषककुभत्रपुसीफलानि" इति पाठः
+ मूल पाठ में कांटी पञ्चाङ्ग से आधी मिश्री है (800 टां.) ।
× यहां पर मरिच टां. 32 भी होनी चाहिये ।
= भाव प्रकाश के अनुसार औषधियों का क्रम इस प्रकार है—
नागकेशर, तेजपात, दालचीनी, छोटी इलायची, जायफल, अर्जुन व अंकोल, (कुब्जावलेहः) 10 क. ० विशेषं, र. र., चक्र., वृ. वै. च. 'अष्टभागावशिष्टन्तु' ।

वस्त्र तं[1] पुनः क्वाथं यावल्लेहत्वमागतम् ।
भल्लातकं विडङ्गानि त्रिवृ टु त्रिफला तथा ॥८४॥

रसाञ्जनञ्चित्रकञ्च कुटजस्यफलानि[2] च ।
वचामतिविषां[3] बिल्वं [4]प्रत्येकञ्च पलं पलम्[4] ॥८५॥

त्रिंशत्पलानि गुडस्य चूर्णीकृत्य निधापयेत् ।
मधुनः कुडवं दत्वा घृतस्य कुडवं तथा ॥८६॥

एष लेहस्तु शमयेदर्शो रक्तसमुद्भवम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥८७॥

ये च दुर्नामजा[5] रोगास्तान् सर्वांश्च व्यपोहति ।
[6]रक्तपित्तमतीसारं पाण्डुरोगमरोचकम् ॥८८॥

ग्रहणीमार्दवं[7] कार्श्यं श्वयथुं कामलामपि ।
अनुपाने जलं दद्याद्[8] दधि तक्रं घृतं पयः ॥८९॥

※जीर्णे[9] तु पथ्य[10]-भोजी स्यादर्शो[11] रक्तसमुद्भवम्[11] ।※

=रोगानीकवधार्थाय[12] कौटजोलेह[12] उच्यते ॥९०॥=

---

1 क. व्यस्त्रपूतं । 2 ग-पलानि 3 क. बल 4-4 वृ. यो. त. 'पाठामोचरसं तथा । बालकञ्च समङ्गा च प्रत्येकन्तु पलं पलम्'

5 क. दुर्नामजान् रोगान्स्तान्सर्वांश्च 6 र.र., वृ. वै. च अम्लपित्त० 7 क. गृहणीमाद्रवंकाष्ण्यां 8 क. दद्याद्दधिकं, र. र, चक्र०, वृ. वै., भै. र. च 'दधिस्थाने' "मधु" इति पाठः 9 वृ. यो. त. जीर्णान्न क. ० र्ण 10 क. पथ 11-11 ग. कुटजोलेह उच्यते, वृ.यो. त.—अर्शोऽल्पः ? प्रतिमुच्यते, ग. नि अर्शोभ्यः ···

※-※ 'जीर्णे समुद्भवम्' पाठोऽयं र. र., चक्र., भै. र., वृ वै. च. नोपलभ्यते । 12-12 क. रोगानिकवधार्थाये कुटजावलेह

=-= 'रोगानीक ·······उच्यते' अस्मात्परं ग. 'हलीमकं—

—कामलां चैव पाण्डुत्वं चापकर्षति इत्यधिकः पाठः । अन्यग्रन्थेषु पाठोऽयं आमलकाद्यवलेहे वर्तते

टीका— कुडा री छालि टां १००० पाणी टां ४०९६, भिलांवा टां १०, बिडङ्ग टां १०, त्रिफला टां ३०, त्रिगडू टां ३०, रसोति टां १०, चित्रक टां १०, इन्द्रजव टां १०, बच टां १०, पतीस टां १०, बील टां १०, गुल (गुड़) टां ३००, सहित (शहद) टां .६४, ? लेहां री विधि प्रसिद्धः। गुण पाठ मांहे जोय लेवणा।

टि०: टीका में शुष्क औषधियों के तोल में १ पल का मान १० टां० व पानी के तोल में १६ टां माना है। टीका में घृत नहीं कहा गया है। मूल पाठानुसार घृत व मधु १-१कुडव है।

पाठान्तरम्—शा.

'कुटजत्वक्तुलां द्रोणे जलस्य विपचेत्सुधीः।
कषायं पादशेषञ्च गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ।।

त्रिशत्पलं गुडस्यात्र दत्त्वा च विपचेत्पुनः।
सान्द्रत्वमागतं दृष्ट्वा चूर्णानीमानि दापयेत् ।।

रसाञ्जनं मोचरसं त्रिकटु त्रिफला तथा।
लज्जालुं चित्रकं पाठां बिल्वमिन्द्रयवं त्वचाम् ।।

भल्लातकं प्रतिविषां विडङ्गानि च बालकम्।
प्रत्येकं पलसंमानं घृतस्य कुडवं तथा ।।

सिद्धशीते ततो दद्यान् मधुनः कुडवं तथा।
जयेदेषोऽवलेहस्तु सर्वाण्यर्शांसि वेगतः ।।

दुर्नामप्रभवान् रोगानतीसारमरोचकम्।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च रक्तपित्तञ्च कामलाम् ।।

अम्लपित्तं तथा शोथं कार्श्यं चैव प्रवाहिकाम्।
अनुपाने प्रयोक्तव्यमाजं तक्रं पयो दधि ।।

घृतं जलं वा जीर्णे च पथ्यभोजी भवेन्नरः।।

पाठान्तरम्-भा. प्र.

'कुटजत्वक्कृतः क्वाथो वस्त्रपूतो हिमीकृतः।
स लीढोऽतिविषायुक्तः स्यात् त्रिदोषातिसारनुत् ।।

इच्छन्त्यत्राष्टमांशेन क्वाथादतिविषारजः।
प्रक्षेपयेच्चतुर्थांशमिति केचिद्वदन्ति हि ।।

अथ आमलकाद्यवलेह[1] :

रसमामलकानाञ्च संशुद्धं यन्त्रपीडितम् ।
द्रोणं पचेत्तु मृद्वग्नौ[2] चतुर्भागं समाहरेत्[2] ॥६१॥

चूर्णितं पिप्पलीप्रस्थं मधुकं द्विपलन्तथा ।
प्रस्थं गोस्तनिकायाश्च द्राक्षायाः[3] कल्कपेषितम्[3] ॥६२॥

---

1 क. आमलक्यावअवलेह : 2-2 यो. र., ग. नि. च तत्र चेमानि दापयेत् ।
3-3 क. द्राक्षाकल्केन योपितं ।

पाठान्तराणि यो.र.

(1) 'वत्सकस्यामृतायाश्च द्वे पले प्रस्थमम्भसः ।
श्रपयित्वा रसे तस्मिन्पादशेषावतारिते ॥

अष्टौ पलानि शक्रस्य यवाश्चूर्णीकृताश्च ते ।
पक्त्वा पाकं विदित्वा तु यथावह्नि च खादयेत् ॥

जयेत्सर्वातिसारांश्च सर्वांश्च ग्रहणीगदान् ।
नाशयेद्दीपयेच्चाग्निं कृष्णात्रेयस्य शासनात् ॥'

(2) 'शतं कुटजमूलस्य क्षुण्णंतोयार्मणे पचेत् ।
क्वाथे पादावशेषेऽस्मिँल्लेहं पूतं पुनः पचेत् ॥

सौवर्चल-यवक्षार-बिडसैन्धवपिप्पली ।
धातकीन्द्रयवाजाजी चूर्णं दत्त्वा पलद्वयम् ॥

लिह्याद्बदरमात्रन्तु तच्छीतं मधुसंयुतम् ।
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयेच्चैतत्प्रवाहिकाम् ॥'

(3) 'कुटजस्य पलं ग्राह्यमष्टभागजले श्रृतम्
तथैव पचयेद्भूयो दाडिमोदकसंयुतम् ॥

कुटजक्वाथतुल्योऽत्र दाडिमस्य रसो मतः ।
यावच्च रसिकाभासं श्रृतं तमुपकल्पयेत् ॥

तस्यार्धकर्षं तक्रेण पिबेद्रक्तातिसारवान् ।
अवश्यं मरणीयोऽपि न मृत्योर्याति गोचरम् ॥'

शृङ्गवेरपले द्वे च तुगाक्षीर्याः पलद्वयम् ।
तुलार्धं शर्करायाश्च घनीभूतं समुद्धरेत् ।।93।।

मधप्रस्थसमायुक्तं लेहयेत्पलसम्मितम् ।
हलीमकं कामलां च पाण्डुत्वं चापकर्षति ।।94।।

(टी.शुद्ध परिपक्व आंवलों का रस यन्त्र से निकाला हुआ (वस्त्र से छानकर) एक द्रोण लेकर मृदु अग्नि पर पकावे। चौथाई भाग शेष रहे तब उतार ले।[1] फिर उसमें पीपर का चूर्ण 1 प्रस्थ, मुलेठी का चूर्ण 2 पल, उत्तरापथिका नामक द्राक्षा विशेष 1 प्रस्थ व मुनक्का का कल्क एक प्रस्थ, अद्रक का कल्क 2 पल व वंशलोचन 2 पल, शक्कर आधा तुला मिलाकर आंच देवे व गाढा होने पर उतार लेवें। शीतल होने पर मधु एक प्रस्थ मिलाकर पात्र में रख छोड़ें। इसकी मात्रा एक पल है। यह अवलेह हलीमक, कामला व पाण्डु रोगों को दूर करता है।)

13 कूष्माण्डावलेहः

निष्कुलीकृत्य कूष्माण्डखण्डान् पलशतं पचेत् ।
निक्षिप्य द्वितुलं नीरमर्धशिष्टं च गृह्यते ।।95।।

तानि कूष्माण्डखण्डानि पीडयेद् दृढवाससा ।
आतपे शोषयेत् किञ्चिच्छूलाग्रैर्बहुशो व्यधेत् ।।96।।

---

1 यो. र. व. ग. नि. में आंवलों का रस उबालना नहीं कहा गया है व उसी में पिप्पली आदि औषधियां डाल कर ही अवलेह को सिद्ध करना कहा गया है। वही ठीक है।

क्षिप्त्वा ताम्रकटाहे च दद्यादष्टपलं घृतम् ।
तेन किञ्चिद् भर्जयित्वा पूर्वोक्तं तज्जलं क्षिपेत् ॥97॥

खण्डं शतपलं दत्त्वा सर्वमेकत्र पाचयेत् ।
सुपक्वे पिप्पली शुण्ठी जीरकं द्विपलं पृथक् ॥98॥

पृथक् पलार्धं धान्याकं पत्रैला मरिचं त्वचम् ।
चूर्णीकृत्य क्षिपेत् तत्र घृतार्धं क्षौद्रमावहेत् ॥99॥

खादेदग्निबलं दृष्ट्वा रक्तपित्ती क्षयी ज्वरी ।
शोषतृष्णातपच्छर्दिश्वासकासक्षतातुरः ॥100॥

कूष्माण्डकावलेहोऽयं बालवृद्धेषु युज्यते ।
उरःसंधानकृद्वृष्यो बृंहणो बलकृन्मतः ॥101॥

उन्मादादिविकारांश्च विशेषेणाशु नाशयेत् ।

(टी. पेठे के ऊपर का छिलका व बीज निकाले हुए टुकड़े 100 पल लेवें। उन्हें दो तुला पानी में डालकर पकावें। आधा रहने पर उतार लें : उन पेठे के टुकड़ों को मजबूत कपड़े से निचोड़ लें (जलरहित करले)। इन्हें थोड़ी धूप दिखाकर कोंचे से गोंद ले। फिर तांबे की कडाही (जिसमें कली की हुई हो) उसमें आठ पल घी डालकर उन पैठे के टुकड़ों को सेक लें। साधारणतया सिक जाने पर कडाई में वह जल डाल दें जो कि पैठा पकाने को लिया था और जिसे अर्धावशेष रख लिया था। इसी में 100 पल शक्कर डालकर अवलेह विधि से पाक कर लें। फिर नीचे उतार कर, पीपर, सूंठ व जीरा के चूर्ण 2-2 पल, धनिया, छोटी इलायची, तेजपात, दालचीणी व काली मिर्च प्रत्येक के चूर्ण आधा आधा पल मिलावे। फिर ठंडा होने पर शहद, घी से आधी मिलावे। इस कूष्माण्डावलेह की रोगी के वय-अग्नि व बल को ठीक ठीक देखकर, मात्रा निर्धारित करे। इसके प्रयोग से शोष, तृष्णा, तप, रक्त-

पित्त. क्षय, छर्दि, श्वास, कास व उरःक्षत नष्ट होते हैं। यह बालक एवं वृद्धों को भी दिया जा सकता है। यह वीर्यवर्धक व धातु एव बलवर्धक है। विशेष करके उन्मादादि विकारों का नाश करता है।)

14 पञ्चजीरकावलेहः

जीरकं हपुषा धान्यं शताह्वा बदराणि च।
यमानी मेथिका[1] हिंगुपत्रिका[2] कासमर्दकम् ॥102॥

पिप्पली मूलमजमोदाऽथ वाष्पिका।
[4]चित्रकञ्च पलांशानि तथान्यच्च[3] चतुष्पलम्[4] ॥103॥

[5]कशेरुक नागरञ्च कुष्ठं दीप्यकमेव च[5]।
गुडस्यार्धशत दद्याद् घृतप्रस्थं तथैव च ॥104॥

क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तं शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
[6]शीतीभूते व तस्मिंस्तु चानुर्जातं पलं क्षिपेत्[6] ॥105॥

पञ्चजीरक इत्येष सूतिकानां प्रशस्यते।
गर्भार्थिनीनां नारीणां बृंहणीये समारुते ॥106॥

विंशतिर्व्यापदो योनेः कासं श्वासं ज्वरं क्षयम्।
हलीमकं पाण्डुरोग दौर्गन्ध्यं मूत्रकृच्छ्रताम् ॥107॥

---

(1) भै र, चक्रदत्ते, र. र. च मेथिका स्थाने कुञ्चिका (रजिका) पठितः।
2-2 क, ग्रन्थे भ्रष्टपाठः 'पिप्पलीमूलं मजमोदा कणा' ?
(3) क. तथा धात्री, र. र. धान्यः 4-4 भा. प्र. बदरी गजचूर्णं च कुलं कंपिल्लकं तथा। यो. र. बदरीफलचूर्णं तु कुष्ठं. 5-5 क. पलं कसेल्लुकं विश्वा कृष्णा जीरकमेव च। 6-6 अन्येषु ग्रन्थेषु अंशस्यस्या भावः।

उपयोगात् स्त्रियो नित्यमलक्ष्मीमलवर्जिताः।
अथवा केवलं चूर्णं? मधुना सह योजयेत् ।।108।।

(टी. जीरा, हाऊबेर, धनिया, सौंफ, बेर के सूखे फल, अजवायण, मेथी, हिंगुपत्री, कसेरू, पीपर, पीपरामूल, अजमोद, वाष्पिका व चित्रक प्रत्येक का चूर्ण 1-1 पल; कसेरू, सोंठ, कूठ, अजवायन[1] इनका चूर्ण प्रत्येक का 4-4 पल गुड अर्धगत (पांच सेर), घी एक प्रस्थ व दूध दो प्रस्थ। इन्हें मंदाग्नि से पचाकर लेह सिद्ध कर लें व ठंडा होने पर[1] पल चातुर्जात डालें। यह पञ्च-जीरक अवलेह स्त्रियों के प्रसूत राग में बड़ा लाभ करता है। गर्भार्थिनियों के लिये यह उत्तम योग है।

20 प्रकार के योनिव्यापत्, कास, श्वास, ज्वर, क्षय, हलीमक, पाण्डु, शरीर मे दुर्गन्ध निकलना और मूत्रकृच्छ्र रोग इसके सेवन से नष्ट होते हैं। इसके प्रयोग से स्त्रियां सुन्दर व अलक्ष्मी रहित हो जाती हैं।

15 कल्याणगुडः

प्रस्थत्रयेणामलकीरसस्य शुद्धस्य दत्त्वाऽर्द्धतुलां गुडस्य।
चूर्णीकृतैर्ग्रन्थिकजीरचव्यव्योषेभकृष्णाहपुषाऽजमोदैः।।109।।

विडंगसिन्धुत्रिफलायमानी-पाठाऽग्निधान्यैश्च पलप्रमाणैः।
दत्त्वा त्रिवृच्चूर्णपलानि चाष्टा-वष्टौ च तैलस्य पचेद् यथावत् ।।110।।

तं भक्षयेदक्षफलप्रमाणं यथेष्टचेष्टं त्रिसुगन्धियुक्तम्।
अनेन सर्वे ग्रहणीविकाराः सश्वासकासस्वरभेदशोथाः ।।111।।

शाम्यन्ति चायं चिरमन्तराग्नेर्हतस्य पुंस्त्वस्य च वृद्धिहेतुः।
स्त्रीणां च वन्ध्याऽमयनाशनाऽयं कल्याणको नाम गुडः प्रदिष्टः ।।112।।

(टी. तीन प्रस्थ आंवलों का रस लेकर उसमें 1/2 तुला गुड मिलाके पकावें। पाक किंचित् गाढा होने पर पीपरामूल, श्वेतजोरा, चव्य, त्रिकटु, गजपीपर, हाऊवेर, अजमोद, बिडग, सैंधव, आंवला-हरड़ व बेहड़ा, अजवाइन, पाठा, चित्रक और धनिये के चूर्ण पृथक्-पृथक् 1-1 पल, निशोथ पिसी छनी 8 पल, तिल तल 8 पल मिलाकर अवलेह सिद्ध करें। फिर उस अवलेह में आधा पल दालचीणी, छोटी इलायची व तेजपात का चूर्ण मिलावें। मात्रा 1 तोला (आजकल 3 से 6 ग्राम) सेवन करने से सारे ग्रहणी विकार यथा—श्वास, कास, स्वरभेद व शोथ नष्ट होते हैं। अग्निमांद्य व नपुंसकता भी नष्ट हो जाते हैं। स्त्रियों के बन्ध्यत्व पर भी लाभप्रद है।

16 एलाद्यवलेहः[1] (एलाऽऽदिमन्थः)

एलाऽजमोदामलकाभयाक्षगायत्रिनिम्बासनशालसारान्।
बिडंगभल्लातकचित्रकांश्च कटुत्रिकाम्भोदसुराष्ट्रिकाश्च ॥113॥

पक्त्वा जले तेन पचेत्तु सर्पिस्तस्मिन् सुसिद्धे त्ववतारिते च।
त्रिंशत्पलान्यत्र सितोपलाया दद्यात्तुगाक्षीरिपलानि षट् च ॥114॥

प्रस्थे घृतस्य द्विगुणं च दद्यात् क्षौद्रं ततो मन्थहतं निदध्यात्।
पलं पलं प्रातरतो लिहेच्च पश्चात् पिबेत् क्षीरमतन्द्रितश्च ॥115॥

एतद्धि मेध्यं परमं पवित्रं चक्षुष्यमायुष्यतमं तथैव।
यक्ष्माणमाशु व्यपहन्ति शूलं पाण्ड्वामयं चापि भगन्दरञ्च ॥116॥

न चात्र किंचित् परिवर्जनीयं रसायनं चैतदुपासनीयम्।

(टी. इलायची छोटी अजवाइन, आंवला, बेहडा, हरड, कत्था, नीम, का गोंद, विजयसार का गोंद, राल (शाल का गोंद) बिडग, भिलावा, चित्रक, त्रिकटु मोथा, सौराष्ट्र की मिट्टी या फिटकडी इनको जल में पकाकर क्वाथ करें। इसी क्वाथ से घृत को सिद्ध कर लें। यह घी एक प्रस्थ लेकर 30 पल

---

1. क. ख. ग्रन्थ गोरस्य योगस्य भाव:

मिश्री व 6 पल वंशलोचन के चूर्ण में मिलावें और 2 प्रस्थ शहद मिलाकर भलीभांति मन्थन करें। (फेंटे)। 1 पल की मात्रा प्रातः काल लेवे व ऊपर दूध पीवे तो यह मंथ मेधा बढाता है, चक्षुष्य होता है। आयुवर्धक है व यक्ष्मा, शूल, पाण्डु व भगन्दर को नष्ट करता है।

इस पर कोई परहेज नहीं है। यह एक श्रेष्ठ रसायन है।

17 अष्टाङ्गावलेहिका

कट्फलं पौष्करं शृङ्गी व्योषं यासश्च कारवी।
श्लक्ष्णचूर्णीकृतश्चैतन्मधुना सह लेहयेत् ॥117॥

एषाऽवलेहिका हन्ति सन्निपात सुदारुणम्।
हिक्कां श्वास च कासं च कण्ठरोगं नियच्छति ॥118॥

एतद्योज्यं कफोद्रेके चूर्णमार्द्रकजै रसैः ॥119।

(टी. कायफल, पोहकरमूल, काकडासिंगी, सोंठ मिरच, पीपर, जवासा व कालाजीरा। समभाग में इनका चूण बनाकर मधु से चाटे तो यह अवलेहिका भयङ्कर सान्निपातिक ज्वर, हिचकी, दमा, खासी व कण्ठरोग दूर करती है। कफोद्रेक में इसके चूर्ण को अद्रक के रस में दिया जाता है।

18 पुनर्नवामण्डूरावलेहः

पुनर्नवा त्रिवृच्छुण्ठी पिप्पली मरिचानि च।
विडंगं देवकाष्टं च चित्रकं पुष्कराह्वयम् ॥120॥

त्रिफला द्वे हरिद्रे च दन्ती च चविका तथा।
कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम्[1] ॥121॥

---

1 ग. चित्रकम्

एतानि समभागानि मण्डूरं द्विगुणं ततः ।
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा स्थापयेत् स्निग्धभाजने ॥122॥

पाण्डुशोथोदरानाहशूलार्शक्रिमिगुल्मनुत् ।

(टी पुनर्नवा, निशोथ, सूंठ, पीपर, मिरच, बिडङ्ग, देवदारु, चित्रक, पुष्करमूल, त्रिफला, हल्दी, दारुहल्दी दन्ती, चव्य, इन्द्रयव, कुटकी, पीपरामूल व नागरमोथा। इनके समभाग वस्त्रपूत चूर्ण में दुगुनी मण्डूरभस्म मिलाकर आठगुणे गोमूत्र में पचावे व अवलेह सिद्ध कर लें। इसे स्निग्ध भांड में रख लें। यह योग उचित मात्रा में पाण्डु, शोथ, उदर आफरा, शूल, अर्श, क्रिमि व गुल्म रोगों को नष्ट करता है।

इति श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्य—श्रीनृसिंहभारती तच्छिष्यश्री आनंदभारतीविरचितायां आनन्दमालायां अवलेहाधिकारः समाप्तः।

आसवाधिकारः षष्ठः

1 दशमूलासवः

दशमूलाऽमृतारास्ना सारिवे द्वे बलात्रयम् ।
शोभाञ्जनञ्च मञ्जिष्ठा मूर्वापाठात्रिवृद्घनम् ।।1।।

एरण्डश्च बृहद्दारु भार्ङ्गीलोध्रकलिङ्गकः ।
कटुत्रिकमुशीरञ्च पुष्करं पौक्करं[1] शठी ।।2।।

तालीशपत्रं दार्वी च देवदारु च यष्ठिका ।
रेणुकं त्रायमाणञ्च पद्मकं सिन्दुवारकम् ।।3।।

हस्तिकर्णं च गम्भारी[2] कर्ण (णा)-मूलं यवासकम् ।
शताबरी मुसल्यौ च शतपुष्पा च कट्फलम् ।।4।।

कोकिलाक्षस्य बीजानि हरिद्रा रक्तचन्दनम् ।
खर्जूरञ्च तुगाक्षीरी वर्षाभूः'शुष्क (क्ल)- कंदकम् ।।5।।

खदिरं बीजसारञ्च प्रियङ्गुजीरकद्वयम् ।
वानरी क्रमुकं शृङ्गी आकारकरभस्तथा ।।6।।

काकोली क्षीरकाकोली जीवकर्षभकौ तथा ।
मेदा चान्या महामेदा ऋद्धिर्वृद्धिस्तथैव च ।।7।।

एतान् सर्वान् समाहृत्य पलद्वादशसंख्यकान् ।
जलेऽष्टगुणिते क्वाथे गृह्णीयात् पादशेषतः ।।8।।

वस्त्रपूतञ्च मृद्भाण्डे क्षिप्त्वा भूमौ निधापयेत् ।
गुडद्रोणचतुष्कञ्च सपादन्तत्र निक्षिपेत् ।।9।।

---

1 क (पूतना ?) 2 पुनरुक्तिः

क्षुत्रं ? (क्षुन्नं ?) कर्कन्धुमूलञ्च गुडस्यार्धञ्च निक्षिपेत् ।
धातकीकुसुमं स्विन्नं निक्षिपेदाढकोन्मितम् ।। 10 ।।

ततो जातरसं ज्ञात्वा (हि जातसंज्ञत्वं ?) क्षिपेत्कच्छपयन्त्रके ।
मुद्रयित्वा नु तस्याधो वह्निं प्रज्वालयेच्छनैः ।। 11 ।।

तस्या ? तश्चावने (तस्या च्यावने) मद्यं गृह्णीयात् सर्वमेव तत् ।
पुनरेव च तन्मद्यं यन्त्रे तस्मिन् विनिक्षिपेत् ।। 12 ।।

तन्मध्ये निक्षिपेद् सर्वमेतद्द्रव्यन्तु कुट्टितम् ।
चातुर्जातं लवङ्गञ्च मांसी-संलेप (शैलेय)-बालुकम् ।। 13 ।।

कङ्कोलं ग्रन्थिपर्णी च जातीपत्रं सचन्दनम् ।
सूक्ष्मैलां समुरां चैव वचाममर दारु च ।। 14 ।।

पूर्वयुक्त्या पुनस्तस्य गृह्णीयाद्द्रुतमासवम् ।
धारधो निःक्षिपेत् तस्थ मृगनाभञ्च कुंकुमम् ।। 15 ।।

कर्पूरञ्च तथा रक्तचन्दनेन विलेपितम् ।
काचभाण्डे विनिक्षिप्य शुभे स्थाने च धारयेत् ।। 16 ।।

यथा यथा पुराणं स्यात् गुणाढ्यंस्यात्तथा तथा ।
एतत् पिबेन्नरो कृष्ठ ? (वृष्यं) सान्नं युञ्ज्याद् यथाबलम् ।। 17 ।।

पिबेत् पलद्वयं प्रातर्मध्याह्ने द्विगुणं ततः ।
स्निग्धाहारो नवरात्रे पलान्यष्टौ रसायनम् ।। 18 ।।

(1)—हन्यादेतत्समग्रं पवनमथ गदं श्लैष्मरोगान्सपैत्तान्,
मन्दाग्निं रोगराजं ग्रहणिमथगुदारोगमर्शोविकारान् [1]—(1)

1-1, क. ग. ग्रन्थयोरतिभ्रष्टपाठः —यथा
क. "श्लेष्मरोगान् सपैत्तात्मंदाग्नि रोगराजगृहणीमदमुखो रोगमशो विकरान्"

पाण्डुं कुष्ठानि मेहान्क्रिमिमुदरमथो मूत्रकृच्छ्रं सशूलम्,
श्वासान्कासांश्च कृच्छ्रानरुचिमपि यकृच्छर्कराश्मरीञ्च[2]— (2) ।। 19 ।।

(1)—प्लीहानं कमलाऽऽमेसपदिमुखशिरोनेत्रनासाविकारान् ।
कार्श्यं मेदं प्रणाश्य प्रदरमपि गदं हन्ति सर्वाञ्ज्वरांश्च—(1) ।।

क्षीणानां क्षीणशुक्राणां वृद्धस्त्रीणां च बृंहणम् ।
नारीणामप्रजातानां पुत्रदं सर्वरोगजित् ।। 20 ।।

श्रमतां दैत्यसङ्ग्रामे गणानां हर्षहेतवे ।
ब्रह्मणा निर्मितः पश्चादृषिभिः सम्प्रकाशितः ।। 21 ।।

टिप्पणी—सुश्रुतसंहिता व बङ्गसेन में उपलब्ध दशमूलारिष्ट के योग इस पाठ से नितान्त भिन्न हैं ।

शार्ङ्गधर, भैषज्यरत्नावली व गदनिग्रह में प्राप्य पाठों के अनेक द्रव्य इस पाठ में भी मिलते हैं किन्तु उनमें भी कुछ अन्तर हैं ।

क्वाथ के द्रव्य

इस पाठ में उनकी संख्या 75 है व सभी द्रव्य समभाग हैं किन्तु शार्ङ्गधर व भै. र. में वे विषम भागेन कहे गये हैं । उन 2 ग्रन्थों में द्रव्यों की संख्या केवल 45 हैं व गदनिग्रह में तो केवल 40 ही हैं ।

ग. 'हन्यादेतत्ससमग्रं पवनमथगदं श्लेष्मरोगान् सपैत्तान् मन्दाग्निं रोगराजग्रहणीगदमुखोरोग.'

2-2 क. 'पाण्डुकुष्ठानि महात्वममुदरमर्यं........सशूलं'
कास कृच्छ्रानि रुचिमपि यकृच्छुर्कराश्मरी च

ग. पाण्डुकुष्ठानि मेहान् कृमिमुदरमथो मूत्रकृच्छ्रसशूलं मुससं

1-1 क. 'प्लीहानां वाम च लष्ण; शिरोनेत्रनासाविकारान् ।
कार्श्यं मेदो प्रणासगदरमपि विरंचि हंति हन्त्यशं ।।'

ग. प्लीहानां वामलाश्रयः मुखशिरोनेत्रनासषिकाकारन् कार्स्यमेदो प्रणास्यत् श्रघगदरमपि चिरं वहन्ति वस्य ज्वररस्य ।

क्वाथ के लिये आठगुना जल लेकर चतुर्थांश ग्रहण करना, अन्य ग्रन्थों की तरह इस ग्रन्थ में भी मिलता है।

गुडादि सन्धानोपयोगी पदार्थ

प्रस्तुत ग्रन्थ में गुड़ की मात्रा चतुर्थांश रहे, क्वाथ के जल में उसका $\frac{32}{45}$ वां भाग लेने की हैं किन्तु शार्ङ्गधर में वह $\frac{100}{131}$ वां भाग कही गई है।

मधु की मात्रा प्रस्तुत में नहीं मिलती किन्तु शार्ङ्गधरादिकों ने लगभग $\frac{2}{25}$ भाग कही है। अनुक्तमान में शार्ङ्गधर के अनुसार "क्षौद्रं क्षिपेद्गुडादर्धं" हमें प्रस्तुत पाठ में मान लेनी चाहिये। इस संबंध में उपलब्ध इस ग्रन्थ का पाठ भ्रष्ट है।

इस पाठ में बेर की जड़ की मात्रा गुड़ से आधी कही गई है। इस ग्रन्थ के कर्त्ता का भाव 'दशमूलादि' मद्य' बनाने का है किन्तु अन्य ग्रन्थकारों का आशय मद्य बनाने का न होकर केवल आसव प्रस्तुत करने का था। अतः उन्होंने बेर की जड़ डालने की चर्चा ही नहीं की है।

प्रस्तुत पाठ में स्विन्न धातकी पुष्प क्वाथ के $\frac{8}{225}$ वे भाग में लिये हैं, किन्तु शार्ङ्गधरादि तद्रूप धातकी पुष्प $\frac{15}{265}$ वें भाग में डालने का आदेश देते हैं।

मुनक्का प्रस्तुत पाठ में नहीं है किन्तु शार्ङ्गधरादिकों ने संधानार्थ मुनक्का क्वाथ भी प्रयुक्त किया है। अन्य प्रक्षेपद्रव्यों का प्रस्तुत पाठ में कोई उल्लेख नहीं है किन्तु शार्ङ्गधर संहिता व भै. र. में कस्तूरी सहित 11 द्रव्य कहे गये हैं। ग. नि. में कस्तूरी नहीं है किन्तु प्रक्षेप के 12 द्रव्यों का उल्लेख है।

संधानार्थ पात्र को भूमि में डाला हुआ रखने की अवधि प्रस्तुत ग्रंथ में नहीं मिलती किन्तु शार्ङ्गधर व ग. नि. ग्रन्थों में वह 1 मास कही गई है व ग. नि. में वह केवल 15 दिन ही है।

यदि किञ्चित् किण्व दे दिया जाय अथवा ऐसे वर्तन में संधान किया जाय जिसमें कि आसव बनते ही रहे हों व भूमि में बर्तन को गाड कर उसके

आस-पास भूसा भर दिया जाय तो संधान शीघ्र हो सकता है। किण्वदान के लिये शास्त्राज्ञा भी है --

'दिनानि कतिचित् किण्वं गुडादौ स्थापयेद्भिषक्'

(वृ. शौ.)

सन्धानोपरान्त अन्य सभी ग्रन्थकार आसव के स्वच्छजलांश को निर्मली के बीजों का चूर्ण डालकर अतिस्वच्छ कर प्रयुक्त करने की आज्ञा देते हैं।

प्रस्तुत पाठ में कच्छपयन्त्र द्वारा मद्य खींच लेने का विधान है। इस पाठ में व इस ग्रन्थ में कच्छपयन्त्र का स्वरूप नहीं दिया गया है। रसग्रन्थों में गन्धक जारणार्थ जिस कच्छपयन्त्र का स्वरूप मिलता है वह मद्य बनाने के काम में नहीं आ सकता है। परिस्रुत करने के लिये नाडी यन्त्र व वारुणी (बक) यन्त्र का उपयोग तब किया जाता था—तद्यथा—

'ततो विक्लक्तिमापन्नं यन्त्रैश्च नाडिकादिभिः।
विधिवत् स्रावयेदस्मादन्यपात्रे स्रुतं रसम्॥

गृह्णीयात् सा सुरा ख्याता ....' (वृ. शौ.)

हो सकता है कि ग्रंथकार का कच्छपयन्त्र ऐसा ही हो।

आगे प्रस्तुत ग्रन्थ में, इस प्रकार निकाले गये मद्य में सुकुट्टित 16 द्रव्यों के प्रक्षेप का प्रावधान है, किन्तु उनकी मात्रा नहीं कही गई है। इनमें से 8 द्रव्य तो वही हैं जिन्हें शार्ङ्गधरादिकों ने सन्धान के समय प्रक्षिप्त करने को कहा था। अनुक्तमान हो तो शास्त्राज्ञा दशमांश मान ग्रहण कर लेने की है---तद्यथा—

'........प्रक्षेपं दशमांशकम्' (शा. म. आ. 3)

प्रक्षेप के पश्चात् दुबारा कितने समय बाद मद्य खींचा जाय यह प्रस्तुत ग्रन्थ में नहीं कहा गया है। प्रायः यह समय 5-7 दिन का माना जाता है।

ग्रन्थकार ने इस बार यन्त्र की नली पर कस्तूरी व केशर बांध देने का आदेश दिया है।

उपर्युक्त सभी ग्रन्थों में प्रोक्त द्रव्यादिकों का विवरण आगे दिया जा रहा है।

कतिपय आधुनिक प्राणाचार्यों का मत है कि आसव को परिस्रुत करने पर उसकी औषधियों के सभी गुण प्राप्त नहीं होते हैं। केवल उद्वायी तैल परिस्रुत जल और मद्य ही हाथ लगते हैं।

क्र.सं.	नाम औषधि	आनन्दमाला में उसकी मात्रा	शाङ्र्गधर	भैषज्य रत्नावली	गदनिग्रह
1	दशमूल की प्रत्येक औषधि	12 पल	5 पल	5 पल	5 पल
2	अमृता	12 पल	20 पल	20 पल	20 पल
3	रास्ना	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
4	अनन्तमूल	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
5	कृष्णसारिवा	12 पल	—	—	—
6	सहदेई	12 पल	—	—	—
7	खिरैंटी	12 पल	—	—	—
8	कंथी	12 पल	—	—	—
9	शोभाञ्जन	12 पल	—	—	—
10	मञ्जिष्ठा	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
11	मूर्वा	12 पल	—	—	—
12	पाठा	12 पल	—	—	—
13	निशोथ	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
14	नागरमोथा	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
15	एरण्ड	12 पल	—	—	—
16	बधारा	12 पल	—	—	—
17	भार्ङ्गी	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल

18	लोध्र	12 पल	—	—	—
19	इन्द्रयव	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
20	सोंठ	12 पल	—	—	—
21	काली मिर्च	12 पल	—	—	—
22	पीपर	12 पल	2 पल	2 पल	—
23	उशीर	12 पल	25 पल	25 पल	25 पल
24	पुष्करमूल	12 पल	—	—	—
25	पौक्कर (पूतना)?	12 पल	हरड 8 पल	हरड 8 पल	हरड 8 पल
26	कचूर	12 पल	2 पल	2 पल	—
27	तालीसपत्र	12 पल	—	—	—
28	दार्वी	12 पल	—	—	—
29	देवदारु	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
30	यष्टीमधु	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
31	रेणुक	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
32	त्रायमाण	12 पल	—	—	—
33	पद्माख	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
34	निर्गुण्डी	12 पल	—	—	—
35	हस्तिकर्ण	12 पल	—	—	—
36	कम्भारी	12 पल	—	—	—
37	पीपरांमूल	12 पल	—	—	—
38	यवासा	12 पल	12 पल	12 पल	$12\frac{1}{2}$ पल
39	शतावरी	12 पल	—	—	—
40	कृष्ण मूसली	12 पल	—	—	—
41	श्वेतमूसली	12 पल	—	—	—
42	सौंफ	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
43	कट्फल	12 पल	—	—	—
44	तालमखाणा	12 पल	—	—	—
45	हल्दी	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल

46	रक्तचंदन	12 पल	—	—	—
47	खर्जूर	12 पल	—	—	—
48	वंशलोचन	12 पल	—	—	—
49	पुनर्नवा	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
50	शुक्लकन्द (शुभ्रालु या भैंसाकंद)	12 पल	—	—	—
51	खैर	12 पल	8 पल	8 पल	8 पल
52	विजयसार	12 पल	8 पल	8 पल	8 पल
53	प्रियङ्गु	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
54	शाहजीरा	12 पल	2 पल	2 पल	—
55	सफेदजीरा	12 पल	—	—	—
56	कौंच	12 पल	—	—	—
57	सुपारी	12 पल	2 पल	2 पल	—
58	शृङ्गी	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
59	अकलकरा	12 पल	—	—	—
60	काकोली	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
61	क्षीरकाकोली	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
62	जीवक	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
63	ऋषभक	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
64	मेदा	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
65	महामेदा	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
66	ऋद्धि	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
67	वृद्धि	12 पल	2 पल	2 पल	2 पल
		ये 67 द्रव्य क्वाथ के हैं।			
68	चित्रक	—	25 पल	25 पल	25 पल
69	आंवला	—	16 पल	16 पल	16 पल
70	कुष्ठ	—	2 पल	2 पल	2 पल

71	बिडंग	—	2 पल	2 पल	2 पल
72	कपित्थ	—	2 पल	2 पल	2 पल
73	बेहडा	—	2 पल	2 पल	2 पल
74	चव्य	—	2 पल	2 पल	2 पल
75	जटामांसी	---	2 पल	2 पल	2 पल
76	नागकेशर	---	2 पल	2 पल	2 पल
		8 गुणे जल में पकावे व $\frac{1}{4}$ शेष रहने पर उतारे	ये 45 क्वाथ के द्रव्य हैं	ये 45 क्वाथ के द्रव्य हैं	ये 40 क्वाथ के द्रव्य हैं
77	जल	—	आठ गुणे जल में क्वाथ कर चतुर्थांश शेष रहने पर छान कर निम्नांकित द्रव्य उस क्वाथ में डालें	शार्ङ्गधर संहिता की ही	शार्ङ्गधर-वत्
68	गुड	5 द्रोण	400 पल	400 पल	400 पल
69	शहद	—	32 पल	32 पल	32 पल
80	बेर की जड़	$2\frac{1}{2}$ द्रोण	—	—	—
81	धाय के फूल	(स्विन्न) आढक 64 पल	30 पल	30 पल	30 पल

82	मुनक्का	—	64 पल	60 पल	60 पल
		इन्हें पूर्वोक्त क्वाथ में डालें संधान होने पर कच्छप यंत्र द्वारा निकाले गये मद्य में नीचे लिखी औषधियां डालकर पुनः मद्य खींचे	मुनक्का के 4 गुणे पानी में डालकर क्वाथ करें व $\frac{3}{4}$ भाग शेष रहने पर उतार कर छानें व पूर्वोक्त क्वाथ व गुडादि पदार्थ डाल कर निम्नाङ्कित औषधियां डालकर संधान विधि से आसव बना ले।		
83	तेजपाती				
84	इलायची				
	(इनकी मात्राएं नहीं कही गई हैं)				
85	नागकेशर				
86	दालचीनी				
87	लवङ्ग				
88	जटामांसी				
89	छडीला	नोट—85-98 तक के द्रव्यों की मात्रा			
90	सुगन्धवाला	ग्रन्थकर्ता ने नहीं कही है।			
91	शीतलचीनी				
92	ग्रन्थिपर्णी				
93	छोटी इलायची				
94	मुरा				
95	वच	—			
96	अमर देवज	—			
97	जावत्री	—			
98	चन्दन	—			
99	जायफल	—	2 पल	2 पल	1 कर्ष

100	पीपर	—	2 पल	2 पल	2 पल
101	नेपाली धनिया	—	—	—	1 कर्ष
102	कस्तूरी	तोल नहीं दिया	1 शाण	1 शाण	—
103	केशर	,,	—	—	—
104	कपूर	,, दुवारा मद्य खींचते समय केशर, कस्तूरी व कपूर की पोटली यन्त्र की नली पर बांधे व मद्य ग्रहण करें।	—	—	—

(2) शङ्खद्राव:

सिन्धुसौवर्चलोपेतं बिडं सामुद्रजं गडम्।
पांशुपं टङ्कणं स्वर्जिजयवक्षारं तु चैवटम्[1] ।। 1 ।।

उष्ट्रकण्टारिकाक्षारं[2] कासीसं नवसादरम्।
समानं सोमिलक्षारं स्फटिकं द्विगुणन्ततः ।। 2 ।।

चूर्णीकृत्य क्षिपेत्काचकूप्यामग्निमुखेन च (च ताम् ?)।
युक्त्या गजयन्त्रमार्गेण[3] शङ्खद्रावो भवेद् ध्रुवं ।। 3 ।।

भ्रष्टः शङ्खो द्रवीभूतस्तत्र स्यात्प्रत्ययो महान्।
पञ्चगुल्मान् तथा कासान् क्षयान्सप्तव्यपोहति ।। 4 ।।

---

1 क. ग्रन्थ के टीकाकार ने इसे आंधीझाड का खार व ग. के टीकाकार ने इसे इमली का खार कहा है। स्वयं ग्रन्थकर्त्ता ने कोई टीका नहीं दी है। चारों प्रतियों के टीकाकार अलग-अलग हैं।

2 ग. उष्ट्रकं कण्टकक्षारं

3 ग. कथंत्रिमार्गेण

(टी. सीधा नमक, सौवर्चल, विड, सामुद्रन व कच नमक, पांशु (रेह का नमक), सुहागा, सानीखार, यवक्षार, चैवट ? (क्षार विशेष) ऊटकण्टारे का क्षार, कसीस व नवसादर समान भाग लें। सोमलक्षार ? व फिटकड़ी की मात्रा दुगनी लेकर पीसे व ग्रातिशी शीशी में डालकर गजयन्त्र मार्ग से शङ्ख-द्राव नामक ग्रम्ल खींच लेवें। इसमें भ्रष्ट शंख गल जाता है जिससे विश्वास बन जाता है कि यह दवाई सिद्ध हो गई है। इसके सेवन से 5 प्रकार के गुल्म, कास व सप्त क्षय नष्ट होते हैं।

(3) द्राक्षारिष्टम्[1]

द्राक्षा तुलार्द्धं द्विद्रोणे जले च विपचेत्सुधी।
पादशेषे कषाये च वस्त्रपूते विनिक्षिपेत् ॥ 1 ॥

[2]–[गुडस्थ द्वितुलां तत्र त्वगेलापत्रकेशरम्।
प्रियङ्गुर्मरिचं कृष्णा विडङ्गञ्चेति चूर्णयेत् ॥ 2 ॥

पृथक्पलोन्मितैर्भागैस्ततो भाण्डे निधापयेत्।]–[2]
समन्ततो घट्टयित्वा पिबेज्जातरसं ततः ॥ 3 ॥

उरःक्षतं क्षयं हन्ति कासश्वासगलामयान्।
द्राक्षारिष्टमिदं प्रोक्तं बलकृन्मलशोधनम् ॥ 4 ॥

(टीका) मुनक्का ½ तुला का, 2 द्रोणजल में क्वाथ करे। चतुर्थांश शेष रहें तब क्वाथ को उतार कर वस्त्रपूत कर लें। उसमें गुड़ दो तुला, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, प्रियङ्गु, मिरच, पीपर ग्रौर बिडंग प्रत्येक एक एक पल मिलावें। फिर घृत से लिप्त भांड में रख लें। मुख बंद कर उस भांड को जमीन में जौ के ढेर में गाड़ देवें। एक मास बाद निकाल कर स्वच्छ जलांश को छान कर रख लें। इसके प्रयोग से उरःक्षत, क्षय, कास, श्वास व गले के रोग नष्ट होते हैं। यह द्राक्षारिष्ट नामक योग बल देने वाला व मल का शोधन करने वाला है।

---

1 योगोऽयं क ग्रन्थे नोपलभ्यते।
2-2 ग. ग्रन्थे ग्रंशसस्याभावः।

(4) बब्बूराद्यरिष्टम्[1]

तुला द्वयञ्च बब्बूल्याश्चतुर्द्रोणे जले पचेत् ।
द्रोणशेषे रसे शीते गुडस्य त्रितुलाम्पचेत् ।। 1 ।।

धातकीं षोडशपलां कृष्णाञ्च द्विपलांशिकम् ।
जातीफलानि कङ्कोलमेलात्वक्पत्रकेशरम् ।। 2 ।।

लवङ्गं मरिचञ्चैव पलिकांशान् प्रकल्पयेत् ।
मासमात्रस्थितम्भाण्डे बब्बूरारिष्टकञ्जयेत् ।। 3 ।।

क्षयं कुष्ठमतीसारं प्रमेहं श्वासकासकम् ।।

(टी. बबूल की छाल दो तुला लेकर चारद्रोण जल में उसका क्वाथ करें। एक द्रोण क्वाथ शेष रहें तब उतार कर छान लें। उसमें गुड़ तीन तुला, डालकर पचावें व तत्पश्चात् धाय के फूल 16 पल, पीपर 2 पल, जायफल, कङ्कोल (शीतल चीनी), इलायची, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, लौंग, कालीमिरच—ये प्रत्येक एक एक पल चूर्ण उस द्रव्य में मिलाकर गाड देवें। एक महीने के बाद निकाल कर ऊपर के स्वच्छ जल को छानकर सुरक्षित रख लें। यह बब्बूलारिष्ट, क्षय, कास, कुष्ठ, ग्रतिसार, प्रमेह व श्वास रोगों को दूर करता है।

(5) पिपल्यासवः[2]

पिप्पली मरिचं चव्यं हरिद्रा चित्रको घनः[3] ।
विडङ्ग क्रमुको लोध्रः पाठा धात्र्येलवालुकम् ।। 1 ।।

उशीरं चन्दनं कुष्ठं लवङ्गं तगरं तथा ।
मांसी त्वगेलापत्रञ्च प्रियङ्गुर्नागकेशरम् ।। 2 ।।

एषामर्धपलान्भागान्सूक्ष्मचूर्णीकृताञ्छुभान् ।
जलद्रोण [द्वये] क्षिप्त्वा दद्याद्गुडतुलाद्वयम् ।। 3 ।।

---

1 योगोऽयं क. ग्रन्थे नास्ति

2 योगोऽयं क. ख. ग. ग्रन्थेषु नास्ति ।

3 ग. चित्रकोत्पलम

पलानि दश धातक्याद्रोणा षष्टिपला भवेत् ।
एतान्येकत्र संयोज्य मृद्भाण्डे च विनिक्षिपेत् ।। 4 ।।

ज्ञात्वाऽऽगतरसं सर्वं पाययेदग्न्यपेक्षया ।
क्षयं गुल्मोदरं कार्श्यं ग्रहणीं पाण्डुतान्तथा ।। 5 ।।

अर्शांसि नाशयेच्छीघ्रं पिप्पल्याद्यासवस्त्वयम् ।।

(टी. पीपर, मिरच, चव्य, हल्दी, चित्रक, मोथा, विडंग, सुपारी, लोध, पाठा, आंवला, एलवालुक (गिलास) रेवस, चन्दन, कूठ, लौंग, तगर, जटा-मांसी, दालचीनी इलायची, तेजपात, प्रियङ्गु, नागकेशर—ये प्रत्येक आधा आधा पल लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें । फिर इन्हें 2 द्रोणजल में पकावें और उसी में गुड़ 2 तुला, धायके फूल, 10 पल और द्राक्षा 60 पल मिला कर मिट्टी के (घृते लिप्त) पात्र में डाल देवें 1 मास तक जमीन में गाड देवें । उसके बाद उसे निकाले व स्वच्छ द्रवांश को छान कर सुरक्षित रख लेवें । आयु, बल व अग्नि के अनुसार रोगी को दें । यह योग क्षय, गुल्म, उदर, दुर्वलता, संग्रहणी, पाण्डु व अर्श रोगों का शीघ्र ही नाश कर देता है ।)

(6) शुण्ठीपुटपाक

चूर्णं किञ्चित् घृताभ्यक्तं शुण्ठ्या एरण्डजैर्दलैः ।
वेष्टितं पुटपाकेन विपचेन्मन्दवह्निना ।।1 ।।
तत उद्धृत्य तच्चूर्णं ग्राह्यं प्रातः सितासमम् ।
तेन यान्ति शमं पीडा आमातीसारसम्भवाः ।। 2 ।।

(टी.—किंचित् घृताभ्यक्त सोंठ के चूर्ण का 1 लड्डू बनावें । इसे एरण्ड के पत्तों में लपेट कर पुटपाक विधि में मंद अग्नि से पकावें । ठण्डा होने पर उसमें से उस चूर्ण को निकाल लेवें और समभाग शक्कर मिलाकर, प्रातः काल लेने से आमातिसार जन्य पेट की पीड़ा मिटती है ।

(7) अरलू पुटपाकः

अरलूत्वक्कृतश्चैव पुटपाकोऽग्निदीपनः ।
मधुमोचरसाभ्याञ्च युक्तः सर्वातिसारजित् ।। 1 ।।

(टी. अरलू की छाल का कल्क का पुटपाक करके उसका रस लेवें । इससे अग्नि प्रदीप्त होती है । इसी रस में शहद और मोचरस मिला दें तो वह सभी प्रकार के अतिसार नष्ट कर देता है ।)

(8) सूरणपुटपाकः

मृल्लिप्तं सौरणं कन्दं पक्त्वाऽग्नौ पुटपाकवत् ।
दद्यात्सतैललवणैर्दुर्नाम्नां विनिवृत्तये ।। 1 ।।

(टी. मिट्टी से लेप कर सूरणकन्द (जमीकन्द) को पुटपाक विधि से अग्नि में पका कर तैल व लवण के साथ भून कर प्रयुक्त करके सेवन करें तो सभी अर्श रोग दूर होते हैं ।

(9) नीलोत्पलादिहिमम्

नीलोत्पलं बलः द्राक्षा मधूकं मधुकन्तथा ।
उशीरम्पद्मकञ्चैव काश्मरी च परूषकम् ।। 1 ।।
एतच्छीतकषायश्च वातपित्तज्वराञ्जयेत् ।
सप्रलापभ्रमच्छर्दिमोहतृष्णानिवारणः ।। 2 ।।

(टी. नीलोफर, बरियारा, मुनक्का, महुआ के फूल, मुलेठी, पद्माख, गंभारी छाल और फालसाफल—समभाग इन औषधियों का ठंडा कषाय वात-पित्त ज्वरों को नष्ट करता है जिनमें प्रलाप, भ्रम, वमन, मोह और तृष्णादि उपद्रव हों ।)

(10) मधूकादि काण्टः

मधूकपुष्पं मधुकं चन्दनं सपरूषकम् ।
मृणालं कमलं लोध्रं गम्भारीं नागकेशरम् ।। 1 ।।

त्रिफलां सारिवां द्राक्षां लाजान् कोष्णे जले क्षिपेत् ।
सितामधुयुतः पेयः काण्टौ वाऽसौ[1] हिमोऽथवा ।। 2 ।।[2]

वातपित्तज्वरं दाहं तृष्णामूर्च्छारतिभ्रमान् ।
रक्तपित्तं मदं हन्यान्नात्र कार्या विचारणा ।। 3 ।।[3]

(टी. महुग्रा के फूल, मुलेठी, चंदन (रक्त), फालसा के फल, कमल, लोध्र, गम्भारी की छाल, नागकेसर, त्रिफला, सारिवा, मुनक्का, द्राक्षा, धान की खीलें, इनके चूर्ण को गरम जल में डालकर मसल छानकर उसमें शक्कर व मधु मिलाकर पीने से दाह, प्यास वात-पित्तज्वर, मूर्च्छा, बेचैनी, भ्रम, रक्तपित्त व मद इन रोगों को नष्ट करता है। इसका हिम भी यही काम करता है। इसमें तर्क करने की गुंजाइश नहीं है।)

(11) जम्बीरद्रावः[4]

शतं जम्बीररसतो रामठं च पलत्रयम् ।
सैन्धवञ्च बिडङ्गञ्च पृथग्दद्यात्पलं पलम् ।। 1 ।।

त्र्यूषणं पलमेकैकं सौवर्चलचतुष्पलम् ।
राजिका पलमेकञ्च यवानी पलिका मतो ।। 2 ।।

एकीकृत्य समस्तानि घृतभाण्डे विनिक्षिपेत् ।
मुद्रयित्वा मुखन्तस्याऽश्वशालायां निधापयेत् ।। 3 ।।

एकविंशद्दिनं यावत् ततस्तत्स्थं समुद्धरेत् ।
सपेयः पलमानेन प्रत्यहं प्रगभोजने ।। 4 ।।

यकृत्प्लीहोद्भवं गुल्मं विद्रध्यष्ठीलिकादयः ।
वातशूलं विबन्धांश्च प्रत्याध्मानं जलोदरम् ।। 5 ।।

---

1 ग. श्वासै 2 ग. हिमोपमः
3 योगोऽयं क. ख. ग. ग्रन्थेषु नोपलभ्यते ।
4 क. ग. घ. ग्रन्थेषु अस्य योगस्याभावः

नश्यन्ति चातिशीघ्रेण वातश्लेष्मभयास्तथा ।
जीर्णन्ति गुरुभोज्यानि जम्बीरद्रावसेवनात् ।। 6 ।।

टी. जंबीरी का रस सेर 10 (100 जम्बीरियों का रस) हींग टं 30, सीधौ टं. 30 (दोनों 1-1 पल) बिडु ? (बिडंग) टं. 10, (1 पल), त्र्यूषण टं. 30 (एक पल) सौवर्चल टं. 40 (4 पल), राई टं. 10 (1 पल) अजवाइन टं. 10 (1 पल) इन सबको इकठ्ठा करके घृतभांड माहै घालै । घुडसाल मध्य गाडई । 21 दिन राखै पछै काढे । निति 1 पल खाई उदर रोग सब जाई ।

इति श्रीपरमहंस—परिव्राजकाचार्य आनन्दभारती विरचितायां आनन्द मालायां आसव-कांट अधिकारः षष्ठः ।

अथ: षष्ठोऽधिकार:

अथ महाकल्याणघृतम्[1]

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता-बिडङ्गैलानिशाद्वयम् ।
द्वे साखि त्रिवृछन्त्य[2]नन्ता - पद्मकवानरी ॥ 1 ॥

मञ्जिष्ठा मधुकं कुष्ठं ब्राह्मी तालीसबिल्वकम् ।
अष्टवर्गो जीवनीय-गण: स्याच्च[3]न्दनद्वयम् ॥ 2 ॥

द्राक्षा मधू[4]कपुष्पाणि ब[5]ला पर्णीचतुष्टयम् ।
देवदारु शठीपाठा - रेणुका - जीरकत्रय[6]म् ॥ 3 ॥

अश्वगन्धाऽजमोदा[7] च कटुका दाडिमीफलम् ।
इ[8]न्द्रवारुणिका शङ्ख[8]पुष्पी च बृहतीद्वयम् ॥ 4 ॥

चातुर्जातशुभोशीरसुर[9]साबालकं सिता ।
प्रिय[10]ङ्गुर्मालतीजा[10]तीपुष्पं पुष्करमूलकम् ॥ 5 ॥

विदारी-कदलीकन्दो मु[11]सली हस्तिकर्णक:[11] ।
[12]विषा च त्रपुसीबीजं[12] कौंतीमांस्ये[13]लवालुकम् ॥ 6 ॥

---

1 क. घृत: 2 क. ग. तृवृछन्तीनन्ता, ख तृवृदंतीनता
3 ख स्याचन्द्रनं
4 क. ख. मधुक 5 क. वाल 6 ख. जीरकं द्वयं, ग. द्वयम
7 क. ग. ख मोदाश्च, 8-8 क. इन्द्रवारुणिका संख्या, ख. शंखा;
ग. इन्द्रवारुणिकामूलं
9 ख. सरसावालुकं 10-10 क. प्रियंगुल्मांजातीसपुष्पं, ग. प्रियङ्गुमालतीपुष्प-
पुष्करमूलकं
11-11 क. मुसलाहस्तकर्णक: 12 क. ग. अतीस, ख अतिविपात्रपुसीबीजं
13 क. ग. मांसेल. ख. मांसेलुकं ।

एतै[1]रक्षसमैः कल्कैः घृतं प्रस्थं, चतुर्गुणम् ।
क्षीरञ्च द्विगुणं नीरं द[2]त्त्वातद्गोमयाग्निना[2] ।। 7 ।।

प्रा[3]प्तेऽह्निपुष्यसंयुक्ते पचेत् खादेच्च नित्यशः[3] ।
सर्पिरेतन्नरो नारी पीत्वा क[4]र्षं वृषायते ।। 8 ।।

या च[5] वन्ध्या भ[6]वेन्नारी या च कन्याः[7] प्रसू[8]यते ।
या चैवा[9]ऽस्थिरगर्भा स्याद् या वा जनयते मृतम् ।। 9 ।।

अल्पायुषं वा जनयेत् या[10] च सूता पुनः स्थिता[10] ।
ईदृशं[11] जनयेत् पुत्रं तस्या दोषं व्यपोह[12]ति ।। 10 ।।

ए[13]तत्कल्याणकं नाम महादेवप्रकीर्ति[14]तम् ।
[15]जीवद्वत्सैकवर्णाया[15] गो[16]र्घृतमत्र गृह्यते ।। 11 ।।

टीका :—सुंठि, मिरचि, पिपली, हरडै, बहैडा, आंवला, मोथ, विडङ्ग, इलायची, हलद, दारुहलद, सा[17]रिवा, कृष्णसारिवा, निसोति, दांतिण, जवासो, (पद्म[18]क व वानरी), मंजीठ, जेठीमध (ग. प्रति में मधूक) कूठ, ब्राह्मी, तालीसपत्र, वील, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, (जीवनीय गणकी औषधियां) जा[19]वत्री (जावत्री मूलपाठ में यहां पर नहीं है)

---

1 क. एतैः रक्षः, ख. एतेरक्ष समैकल्कै 2-2 ग. 'प्रदापयेत् दत्वतहोमयगिन'
3-3 ख. प्राप्नोह्निपुष्यसंयुक्तं पचेत वादे च नीत्यस'
4 ग, यर्षा क. कर्ष
5 ख. व 6 ख. भवैनारी 7. क. कन्या ख. कन्य 8 ग. प्रयोजनम्
9 क. ज्या चैव स्थिर, ख या चैव.
10-10 ग. यावत् यावत् सूतिस्थिरो भवेत्; ना. व. यावत्सूतिः स्थिरा भवेत् ।
ख. जा वा सूत्वा पुनः स्थिताः 11 ख. इन्द्रसं 12 ख. विपोहिती
13 ग. घृतं 14. क. ग प्रकीर्तितः 15-15 ग. जीववत्सकवर्णायु 16-16 क. ग घृतं तस्यास्तु, ख. घृतंतस्यासुगृह्यते ।
17 ख. गुलीसर, काली गुलीसर
18 ख. पद्माख व कौंच का बीज कैंथ ?
19 ख. जावत्री नहीं है व वहां से पीठवनी तक का कोई भी द्रव्य नहीं है ।

चन्दन, रक्तचन्दन, द्राख, महुवा रा फूल, वल, माषपणी, सालवनी, पीठवनी, (मूलपाठ में पर्णीचतुष्टय है अतः (मुद्गपर्णी भी ली जाय), देवदारु, सटी, पाठा, रेणुका, जीरो, कालो जीरो, चारोली ? (चारोली की जगह कलौंजी-भंगरेला), आसगंधी, अजमोद, कटुक, दाडिमसार, तूंवणि, संखाहोली, दोन्यूरींगणी, तज, तमालपत्र, इलायची, नागकेशरि, वंशलोचन, उसीर, तुलछी, वालौ, मिश्री, प्रियङ्गु, निवो[1]ली रा फूल, जाइ रा फूल, पुहकर मूल, विदारीकंद, केलिकंद, मूसलीकंद, रातो, एरण्ड रातो, पवीस, खीरा काकड़ी रा बीज, रेणुका, छ[2]ड, एलियो, प्रत्येक-प्रत्येक टां. 4 (अक्षसम), घृति टां 256, गाय रो दूध टां 1024 पाणी टां 2049 पुष्यनक्षत्र माहि घृति पचवीजइ खाईजै टां 4 घृत, पाइजै ? टां 4 वायर पीवै टां 4 मांटी पीवै। (स्त्री पुरुष दोनों 4-4 टां. पीवे) पछै आपस्मैं संभोग करइ गर्भ रा रोग सही जाइ। पुत्र जामै जीवै। गुण सही पाठ माहै छइ ।।

बिन्दुघृतम्

अर्कक्षीरं पले[3] द्वे च स्नुहीक्षीरं पलानि षट्[4]।
[5]पथ्या कम्पिल्लकं श्यामा शम्याकं गिरिकर्णिका[5] ।। 12 ।।

[6]नीलिनी त्रिवृता दन्ती शङ्खिनी चित्रकन्तथा ।
चतुर्गुणेन पयसा पचेन्मन्दाग्नितो भिषक् ।। 13 ।।

---

1 ख. मालती के फूल व जाय के फूल ?

2 ख. छूड व एलुवा के स्थान पर छारहुल ?

3 क. पलं द्वे व 4 ख. षटु 5-5 क. 'पथ्याकं पलकं श्यामाकं गिरिकर्णिका ।' ख. 'पथ्या कपिछकं सामा सम्पाकं गिरिकर्णिका ।'

6 क. नीलेनी, ख. निलिनी *-* 'चतुर्गुणेन भिषक्', पाठोऽयं ख.,ग., बृ.यो.त., चक्र, यो.र., ग.नि. र.र. च नोपलभ्यते ।

[1]एतैः पञ्चपलैर्भागै[1]र्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
अ[2]थास्य मलिने को[3]ष्ठे बिन्दुमात्रं प्रदापयेत् ।। 14 ।।

[4]यावतोऽस्य पिबेद्[4] बिन्दू[5]स्तावद्वे गा[6]न् विरि[7]च्यते ।
कुष्ठं गुल्ममुदा[8]वर्तं श्वय[9]थुं सभगन्दरम् ।। 15 ।।

°श[10]मयत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिन्द्रा[11]शनिर्यथा ।।°

टीका :—आक रो दुग्ध टां 32, थोहर रो दुग्ध टां 96 हरडै, कपीलौ, पीपलि, किरमालौ, गिरिकर्णी (श्वेत अपराजिता), निसोति, दांतणी, गुलीशंखिनी, (शंखाहुली) चित्रक, प्रत्येक, प्रत्येक टां 5 (क. ख. व. ग. मूल पाठ में 5-5 पल है, अन्य ग्रन्थों में 1-1 पल है और वही पाठ 1-1 पल वाला उपयुक्त है ।), दूध टां 52 (केवल क. ख. व ग. के मूल पाठ में ही दूध का उल्लेख है—'चतुर्गुणेन पयसा', अन्य ग्रंथों में यह पाठ नहीं मिलता ।) पाणी टां 1300[1] (क. ख. ग. के मूल पाठ में पानी नहीं है) घी. टां 256, उदररोग सहि जाइ । जितरा बिंद पीवै तितरा वेगि लागइ ।

1-1 ख. 'एते पंचपलीर्मोगै, चक्र., बृ.यो.त., ग.नि., यो.र., र.र.च 'एतेषां पलिकैर्मागैः

2 ख. अथसि 3 ख. कोष्ठो

4-4 क. यावतस्य 0, ख. 'यावंतस्यापिचेन' 5 क. ख. ग. विन्दु 6 क ख.ग. वेगं 7 ख विरुते 8 क. ग. 0 गुदावर्तं, ख. मुदावर्क्तं 9 क श्वयथं, ख. सुपणि

10 क. समय., ख. समयातुदरा 11 क. 0 मिद्रासति, ख. पृपि मिद्रासनि

°° शमय.... ....यथा', अस्मात् परं "एतद्बिन्दुघृतं नाम येनाभ्यक्तो विरिच्यते" इति यो.र., ग.नि., चक्र, बृ.यो.त., शा. च अधिकः पाठः । बृ.यो त.तु अग्रे 'स्नुहर्कपयसोरत्र पा•कस्यानु प्रयत्नतः• ।

चतुर्गुणं जलं देयं पाकार्थं बिन्दुसर्पिषि ।।' इत्यपि पाठः । •• शा. टि. 'पाकार्थमुपपत्तितः'

पाठान्तरम्—यो. त.

'त्रिवृता त्रिफला पाठा दन्ती कटुकरोहिणी ।
चतुरङ्गुलमज्वा च तथा च कटुकत्रयम् ।।

चित्रकञ्च बृहत्यौ च तथा च गजपिप्पली ।
स्नुहीक्षीरं पलं दद्याद् घृतस्याष्टौ प्रदापयेत् ।।

यावत्पिबति तद्विन्दूस्तावद्वेगान् विरिच्यते ।
एतद्विन्दुघृतं सिद्धमृषिभिः समुदाहृतम् ।।'

टि. चतुरङ्गुलः—आरग्वधः

अथ महारोहीतकघृतम्[1]

रोहीतकात्पलशतं[2] क्षोदयेद्[3] वदराढकम् ।
साधयित्वा जले द्रोणे चतुर्भागाव[4]शेषितम् ।। 17 ।।

घृतप्रस्थं समावाप्य छागीक्षीरं चतुर्गुणम् ।
तस्मिन्दद्यादिमान् कल्कान्[5] सकला[6]नक्षसम्मितान् ।। 18 ।।

व्योषं [7]फलत्रयं हिङ्गु यमानीं तुम्बुरुं बिडम् ।
अजाजीं[8] कृष्णलवणं दाडिमं[9] देवदारु—च ।। 19 ।।

पुनर्नवां विशालाञ्च यवक्षारन्तु पौष्करम् ।
बिडङ्गं चित्रकञ्चैव हबुषां[10] च[11]विकां त्व[11]चम् ।। 20 ।।

---

1 क. घृत, ख. पुस्तके योगोऽयं नोपलभ्यते ।, ग. नि. 'रोहीतकं घृत'मिति नाम (कृष्णात्रेयात्) ।

2 क. सतं, 3 क. क्षयदेयंत् 4 क. चतुर्मागा--वसेषितं

5 क. कल्का 6 क. सकलानेक्ष-सन्मितान्

7 ग. पलत्रयं 8 क. अजाजी कृष्णलिवणं, ग. नि. 0 सैन्धवं कुष्ठं 9 क. दाडिमे

10 क. हविषां 11-11 वृ. यो. न. कारवी तथा; यो.र., र.र., वृ वै., भै.र., चक्र., ग. नि. च वचा ।

एतै[1]र्घृतं विपक्तव्यं स्थापयेद्भाजने शुभे[2] ।
पाययेत्[3] त्रिपलां मात्रां व्याधिवलमपेक्ष्य[4] च ।। 21 ।।

रसकेनाऽथ यूषेण पयसा वाऽथ भोजयेत् ।
उपयुक्ते घृते तस्मिन् व्याधीन् हन्यादिमान्बहून् ।। 22 ।।

यकृत्प्लीहोदर[5]ञ्चैव श्वयथुं सभगन्दरम् ।
महारोहितकं नाम प्लीहघ्नं श्रेष्ठमौषधम् ।। 23 ।।

टीका :—रोहीस रा रूंख री छालि 1600 (टां). बोर री रांग टां 1024(1 आढक = 64 पल), पाणी टां 4096, गाय रो घृत टां 256, छाली रो दूध टां 1024, सूंठि, मिरच, पीपलि, हरडै, बहैडा, आंवला, हींग, अजवाईणि, तुंबरू, बिडलूण, जीरउ, सौंचल, दाडिमसार, देवदारू, साटी, तूंवणि, यवषार, पुहकरमूल, चित्रक, बिडंग, हौंह, चविक, तज, प्रत्येक, प्रत्येक टां 4 पाईजै । टां 30 पछइ ।।घृतां री विधि प्रसिध हुई । अनोपान त्रिफलां रो यूष, दूध इयां सउदे हीरई वल सारू पाईजै । उदर विकार सहि जाइ ।।

(1) चरक सं., वृ. वै,, भै. र. चक्र., ग. नि. च. "रोहीतकघृतम्"

'रोहीतकत्वचः कृत्वा पलानां पञ्चविंशतिम् ।
कोलद्विप्रस्थसंयुक्तं कषायमुपकल्पयेत् ।।

पालिकैः पञ्चकोलैस्तु तै सर्वैश्चापि तुल्यया ।
रोहीतकत्वचा पिष्टैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।।

प्लीहाभिवृद्धिं शमयत्येतदाशु प्रयोजितम् ।
तथा गुल्मोदरश्वासक्रिमिपाण्डुत्वकामला ।।'

---

1 क. एतैघृतं 2 क. शुभं 3 क. पाययेत्रिफलां यो. र., ग. नि., र-र-च; पाययेच्चपलं मात्रां 4 क. 0 मपेक्ष

5 क. 0 दरचैव

(2) चिकित्साकलिकायां—रोहीतकघृतम्

'रोहीतकत्वक्तुलया समेतं द्विसङ्गुणं स्याद् बदराढकन्तु ।
पचेदपां द्रोणचतुष्टयेन द्रोणावशेषेण घृताढकन्तु ।।

स्यातपञ्चकोलात् पलपञ्चकेन रोहीतकत्वक् समभागिकेन ।
सिद्धन्तु रोहीतकसर्पिरेतत् प्लीहोदरघ्नं यकृतामयघ्नम् ।।'

अथ महापैशा[1]चिकं घृतम्

जटिलां पूत[2]नां केशीं चा[3]रटीं मर्कटीं[4] वचा[5]म् ।
त्रायमाणां जयां वीरां चोरकं कटु[6]रोहिणीम् ।। 24 ।।

कायस्थां शूकरीं छत्रां सातिच्छत्रां प[7]लङ्कषाम् ।
महापुरुषदन्तां च वयः[8]स्थां नाकुलीद्वयम्[8] ।। 25 ।।

कट[9]म्भरां वृश्चिकालीं स्थिरां चाहृत्य तैर्घृतम् ।
सिद्धं चा[10]तुर्थिकोन्माद - ग्रहापस्मारनाश[11]नम् ।। 26 ।।

महापैशाचि[12]कं नाम[12] घृतमेतद्यथाऽमृतम् ।
मेधा-बुद्धि-स्मृतिकरं बालानां चाङ्गवर्द्धनम् ।। 27 ।।°

---

1 क. महापैसादिकं
2 क. पूतनं 3 क., बृ. यो. त. च वारटी 4 क. मक्चटीं 5 क. चवां 6 क. कछुरोहिणी
7 क. पलांकषां 8 क वधस्यानां कुलीद्वयं; र. र. 0 लाङ्गलीद्वयम्
9 क. कट्टंभरां 10 क. चतुर्थकोन्माद 11 क. नासनम्
12-12 क. 0 पैशाचकं नामः
° अत्रेत्थं ग. ख. पुस्तकयोः पाठान्तरम्—
'त्रायमाणा जया वीरा नाकुली गन्धनाकुली ।
कायस्था च वयःस्था च चोरकञ्च पल*ङ्कषा ।।
शूकरी जटिला छत्रा सातिच्छत्रा सम[1]र्कटी ।
चा[2]रटी पूतना केशी स्थिरा कटुकरोहिणी ।।
महापुरुषदन्ता च वृश्चि•काली कट[3]म्भरा ।
सिद्धमेभिर्घृतं पेयं चातुर्थकनिवारणम ।।

केशी = गन्धमांसी, अथवा भूतकेशी, अथवा केशा—शङ्खपुषीतिलोके गङ्गाधरः; केशी—शतावरीति इन्दुः

चारटी = ब्राह्मी, अथवा स्थलकमलम्, अथवा नीली

जया = जयन्ती, अथवा भङ्गा, अथवा अग्निमन्थः

वीरा = क्षीरकाकोली, अथवा काकोली, अथवा पृष्टपर्णी, अथवा काकोली (इन्दुः)

चोरकः = ग्रन्थिपर्णभेदः, 'भटेउर' इति नेपालदेशे, चोरपुष्पी (गंगाधरः) चण्डालक-ब्राह्मी-गुडूची वा (इति चक्रः); शटी-चण्डा व (इन्दुः)

कायस्था = क्षीरकाकोली, अथवा काकोली, अथवा एला, अथवा सिन्दुवारः, अथवा गुडूची, अथवा आमलकी, (गङ्गाधरः), हरीतकी—सुरसश्च (इन्दुः)

छत्रा = जीरकः, मिसिवा, कुस्तुम्बकं धान्यकं वा (इन्दुः)

अतिछत्रा = शतपुष्पा, गौतमाख्या शतपुष्पा च (इन्दुः)

पलङ्कषा = गोक्षुरः (गङ्गाधरः), अथवा लाक्षा (इन्दुः), गुग्गुलुर्वा

महापुरुषदन्ती = महामेदा वा शतावरी (इन्दुः), विष्णुक्रान्ता (नीलशङ्खपुष्पी)

वयस्था = गुडूची, अथवा हरीतकी (गं.), अथवा आमलकी (इन्दुः), अथवा ब्राह्मी

महापैशाचिकं नाम सर्पिरेतत्कफा[4]पहः ।
भूतग्रह-मपस्मारमुन्मादञ्च नियच्छति ।।

* ग. पिल्लकं तथा ? 1· ग. नि. सूमर्कटी (अजमोदा ?) 2. ख. वीरटी; ग.नि मोरठा ? 3 ग. नि. कुटन्नटा (केवटी मोथा) • ख. प्रथ्वीकाली ? 4. ख कफाहराम् ?; ग. नि. ज्वरापहम्

नाकुली = रास्नाभेदः (धवल बरुआ) सर्पगन्धा इति लोके—अथवा रास्ना

कटम्भरा = कटभी अथवा ज्योतिष्मती, अथवा गन्धप्रसारिणी

वृश्चिकाली = मेषशृङ्गी अथवा चक्रा—उष्ट्रधूमा च (इन्दुः) वृश्चिकाली लोके बिछुवा बूटी च ।

अत्र कतिपयप्राचीनटीकाकाराणां निर्णयः—

'जटिला शतपुष्पी स्यान् मांसीभेदोऽपि चेष्यते ।
पूतना अभया, केशी मांसी भूकेश एव च ।।

चारटी ब्रह्मिका ज्ञेया, मर्कटी शूकशिम्बिका ।
वीरा तु पृश्निपर्णी स्याच्चण्डा स्यादिह चोरकः ।।

कायस्था सिन्दुवारस्तु सूक्ष्मैला वाऽथ, शूकरी ।
वाराहीकन्दकाभावाच्चर्मकारालुकग्रहः ।।

छत्रा जाजी, त्वतिच्छत्रा शतपुष्पा, परे त्विमे ।
द्रोणपुष्पी द्वयं प्राहुः, पलङ्कषा तु गुग्गुलुः ।।

महापुरुषदन्ता च विष्णुक्रान्ताऽथवा वरी ।
वयःस्था त्वमृता ज्ञेया, नाकुलीद्वयमत्र तु ।।

सर्पगन्धाद्वयं प्राहू रास्नाद्वयमथापि वा ।
कटम्भरा तु कटभी प्रसारण्य-थवाऽमृता ।।

व्यक्तमन्याच्च सकलं महापैशाचिके घृते ।।'

टीका :—छड़काली, छड, हरडै, ब्राह्मी, कौंछ बीज, बच, त्राहिमाण, अर[1]णी, उ[2]सीरगंठील, कटुक, कं[3]कोल ? (काकोली), वाराहीकन्द, ग[4]न्धतृण,

---

इस योग में अनेक द्रव्यों के नाम द्व्यर्थक हैं । इस विषय में कुछेक टीकाकारों का निर्णय ऊपर टिप्पणी में दिया गया है वह मननार्ह है ।

1 ख. पुस्तक में जया का अर्थ टीका में 'इन्द्रायनी' किया गया है, ग. में "अरणी" है

2 ख. व ग. कायस्था = दुपहरिया

3 ख. चोरक = वीलु ?

4 ख. छत्रा = कलौंजी

गंध[1]माली, गुग्गल, विष्णुक्रान्ता, गिलोय, जवासीसंखेनी वहीसुरही (रास्नाद्वय) कटुरोहिणी ? (कटम्भरा), मींढियावली ? (वृश्चि-काली) सालवनी । सारंगधर (शाङ्र्गधर संहिता) मांहि घृतां री विधि कही छैइ, तिणि विधि कीजै ।

इति श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीनृसिंहभारती तत् शिष्य—
परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीआनन्दभारतीविरचितायां
आनन्दमालायां घृताधिकारः समाप्तः ।।

ग. पुस्तके

छागमांसाद्यघृतम्[2]

'छागमांसतुलां गृह्य साधयेन्नत्वणेऽम्भसि ।
पादशेषेण तेनैव सर्पिः प्रस्थं विपाचयेत् ।।
ऋद्धिवृद्धी च मेदे द्वे जीवकर्षभकौ तथा ।
काकोली क्षीरकाकोली—कल्कैः प्रस्थ ? [पृथक्]पलोन्मितैः ।।
सम्यक् सिद्धे चावतार्य्य शीते तस्मिन्प्रदापयेत् ।
शर्करायाः पलान्यष्टौ मधुनः कुडवं क्षिपेत् ।।
पलं पलं पिबेत् प्रातर्यक्ष्माणं हन्ति दुस्तरम् ।
क्षत-क्षयं पञ्चकासं पार्श्वशूलमरोचकम् ।।
बल्यं मांसकरं वृष्यमग्निसन्दीपनं परम् ।'

अन्यं छागालाद्यघृतम्

आजं चर्मविनिर्मुक्तं त्यक्तश्रृङ्गन[3]खादिकम् ।
पञ्चमूलीद्वयं चैव जलद्रोणे विपाचयेत् ।।

---

1 ख. अतिछत्रा = शतपुष्पा
ख. वीरा = पीढौनी; ग. में क्षीरकाकोली
ख. चारटी = ब्राह्मी; किंतु ग. में चारटी = नील
ख. महापुरुषदन्ता = शंखाहुली ? विष्णुक्रान्ता, किंतु ग में 'शतावर'
ख. कटम्भरी = मालकांगणी, ग. में कटमी
2 चक्र. 'छागालाद्यं घृतम्' इति नाम । ख. योगोऽयं नोपलभ्यते ।
3 ख. खुरादिकं

तेन पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
जीवनीयैः सयष्ट्याह्वैः क्षीरं चैव शतावरीम् ।।
छागालाद्यमिदं नाम्ना सर्ववातविकारनुत् ।।
अर्दिते कर्णशूले च बाधिर्ये मूकमिन्मिने ।
जड-गद्गद-पङ्गूनां खञ्जे गृध्रसिकुब्जयोः ।।
अपतानेऽपतन्त्रे च सर्पिरेतत्प्रशस्यते ।।
द्वात्रिंशतपलिकान्यत्र देयानि दशमूलतः ।
घृते तैलेऽच योगे च यद् द्रव्यं पुनरुच्यते ।। ?
सज्ज्ञान व्यवहार्येण भागतो द्विगुणं भवेत् ।। ?

*'चर्मादिहीनं तरुणच्छागमांसं द्वात्रिंशत्पलमानं गृहीत्वा, दशमूलञ्च द्वात्रिंशत्पलमानं जलद्रोणे पक्तव्यमित्याह वृन्दः । चक्रस्त्वाह—त्यक्तशृङ्ग-खुरादिकमिति ग्रहणयोग्यतादर्शनार्थम्, न पुनराकृतिमानग्रहणार्थञ्च, अतः पञ्चाशत्पलानि मांसस्य दशमूलस्य च अत एव वक्षति द्रोण इति । क्षीर-शतावरीरसौ प्रत्येकं स्नेहसमौ ।

'द्रोणे द्रव्यतुलाश्रुत्या स्याच्छागदशमूलयोः ।
पृथक् तुलाऽर्द्धे यष्ट्याह्व-द्वयं देयं द्विधोक्तितः ।।'*

इति छागालाद्ये विशेषः ।

*'यष्ट्याह्वद्वयं देयं द्विधोक्तित' = इति स्थलज-जलज भेदेन यष्टिमधुद्वयं ग्राह्यमित्यर्थः'

वृ. यो. त. त्रिमल्लभट्टस्तु

'शकृद्रसं मांसरसं मूत्रं सौवीरकादिकम् ।
स्नेहतुल्यं दधिक्षीर जलं चैव चतुर्गुणम् ।।'

वृन्दवैद्यके

'द्वात्रिंशच्च पलान्यत्र देयानि दशमूलतः ।
घृते तैले च योगे च यद्द्रव्यं पुनरुच्यते ।।

तज्ज्ञातव्यमिहाऽर्थेन भागतो द्विगुणं भवेत् ।।'

नाराचकं घृतम्

'चित्रकं त्रिफला दन्ती त्रिवृ[1]ता कण्टकारिका ।
स्नुही[2]क्षीरं बिडङ्गानि घृतं दशममुच्यते ।।

एकैकस्य च कर्षेण घृतस्य कुडवं पचेत् ।
चतुर्गुणेन तोयेन स[3]म्यगेतन्मिताग्निना[3] ।।

तस्य काले पिबेन्मात्रां पलार्धसंमितां नरः ।
उष्णोदकानुपानं स्यादल्पत्वादस्य सर्पिषः ।।

विरिक्ते च यवागूः स्यात्सर्पिषा परिवर्जिता ।
रसेन जाङ्गलानां वा भोजयेन्मतिमान् भिषक् ।।

वातगुल्ममुदावर्तं प्लीहार्शो ब्रध्न[4]कुण्डलम् ।
ग्रहणीं दीपयेन्मेहान् कुष्ठदोषांश्च नाशयेत् ।।

नाराचमिति विख्यातं सर्पिर्नाराचसंज्ञितम् ।
(भिषजा)भैषज्यं सम्प्रयोक्तव्यं नाराचमिव शत्रवे ।।'

भावप्रकाशे, चक्रदत्ते, भैषज्यरत्नावल्यां, बृहद्योगतरङ्गिण्यां च पाठान्तरम्—

'स्नुक् क्षीर-दन्तीत्रिफलाविडंग सिंहीत्रिवृच्चित्रककर्षकर्षम् ।
घृतं विपक्वं कुडवप्रमाणं तोयेन तस्याक्षमथार्द्धकर्षम् ।।

पीत्वोष्णमम्भोऽनुपिबेद्विरेके पेयरं रसं वा प्रपिबेद्विधिज्ञः ।
नाराचमेतज्जठरामयानां युक्त्योपयुक्तं प्रवदन्ति सन्तः ।।'

बृहद्योगतरङ्गिण्यामपरो योगः

'त्रिफलां चित्रकं दन्तीं बृहतीं कष्टकारिकाम् ।
स्नुहीसार्कबिडङ्गानि घृतस्य कुडवं पचेत् ।।

---

1 बृ.यो.त. बृहती 2 बृ.यो.त. स्नुतीसार्कं
3-3 ख. साधयेत्तत् सुखाग्निना
4 ग.नि. वर्ध्म

तस्य मृद्वग्निसिद्धस्य कर्षार्धं पाययेन्नरम् ।
शोथगुल्मोदरानाह-प्लीहोदरवृकोदरान् ।।
नाशयत्युल्वणानेतान्सर्पिर्नाराचसंज्ञितम् ।।'

ख. पुस्तके महाबिन्दुघृतम्

'त्रिवृत्पलं स्नुक्पयस[1]: पलञ्च
कम्पिल्लकस्यापि पलं तृतीयम् ।
चतु[2]ष्पलं चामलकीरसस्य[2]
पलार्द्धमन्यल्लवणः प्र[3]कुर्यात् ।।

प्रस्थार्धमे[4]भिर्हविषो विपक्वं
जले महाबिन्दुघृ[5]तं प्रसिद्ध[6]म् ।
निहन्ति गुल्मं[7] जठरा[8]णि चैव
प्लीहा[9]मयानाशु विरे[10]कयोगात् ।।

शतधौतघृतम्

जलेन शतधौतं च गोघृतं चातिशीतलम् ।
दाहं नाशयते[1] क्षिप्रं तथा व्रण[2]रुजापहम् ।।

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य-आनन्दभारती विरचितायां आनन्द-मालायां घृताधिकारः ।।

इति श्रीयोगशास्त्रे योगज्ञाने आनन्दसिधि ? कृतं (कृतं) घृताधिकारः

[इति सप्तमोऽधिकारः]

---

1 पयसा 2-2 ख. चतुपलं आमलकी रसरी 3 च. क. लवणस्य चैव
4 ख. प्रस्थार्धमोभि = हविषे 5 ख. घृत 6 ख. प्रसिद्धम्
7 ख. गुल्मां 8 ख. जठराणाय 9 ख. प्लीहानिमप्याशु
10 ख. विचेच 11 ख. नाशयति 12 ख. प्राण ? रुजामति ?

अथ अष्टमोऽधिकारः

अथ वृद्ध[1]नारायणतैलम्

दशमूल[2]मरिष्टौ द्वौ चतुःपर्णी फलत्रयम् ।
खदिरं बीजसारञ्च गोकर्णी हयमारकः ।। 1 ।।

वाजिगन्धा वरा रास्ना वर्द्धमानचतुर्बला ।
चतुः प्रसारिणी (?) नाम्ना चतुः[3]क्रान्तार्कमार्कवम् ।। 2 ।।

शोभा[4]ञ्जनं वज्रनाम्ना चतुः[5]कन्दसमन्वितम् ।
ना[6]गार्जुन्यथ मत्स्या[7]क्षी दन्ती तौ (द्वौ ?) द्वौ च सारिवा ।। 3 ।।

त्रिवृता वृद्ध[8]दारु च चन्द्रहासा विष[9] (?) विषा (?) द्विधा ।
चतुर्दुम्बर (?) बदरी द्वौ वृष[10]वासी (?) तथैव च ।। 4 ।।

पुनर्नवेन्द्रवा[11]रुण्यौ रौहिषं देवदालिका ।
एतान्सर्वान् समाहृ[12]त्य प्रस्थ[13]मात्रं पृथक् पृथक् ।। 5 ।।

संक्षु[14]ण्य पाचयेत्तोये चा[15]ष्टभागावशेषितम् ।
वस्त्रपूतञ्च तत्क[16]वाथं कारयेत्कु[17]शलो भिषक् ।। 6 ।।

---

1 क. वृघनारायणतेलः 2 क. दशमूल अरिष्टौ ग. दशमूलारिष्टौ
3 ग. चतुर्क्रतार्कमर्कवम् (?)
4 क. सोमाजनं 5 ग. चतुष्कन्दसमानितं 6 क. नागार्ज्जनीति
7 क. मत्साक्षी
8 क. ० दारुश्च, ग. वृद्धयनुश्च (? 9 ग. विषद्विषा 10 क. वृषवासीस्तथैव, ग. वृषावासी तथैव
11 क. ० वारुण्या 12 क. हृत्यं 13 क. प्रस्थं मात्रा
14 क. सक्षुण पचये, ग. संक्षेन. 15 क. दष्टमागावसेषितं
16 क. तत्कार्यं 17. कुसलो

रस[1]तुल्यं क्षिपे[2]त्तैलं तैलतुल्यं शतावरी।
अ[3]जाक्षीरं प्रदातव्यं चतु[4]र्गुणं तथैव च ।। 7 ।।

पाच[5]येत्तु क्रमा[6]ग्नौ तान् वस्त्रपूताञ्च कारयेत्।
शतपुष्पा च दार्वी[7] च त्रि[8]कटु त्रि[9]फला तथा ।। 8 ।।

चव्यचित्र[10]कमूले च पुष्करं[11] पौष्कराह्वयम्।
क[12]ट्फला-गजपिप्पल्यौ शृङ्गी-धान्यक-जीरकम् ।। 9 ।।

हपुषा वा[13]कुचीवीजं त्रायमाणं पुनर्नवा।
गुडूची चक्रमर्दश्च रामसेनो यवानिका ।। 10 ।।

जीवनीय[14]गणद्रव्यमष्टवर्गसमन्वि[15]तम्।
चन्दनागुरुका[16]श्मीर-जातीफलदलानि च ।। 11 ।।

एला लवङ्ग-कङ्कोल-त्वक्पत्रं नखकेशरम्।
मलया[17]गिरिह्रीविरं तगरं कुष्ठ[18]मेव च ।। 12 ।।

एकाङ्गी (?) शाटि-तालीशं कृष्णकोकिलयाऽन्वितम्।
रक्तचन्दन-धत्तूर-पद्मकं देवदारु च ।। 13 ।।

शैलेय[19]कञ्च श्रीवासं सिल्ह[20]कश्चाम्बरस्तथा।
एतानि समभागानि पल[21]द्वादशसङ्ख्यथा ।। 14 ।।

---

1 ग: क्वाथतुल्यं 2 क. क्षिपेतैलं 3 क. मज्जाक्षीर 4 क. चातुर्गुणितस्तथैव ग. तैलस्याच्चतुर्गुणं
5 क. ग. पाचयेत् 6 क. क्रमाग्नीनां 7 क. दार्वीणां 8 क. त्रिकटु;
9 क. त्रिफलाः
10 क. चित्रकमूढानां (?) 11 क. पुष्कर 12 क. कटूफलं गजपिप्पल्या
13 क. वकुची
14 क. 0 गणैः 15 क. समन्नितैः, ग. समानितैः 16 क. काश्मीरः
17 क. मलयागरह्लीवेरं 18 क. कुष्ट एव
19 क. शैलेयं श्रीवासं च (छन्दोभङ्ग) 20 सिल्हकं अम्बरः 21 क. पलं द्वादशसंक्षया

मञ्जिष्ठा च तुलामानं कल्कीकृत्य विनिक्षि[1]पेत् ।
कल्का[2]च्चतुर्गुणं तैलं तैला[3]त्तोयं चतुर्गुणम् ।। 15 ।।

शनैः[4] मृद्वग्निना पक्वं[5] यदा[6]वर्त्तिः प्रजायते ।
किञ्चिन्नीलारु[7]णाभासं तैलं नारा[8]यणं विदुः[8] ।। 16 ।।

पाने[9] बस्तौ तथाऽभ्यङ्गे भोज्ये नस्ये प्रतापयेत् ।
अधो[10]भागे च ये वाताः[11] शिरो[12]मध्यगताश्च ये ।। 17 ।।

मन्यास्तम्भे हनुस्तम्भे दन्तरोगे गलग्रहे ।
यस्य शुष्य[13]ति चैकाङ्गं गतिर्यस्य विहन्यते ।। 18 ।।

क्षीणे[14]न्द्रिया नष्टशुक्रा ज्वरक्षीणा[15]श्च ये नराः ।
वधिरा ल[16]ल्जिह्वाश्च मन्द[17]धीकाः सदालसाः[17] ।। 19 ।।

अल्पप्रजा[18] च या नारी या[19]च गर्भं[19] न विन्दति ।
वा[20]तार्त्तौ वृषणौ ये[21]षामन्त्रवृद्धिश्च दारुणा ।। 20 ।।

तत[22]त्तैलवरं तेषां नाम्ना नारायणं[23] स्मृतम्[23] ।। 21 ।।

टीका :—पाडल, टींटू, सिवणो, शालवनी, पीठवनी, बील, अरणी, दोनू रींगणी (दशमूल की दशवीं औषधि गोक्षुरु है) (दशमूल के पश्चात् व विजयसार के पहले मूल पाठ में दोनों नीम, चतुः पर्णी, फलत्रय,

---

1 क. विलिक्षिपेत् 2 क. करका चतुर्गुणं 3 क. तैलातोयं
4 क. सनैंमृ. 5 क. पक्कं 6 ग. 0 र्घ्रति 7 क. 0 रूणा 8-8 क. नारायणादिह
9 क. वस्थौस्तथा 10 क. अघोभागेन 11 क. वाता 12 क. सिरोमध्यगजदाश्च
13 क. दुष्यति
14 क. क्षीणैन्द्रिया 15 क. क्षीणा च 16 क. लालजिह्वा 17-17 क. मन्दमेदोलसाश्च ये
18 क. प्रजाश्च 19-19 क. यावद्गर्भं 20 क. वातातौ
21 क. येवामंत्रवृधिश्च
22 क. एतैतैलवरं 23-23 क. नारायणस्मृताः

व खदिर भी हैं। (ये टीका में नहीं हैं), वीजैसार, (इसके पश्चात् मूल पाठ में गोकर्णी है) कणयर री जड़, आसगंधि, पाठवल (?) (कंघी ?) गांगवणि, सहदेवी, खरहटी, (मूल पाठ में असगंध व वर्द्धमान चतुर्बला के बीच में 2 द्रव्य वरा व रास्ना और हैं। मूलपाठ में बलाएं वर्धमान कही गई हैं किंतु टीका में वे समभाग ली गई हैं), प्रसारणी (मूल में चतुः प्रसारिणी पाठ है ? टीका में केवल 1 ही प्रसारिणी कही गई है) (इसके आगे मूल पाठ में 'चतुः क्रान्तार्कमार्कवम्' है। इन द्रव्यों का टीका में कोई उल्लेख नहीं है), सोरीजणउ थोहरिदूध, खीरकन्द, केलिकंद, बिदारीकंद, मुसलीकंद, दूधेली, दांतणि, सारिवा, कृष्णसारिवा, निसोति, बधायरौ, बावची (?) (मूल में 'चन्द्रहासा' है) (इसके पश्चात् 'विषद्विधा' पाठ है, टीका मे ये दोनों द्रव्य भी नहीं कहे गये हैं), धोली ऊंबर, काली ऊंबरि (मूल पाठ 'चतुर्दुम्बर' है), वड बोर, लघुबोर, साठी, तुंबरी, रोहीसरूंख, (लघुबोर व साठी के बीच में मूलपाठ में 'वृषावासी' है।), देवदालि, प्रत्येक प्रत्येक टां. 256 कीजै। गाढा कूटि नइ पाणी टां 17664 मांहि घाति आगि उपरि चढाईजै, अवटाईजैं, आठमौं हिसो आय रहै तिवारइ उतारिजै, छाणि लीजै। तेलि टां 2208, सतावरी रो रस टां 2208, छाली रो दूध टां 8832। पछई अनुक्रम अनुक्रम अग्नि दीजै। पछै छांणि तेल करि लीजै। पछइ वीजा ही उसा कहै छइ सो—सोवा, दारुहलद, सूंठि, मिरच, पिप्पलि (मूल पाठ में त्रिकटु के आगे त्रिफला भी है।), चाविक, चित्रक, पीपलामूल, पोहकरमूल, (मूल पाठ में 'पुष्करं पौष्कराह्वयं' है) कायफल, गजपीपलिका, ककडासिंगी, धाणा, जीरौ, हींह, बाबची, त्राहिमाण, साटी, गिलोइ, पंवाड, किरायतौ, अजवाइणि, जीवक, ऋषभक, मेद, (।), महामेद, (दा), काकोली, खीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, डोडी, जेठीमधु, माषपर्णी, मुगदपर्णी[1]

---

1 मूल पाठ में "जीवनीयगणद्रव्यैरष्टवर्गसमन्वितैः" कहा गया है।

सूकडि, अगर, केसरि, जायफल, जावंत्री, इलायची, लवङ्ग, कंकोल, तज, पत्रज, नख, नागकेशरि, मलयागिरि, वालो, नेत्रवालौ, तगर, कूठ, (कूठ के पश्चात् मूल पाठ में एकाङ्गी है) सठी, तालीसपत्र, ('तालीसं' के बाद मूलपाठ में "कृष्णकोकिलयान्वितम्" पाठ है) रतांजणी, पदमाख, देवदुवार, कंटासेलो(?) सेलारस ('शैलेय-कञ्च श्रीवासं' का अर्थ टीका में 'कंटासेलो व सेलारस किया गया है) (इन द्रव्यों के पश्चात् मूल पाठ में 'सिल्हकमम्बरस्तथा' ये दो द्रव्य और हैं) प्रत्येक प्रत्येक टां 192, मंजीठ टां 1600, इतरा उसा वांटि कूटि बराबर सा कीजै, राति पाणी टां 99840 माहि भीजवीजइ । पछइ जु तेल पहिलौ कीयौ छई तिण मांही इयां उसा महा (?) कल्का काढि(?) छाणि घातीजई। भीजवीयां पछइ जि तरउ काल्कनीसरै तिणहूती चउगुणो तेल घातीजई । तिण तेलि हुंति चउगुणौ पाणी भेलीजै। सनइ सनइ (शनैः शनैः) वासदे (अग्नि) वालिजै (जलाकर)। मांहि जिके उषध भेलिया छइ तीयारी वाटि (वर्त्ति) हुवइ अरु नीली राती छाया हुवै । पाणी सूसे (जल सोंखले तब) तेल हुवौ जाणीजै। तिवारइ उतार लीजै । पाठ मांहि विधि कही छैइ तिम लीजइ । गुण ही पाठ माहि छै ।

विष[1]गर्भतैलम्

कनकस्य तु नि[2]र्गुण्डी तुम्बिनी सपुनर्नवा ।
वातऽरिश्चा[3]श्वगन्धा च प्रपु[4]न्नाटं सचित्रकम् ।। 22 ।।

सौभाञ्जनं काकमाची कलिहा[5]री च निम्बक[6]म् ।
महानिम्बेश्वरी चैव दश[7]मूलं शतावरी ।। 23 ।।

---

1 यो. र. महाविषगर्भतैलमिति नाम

2 क. तु निर्गुंडी 3 क. वातारिश्चगंवाश्च ख. सुगंधा 4 क. प्रपुन्नाट

5 यो. र. कलिकारी 6 ग. नुविकम् (?) 7 क. दशमूली

कोरवल्ली सारिवा च श्री[1]पर्णी च विदारि[2]का ।
[3]वज्राकौं मेषशृङ्गी च कारवीरद्वयन्तथा[4] ।। 24 ।।

काकजङ्घा त्वपा[5]मार्गस्तथा स्यात् सम्प्रसारिणी ।
°त्रिफला तत्समासेन (?) [तत्समाशेन] रसतैलसमानि (?) च।।25।।+

कृष्णस्य तिलतैलेन (?) [कृष्णाख्यतिलतैलञ्च] तैलमेरण्डसार्षपम् ।
पचेदेकत्र सर्वस्य (?) [सर्वं हि] तैलं सिद्धं च बुद्धिमान् ।। 26 ।।°

त्रिक[6]टुश्वाश्व (चाश्व[7]?) [त्रिकटुं चाश्व] गन्धां च राला[8] (?)
[रास्नां] कुष्ठं घनं[9] वचाम्[9] ।
देवदारु कलि[10]ङ्गञ्च द्वौ क्षारौ लवणानि च ।। 27 ।।

तुत्थकं कट्फलं पाठां भार्गीं च नवसादरम् ।
°गन्धकं पुष्करमूलं सिलालक (?) (शिला ताल?) सठीन्तथा ।।28।।°

क. काखवल्ली ख. काकवली 1 यो. र. श्रावणी (श्रीपर्णिका = कट्फलं किन्तु श्रावणी = मुण्डी) 2 विदारिका = विदारिगन्धा (शालपर्णी), विदारी = विदारीकन्दः ।

3 क. वज्राक्कं 4 यो. र. वचा

– यो. र. 'काकजंघा··· ···सम्प्रसारिणी' अस्मिन् स्थाने यो. र. "काकजङ्घा त्वपामार्गो बला चातिबला द्वयम् । व्याघ्री महाबला वास सोमवल्ली प्रसारिणी ।" इति पाठः 5 क त्वयामार्गः °–° त्रिफलां तत्समासेन·······तैलसिधं च बुद्धिमान्' अस्मिन्स्थाने यो. र. "पलोन्मितानि चैतानि द्रोणेऽम्भसि विनिक्षपेत् । पचेत् पादावशेषेऽस्मिन् कल्कस्य कुडवं क्षिपेत् ।" इति पाठः ख. करसूस्य ?

°–+ 'त्रिफला तत्समासेन·······समानिच'

[त्रिफलामेषां रमो ग्राह्यस्तद्वत्तैलानि मिश्रयेत् ।]

6 यो. र. त्रिकटुं 7 यो. र. विषतिन्दुञ्च 8 यो. र. रास्ना 9-9 यो.र. विषं घनम् 10 देवदारु वत्सनाभो

°–° 'गन्धकं·······सटी तथा', अस्मिन्स्थाने यो. र. "त्रायन्ती धन्वयासं च जीरकं चेन्द्रवारुणी" । इति पाठः ।

×एतानि कर्षमात्राणि सममात्राणि कारयेत् ।
प्रस्थ[1]तं च [प्रस्थं तत्र] विषं दद्यात् [दत्वा] सूक्ष्मचूर्णीकृतं क्षिपेत् ।। 29 ।।×

विषगर्भमिदं नाम सर्ववा[2]तान् व्यपोहति ।
कु[3]ष्ये(?) भूपृष्ट [कुक्षि-भ्रू-पृष्ट] शंखेषु संधीनां(?) [सन्धिषु] शाथमेव च ।। 30 ।।

+गृध्रसीं च शिरोवातं सर्वाङ्गस्फुटनं ? [स्फोटनं] तथा ।+
दण्डापतान[4]कीष्ठीला [दण्डापतानकाऽष्ठीलाः?] कर्णनादं सशून्यताम् ।। 31 ।।

√कम्पनं चार्द्धवातं च बाधिर्यं पलितं तथा ।
गण्डमालाऽपची ग्रन्थी शिरः कम्पापतन्त्रकम् ।। 32 ।।

अनेन सर्ववातानि [०वाताश्च] सन्निपातास्त्रयोदश ।
वनमभ्यागते सिंहे पलायन्ते यथा मृगाः ।। 33 ।।√

"वनमध्ये यथा सिंहात् पलायन्ते महामृगाः ।
तथाऽश्वगजभग्नानां नराणां च चतुष्पदाम् ।।
नाशयेन्नात्र सन्देहो विषगर्भस्य लेपनात्" इति पाठः ।।

टीका :—धतूराबीज, कडवी तूंगी (इन दोनों के बीच में मूलपाठ में निर्गुण्डी

×—× 'एतानि ......क्षिपेत्', अस्मिन् स्थाने यो. र. "तैल-प्रस्थं समादाय पाचयेन्मृदुवह्निना" इति पाठः 1 ग. प्रस्थार्द्धं
2 यो. र. सर्वान् वातान् । 3 ग. कुक्षि *—* 'कुष्य.......शोथमेव च', अस्मिन्स्थाने यो. र. "वक्षोरुकटिजङ्घानां सन्धानं श्रेष्ठमेव च ।
+—+ अस्मिन्स्थाने यो. र. "गृध्रसीं च महावातान् सर्वाङ्गग्रहणन्तथा" इति पाठः 4 यो. र. दण्डापतानकं चैव
√—√ कम्पनं चार्द्धवातं.......यथा मृगाः" पाठोऽयं यो. र. नोपलभ्यते;

है।), साटी, एरण्ड री जम (जड़), ग्रासगंधि, पंवाड, चित्रक, सोहीजणो, कइवाइ (काकमाची), राठागारी (कलिहारी), नीब, बकाइणि, पाढल, टीटू, सालवनी, पीठ बनी, सिवनी, दोनूं रींगणी, कांटी, ग्ररणी, बील, शतावरी, करेली, सारिवा, कायफल, विदारीकंद, थोहरि दूध, ग्राकरो दूध, मीढासींगी, राता कणयर री जड़, धवला कणयर री जड, चिरमढी (?) (मूल पाठ में काकजंघा है; रक्त गुञ्जा के पर्यायों में काकचिञ्ची, काकणन्ती, काकादानी, काकपीलू व काकवल्लरी ग्रादि हैं—काकजंघा के पर्याय हैं—काक-जंघा, नदीकान्ता, काकतिक्ता, काका ग्रादि।) ग्राझा झाडौ (ग्रांधीझाडो), प्रसारिणी, हरड, वेहडा, ग्रांवला, उसा सगलां ही रो रस टां 30-30 लीजई (इन सभी ग्रौषधियों का स्वरस प्राप्त कर लेना साधारण बात नहीं है)। कालतिलां रो तेल, एरण्ड रो तैल, सरसव रो तेल। एवं तेल उसां रा रस री बराबर घातीजे। पछै रस नै तैल वरावरि करि (?) भेला करि पचाईजे। तैल सिध हुग्रां पछै उसा—सुंठि, मिरचि, पोपरि, ग्रासगंधि, राठ, (मूल पाठ में राला है, योग रत्नाकर के पाठ में 'रास्ना' है), कूठ, मोथ, वच, देवदुवार, इन्द्रजव, जवखार, (मूलपाठ में 'द्वौ क्षारौ' है), सीधो, सउचल, बिड लूंण, समुद्र लूंण, (कच नमक), थूथो, कायफल, पाठ, भाडंगी, नवसादर, गन्धक, पुहकरमूल, मयणसिल, हरताल, कचूर प्रत्येक टां 4 चार, करि वछनाग टां 256, इतरा उसाजु पछै इ छै इसू बांटि कपडिछाणि करि नइ पहिलो तेल उसधां सहित पचाइ सुध कीयौ छै सु छाणि नइ तिण मांहे पछला उसा भेलि रूडै ठांव घाति राखीजै। पछइ वात व्याध मांहि पाठ मांहि कही छइ सु सहि जाइ। सनिपात 13 जाइ। हुलवै हुलवै सरीर चोप-डीजै।

मारिचा[1]दितैलम्

मरिचं हरितालञ्च त्रि[2]वृतं रक्तचन्दनम् ।
मुस्तं मनः शिला मांसी द्वे निशे देवदारु च ।। 34 ।।

विशाला कर[3]वीरञ्च कु[4]ष्ठमर्कपयस्तथा ।
[5]तथैव गोमयरसं कुर्यात्कर्षमितान् पृथ[5]क् ।। 35 ।।

विषं चार्द्धपलं देयं प्रस्थं कटुकतैलकम् ।
गोमूत्रं द्विगुणं दद्याज्जलं च द्वि[6]गुणं भवेत् ।। 36 ।।

मरिचा[7]द्यमिदं तैलं सिद्धं[8] कुष्ठव्रणापहम् ।
जयेच्चि[○]त्राणि सर्वाणि पुण्ड[9]रीकं विचर्चिकाम् ।। 37 ।।

पा[10]मांश्चित्राणि र[10]क्तं च[11] कण्डूं कच्छूं प्रणाशयेत्[11] ।। 38 ।।

टीका :—मरिच, हरिताल, निसोत, रतांजणी, मोथ, मैणसिल, छड, हलद, दारुहलद, देवदुवार, बुई री जड़ (मूल पाठ में 'विशाला' है), कणियर, कूठ, आक रो दूध, गाय रा गोबरि रो रस, प्रत्येक टां 4 वछनाग टां 8, कडवो तेल टां 256, गोमूत्र टां 512, पाणी टा. 1024 । तेल री बिधि प्रसिध छइ । गुण पाठ माहे छै । चोपडन कीजइ ।

---

1 क. मिरचादितैलः; मा. प्र. लघुमरिचादितैलम्

2 क. तृवृत्ता

3 क. कक्षीरं 4 क. कृष्णमर्क 5-5 ग. 'गोमय रसं च तथा योज्यं कुर्यात् कर्षमितं पृथक्' ? 6 क. द्विगुलं, ग. '०दत्वा पयस्त्रिगुणं क्षिपेत् ।।'

7 क. मरिचादिमिदं 8 क सिधं 9 क. पुंडरंक ○ शा. कुष्ठानि

10-10 क. पामादि निरकसं; ग. पामां सिध्मानि राकाशं ?

11-11 क. दद्रुकंडू विनासयेत् ?; ग. दद्रुकच्छविषापहम् ।

'मरिचाद्यं तैलम्

मरिचालशिलाऽब्दार्क-पयोऽश्चारिजटात्रिवृत् ।
शकृद्रसविशालारुङ्-निशायुग्दारुचन्दनैः ॥
कटुतैलात् पचेत् प्रस्थं द्वयाक्षैर्विषपलान्वितैः ।
सगोमूत्रं तदभ्यङ्गात् दद्रु-चित्रविनाशनम् ॥
सर्वेष्वपि च कुष्ठेषु तैलमेतत्प्रशस्यते ॥'

गदनिग्रहे पाठान्तरम्

'मरीचदारुभद्रश्री-द्विहरिद्रात्रिवृद्घनैः ।
पलिकैर्मूत्रपिष्टैस्तु विषस्यार्धपलेन च॥
ब्राह्मीरसार्कजक्षीरगोशकृद्रससंयुतम् ।
प्रस्थं सर्षपतैलस्य सिद्धमाशु व्यपोहति ।
पानाद्यैः शीलितं कुष्ठ-दुष्टनाडीव्रणापचीः ॥'

भावप्रकाशे 'मरिचं त्रिवृता मुस्तं हरितालं मनः शिला ।
देवदारु हरिद्रे द्वे मांसी कुष्ठं सचन्दनम् ॥
विशाला करवीरञ्च क्षीरमर्कसमुद्भवम् ।
गोमयस्य रसं कुर्यात् प्रत्येकं कर्षसम्भितम् ॥
विषस्यार्द्धपलं देयं तैलं प्रस्थमितं कटु ।
पचेच्चतुर्गुणे नीरे गोमूत्रे द्विगुणे तथा ॥
मरिचाद्यमिदं तैलं........ ....'

अथ गुञ्जातै[1]लम्

गुञ्जामूलफलै[2]स्तैलं तोयं द्विगु[3]णितं पचेत् ।
नस्याभ्यङ्गेन शम[4]येत्गण्डमालां सुदारुणाम् ॥ 39 ॥

---

1 क. अथ गुंजाफलमूलै तैलंः
2 क. फलै तैलं 3 क. द्विगुणेतं, ग, तोयद्वयगुणित पजेत् 4 क. समयेद्

टीका :—चिरमढी री जड़ अरु फूल (फल) बराबरि भेला कीजै । ईयां हुंती विमण्ड तेलि, तेल हुंति विमणौ पाणी पचाई तेलि कीजई । गंड-माला जाइ । चोपडण गांठि चोपडीजइ ।।

अथ सिन्दूरादितैलम्

सिन्दू[1]रार्द्ध पलं पिष्ट्वा जीरकस्य पल[2]न्तथा ।
कटुतै[3]लं पचेद् द्वाभ्यां सद्यः पामाहरं परम् ।। 40 ।।

वृद्धवैद्योपदेशेन पाच्यं तैलं पलाष्टकम् ।*

टीका :—सिन्दूर टां 8, जीरो टां 16, कडवो तेलि टां 128 में पचाइ तेलि कीजइ । पांव जाइ ।।

अथ नीलिकाद्यं तैलम्

नीलिका केतकीक[4]न्दं भृङ्गरा[5]जः कुरण्टकः ।
तथाऽर्जुनस्य पुष्पा[6]णि [7]बीजकं कुङ्कुमन्तथा[7] ।। 41 ।।

कृष्णास्ति[8]लाश्च तगरं स[9]मूलं तगरन्तथा[9] ।
अयोरजः प्रियङ्गुश्च दाडिमत्वग्गुडूचिका ।।

त्रिफला प[10]द्मकं कु[10]ष्ठं कल्कैरेभिः पृथक् पृथक् ।
क[11]र्षमानैः पचेत्तैलं त्रिफलाक्वाथसंयुतम् ।। 43 ।।

---

1 क. सिदूरार्धपला ख. फलं 5 क. पल तथा 3 क. कटुतैलपचै
* ग. नि. यो. र. मा. प्र. च 'जीरकस्य पलं पिष्टं सिन्दूरार्धपलन्तथा कटुतैलं पचेदेभिः सद्यः पामाहरं परम् । इति पाठान्तरम् ।
4 क. कन्द 5 क. भृङ्गराजकुरण्टजम् 6 क. पुष्फानि 7-7 ख. बीजकुंकुमकं; शा. बीजकात्कुसुमान्यपि (बीजकः सुमनाऽपि च)
8 क. कृष्णतिलश्चतेवारं 9-9 क. तन मूलं तगरं तथा; ख. पुस्तके पाठोऽयं *—* [कृष्णाऽस्तिलाः सितं वाजं तन्मूलन्तगरन्तथा ।] नोपलभ्यते ।; शा. 'समूलं कमलं तथा' इति पाठः तदेव समीचीनः ।*—*
10-10 शा. पद्मपङ्कश्च; क., ० कल्कोरेभिः 11. क-ख. कर्षमानं = ; शा.०मात्रैः

भृङ्गारा[1]जरसेनैव सिद्धं केश[1]स्थिरीकृतम् ।
अकाल[2]पलितं हन्ति दारुणं चोपजिह्वकम् ।। 44 ।।

'नीलीदलं भृङ्गरजोऽर्जुनत्वक्
पिण्डीतकं कृष्णमयो रजश्च ।
बीजोद्भवं साहचरं च पुष्पं
पथ्याक्षधात्रीसहितं विचूर्ण्य ।।

एकीकृतं सर्वमिदं प्रमाय पङ्केन तुल्यं, नलिनी भवेन ।
संयोज्य पक्षं कलशे निधाय लौहे घटे स[3]द्मनि सापिधाने ।।

अनेन तैलं विपचेद्विमिश्रं रसेन भृङ्ग-त्रिफला भवेन ।
आसन्नपाके च परीक्षणार्थं प[4]त्रं बलाकाभवमाक्षिपेच्च ।।

भवेद्यदा तद् भ्रमराङ्गनीलं तदा विपक्वं विनिधाय पात्रे ।
कृष्णायसे मासमवस्थितं तदभ्यङ्गयोगात् पलितानि हन्यात् ।।'

टीका :—(नलिनी के पत्ते, केतकीकंद, भांगरा के पत्ते, कटसरैय [पिया-बांसा] अर्जुनपुष्प, बिजथसार के फूल, केशर ? या विजय-सार के पुष्पों की केशर, काले तिल,तगर, जड़सहित कमलपुष्प, लोह का बुरादा या भस्म, फूल प्रियङ्गु, अनार का छिलका, गिलोय, हरड, बेहडा, आंवला, पद्मकाष्ट, कुष्ठ, प्रत्येक 1-1 कर्ष लेकर कल्क बनावें । तिल तैल 1 प्रस्थ, त्रिफलाक्वाथ 4 प्रस्थ, भृङ्गराजस्वरस 4 प्रस्थ; इन समस्त द्रव्यों को मिलाकर तैलपाक विधि से तैल सिद्ध करलें । यह तैल बालों के झड़ने को रोकता है व केशों को

1-1 क. ख. भृङ्गराजरसै पश्चात् सिधं केस 2 क. अकालि टि. ग. पुस्तके योगोऽयं नोपलभ्यते ।

3 ग. नि. पद्मनि 4 ग. नि. पक्षं

स्थिर करता है। समय से पहले या अल्पायु में ही बालों के सफेद होने को रोकता है। उपजिह्विका—अर्थात् जिह्वा के नीचे वाली रसौली या शोथ को नष्ट करता है।)

षड्बि[1]न्दुतैलम्

एरण्डमूलं तगरं शताह्वा जीवन्ति रास्ना सहसैन्धवञ्च ।
भृङ्गं वि[2]डंगं मधुयष्टिका च विश्वौषधं कृष्णतिलस्य तैलम् ।। 45 ।।

आ[3]जं पयस्तैलवि[4]मिश्रितञ्च चतुर्गुणे[5] भृङ्गरसे[6] विपक्वम् ।
षड्बिन्दवो[7] नासिकया: प्रयोज्या:[8]
शीघ्रं निह[9]न्यु: शिरसो विका[10]रान् ।। 46 ।।

च्युतांश्च[11]केशांश्चलितांश्च दन्तान्
सु[12]दीर्घमूलांश्च दृढीकरोति ।
सुपर्णदृष्टिप्रतिमञ्च[13] कुर्यात् [दृष्टी: सुपर्णप्रतिमाश्च ?....]
द्वात्रिंशकान्तिप्रतिमां ददाति[13] ।।

टीका :—स्वेत एरण्ड री जड़, तगर, सोवा, डोडी, राठ, सीधव, तज, गोरीसर ? (क. व ख. के पाठ में 'गुडुत्वं' व ख. के पाठ में 'गरुत्वं' है) (मधुयष्टी व सोंठ भी इसके आगे मूल पाठ में है)।

छाली रउ दूध (8 सेर) दूध हुंति भांगरा रो रस चउगुणौ। उषध हुंति आठगुणौ पाणी (?) मांहि उषध पचाइजै। चतुर्थांश पाणी लेइ नइ तेलि भंगुरउ दूध मांहि सहि भेला करि झमाग्नि देइनै तेलि

---

1 क. षट्बिंदु 2 क. ग. गुडुत्वं; ख. गरुत्वं
3 क. आजा 4 क. ० व मिश्रितं 5 क. ० गुणं 6 क. ० रसं 7 क. बिन्दवे
8 क. प्रयोज्या 9 क. निहन्या 10 क. विकारा
11 क. केशां चलितां 12 भै. र. दुर्बद्ध 13-13 चक्र., वृ. यो. त. वृ. वै. यो. रत्नाकरादिषु "चक्षुर्द्विजोबलञ्चाभ्यधिकं ददाति"

सुधि करि लीजै । बिंद 6 नासिका द्वारि दीजै ।°

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य श्रीनृसिंहभारती, तत् शिष्य
परमहंसपरिव्राजकाचार्य-श्रीग्रानन्दभारतीविरचितायां
ग्रानन्दमालायां तैलाधिकारः समाप्तः

ख. पुस्तके ग्रतिरिक्तयोगाः

वृहन् माष[1]तैलम्

माषक्वाथे बलाक्वाथे रास्नाया दशमूलजे ।
यवकोलकुलत्थानां छागमांसरसे पृथक् ।।

प्रस्थे तैलस्य वै प्रस्थं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ।
रास्नाऽऽत्मगुप्तासिन्धूत्थ-शताह्वै रण्डमुस्तकैः ।।

जीवनीयैर्बलाव्योषैः पचेदक्षसमैर्भिषक् ।
हस्तकम्पे शिरः कम्पे बाहुकम्पेऽवबाहुके ।।

बाधिर्ये कर्णशूले च कर्णनादे च दारुणे ।
विश्वाच्यार्मदिते कौब्ज्ये गृध्रस्यामपनातके ।।

वस्त्यभ्यञ्जनपानेषु नावने च प्रयोजयेत् ।
माषतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्द्वजत्रुगदापहम् ।।

टीका :—उड़द कौ क्वाथ टां 256, बलाक्वाथ टां 256, सुरही कौ क्वाथ टां 256, दशमूल कौ क्वाथ टां 256, जव कौ क्वाथ टां 256, बेर कौ क्वाथ टां 256, कुलत्थ को क्वाथ टां 256, छैली के मांस को रस टां 256, तिल को तैल टां 256, गोक्षीर टां 1024, सुरही, कौंछि, सींधौ, सौंफ, एरण्ड, मोथ, जीवनीयगण की ग्रौषधियां, बला,

---

टि. ° पाकार्थ ग्रौषधियों का कल्क ½ सेर, तैल 2 सेर, भृङ्गराजरस 8 सेर, बकरी का दूध 8 सेर लिया जाता है । कुछ वैद्य बकरी का दूध 2 सेर ही लेते है ।

1 भै. र., चक्र. च 'सप्तप्रस्थमहामाषतैलम्' इति नाम; र. र., यो. र. च 'माषतैलम्' इति नाम; यो. त. वृ. वै. 'वृहन्माषतैलम इति नाम टि. योगोऽयं ग. पुस्तके म. प्र च एवमेव ।

त्रिकुटा प्रत्येक टां 2 (1 अक्ष=4 टां न कि 2) (कल्क से तैल सिद्ध करे)

सप्तशतिकं प्रसारणी तैलम्

समूलपत्रामुत्पाट्य शरत्काले प्रसरणीम् ।
शतं ग्राह्यं सहचरात्छतावर्याः शतन्तथा ।।

बलाऽऽत्मगुप्ताश्वगन्धा-केतकीनां शतं शतम् ।
पचेच्चतुर्गुणे तोये द्रवैस्तैलाढकं भिषक् ।।

०(मस्तु मांसरसं चुक्रं पयश्चाढकमाढकम् ।)०
दध्या[1]ढकसमायुक्तं पाचयेन्मृदुनाऽग्निना ।।

द्रव्याणान्तु प्रदातव्या मात्रा चार्द्धपलोन्मिता ।
तगरं मदनं कुष्ठं केशरं मुस्तकं त्व[2]चम् ।।

रास्ना सैन्धवपिप्पल्यौ मांसी मञ्जिष्ठयष्टिका ।
तथा मेदा महामेदा जीवकर्षभकौ तथा ।।

शतपुष्पा व्याघ्रनखं शुण्ठी देवाह्वमेव च ।
काकोली क्षीरकाकोली वचा भल्लातकन्तथा ।।

पेषयित्वा समानेतान् साध[3]नीया प्रसारणी ।
नातिपक्वं न हीनञ्च सिद्धं पूतं निधापयेत् ।।

यत्र यत्र प्रदातव्या तन्मे निगदतः शृणु ।
कुब्जानामथ पङ्गूनां वामनानां तथैव च ।।

यस्य शुष्यति चैकाङ्गं ये च भग्नास्थिसन्धयः ।
वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् ।।

---

० 'मस्तु मांस·······आढकम्' पाठोऽयं ख. ग. पुस्तकयोः नोपलभ्यते ।

1 ग. दध्योदकं; ख. वध्योदक

2 ख. तु च

3 ग. मधुनीया, ख. ताधनीया

स्त्री-मद्य-क्षीणशुक्राणां वाजीकरणमुत्तमम् ।
वस्तौ पाने तथाऽभ्यङ्गे न[1]स्ये चैव प्रदापयेत् ।।

प्रयुक्तं शमयत्याशु वातजान् विविधान्गदान् ।।

टीका :—वचारकातीक स्यो पातजर परसारणी लीजै । पियाबांसो, टां 100, शतावरी को रस टां 100, सामसट (खिरेटी) टां 100, असगंध टां 100, कौंछबीज टां 100, केतकी टां 100 (सब का पंचाङ्ग 100-100 पल हैं टां. नहीं) पानी टं. 2800 (?) (2800 पल) । तिल का तैल सेर 10 टां 24 (1 आढक) दही को पाणी सेर 10 टां 24 (1 आढक), तगर, किस्तूरी, कूठ, नागकेसरि, मोथ, तज, सुरही, सीधो, पीपर, छड़, मंजीठ, मुलेठी, मेदा, महामेदा, जीवक, रिषभक, सौंफ, नख, सुंठि, देवदार, काकोली, क्षीरकाकोली, वचा, भिलावा, प्रत्येक टं 5 (2-2 तोला) । (इसे न खरपाक और न मृदुपाक किन्तु मध्यपाक कर उतारें)

महाला[2]क्षादितैलम्

लाक्षा हरि[3]द्रा मञ्जिष्ठा कान्ति[4]का मधुकं बला ।
लाम[5]ज्जकं चन्दनञ्च गैरिकं नीलमुत्पलम् ।।

एषां भागान् समान् कृत्वा पचेत्तोये चतुर्गुणे ।
चतुर्भागावशेषन्तु भा[6]गं (गर्भं ?) चेमं समावपेत् ।।

हरेणुकं वेतसञ्च हयगन्धा तथैव च ।
पद्मकं चोरकं कुष्ठं देवदारु नखत्वचम् ।।

---

1 ख. ग. भोज्ये
2 ग. नि. 'बृहल्लाक्षादि तैलम्' इति नाम; ग. पुस्तके "लाक्षादि तैलम्" इति नाम
3 ग. नि. निशाच 4 ग. नि. फलिनी; ग. केनिला (फलिनी = प्रियङ्गुः, कान्ता = प्रियङ्गु) 5 ग. नि. ध्यामकं (ध्यामकं—कतृणं, लामज्जक = वीरणमूलवत)
6 ग. भागपञ्च

शतपुष्पा पुण्डरीकं मांसी मधुकमेव च ।
[1]एषाम[एभिर]क्षसमैः कल्कै °पाचयेच्चावशेषितम् ।।°

म[2]स्तुशुक्तारमालानामाढकाढकमावपेत् ।
क्षीराढकसमायुक्तं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।।

लाक्षारसं तैल समं पूर्वं कृत्वा च बुद्धिमान् ।
तदभ्यङ्गे प्रशंसन्ति [प्रशस्तं स्यात्] तैलं दाहनिवारणम् ।।

वातपित्तोद्भवं क्षिप्रं ज्वरमेतन्नियच्छति ।
सप्रलापं सतृष्णञ्च तालुशोषमथ भ्रमम् ।।

ग्रहोपसृष्टं वालञ्च रक्तसन्दूषिताश्चये । (सन्दूषणन्तथा ।)
एतत् तैलं प्रशमयेल्लाक्षादिकमिति स्मृतम् ।।

अर्कतैलम्

अर्कपत्ररसे पक्वं हरिद्राकल्कसंयुतम् ।
साधयेच्छार्षपं तैलं पामां हन्ति विचर्चिकाम् ।।°

टीका :—आक के पत्तों के स्वरस को तैल सरसों से चौगुना लेवें व हल्दी का कल्क तैल से चतुर्थांश लेकर तैल पाक विधि से तैल सिद्ध कर लें। यह तैल पामा, (कच्छू) व विचर्चिका को दूर करता है ।

---

1 ख. ग. एभिः　*—* 'पाचये····शोषितम् अस्मिन् स्थाने ग. नि "कषायेणाथ पेषितैः" ।

2 ग. नि. दधि

°—° 'लाक्षारसं····बुद्धिमान्', पाठोऽयं ग. नि. नोपलभ्यते ।

° पाठान्तरम् यो. र. 'अर्कपत्ररसे पक्वं रजनीकल्कसंयुतम् ।
कटुतैलं हरेत्तूर्णं पामा-कच्छ्र-विचर्चिकाः ।।'

शा. '० नाशयेत्सार्षपं तैलं.

चक्र. 'अर्कपत्ररसे पक्वं कटुतैलं निशायुतम् ।
मनः शिलायुतं वाऽपि पामाकण्ड्वादिनाशनम् ।।'

(फिरङ्गवाय तैल)

झकलासै तैल मधि पक्व कीजै, फटकड़ी, तूथो, अग्नि उपरि फूला, चूना, खैर, हल्दी पिसी, कौला, पीसि चूर्ण कीजै। मैण पघलाइ मेल्हिजै। छाणि ककलास की औषध सब तेल मधि मेल्हिजे। तैल लकड़ी सौं रुडी लपेटीजै। फिरंग बाव की सर्व चांदी कै लगाजे नीका होइ।

अष्ट कट्वरतैलम्

पलाभ्यां पिप्पलीमूलनागरा[1]दष्टकट्वर[1]: ।
तैलप्रस्थः समो दध्नो गृध्रस्यूरुग्रहापहः ।।

अष्टकट्वरतैलेऽस्मिंस्तैलं सार्षपमिष्यते ।।
त[2]त्स्नेह-दाध्यकोद्भूतं (सस्नेहदोधकोद्भूतं) तक्रं कट्वर उच्यते ।

टीका :—(पींपरा और सौंठ ये दोनों आठ आठ तोले, मलाईयुक्त दही से बनाई हुई खट्टी छाछ 64 तोले, दही 64 तोला, सरसों का तेल 64 तोला। इन सभी से तैल सिद्ध कर लें। गृध्रसी व ऊरुस्तम्भ को यह तैल दूर करता है।)

छुछुन्दरीतैलम्

छुच्छुन्दर्या विपक्वन्तु क्षणात्तैलवरं ध्रुवम् ।
अभ्यङ्गान्नाशयेन् नृणां गण्डमालां सुदारुणाम् ।।

---

1 ग. नागरं अष्टकं पलं

2 ग. न स्नेह, मा. प्र. 'सस्नेहदधि सम्भूमं

टिः 'अष्टकट्वरतैले पिप्पलीमूलादिसमुदायात् पलाभ्यामित्याह'—चक्र.।
"पिप्पलीमूलनागरयोः प्रत्येकं पलमित्युक्तम्, निश्चलस्तु प्रत्येकं पलद्वयम् अथवा कल्कस्यात्यन्तमल्पीयस्त्वं स्यादित्याह अष्टकट्वरमिति"—वृन्दः ।
'अष्टगुणकट्वरं सस्नेहदधितक्रमिति'—तत्वचं.।

भल्लातकाद्यं तैलम्

भल्लातकार्कमरिचैर्लवणोत्तमेन
सिद्धं बिडङ्गरजनीद्वयचित्रकैश्च ।
°(स्यान्[1]मार्कवस्य च रसेन निहन्ति तैलं–
नाडीं कफानिलकृतामपचीं व्रणाश्च ।।)°

(भिलावा, आक की जड़, काली मिरच, सीधा नमक, बायबिडंग, हल्दी, दारुहल्दी व चीते की जड, इन्हें भाङ्गरे के रस के साथ तैल में डालकर पाक करें व तैल सिद्ध कर लें। पाकार्थ औषधियों का कल्क 1 सेर, भांगरे का रुस 16 सेर, व तैल 4 सेर लें। इस तैल के प्रयोग से कफ एवं वातज नाडीव्रण, आपची और अन्य व्रण ठीक होते हैं।)

वर्षाभू-तैलम्[2]

शुष्कं मूलञ्च वर्षाभू रास्ना-दारु-महौषधम् ।
पचेद् द्वौ कौच तैलानि ज्वरशोथं विनाशयेत् ।।

(सूखी जड़ पुनर्नवा की, राठ, दारुहल्दी व सोंठ, इनमें से किन्हीं 2 से तैलों को सिद्ध करलें। ये ज्वर-शोथ-नाशक हैं।)

°–° 'स्यान्····व्रणाश्च', अस्मिन्स्थाने क. पुस्तके "कुष्ठेषु दुष्टव्रणकच्छुविर्चचिदद्रु पामाभगन्दर–गदं हृपचीं व्रणञ्च।"

1 वृ. वै. 'स्यामार्कजेन च····'

2 योगोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते

अथ नवमोऽधिकारः

स्त्रीचिकित्सा

(वातासृग्दरहरयोगः)

मधुसौवर्चलाजाजी-मधुकं नीलमु[1]त्पलम् ।
[2]पिबेत् क्षीर[०]युतं नारी वातासृग्दरपीडिता ।। 1 ।।

टीका :—काला नमक, श्वेत जीरा, मुलेठी व नीलोफर का चूर्ण, मधु व क्षीर मिलाकर लेने से वातासृग्दर रोग में लाभ होता है। वृद्धवैद्योपदेशानुसार सौवर्चल व जीरा 4-4 रत्ती, मुलेठी और नीलोफर 2-2 रत्ती, मधु 6 माशा व 'क्षीर' के स्थान पर 'दही' 5 तोला लेना चाहिये ।

अथ वन्ध्याचिकित्सा

अथ[3] मुक्ताफलम[4]र्द्धमविद्ध[4]मृतुकालेऽर्द्धसुजातिफलेन ।
विद्रुमखण्डयुतं सपयस्कं पुत्रकरं युवती[5] त्रिदिनेषु ।। 2 ।।

इति स्त्री[6]चिकित्सा

टीका :—विना बिंधा मोती आधा, जायफल आधा और थोडा सा मूंगे का टुकड़ा, इनका चूर्ण ऋतुकाल में गोदुग्ध के साथ तीन दिन तक पीने से स्त्री पुत्रवती हो जाती है ।

स्त्रीचिकित्सा समाप्ता

---

1 क. नीलमूसलं 2 क. ख. पिवे (3) ख ० वातासृग्दरपीडिता।। 1 ।। इति तिलक्वाथः (?) ।

० चक्र., ग.नि , भै.र., भा.प्र., र.र., वै. जी च 'क्षीर' स्थाने "दधि" पठितः ।

3 क. पुनः अथ 4-4 ख. ० मर्द्धविद्धं, क. ० मविद्धं 5 क. त्रिदिनस्थं, ख. प्रदिनस्थं चंदनं ।

6 ख. इति स्त्रीचिकित्साधिकार ।

अथ शिशुचि[1]कित्सा

शृ[2]ङ्गी प्रतिविषा रास्ना[2]श्चूर्णिता मधुना लिहेत् ।
शिशोः कासज्वर[3]च्छर्दि शान्त्यै वा[4] केवलां विषा[4]म् ।। 3 ।।

टीका :—काकडासिंगी, अतीस और रास्ना का चूर्ण मधु के अनुपान से लेने से शिशु के कास, ज्वर व छर्दि रोग नष्ट हो जाते हैं । अथवा केवल अतीस के चूर्ण के सेवन से भी बालकों के उक्तरोग नष्ट हो जाते हैं ।

---

1 क. चिकशाः, ख. पाठोयं न दृश्यते । अस्मिन्स्थाने—

'अ°पस्मारादिभूतेभ्यो बलिं सर्वत्र कल्पयेत् ।
पक्वापक्वं च शुच्यन्नं मत्स्यं मांसं सुरान्तथा ।।

पुष्पं धूपाक्षतान् गन्धं सदीपं दक्षिणादिकम् ।
चतुष्पथे क्षिपेद्रात्रौ शुद्धे नूतनखर्परे ।।' इति पाठः

° टि. बालानां स्कन्दापस्मारादयो नवग्रहाः ग्राह्याः न त्वपस्माररोगः ।

2-2 ख. श्री प्रतिविषकृष्णा 3-3 क. कासज्वरहरं शैत्यं चा ख. शैत्यं वा के च
4 क. विषम

पाठान्तरम् 1) चक्र, भै.र., वृ. वै. च

'°शृङ्गीं समुस्तातिविषां° विचूर्ण्य
लेहं विदध्यान् मधुना शिशूनाम् ।
कास-ज्वरच्छर्दिभिरर्दितानां
समाक्षिकां चाऽतिविषां तथैक*म् ।।'

(2) °—° वृ.यो.त. 'शृङ्ग्यब्दकृष्णाऽतिविषं.'

(3) यो.त. शृङ्गीं सकृष्णाब्दविषां.

(4) * र. र. घनैकाम् (?)

(5) वृ.वै. "घन-कृष्णा-ऽरुणाशृङ्गी-चूर्णं क्षौद्रेणसंयुतम् ।
................"

अस्मात्परं ख. 'बद[1]री-सर्वरसयोश्चूर्णं मोचरसस्य[1] च ।
छागक्षीरेण संयुक्तं वातातीसारशान्तये ।।

सकर्पूरलता[2]द्राक्षा-लाजैला पक्वदाडिमम् ।
सखर्जूरं लवङ्गञ्च सयष्टि चन्दनद्वयम्[3] ।।

सकुहं बालके दद्यादुष्णकाले तृ[4]षायुते ।
बारंबारम्प्र[5]पूर्येत पिपासाशान्तिहेतवे ।।

माजूफलञ्च खदिरं चूर्णं बालस्य रोगनुत् ।।

इति श्रीयोगशास्त्रे योगज्ञाने आनन्दसिद्धकृतः बालचिकित्साधिकारः' ।

इत्यधिकः पाठः

(इति नवमोऽधिकारः)

1-1 ख. "वदिरिसर्परसं योश्चूणी मोचरसंमि"

2 ख. गटा(?) 3 ख. द्वयः

4 ख. पु तृ युते 5 ख. मभूर्येत

अथ दशमोऽधिकारः

अथ-वमन-विरेचन-न[1]स्य-निरूह-अनुवासन-रक्तस्राव, बस्तिकर्मप्रतीकारो लिख्यते

वमनं रेचनं नस्यं निरूहश्चानुवासनम् ।
रक्तस्रावं बस्तिकर्म धातुमारणकन्तथा ।। 4 ।।

टीका :—ग्रन्थकर्ता का संकेत है कि अब वे (1) वमन, (2) रेचन, (3) नस्य, (4) निरूहबस्ति, (5) अनुवासनबस्ति, (6) रक्तस्राव, (7) अन्यबस्तिकर्म तथा (8) धा°तुमारण सम्बन्धी वर्णन करेंगे ।

(अवामनीयाः)

तिमिरी ज[2]ठरी गुल्मी त्रिदोषी व[3]स्तिपीडितः (?) ।
गुर्विणी सुकुमारश्च न[4]वाम्याः पाण्डुरोगिणः ।। 5 ।।

टीका :—तिमिरी, जठरी, गुल्मी, त्रिदोषी, बस्ती से पीड़ित गर्भिणी, सुकुमार व पाण्डुरोगी वमन कराने योग्य नहीं हैं ।

वमनार्हाः

बल[5]वन्तं कफव्या[6]प्तं हृल[7]लासादिनिपीडितम्[8] ।
तथा वमनसात्म्य[9]ञ्चधीरचित्तञ्च वामयेत् ।। 6 ।।

टीका :—बलवान व कफावृत्त व्याधियों से ग्रसित व हृल्लासादि रोगों से पीडित मनुष्य जिसे वमन कराना अनुकूल पड़ता हो, तथा जो धैर्यवान् हो, उसे वमन कराना चाहिये ।

---

1 क. नास 2 क. जठरा 3 क. ख. वर्त्ति 4 क. नश्चम्यां
° धातुमारणविषयक वर्णन क. प्रति में नहीं है ।
5 क. बलं 6 ख. व्ययप्तं 7 ख. हृलासादि 8 ख. ॰ तां 9 ख. सात्मं

पक्षे पक्षे तु वमनं मासे मासे विरेचनम् ।
°षण्मासे च शिरामोक्ष एवं व्या[1]धिक्षयो भवेत्° ।। 7 ।।

टीका :—हरेक पक्ष के पश्चात् वमन, हर महीने विरेचन, हर छः महीनों से शिरामोक्ष कराने से व्याधि (*कुष्ठ) नष्ट होती है ।

°पूर्वाह्णे वमनं देयं मध्याह्णे तु विरेचनम् ।°
अपराह्णे (सुपा[2]च्यान्नं) तस्मै दद्याद्विचक्षणः ।। 8 ।।

टीका :—पूर्वाह्ण में वमन, मध्याह्ण में विरेचन व अपराह्ण में सुपाच्य अन्न देना चाहिये ।

शरत्काले वसन्ते च प्रावृ[3]ट्काले च देहिनाम् ।
वमनं रेचनं चैव कारयेत्कुशलो[4] भिषक् ।। 9 ।।

टीका :—कुशल वैद्य को चाहिये कि वह साधारणतया शरत् वसन्त व प्रावृट् (वर्षा) काल में वमन व विरेचन करावे ।

(वमन-विरेकार्हाः)

कुष्ठार्शक्रमिवी[5]सर्प-वाता[6]सृक्पाण्डुरोगिणः ।
[7]वाम्याश्चापि विरेकार्हाः, °गुर्विणी क्षयदुर्बलाः°[7] ।। 10 ।।

(न वाम्या न विरेकार्हाः················(?))

टीकाः—कुष्ठ, अर्श, क्रमि, विसर्प व वातरक्त के रोगी वमन व विरेचन के

---

1 यो.र., वृ. यो. त., भै.र., चक्र. च 'कुष्ठ' °—° पाठोऽयं ख पुस्तके नोपलभ्यते ।
* (भै.र. कुष्ठाधिकार में भी यह श्लोक है)
2 क. ख. किंचिदावृत्तिः ? °—° पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।
3 ख. प्रकटीले 4 ख. कुशभिषक
5 क. वासर्प 6 ख. वातामृत्पीडरोगिणा । 7-7 ख. विरेच्युस्तु विरेच्यास्युर्भेदक्षयदुर्बला । क. वमनं च विरेचास्यु°····
°—° अयमंशोऽसमीचीनः प्रतिभाति, गुर्विण्यादीनां वमन-विरेचनानर्हत्वात् ।

योग्य हैं (श्लो. 5 में पाण्डु रोगी को 'अवाम्य' कहा जा चुका है अतः पाण्डुरोगी, गर्भिणी व क्षय से दुर्बल हुए मनुष्य वमन व विरेचन योग्य नहीं हैं)।

(विरेचन-भेदाः)

भेदनञ्चानुलोमञ्च रेचनं स्रं[1]सनन्तथा।
शोध[2]नं, पञ्चभेदाः स्युर्भेदनस्येति तद्यथा ॥ 11 ॥°

टीका :–भेदन के पांच भेदों के नाम (1) भेदन, (2) अनुलोमन, (3) रेचन, (4) स्रंसन व (5) शोधन हैं—यथा

तिक्ता पथ्या निशोत्री स्यात्कृतमालेश्वरीफलम्।
पञ्चविधं क्रमेणैतद्विशेषेण यथा शृणु ॥ 12 ॥°

टीका :—भेदनादि के लिये क्रमशः ये द्रव्य हैं—भेदनार्थ कटुकी, अनुलोमनार्थ हरड, रेचनार्थ निशोथ, स्रंसनार्थ अमलतास और शोधनार्थ देवदाली फल।

°त्रिवृता नागरं पथ्यानन्दा[ऽनन्ता?] हिमविरेचनम्।

टीका :—निशोथ, सोंठ, हरड़ व जवासा ये ठंडे विरेचन द्रव्य हैं।

(शिशिरे वसन्ते च विरेचनम्)

पिप्पलीं नागरं सिन्धुं श्या[2]मा त्रिवृतया सह।
लिहेत् क्षौद्रेण शिशिरे वसन्ते च विशेषतः ॥ 13 ॥

टीका :—पिप्पली, सोंठ, सैंधव व कालीनिशोथ के चूर्ण को मधु के साथ वसन्त व शिशिरऋतु में विरेचनार्थ देना चाहिये।

---

1 क. स्रंसनं 2 क. शोषद्वः ° श्लोकोऽयं ख पुस्तके नोपलभ्यते।
* अत्रोक्तौषधयः केवलमुदाहरणत्वेनैव कथिताः ज्ञेयाः। आर्षग्रन्थोपनिबद्धाः अन्यौषधयोऽपि ग्राह्याः स्युः।
2 क. श्यामाया वृता सह

(ग्रीष्मे)

त्रिवृता शर्करा तुल्या ग्रीष्मकाले विरेचनम्○ ।। 14 ।।

टीका :—निशोथ चूर्ण में समभाग शर्करा मिलाकर ग्रीष्म ऋतु में विरेचन करना चाहिये ।

(वर्षाकाले)

○त्रिवृता कौटजं बीजं पिप्पली विश्वभेषजम् ।
समृद्वीकारसक्षौद्रं वर्षाकाले विरेचनम् ।। 15 ।।

टीका :—वर्षा में निशोथ, इन्द्रजौ, पीपर व सोंठ के चूर्ण को द्राक्षारस व मधु के साथ विरेचनार्थ देना चाहिये ।

(शरदि)

त्रिवृद्दुरालभामुस्ताशर्करोदीच्य[1]चन्दनम् ।
द्राक्षाम्बुना सयष्टीकं शीतलञ्च घनात्यये ।। 16 ।।○

टीका :—शरद ऋतु में निशोथ, धमासा, नागरमोथा, शर्करा, नेत्रवाला, सफेद चन्दन व मुलेठी के चूर्ण को द्राक्षारस के साथ मिला कर विरेचनार्थ देना चाहिये ।○

(हरीतक्यादि-विरेचनम्)

○पद-मद-कर्ण-कु-भृष्टं
हरीतकी-भ्रमुक-विश्व-लवणानाम् ।

○–○ 'त्रिवृता····विरेचनम् । पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

1 क. दार्व्यचन्दनैः
○–○ पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।
* हेमन्ते :—त्रिवृतां चित्रकं पाठामजाजीं सरलां वचाम् ।
हेमक्षीरीं च हेमन्ते चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत् ।।
शा. वि.फ.प्र., उ.ख. 4/23-24

○–○ क. 'पदमदकरणकरांवुमहरीतकी-क्रमुकविश्वलवणानां ।
उष्णोदकेन पीतं नरपतियोग्यं विरेचनं श्रेष्ठः ।।'

ख. पाठोऽयं नोपलभ्यते
पाठान्तरम् यो.र.—

उष्णोदकेन पीतं नरपतियोग्यं
विरेचनं श्रेष्ठम् ।। 17 ।।°

टीका :—हरडै री छालि सेकी टां 4, चवलीसुपारी सेकी टां 3, सुंठी सेकी टां 3 (?) (2), सिंधव सेकियो टां 1; उषध वांटि कपडछाणि करि उष्ण पाणी सूं सगला उसा दीजई । नरपति योग विरेच होवै ।

इति हरीतक्यादिविरेचनम् ।

अथ नाराचकं विरेचनम्

°कर्णमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृता च पलोन्मिता ।
सिता पलञ्चविज्ञेया चूर्णमेकत्र कारयेत् ।। 18 ।।

कर्षोन्मितं लिहेदे[1]तत् क्षौद्रेणाध्माननाशनम् ।
गा[2]ढविट्कोदरश्लेष्म-पित्तशूलानि नाशयेत् ।। 19 ।।°

टीका :—पीपली टां 4, निशोथ टां 16, निवात टां 16, उषध वांटि कपड-छांण करि सहित (मधु) मांहि उषध टां 4 मेलि अवलेही कीजै । विरेच हुवै ।

पञ्चसमं चूर्णम्

°शुण्ठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलन्तथा ।
समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।। 20 ।।

'पादमदकर्णहस्तैः पथ्या त्रिवृतं च नागरं लवणम् ।
निष्क्वथितपीतसारं नरपतियोग्यं विरेचनं भवति ।।'

1 क. लिहेदंत 2 क. गाढवकोदरकफं °–° ख. पाठोऽयं नोपलभ्यते पाठान्तरम् वृ.वै., वृ.यो.त., चक्र., र.र., यो.त., ग.नि. भै.र., भा.प्र. च—
'खण्डसमं त्रिवृतासमुपकुल्या-कर्षसम्मितां श्लक्ष्णम् ।
प्राग्भोजनस्य समधु विडालपदकं लिहेत्प्राज्ञः ।।
एतद्गाढपुरीषे पित्ते कफे च विनियोज्यम् ।
स्वादुर्नृपयोग्योऽयं चूर्णं नाराचको नाम्ना ।।'

°ज्ञेयं पञ्चसमंचूर्णमेतच्छूलहरं परम् ।
आध्मानजठ राशोघ्नमामवातहरं स्मृतम् ।। 21 ।।°

टीका :—सुंठि, हरडै, पिपलि, निसोति, सौंचल सम मात्र करि वांटि छाणि टां 4 लीजै उष्णजल सूं विरेच लागै ।

अथ अभयादिमोदकः

°अभया पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
त्वक्पत्रपिप्पलीमुस्ता-विडंगामलकानि च ।। 22 ।।

एतानि समभागानि दन्ती च त्रिगुणा भवेत् ।
त्रिवृद[1]ष्टगुणा ज्ञेया षड्गुणा चात्र शर्करा ।। 23 ।।°

[2]मधुना मोदकान्कृत्वा चाक्षमात्रप्रमाणतः[2] ।
एकैकं भक्षयेत्प्रातः शीतं चानु पिवेज्जलम् ।। 24 ।।

ता[3]वद्विरिच्यते जन्तुर्यावदुष्णं न सेवते ।
पानाहारविहारेषु भ[4]वेन्निर्यन्त्रणः[4] सदा ।। 25 ।।°

°—° पाठोऽयं ख पुस्तके नोपलभ्मते । ग. नि. पाठान्तरम्—
'पथ्यानागरजीरकाख्यरुचकैः श्यामान्वितैः पञ्चभिः
श्चूर्णं पञ्चसमं समस्तगदहृत् कायाग्निसन्दीपनम् ।
प्राणोत्साहविवर्द्धनं रुचिकरं गुल्मघ्न-प्लीहापहं
प्रत्याध्मान-गरादिरोगशमनं सामानिले पूजितम् ।।'

1 क. तृवृताष्टद्विगुणो °—° पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

2-2 ख. रेकंकृत्वा चाक्षिमात्रप्रमाणत

3 ख. तउ. 4-4 ख. मवेत्रयत्ततः

° अस्मात्परं—"विषमज्वरमन्दाग्नि-पाण्डुकासभगन्दरान् ।
दुर्नामकुष्ठगुल्मार्शोगलगण्डभ्रमोदरान् ।।
विदाहप्लीहमेहांश्च यक्ष्माणं नयनामयान् ।
वातरोगस्तथाऽऽध्यानं मूत्रकृच्छ्राणि चाश्मरीन् ।। (निरन्तर)

टीका :—हरडै, पिपलामूल, मरिच, सुंठि, पत्रज, तज, पीपलि, मोथ, विडंग, ग्रांवला, उषध (1-1 टां) एकठा कीजै। दांतणि टां 3, निशोति टां 8, निवात टां 6, सर्व उषध वांटि छाणि सहित सूं गुटिका बांधीजै। बहेडा प्रमाण गौली / प्रभाति ठंडा पाणी सूं लीजै। उन्हा पाणी पीजई तिवारइ विरेच हुवइ। क्रिया (परहेज) कांई न राखीजइ ॥

(स्नुही-दन्तीघृतम्)

घृततुल्यं स्नुहीक्षीरं दन्तीनीरं तु तत्समम्।
सम्य[1]गाभ्यां घृतं पक्वमामं स[2]म्पातयत्ययम् ॥ 26 ॥

टङ्कमात्रं पिबेज्जन्तुः स्तम्भः स्या[3]च्छीतवस्तुभिः ॥

टीका :—थूहर का दूध व घृत समभाग व दोनों के बराबर दन्तीनीर मिला कर घी पकावे। इसके प्रयोग से ग्रांव गिरजाती है। इसकी मात्रा टंकमात्र है व शीतल वस्तुग्रों के लेने से इस योग से होते हुए विरेचन रुक जाते हैं।

(एरण्डतैलविरेचनम्)

एरण्डतैलं सक्षीरं रेचनं शुद्धदेहिनाम्।
तद्वदेवाथवा[4] वै स्याच्छुण्ठीचूर्णयुतम्पयः ॥ 27 ॥

टीका :—एरण्ड तैल को (उचित मात्रा में) दूध के साथ लेने से रेचन होता है। ग्रथवा उस दूध में सूंठ मिला लेनी चाहिये (?)।

पृष्ठपार्श्वोरुजघन-जानूदररुजं जयेत्।
सततं शीलनादेव पलितानि विनाशयेत् ॥
ग्रभयामोदका एते रसायनमनुत्तमम् ॥"
बृ.यो.त. इत्यधिकः पाठः।

1 क. समग्राभ्यां   2 क. संपातयत्यया, ख. संपातयत्यथः

3 ख. छानवस्तुभिः

4 क. ०वैस्या छुटीचूर्णयुता पयः

(स्नुहीक्षीरपक्वपिप्पलीयोगः)

[1]स्नुहीक्षीरयुता वह्नौ पिप्प[1]लीः परिपाचयेत् ।
एक-द्वि-[2]त्र्यादियोगेन सम्यगा[2]मः प[3]तत्यधः ।। 28 ।।

टीका :—अग्नि पर, थूहर के दूध में डालकर पीपरें पचा लेवें । एक, दो या तीन पीपर, वयोबलानुसार, देने से आँव अच्छी तरह नीचे गिर जाती है ।

(जयपालादिविरेचनम्)

जयपा[4]लश्चतुर्भागस्त्रिभागा कटुकी तथा ।
द्विभागं गैरिकञ्चैव कौमारीरसमर्दितम् ।। 29 ।।

°शाणार्द्धं भिषजा देयं जानता मरिचान्वितम् ।
यावद्भिर्मरिचैः सार्धं तावद्वारं विरेचनम् ।। 30 ।।°

टीका :—जयपाल 4 भाग, कटुकी 3 भाग, तथा स्वर्णगैरिक 2 भाग को घृतकुमारी के रस से मर्दन करें करें व आधा शाण मात्रा मरिच के साथ देवें । इस योग के साथ जितनी मरिचें दी जावेंगी उतने ही रेचन हो जावेंगे ।

(अन्यरेचनम्)

जय[5]पालसमं चक्रु[6](?) (चुक्रं?) तुर्यांशं मरिचान्वितम् ।
ज्ञात्वा बलाबलं देवं भेदनं सर्वरोगजित् ।। 31 ।।

टीका :— जयपाल व चक्रु (?) (चुक्र=चूका) समभाग लें व तुर्यांश मरिच

1-1 ख. सुनही क्षीराग्नियोगेन, क. ० क्षीरेणाग्नि ० 2 क. ०त्र्यादितंद्योगैः, ख. आदितर्योगै 2 क. गामा, ख. गामं 3 क. पततपद, ख. पतित्यध

4 क. ख. जैपालका० °–° 'शाणर्ध... विरेचनं', अस्मिन्स्थाने ख. पुस्तके "सारपार्धं तवद्वारं विरेच्यते" इत्येव पाठः ।

5 क. अजयपाल 6 ख. चूक्रं

मिलाकर, बलाबल की कल्पना करके मात्रा निर्धारित करलें। यह योग सर्वरोगजित् है व भेदन करता है।

इच्छाभेदी रसः

नेपालकं पारदटङ्कणाक्षं क्षारो हरिद्रा[1] मरिचानि पथ्या।
एरण्डबीजानि सगन्ध[2]कञ्च इच्छाप्रभे[3]दी रसचक्रव[4]र्ती ।। 32 ।।

टीका :—शुद्ध जयपाल, शुद्धपारद, सुहागा, बेहड़ा, यवक्षार, हल्दी, कालीमरिच, हरड, एरण्डबीज व गन्धक, सभी सम भाग लेवें व सूक्ष्मचूर्ण करलें। रसों का चक्रवर्ती यह इच्छाभेदी नामक रस है। इसके सेवन से मलसञ्चयजन्य रोग नष्ट होते हैं।

(इच्छाभेदी रसः द्वितीयः)

श[5]म्भोर्बीजं सट[6]ङ्कं सब[7]लिमरिचं शृङ्गवेरञ्च तुल्यम्
क्षिप्त्वा नैकुम्भबीजं शि[8]खिसमतुलितं मर्दयेदेकयाम[9]म्।
इच्छाभेदी[10] रसोऽयं प्रवलमलहरो रेचनो रोगहर्ता
गुञ्जामात्रं प्रदद्याच्छिशिरजलयुतो [11]नोष्णकांक्षी कदाचित्[11] ।। 33 ।।

टीका :—शुद्धपारद, शुद्धटंकण, शुद्धगन्धक, मरिच व सोंठ, इन सबको समभाग लेकर शुद्धजयपाल तीन भाग मिलावें। फिर एक प्रहर खरल करें। यह इच्छाभेदी रस गुञ्जा (1 रत्ती) मात्र शीतलजल से देने से प्रवल मल को दूर करता है। गरम उपचार कदापि न दें।

---

1 र.यो.सा. 'हरिद्रा' स्थाने "यवानी" इति पठितः किन्तु रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे 'हरिद्रा' इत्येव पाठो दृश्यते।　　2 क. ख. सगंधकानि　　3 क. प्रभेदो, ख. इच्छापरिभेदो　　4 क. वर्त्ति

5 क. शंभावीजं,　ख. शंभोवीजी　　6 र. यो. सा. 'सटङ्क' स्थाने "च सिन्धु" इति पाठः　　7 क. तत्सिवसमरिच　　8 क. शषि　　9 क. यामिं ख. ०युक्तं

10 क. ख. ० भेदो　　11-11 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते।

नाराचरसः

[1]भृष्टटङ्कणतुल्यन्तु मरिचं सूतकन्तथा[1] ।
गन्धकं पिप्पली शुण्ठी द्वौ द्वौ भागौ प्रकल्पयेत् ।। 34 ।।

स[2]र्वतुल्यं क्षिपेच्छन्तीबीजं[3] निस्तुषितं भिषक् ।
गु[4]ञ्जैकं रेचनं दद्यान्नाराचोऽयं महारसः ।। 35 ।।

°आध्याम-मलविष्टम्भमुदावर्तञ्च नाशयेत् ।। 36 ।।°

टीका :—भुनासुहागा, मरिच व शुद्धपारद ये सभी एक एक भाग, शुद्धगन्धक, पीपल और सोंठ ये सभी दो दो भाग, इन सबके बराबर शुद्ध दन्ती-बीज मिलावे । पारदगंधक की नीलवर्ण कज्जली करके उसमें अन्य सभी द्रव्य मिलावे व खरल करे । इसकी एक रत्ती की मात्रा गरम पानी के साथ देने से यह नाराचमहारस आध्मान व मलका और विष्टम्भ व उदावर्त रोग का नाश करता है ।

अन्यरेचनम्

पारदं टङ्कणं शुण्ठी पिप्पली चेति कार्षि[5]कम् ।
हेमाह्वा पलमात्रं स्याद् दन्तीबीजन्तु तत्समम् ।। 37 ।।

विचूर्ण्यैकत्र सर्वाणि गोदुग्धेनैव साधयेत् ।
त्रिगुञ्जै रेचनं दद्याद् विष्टम्भाध्मानशूलहृत् ।। 38 ।।

टीका :—शुद्धपारद, टङ्कण, सूंठ, पीपर—ये सभी एक एक तोला, सत्या-नाशी एक पल, व दन्तीबीज एक पल । इन्हें गोदुग्ध में साधे ।

1-1 क. सूंठं टंकणकं तुलं सूतकं; ख. मरिचं तुल्य सूतकं इत्येव ।
2 क. ख. सर्वैस्तुल्यं 3 क. क्षिपंछंती 4 र-यो-सा-द्विगुञ्जं, क. गुजैफंरेच-न्दन दद्या °–° 'आध्मान····नाशवेत' अस्मिन्स्थाने र.यो.सा. 'गुलम्प्लीहोदरं हन्ति पिवेत्तं कोष्णवारिणा' इति पाठः । 5 क. कार्षिकोः

इसकी 3 रत्ती की मात्रा देने से रेचन होकर विष्टम्भ, आध्मान व शूल नष्ट होते हैं।

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्री नृसिंहभारती तत् शिष्य-परमहंस परिव्राजकाचार्य-श्रीआनन्दभारती विरचितायां आनन्दमालायां विरेचनाधिकारः समाप्तः।

(इति दशमोऽधिकारः)

अथ एकादशोऽधिकारः

अञ्जनाधिकारः

(तिमिरे त्रिफलायोगाः)

जाता[1] रोगा विनश्यन्ति न[2] भवन्ति[2] कदाचन ।
त्रिफलायाः कषायेण प्रातर्नयनधावनात् ।। 1 ।।

टीका :—प्रतिदिन प्रातःकाल त्रिफला के कषाय से नेत्रों को धोने से, उत्पन्न हुए नेत्ररोग नष्ट हो जाते हैं व फिर नेत्ररोग कभी पैदा नहीं होते ।

अयसि[3] क्वथिता त्रिफला सघृ[4]तं ससिता निशापीता ।
अन्धम[5]नन्धं कुरुते पापिन[6]मिव निर्मलगङ्गा ।। 2 ।।

टीका :—लोहे के पात्र में क्वथित त्रिफला को (उचित मात्रा में) घृत व शर्करा के साथ रात में पीने से अन्धा भी दृष्टि को प्राप्त कर लेता है । जैसे कि निर्मलगङ्गा में स्नान से पापी पापमुक्त हो जाता है ।

अभयैका यो[7]जनीया द्वावेवा[8]त्र विभीतकौ[8] ।
धात्रीफलानि चत्वारि त्रि[9]फलेयं सशर्करा[9] ।। 3 ।।

लिहेद्वा सघृतं क्षौद्रं दशामृ[10]तहरीतकी ।। 4 ।।

टीका :—हरड 1, बेहडा 2 व आंवला 4, इस अनुपात से बना त्रिफलाचूर्ण व चूर्ण के बराबर शर्करा मिलाकर नेत्र रोगी को घृत व मधु (विषम मात्रा में) के साथ सेवन करना चाहिये । अथवा इसी पुस्तक के

---

1 क. याता 2-2 क. विनश्यन्ति
3 ख. अयस्थ 4 क. ख. सधृता 5 क. अंधमनंतं 6 पापिनम्पव
7 क. स्योज्योंन्पीया, ख. स्योजोजीया 8-8 क. द्वावेवासुतुनिभीतकाः, ख. वाचे-वास्कुविभीतक 9-9 क. त्रिफलां समशर्करां, ख. त्रिफलासमशर्करा
10 क. दशामृता; टि. इतः पूर्वं 'दशामृतहरीतकी योगोऽवलेहाधिकारे प्रोक्त एव ।

अवलेहप्रकरण में प्रोक्त 'दशामृतहरीतकी' को घृत व मधु के साथ लेना चाहिये ।

(नेत्रस्रावचिकित्सा)

पथ्याऽक्षधात्रीफलमध्यबीजै—
स्त्रि-व्यदेकभागैर्विदधीतवर्त्तिम् ।
तया[1]ऽञ्जयेदस्रुमतिप्रवृद्ध—
म[2]क्षणोर्हरेत्कष्टमपि प्रपाक[3]म् ।। 5 ।।

टीका :—हरड़ के बीजों की मींगी 3 भाग, बेहडे के बीजों की मींगी 2 भाग, आंवले के बीजों की मींगी 1 भाग इन्हें जल से पीसकर बत्ती बना लेवें । इसे घिसकर आंखों में आंजने से बढे हुए नेत्राश्रु (नेत्रस्राव) तथा बढा हुआ नेत्रकष्ट नष्ट होता है ।

(अथ रोपणी रसक्रिया)

बब्बूलदलनिःक्वाथो लेहीभूतस्तदञ्जनात् ।
नेत्रस्रावं हरत्याशु मधुयुक्तो न संशयः ।। 6 ।।

टीका :—बब्बूल की पत्तियों का क्वाथ बनाकर उस जल को जलाकर अवलेह जैसा बना लेवे । इसको मधु के साथ मिलाकर अञ्जन करने से नेत्रस्राव निःसन्देह नष्ट होता है ।

(गृध्रदृष्ट्यञ्जनम्)

द्वात्रिंशदभयामज्जास्तिस्रः पिप्पलिका[4]स्तथा ।
चत्वारि मरिचान्येतदञ्जनं गृ[5]ध्रदृष्टिकृत् ।। 7 ।।

टीका :—बत्तीस हरड के बीजों की मींगी, पीपरें 3, और 4 कालीमिरच मिलाकर योग्य मात्रा में अञ्जन करने से दृष्टि गृध्रसरीखी हो जाती है ।

---

1 क. तस्यांजनादग्र०, ख. ०जनांदश्र. 2 ख. क्षणं 3 मै. र. प्रवृद्धम्
4 क- पिप्पलिजातयः ख. पिपलीयातपः 5. मृदृदिष्टिकृत

चन्द्रोदयवर्त्तिः

*[1]हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च ।
विभीतकस्य मज्जा च शङ्ख[2]नाभिर्मनः शिला[1] ।। 8 ।।*

[3]एतानि समभागानि छागीक्षीरेण पेषयेत् ।
°छायाशुष्कां कृतां वर्तिं नेत्रयोगेषु योजयेत् ।। 9 ।।°

अर्बुदं पटलं काचं तिमिरं रक्तराजिकाम् ।
अधिमांसं मलञ्चैव यश्च रात्रौ न पश्यति[3] ।।

इति चन्द्रोदयवर्त्तिः

टीका :—हरड़, बच, कूठ, पीपर, मिरच, बहेड़े की गुठलियों की मींगी, शंखनाभि, और मैणसिल, सब को समभाग लेकर बकरी के दूध में खरल करके बत्ती बना लें व छायाशुष्क करलें। इस वर्त्ति को नेत्र-रोगों में प्रयुक्त करना चाहिये। इसके प्रयोग से अर्बुद, पटल, काच, तिमिर, रक्तराजिका, अधिमांस, मल व रतौंध रोग नष्ट होते हैं।°

---

*1-1 एष श्लोक'श्चन्द्रोदयावर्त्ति' नाम्नि योगे भा प्र., चक्र., भै.र. च वर्तते ।

2 क. शरिताभि॰

3-3 इदं श्लोकद्वयं "चन्द्रप्रभावर्ति" योगे चक्र., भै.र., च दृश्यते । तत्र चन्द्रोदयवर्त्ति-योगे 'अजाक्षीर' स्थाने 'गोदुग्धं, इति पाठः

°–° पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

° इस योग का पहला श्लोक ज्यों का त्यों 'चन्द्रोदयवर्ति' नामक योग में भा.प्र., भै.र. व चक्र आदि ग्रन्थों में मिलता है व आगे के दोनों श्लोक उनमें "चंद्र-प्रभा" वर्त्ति" योग मैं हैं। अर्थात्, सभी औषधियां, सिवाय बकरी के दूध के, 'चंद्रोदयवर्त्ति' के ही घटक हैं किंतु वकरी का दूध व फलश्रुति 'चंद्रोदय वर्त्ति' के न होकर "चन्द्रप्रभावर्त्ति" के हैं।

अथ कुसुमिकावर्त्तिः°

अशीतिस्ति[1]लपुष्पाणि षष्टिः पिप्पलितण्डुलाः ।
जातिपु[2]ष्पाणि पञ्चाशन् मरिचानि तु षोडशः ।। 11 ।।

एषा कुसुमिकावर्ति[3]र्गतं चक्षुर्निव[4]र्त्तयेत् ।।

टीका :—तिलां रा फूल थान (नग) 80, पिप्पलीथान 60, जाय रा फूल 50, मिरच 16 । नेत्ररोग जाइ । (यह कुसुमिका नामक वर्त्ति गत-चक्षु को पुनः चक्षुदान करती है ।)

अथ सुखावतीवर्त्तिः

कलक[5]स्य फलं शङ्खं सैन्धवं त्र्यूषणं सिता ।
फेनो रसाञ्जनं क्षौद्रं विडङ्गानि मनःशिला ।। 12 ।।

°सर्वमेतत्समं कृत्वा छाग[6]क्षीरेण पेषयेत् ।°
तिमिरं पटलं काच[7]मर्मं शुक्रं व्यपोहति ।। 13 ।।

कण्डुक्लेदार्बुदान्हन्ति मलञ्चाशु सुखावती ।। 14 ।।

टीका :—निर्मली के बीज, शङ्खनाभिभस्म, त्र्यूषण, सीधानमक, त्र्यूषण वा मिश्री, समुद्रफेन, रसोत, शहद, बिडंग व मैणसिल, प्रत्येक समभाग बकरी के दूध में पीस कर बत्ती बना लेंवे । यह वर्त्ति तिमिर, पटल, काच, अर्म, शुक्र, कण्डु, क्लेद, अर्बुद और मैल आदि नेत्र रोगों का शीघ्र नाश करती है ।

° चक्र., भै.र. च कुमारिकावर्तीति नाम

1 क. सुतुल, ख. असीततलपुषानि षष्टिर्मागधिका कणा

2 क. जातामुकुलानि, ख. 'जातीमूकलानि पंच समरिचानि तु षोडस'

3 क. गात   4 ख. चक्षुनिवर्तते

5 ख. केतकसि फलं

6 यो. र. नारीक्षीरेण   7 क. कालं नर्म

°—° 'सर्वमेतत्.......पेषयेत्', अस्मिन्स्थाने चक्र., भै.र. च "कुक्कुटाण्डकपालानि वर्त्तिरेषा व्यपोहति ।" इति पाठः ।

अथ गैरिकादिवर्त्तिः

प[1]त्र-गैरिककर्पूरयष्टिनीलोत्पलाञ्जनम् ।
नागकेशरसंयुक्तमशेषतिमिरा[2]न्तकृत् ।। 15 ।।

टीका :—तेजपात, गैरिक, कर्पूर, मुलहटी, नीलकमल, अञ्जन, नागकेशर, इन्हें समभाग लेकर खरल कर आंखों में आंजने से समस्त तिमिर-रोग नष्ट होते हैं ।

°अथ प्रचेत[3]ना गोली उन्मादापस्मारे

त्र्यूषणं हिङ्गु[4] लवणं[4] वचा कटुकरोहिणी ।
शिरीषनक्तमाला[5]नां बीजं श्वेताश्च सर्षपाः ।। 16 ।।

गोमूत्रपिष्टैरेतैस्तु वर्त्तिर्नेत्राञ्जने हिता ।
चातुर्थिकमपस्मारमुन्मादञ्च नियच्छति ।। 17 ।।°

टीका :—सोंठ, मरिच, पीपर, हींग, सीधा°नमक, वच, कुटकी, शिरीष के बीज, करञ्ज के बीज व सफेद सरसों—इन्हें समभाग गोमूत्र से पीस कर वर्त्ति बनावें । इसके अञ्जन से चातुर्थिक ज्वर, अपस्मार और उन्माद रौग नष्ट होते हैं ।

'हरिद्रा[6]प्रभावती वर्त्तिः

हरिद्रा निम्बपत्राणि पिप्पल्यो मरिचानि च ।
भद्रमुस्तकलिङ्गानि नागरं सैन्धवं वचा ।।

---

1 क. पंचं, ख. पंच 2 क. तिमिरां कृतं
°—° 'अथ प्रचेतना ...... नियच्छति', पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।
3 यो. र. 'त्र्यूषणादिवर्त्तिः' इति नाम ।
4-4 क. हिङ्गुलं वर्णं 5 क. माजानां
° अस्मात् परं ख. पुस्तके
6 भा. प्र., यो. र. ग. नि. नागार्जुनी गुटिका नाम्ना, भा. प्र., यो. र. च चंद्रप्रभा-वर्त्तीति नाम्ना, तथा चक्र. हरिद्राऽऽद्यावर्त्तिः नाम्ना पाठान्तराणिः—

पाठा च चित्रकं कुष्ठमजामूत्रेण पेषयेत् ।
वटिकां चणकाकारां छायाशुष्कान्तु कारयेत् ।।

वारिणा तिमिरं हन्ति पटलं मधुसर्पिषा ।
पिच्चिटं तिलतैलेन काञ्जिकेन तु कामलाम् ।।

रात्र्यान्ध्यं भृङ्गराजेन स्त्रीक्षीरेण तु पुष्पकम् ।
°दद्यादजीर्णके चैकं । विषच्यां (विसूच्यां) द्वे ? (द्वौ) प्रदापयेत् ।।

तिस्रो मूषकदष्टे तु सर्पदष्टे तु सप्त वै ।
अष्टौ व्यन्तर दष्टे तु विषादेषु (?) चतुर्दश ।।

प्रभावती वटी ह्येषा महादेवेन निर्मिता ।।°

इति हरिद्राप्रभावतीवर्तिः'

'हरिद्रा निम्बपत्राणि पिप्पल्यो मरिचानि च ।
भद्रमुस्तं बिडङ्गानि [1]सप्तमं विश्वभेषजम् ।।
[2]गोमूत्रेण गुडी कार्या छागमूत्रेण चाञ्जनम् ।[2]
[3] [4]ज्वरांश्च निखिलान् हन्ति भूतावेशं तथैव च ।।[4]
वारिणा तिमिरं हन्ति [5]मधुना पटलन्तथा[5] ।
[6]नक्तान्ध्यं भृङ्गराजेन[6] नारीक्षीरेण पुष्पकम् ।।
[7]शिशिरेण परिस्रावम[8]र्बुदं पिच्चिटन्तथा ।। (चक्र.)[7]

१ भै. र. सपमं　३ भै. र. मद्रुषं　२-२ अस्मिन्स्थाने भा. प्र., यो. र. च 'अजामूत्रेण सम्पिष्य च्छायायां शोषयेद्वटीम् ।' एतानि समभागानि वृ.वै. "सर्वाणि समभागानि गवां मूत्रेण पेषयेत्"; ग. नि. छागमूत्रेण पेषयेत् ।'
४-४ ग. नि. 'कोलास्थिका गुटी छायाशुष्का नागार्जुनीति सा ।।'
४-४ पाठोऽयं भा. प्र., यो. र. च नोपलभ्यते ।
५-५ भ. प्र., यो. र. च 'गोमूत्रेण तु पिष्टकम्' इति पाठः ।
६-६ भा. प्र., यो. र. च 'मधुना पटलं हन्ति' इति पाठः ।
७-७ पाठोऽयं भा. प्र., यो. र. च नोपलभ्यते । अस्मिन् स्थाने "एषा चन्द्रप्रभा वर्त्तिः स्वयं रुद्रेण निर्मिता ।" इति पाटः । ग. नि.

अञ्जनार्थे अयोग्याः

श्रान्ते प्ररुदिते भीते पीतमद्ये नवज्वरे ।
[1]अजीर्णे वेगघाते च नाञ्जनं समुपाचरेत् ।। 18 ।।

टीका :—थके हुए, प्ररुदित, भयान्वित, मद्यपीत, नवज्वर के रोगी, अजीर्ण के रोगी व मलमूत्रादि वेगावरोधित रोगियों के लिये अञ्जन का प्रयोग निषिद्ध है ।

अञ्जनप्रयोगसमयः

हेमन्ते शिशिरे चैव मध्याह्नेऽञ्जनमिष्यते ।
पूर्वाह्णे चापराह्णे च ग्रीष्मे शरदि चेष्यते ।। 19 ।।

[2]वर्षासु नाभ्रे नात्युष्णे वसन्ते च सदैव हि ।।

टीका :—हेमन्त व शिशिर में मध्याह्न, ग्रीष्म व शरद में पूर्वाह्न या अपराह्न में, वर्षा में जब बादल साफ हो व अत्युष्णता न हो तब, तथा वसंत में हर समय अंजन का प्रयोग किया जा सकता है।

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य श्रीनृसिंहभारती-तत् शिष्य परमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीआनन्दभारतीविरचितायां आनन्दमालायां
अञ्जनाधिकारः समाप्तः ।।
इति एकादशोऽधिकारः

'गवां मूत्रेण पिटिकां काञ्जिकेन च कामलाम् ।
उशीररससंयुक्ता विषं वृश्चिक-सम्भवन् ।।'

३-३ 'ज्वरांश्च निखिलान्·······पिच्चिटन्तथा,' पाठोऽयं वृ.वै. नोपलभ्यते; अस्मिन्स्थाने तत्र—

"कोलास्थिमात्रगुटिकां छायाशुष्कां प्रकल्पयेत् ।
वारिणा तिमिरं हन्ति मधुना पटलं तथा ।।
सिद्धाम्भसा च कण्डूञ्च स्त्रीस्तन्येन तु वेदनाम् ।।

०–० असम्बद्धोऽयं पाठः

1 क. उष्णे

2 क. वषाश्वनस्तेनत्युष्णे (?) ख. वर्षाश्चतश्रेनत्युंस्ने (?)

अथ द्वादशोऽधिकारः

नस्याधिकारः

भेदाः

प्रतिमर्शोऽवपीडश्च नस्यं प्रधमनं तथा ।
शिरोविरेचनं पञ्च नस्यभेदाः प्रकीर्तिताः ।। 1 ।।

टीका :—नस्यकर्म पांच प्रकार का है—(1) प्रतिमर्श, (2) अवपीड, (3) नस्य, (4) प्रधमन और (5) शिरोविरेचन ।

नासिकया जलपानम्

विगतघननिशीथे प्रातरुत्थाय नित्यं
पिबति °पलचतुष्कं वारि नासापुटाभ्याम्° ।
स भवति चिर[1]जीवी चक्षुषा तार्क्ष्यतुल्यो
बलिपलितविहीनः स[2]र्वरोगैर्विमुक्तः ।। 2 ।।

टीका :—जो मनुष्य रात्रि के समाप्त होने पर प्रातःकाल उठकर नासिका-छिद्रों से चार पल जल पीता है वह चिरंजीवी हो जाता है । उसकी दृष्टि गरुड़ के समान दूरदर्शी हो जाती है व बलि व पलित (मुख में झुर्रियां पड़ना व असमय में बालों का पकना) से रहित हो सभी प्रकार के रोगों से मुक्त हो जाता है ।

नस्यसेवनगुणाः

प्रसन्नदृष्टिर्दृ[3]ढदन्तकेशः
शशाङ्कवक्त्रः पलितैर्विहीनः ।
पि[4]कालिकण्ठः कमलास्यगन्धो
नस्योपसेवी भवतीह मर्त्यः ।। 3 ।।

°–° ग. नि. खलु नरो यो घ्राणरन्ध्रेण वारि

1 ग. नि. मतिपूर्णः 2 क. सर्वशीर्षरोगैर्विमुक्त ख. शीर्षरोगै विमुक्त

3 क. दृढदन्तशः, ख. दृढिदंतवोस 4 क. पिकामिषक्तं

टीका :—नस्यसेवनकर्ता मनुष्य की दृष्टि प्रसन्न, व दांत और केश दृढ हो जाते हैं। वह चन्द्रवदन हो जाता है व बलिपलित से मुक्त हो जाता है। उसका कण्ठ कोयल के समान मधुर व मुख की गन्ध कमल जैसी हो जाती है।

लवङ्गादिनस्यम्

एकं लवङ्गकुसुमं यवद्वयं तु निस्तुषम्।
सिद्धा[1]र्थकत्रिभागस्तु चत्वारो धान्यकस्य च ॥ 4 ॥

हिङ्गुस्याद्य[2]वमात्रञ्च पिप्पली-मरिचद्वयम्।
सैन्धवेन समं योज्यं नस्यकर्मणि योजयेत् ॥ 5 ॥

शिर[3]आर्तौ वर्णशूले बाधिर्ये चापतन्त्रके।
मन्यास्तम्भे हनुस्तम्भे तथा चैवार्द्धभेदके ॥ 6 ॥

स्रावे च तिमिरे काचे नक्तान्धे पटला[4]र्बुदे।
लवङ्गाद्यमिदं नस्यमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥ 7 ॥

टीका :—लवङ्ग टां 1, छोलियो जव टां 2, सरसव टां 3, धाणा टां 4, हींग[5] टां 2(?) (यव मात्र), पीपली टां 2, मरिच टां 2, सींधव टां 2, उसा सर्व वांटि छाणि नास दीजै। गुण—पाठ मांहेला रोग सर्व जाई।

---

1 क. सिद्धार्थकफलत्रीणि

2 क. साद्यमात्रं

3 क. शिरार्तौ 4 क. पटलांबुधैः।

5 हींग की मात्रा यवमात्र ही शास्त्रसम्मत है—तद्यथा—'हिङ्गुस्याद्यवमात्रन्तु....' शा., मा. प्र. तथा अत्रैव श्लोक 16

मधूकसारादिनस्यम्

मधू[1]कसारस्य मज्जा(?)सनस्य(?) (मधूकसारश्चिरजश्च मज्जा(?))
भस्मानि(?)कठो[2]पि(?)टङ्कणस्य(सनश्च भस्मीकृतटङ्कणञ्च(?))
[3]कटुत्रयं भागसमान्यमूनि[3]
भा[4]गश्चतुर्थांशमितो विषः[5] स्यात् ।। 8 ।।

विधाय चूर्णं तुलसीरसेन
स[6]म्पुट्य च द्वादशवारमेतत् ।
कफापहं पीनसमू[7]र्ध्वरोग—
विनाशनं नस्य[8]मृषिप्रादिष्टम् ।। 9 ।।

[9]सन्निपातहरणं वमनेन
सर्वभिषक्कथितो हि मधू[9] ? ।। 10 ।।

टीका :—किसी भी पाण्डुलिपि में इस योग की टीका नहीं मिलती । हमें उपलब्ध अन्य ग्रन्थों में भी यह योग नहीं मिला ।

इस योग की फलश्रुति में इसे कफ, पीनस व ऊर्ध्वजत्रुरोगनाशक बताया है । आगे कहा गया है कि इससे वमन होकर सन्निपात भी नष्ट हो जाता है । शाङ्र्गधर ऐसे रोगों में 'विरेचन नस्य' को हितकर बताते हैं, तद्यथा—

'ऊर्ध्वजत्रुगते रोगे कफजे स्वरसंक्षये ।
अरोचके प्रतिश्याये शिरः शूले च पीनसे ।।
शोफापस्मारकुष्ठेषु नस्यं वैरेचनं हितम् ।।'

यद्यपि पाठ भ्रष्टता के कारण निश्चितरूपेण इस योग के द्रव्यों के नाम

1 ख. मघुक 2 ख. कचोरपि 3-3 क. कटुश्यं भोग समान्यमूल
4 ख. भागाश्चतुर्धा शमितं 5 क. विषं
6 क. सङ्कुट्य 7 ख. मर्घरोग 8 ख. ० मृषिः प्रादष्टि
9-9 ख. पाठोऽयं नोपलभ्यते । क. ० सर्वसुभिषमयुक्तेन मधु ।
टि. योगोऽयं अन्यग्रन्थेषु नोपदृश्यते ।

बताना तो कठिन है किंतु मधूकसार (महुए की सुरा या रस), मज्जा, सन, टङ्कण, त्रिकटु विष ? (वचा?) व, तुलसीरस ये द्रव्य स्पष्टतः दिखते हैं।

अष्टाङ्ग हृदय में विरेचननस्य के द्रव्यों में स्नेह, आसव, लवण की गणना की गई है, तद्यथा—

'यथास्वं योगिकैः स्नेहैर्यथास्वं च प्रसाधितैः।
कल्कक्वाथादिभिश्चाद्यं मधुपट्वासवैरपि ॥'

शाङ्र्गधर का इसमें तीक्ष्णतैल, व तीक्ष्ण औषधियों से साधित स्नेह प्रयुक्त करने का आदेश है, तद्यथा—

'अथ वैरेचनं नस्यं ग्राह्यं तैलैः सुतीक्ष्णकैः।
तीक्ष्णभेषजसिद्धैर्वा स्नेहैः क्वाथैः रसैस्तथा ॥'

भावप्रकाश में भी मधूकसार को वैरेचन नस्यौषधि कहा गया है, तद्यथा---

'मधूकसारकृष्णाभ्यां वचा-मरिच-सैन्धवैः।'
''नस्यमणुतैलम्'' के द्रव्यों में तुलसी भी एक द्रव्य है।

शाङ्र्गधरोक्त 'मधूकसारादिनस्य' बेहोशीनाशक योग है जो इस पुस्तक वाले योग से नितान्त भिन्न है।

पिप्पली मरिचं लोध्रं शि[1]लाचेति चतुष्टयम्।
अर्द्धशीर्षव्यथां हन्ति वरिपिष्टन्तु नस्यतः ॥ 11 ॥

टीका :—जो मनुष्य पीपर, मरिच, लोध्र व मैणसिल इन चार द्रव्यों का समान भाग चूर्ण पानी से पीस कर नस्य लेता है उसकी आधाशीशी पीड़ा दूर हो जाती है।

---

1 क. शिलाजतु, अन्यग्रन्थेषु—

'नस्यं मनः शिला रोध्रं पिप्पली मरिचान्वितम्।
यः करोति हरेदेव तस्यार्द्धशिरसो व्यथाम् ॥'

इति पाठान्तरदर्शनात् 'शिलजतु' स्थाने ''मनः शिला'' (ग.नि.) (शिला) पाठ एव साधुः।

प्रतिश्यायान्तकनस्यम्

पिप्पल्यः शिग्रुबीजानि बिडङ्गमरिचानि च ।
अवपीडः प्र[1]शस्तोऽयं प्रतिश्यायनिषूदनः ।। 12 ।।

टीका :—पीपर, सहोजने के बीज, बायबिडंग और मरिच। इनसे बना अवपीडन नस्य प्रतिश्याय दूर करने के लिये उत्तम है।

अवबाहुके नस्यम्

रामठरुचकविमिश्रा[2] जंभि(?)[3] (कुंभी(?))निर्याससंयुता पिष्टा ।
वानरिजटा चिरो[4]त्थं नाशय[5]त्यवबाहुकं नस्यात् ।। 13 ।।

टीका :—हींग, व सौंचल के साथ गुग्गुल मिलावे य उनके साथ कौंचमूल पीस कर नस्य देने से जीर्ण अवबाहुक व्याधि नष्ट होती है।

नस्यकर्मसमयः

कफपित्तानिलध्वंसि पूर्व-मध्याऽपराह्णके ।
दिनस्य गृह्यते नस्यं रात्रावप्युत्कटे गदे ।। 14 ।।

टीका :—यदि कफरोगों को नष्ट करना हो तो पूर्वाह्ण में पित्तनाश के लिये, मध्याह्ण में, तथा वातनाशार्थ अपराह्ण में नस्य देनी चाहिये। किंतु, यदि रोग भयङ्कर हो तो रात्रि में भी नस्य दी जा सकती है।

नस्यायोग्याः

भु[6]क्ते पीते[7] प्रतिश्याये गर्भिण्यां दुर्बले ज्वरे ।
[8]तृषा-वेगावरोधे चा[8]ऽजीर्णे न तु समाचरेत् ।। 15 ।।

---

1 क. प्रशस्तस्य, ख. योगोऽयं नोपलभ्यते-पत्रलोपात् ।
2 क. ० मिश्री 3 कुंभिनिर्यास = गुग्गुलुः
4 क. चिरोछे 5 क. नश्यन्त्यववाहुकं
6 क. नक्ते 7 क. पीठे 8-8 क. तृष्णायामवराधूना

टीका :—भोजन कर चुकने के बाद, स्नेह, आसव, व जल पीने के पश्चात् प्रतिश्याय (नया जुकाम) ग्रसित रोगी को, गर्भवती को, दुर्बल को, ज्वरग्रसित रोगी को, तृष्णा से युक्त व मलमूत्रादिवेगावरोध किये व्यक्ति को व अजीर्ण के रोगी को नस्य नहीं देनी चाहिये ।

नस्यकर्मणि द्रव्याणां परिमाणम्

नस्यकर्मणि दातव्यं शाणैकं तीक्ष्ण[1]मौषधम् ।
हिङ्गु[2] स्याद्यवमात्रन्तु माषैकं सैन्धवं मतम् ।।

क्षीरञ्चैवाष्ट[3]शाणं स्यात् पानीयञ्च त्रिकार्षिकम्[3] ।
कार्षिकं म[4]धुरं द्रव्यं नस्यकर्मणि योजयेत् ।। 17 ।।

टीका :—नस्यकर्मार्थ औषधि की मात्रा 1 शाण, हींग की जौ भर, सीधे नमक की 1 माशा, दूध की 8 शाण, जल की 3 कर्ष व मधुरद्रव्य की मात्रा 1 कर्ष पर्यन्त लेनी चाहिये ।

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीनृसिंहभारती तत् शिष्य-आनन्दभारती-विरचितायां आनन्दमालायां नस्याधिकारः ।

इति द्वादशोऽधिकारः

---

1 क. सौषधम् 2 क. हिग्मूत्राद्यव

3-3 क. चैवाघृ(ष्ट)साएात्पानीयं चिवर्कर्षिकम् । 4 क. मघूरं

अथ त्रयोदशोऽधिकार:

स्वेदाधिकारः

अथ भूनिम्बादिस्वेदा:[1]

भूनिम्बादी[2]ष्टिका-नाडी-लाक्षातुम्ब्यग्निवालुकाः ।
कृशरा[3]-धू[4]प-सूष्णाम्बु[4]स्वेदा एवं त्रयोदश[5] ।। 1 ।।

टीका :—इस श्लोक से, स्वेदों के प्रकारों की संख्या तेरह होनी प्रतीत होती है किन्तु इसमें केवल 9 ही प्रकार मिलते हैं। तद्यथा—(1) भूनिम्बादि (यह स्वेद प्रकार नहीं है, व एक स्वेदयोग है ।), (2) इष्टिका (3) नाडी, (4) लाक्षातुम्बी, (5) अग्नि, (6) वालुका, (7) कृशरा (8) धूप व (9) उष्णाम्बु । चरक में भी स्वेदभेदों की संख्या 13 ही कही गई है किन्तु वे इनसे नितान्त भिन्न हैं ।[6] इस प्रकरण में भूनिम्बादिस्वेद का 1 योग, इष्टिका, नाडी, लाक्षातुम्बी व अग्निस्वेद का 1-1 योग, वालुकास्वेद के 2 योग, कृशरा, व उष्णाम्बुस्वेद का 1-1 योग व धूपों के 4 योग हैं । इस प्रकार 13 योग हैं । धूपों को भी स्वेदों में ही गिना गया है ।

अस्वेद्या:

तृ[7]षार्तो दुर्बलोऽजीर्णी[8] पाण्डुर्मेही मदात्ययी ।
अतिसारी रक्तपित्ती गुर्विणी ता[9]न्न स्वेदयेत्[9] ।। 2 ।।

टीका :—तृषा से पीडित, दुर्बल, अजीर्ण के रोगी, पाण्डु व प्रमेह के रोगी,

---

1 क. स्वेदः 2 क. ० दाष्टका 3 क. कृष्णशरा 4 क. धूमपाम्मांबु
5 क. दशा
6 'संकरः प्रस्तरो नाडी परिषेकोऽवगाहनम् ।
जेन्तकोऽश्मघनः कर्षुः कुटी भूः कुम्भिकैव च ।।
कूपो होलाक इत्येते स्वेदयन्ति त्रयोदश ।।' च. सं.
7 क. तृष्णार्ता 8 क. जीर्णो 9-9 क. तेन सीदति

मदात्ययी, अतिसारी, रक्तपित्ती व गर्भिणी—ये स्वेद देने योग्य नहीं हैं।

०भूनिम्बाऽर्क-शिरीषपत्र-तरु[1]णी निःक्वाथ्य मूत्रेण च
शय्याऽधो निहितः सुतीव्रदहनः सन्तप्तलोष्ठोष्मणा ।
[2]नाशं गच्छति [3]सन्निपात उदित[3]स्तन्द्रातिनिद्राज्वरो
मूकत्वञ्च महाप्रलापनम[4]थो जाड्यादियुक्तं क्षणात् ।। 3 ।।०

टीका :—भूनिंब, अर्क, शिरीष के पत्ते, और तरुणी—इनका गोमूत्र से बना क्वाथ रोगी की शय्या के नीचे रखकर तीव्राग्नि दे व उसमें लोहे के गरम गोले डुबावें। ऐसा करने से जो वाष्प निकलती है उससे सन्निपातज ज्वर की तन्द्रा, अतिनिद्रा, प्रलाप, मूकत्व व शरीर की जड़ता क्षणभर में नष्ट हो जाती है।

अ[5]ग्निदग्धेष्टिका सिक्ता काञ्जिकेन पुनः पुनः ।
सवस्त्रा च तया स्वेदो रोगा[6]ञ्जयति वातजान् ।। 4 ।।

टीका :—ईंट को अग्निदग्ध करके कांजी में बारम्बार बुझावे व वस्त्र (कम्बल आदि) में डालकर स्वेद देवें। यह स्वेद वातरोगों को दूर करता है।

नाडी-स्वेदः

अनूपोदकमांसा[7]नि दशमूलं शतावरीम् ।
कुलत्थान् बद[8]रीं माषांस्तिलान्कृष्णान् वचां बलाम् ।। 5 ।।

०–० क. 'भूनिंवार्क्कसिरिपत्राणि क्वाथस्य मूत्रस्य तु
शय्यांधोहृति दहतस्य तीव्रदहनैः सन्तप्तलोष्टोष्म ।
नासं गछति सनिपातउदिततन्द्रातिनिद्राज्वरो
सूकत्वं च महाप्रलापदवज्जाड्यादिषुत्कर्षणात् ।।'

0-1 तरुणी—यह घृतकुमारी व दन्ती का पर्याय है।

0-2 तेषां 0-3-3 सन्निपातःनियतं 0-4 मपि च

5 क. अग्निदग्धोष्टका 6 क. रुजां

7 क. ० मांसान 8 क. वदिरान्

व[1]स्त्रे दध्यारनालाक्ते सह कुंभे विपाचयेत् ।[2]
नाडीस्वेदं प्रयुञ्जीत पिष्टैश्चवोपनाहनम् ।। 6 ।।

तैश्च सिद्धं घृतं तैलमभ्यङ्गं पानमेव च ।
आमवा[3]तादिकान्रोगान् सर्वान्वा[4]तान् व्यपोहति ।। 7 ।।

टीका :—अनूपदेश के जलचर जीवों का मांस, दशमूल, शतावर, कुलथी, वानरी व बदरी (कौंच के पर्याय है) शूकशिम्बी (?) उड़द, काले तिल, वचा व बला, इन्हें दही तथा काँजी में पीस कर वस्त्र में डाले व उस पोटली को दही व कांजी से भरे घड़े में पकावें । इन द्रव्यों से नाडीस्वेद देवें व इन्ही को पीस कर उपनाह करें । इन द्रव्यों से साधित घृत अथवा तैल के पान व अभ्यङ्ग से उग्र आमवातरोग व सभी वातरोग नष्ट होते हैं ।

लाक्षातुम्बीस्वेदः (?)

कुष्ठमेरण्डजं मूलं पौष्करं सुरदारु च ।
शतपुष्पां शठीं रास्नां मुण्डीं तेजवतीं तथा ।। 8 ।।

त्रिकटुं ग्रन्थिकं भार्गीं चाश्वगन्धां पुनर्नवाम् ।
एतैरर्द्धपलैर्भागैः लाक्षाढकस[5]मायुतैः ।। 9 ।।

अग्निना मूर्च्छितं (?) कृत्वा चूर्णं युक्त्या[6]ऽथ मेलयेत् ।
ततस्तु स्वेदयेद्धीमान् बाहु-पृ[7]ष्ठ-शिरोग्रहान् ।। 10 ।।

कटिग्रहं गृध्रसीं च स्वेद एष व्यपोहति ।।

(इति) लाक्षातुम्बीस्वेदः (?)

---

1 क. वासी 2 क. पाचये
3 क. आमवाताजिन्नोन् 4 क. सर्व्वेन
5 क. लाक्षाढिक
6 क. युक्तार्थं 7 क. पृष्टि

टीका :—कूठ, एरण्डबीज, पुष्करमूल, देवदारु, शतपुष्पा, नरकचूर, रास्ना, मुण्डी, तेजबस, सोंठ, मरिच, पीपर, पीपरामूल, भार्ङ्गी, असगंध व पुनर्नवा। ये सभो द्रव्य आधा आधा पल व लाक्षारस एक आढक (64 पल)। इन्हें अग्नियोग से स्वेदयोग्य बनालें। यह स्वेद बाहु, पृष्ठ, शिरोग्रह, कटिग्रह व गृध्रसी का नाश कर देता है।

अग्निस्वेदः

छागलिण्ड्यग्निना स्वेदः कफवातरुजञ्जयेत् ।। 11 ।।

टीका :—बकरी की मैंगणियों को जलाकर 'अग्निस्वेद' देने से कफवात रोग नष्ट होते हैं।

उष्णाम्बुस्वेदः

उष्णाम्भ[1]स्तिलतैलाभ्यां धा[2]रास्वेदोऽनिलाप[3]हः ।

टीका :—गरमपानी व तिलतैल मिलाकर दिया गया धारास्वेद वातनाशक होता है।

बालुकास्वेदः

खर्परभृ[4]ष्टपटस्थितकाञ्जिकसि[5]क्तो हि वालुकास्वेदः ।। 12 ।।

शमयति वातकफामय-मस्तकशू[6]लं त्व[7]ङ्गभङ्गादीन् ।

टीका :—मिट्टी के खीपड़े में बालुका को गरम कर, उसे कपड़े की पोटली में बांध कर ऊपर कांजी छिडकें। उस वाष्प का स्वेद वातश्लेष्मजनित पीडा व अंगों के टूटने आदि विकारों को शमन करता है।

---

1 क. उष्णाम्भस्तिलतैलाभ्यां 2 क. धारान् 3 क. ० ग्रहः
4 क. ० भ्रष्ट 5 क. सेक्तो यो. र. संसिक्त 6 क. मस्तकश्रू 7 क. त्वाङ्ग, यो. र. शूलाङ्गभेदादीन् 7 ख. मस्तकसूल्वागभीगदात्

एवं पांसुजरेणु[1]तप्तमनुजः सौख्यं व्रजेत्सत्वरम् ।। 13 ।।

टीका :—इसी तरह अन्य मिट्टी की रेणु का स्वेद भी शीघ्रफलदायक होता हैं ।

इति वालुकास्वेदः

कृशरास्वेदः

प्रपुन्नाटसणैरण्ड-कार्पासफलमेथिकाः ।
यव-माष-तिलांश्चैव[2] तक्रे पांसुजसंयुताः ।। 14 ।।

स ए[3]ष कृशरास्वेदः सर्ववातान् व्यपोहति ।।

टीका :—चक्रमर्द, सण, एरण्ड, कपासफल, मेथी, यव, उड़द व तिल । इनका समभागचूर्ण तक्र में साध, कृश[4]रास्वेदविधि से स्वेद दें । यह कृशरा-स्वेद सारी वातव्याधियों को नष्ट करता है ।

इति कृश[5]रास्वेदः

---

1 क. रेहि, ख. रेह

2 क. तिलीश्चमिस्तक्र

3 क. एक 4 क. सिरस्वेदः, ख. सिरा स्वेद

5 कृशरास्वेदविधि : उक्त क्वाथ से एक ऐसे घड़े को भरें जिसके बगल में एक छिद्र हो । घड़े के मुख को सकोरे से मुद्रित कर दें । फिर 3 संधि वाली नली, जो मूल में 6 अंगुल चौड़ी हो व आगे क्रम से पतली हो व 2 हाथ लम्बी हो; उसे उस छिद्र में फिट करके मुद्रा लेप दे । फिर तैल से मालिश किये हुए व सुखपूर्वक बैठे रोगी को भारी वस्त्र ओढा कर, हाथी की सूंड के समान क्रम से पतली उक्त नाडी द्वारा स्वेद देवें ।

माहेश्वरो धूपः

हिङ्गु[1]लं देवकाष्ठ[1]ञ्च श्रीवेष्टं घृतमेव च ।
ग[2]वामस्थि तथा वा[2]लं निर्मा[3]ल्यं(?) कटुरोहिणी ।। 15 ।।

[१]सर्पपौ द्वौ बृहत्यौ च निम्बपत्राणि दापयेत् ।[१]
[२]के[4]शराहित्वचञ्चैव[4] कार्पासास्थि नखन्तथा ।। 16 ।।[२]

मार्जारविष्टां गोश्रृङ्गं[5] मदनस्य फ[6]लानि च ।
[३]छा[7]गलोमं-यवतुषा[7]न् मायूरं पक्षमेव च ।। 17 ।।[३]

[४]ग[8]जेन्द्राश्वनखान् विष्टां शूकरस्य च बुद्धिमान् ।[४]
[५]एतान् सङ्गृ[9]ह्य सम्भारं [10]वस्तमूत्रेण सेचयेत् ।। 18 ।।[५]

उलूख[11]लाहतंकृत्वा स्थाप[12]येन्मृद्भाजने ।[६]
[७]अनेन धू पयोगेन दह्यमानेन धूवेश्मनि ।। 19 ।।[७]

1-1 क. ख. हिङ्गवासवं देवदारु च, मै. र. हिङ्गुलं०

2-2 मै. र. गवास्थीनि तथाऽऽघ्यामं; क. गबामस्थि तथा बाला

3 क. नव्या कटुरोहिणी, ख. नव्या तकटुरोहणी मै.र. निर्माल्यं

१-१ मै.र. 'सर्षपनिम्बपत्राणि पिच्छाहिकंचुकं तथा ।'

4-4 ख. केसहित्ववं चैव

२-२ मै.र. 'द्वे बृहत्यौ वचा चैव कार्पासास्थि तुषास्तथा ।'

5 क. गोश्रृङ्गी 6 क. दलानि 7-7 क. छागलोमान्यवतुषं, ख. छागरोगानयवतुषं

३-३ मै.र. 'छागगोमायुविट चैव हस्तिदन्तस्तथैव च ।'

8 क. गजेन्द्रीश्व नखो ख. गजेन्द्राश्वनखो 9 क. संगृह्य 10 क. त्वत्स० ख. वत्स्य

४-४ 'गजेन्द्र··· बुद्धिमान् पाठोऽयं मै.र. नोपलभ्यते

५-५ अस्मिन्स्थाने मै.र. 'एतत्सर्वं समाहृत्य छागमूत्रेण भावयेत् इति पाठः

11 क. उदूखलहतं 12 क. स्थाप्य, ख. स्थापि

६ अस्मात् परं मै.र. "ॐ नमो भगवते रुद्राय, उमापतये सम्पन्नाय नन्दिकेश्वराय इति मन्त्रेणाभिमन्त्रयेत्" ।। इत्यधिकः पाठः

७-७ मै.र. घ्राणमात्रेण धूपोऽयं दीयते यत्र वेश्मनि ।

°तत्र नागा न तिष्ठन्ति न पिशाचा न[1] राक्षसाः[1] ।
न पू[2]तना ग्र[2]हाः केचिद् [3]डाकिन्यः समुपद्रवाः[3] ।। 20 ।।°

एष माहेश्वरो धूपः सर्वग्रह[4]विमोक्षणः ।
एकाहिकं दाहिकञ्च त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम् ।। 21 ।।

°मासार्द्धमासकञ्चापि तथा वै मानसं ज्वरम्[5] ।
नाशयेत् सर्वभूतानां जूरांश्चैवाप्यशेषतः ।। 22 ।।°

इति माहेश्वरो धूपः ।

टीका :—हिंगुल, देवदारु, धूपसरल, घृत, गाय की अस्थि, सुगंधवाला, निर्माल्य, कटुरोहिणी (कटुकी) दोनों सरसों, दोनों प्रकार की कटेरियां, नीम के पत्ते, केशर, सांप की कंचुकी, कपास की अस्थि, नख, बिल्ली की विष्टा, गाय का सींग, मदनफल, बकरी के केश, यव, तुष, मोरपांख, हाथी व घोडे के नख, सूअर की विष्टा—इन सभी को सम भाग लेकर बकरे के मूत्र से भावना देकर ओखली में कूट लें ।

°–° 'तत्रनागा··· समुपद्रवाः', अस्मिन्स्थाने भै.र. "न तत्र सर्पास्तिष्ठन्ति न पिशाचा न राक्षसाः" इति पाठः

1-1 क. न च राक्षसान्　2-2 ख. पूनागृहा　3-3 ख. न केचित् मुद्रवा

4 क. ज्वरैः

5 भै. र.० ज्वर

°–° 'मासार्द्ध·······ज्वरांश्चैवाप्यशेषतः', अस्मिन् स्थाने भै.र. "एवमादीन् ज्वरान्सर्वान् नाशयेन्नात्र संशयः" इत्येव पाठः ।

पाठान्तरम्—वृ.यो.त., मा.प्र., टो. च.

'रुद्रजटा गोशृङ्गं बिडालविष्ठोरगस्य निर्मोकः ।
मदनफलं भूतकेशी वंशत्वग् रुद्रनिर्माल्यमृ ।।
घृत-यव-मयूरचन्द्रकच्छा[1]गरोमाणि सर्षपाः सवचाः ।
हिङ्गु गवास्थिमरीचाः समभागाश्छागमूत्रसम्पिष्टाः ।।
धूपनविधिना शमयन्त्येता[2]न् सर्वज्वरान्नियतम्[2] ।
ग्रहशा[3]किनीपिशाच-प्रे[4]तविकारानयं धूपः[4] ।।

१ टो. छागल　२-२ टो. शमयन्त्येते सर्वान् ज्वरान्　३ टो. डाकिनी

४-४ टो. पनोदनो धूपाः

इसे मिट्टी के बर्तन में सुरक्षित रख लें। इस धूप को घर में जलाने से नाग, पिशाच, राक्षस, पूतना, ग्रह आदि पलायन कर जाते हैं। डाकिनियों आदि के उपद्रव भी नष्ट हो जाते हैं। यह माहेश्वर नामक धूप सभी प्रकार की ग्रह बाधा हरता है। ऐकाहिक, दाहिक, तिजारी, चौथिया, मासिक, अर्द्धमासिक व मानसज्वर, इन सबका नाश करता है। प्राणियों के अन्य सभी ज्वर भी इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं।

अपराजित[1] धूपः

पल[2]ङ्कषा निम्बपत्रं वचा कुष्ठं हरीतकी।
सर्षपाः सयवाः स[3]पिर्धू[4]पनं ज्वरनाशनम्[4] ।। 23 ।।

टीका :—गूगल, नीम के पत्ते, बच, कूठ, हरड, सरसों जौ और घृत—इन्हें समभाग मिलाकर ज्वरनाशार्थ धूप करना चाहिये।

पाठान्तरम् वृ. वै.

'श्रीवेष्टदारुवाल्हीकं मुस्ता कटुकरोहिणी।
सर्षपो निम्बपत्राणि मदनस्य फलानि च ।।
बृहत्यौ सर्पनिर्मोक-कार्पासास्थियवास्तुषः।
गोश्रृङ्ग-खुररोमाणि बर्हिपिच्छं बिडालविट् ।।
छागरोमघृतं चेति बस्तमूत्रेण भावयेत्।
एष माहेश्वरो धूपः सर्वग्रहनिवारणः ।।' 75-77

1 चक्र., यो.र., टो., र.र, भै.र. च 'अष्टाङ्गधूपः' इति नाम

2 क. पलकस्या, ख. पुरके (पुरः गुग्गुलुः) निम्बपत्राणि

3 टो. हिङ्गु 4-4 अ. हृ. धूपो बिड्वा बिडालजा

का[1]र्पासास्थिधूपः

कार्पासास्थिमयूरपुच्छ[2]बृ°हतीनिर्माल्यपिण्डी[3]तकै°—
स्त्व[4]ग्मांसी[5]वृषदंशविट्तुषवचाकेशाहिनिर्मोककैः[5] ।
नागेन्द्रद्विजशृङ्ग[6]-हिङ्गुमरिचैस्तुल्यं कृतं धूपनं
स्कन्दोन्मादपिशाचराक्षससुरावेश[7]ग्रहघ्नः स्मृतः[7] ।। 24 ।।

टीका :—कार्पासबीज, मोरपंख, बडी कटेरी, शिवनिर्माल्य, मदनफल, दालचीनी (या खश), वंशलोचन, बिल्ली का मल, धान की भूसी, बच, भूतकेशी, सर्पकञ्चुकी, गाय का सींग, हाथी का दांत, हींग तथा कालीमिरच—इन सबको समभाग लेकर उसका धूप देने से स्कन्दापस्मार,उन्माद, पिशाच, राक्षस, देवावेश व ज्वर शान्त होते हैं ।

राजार्ह-सुगन्धधूपः

[8]शशिरविसुरकामा तन्मितादर्शिनीच[8]
मलयजगिरिलोहं [9]दिग्ग्रहोसिल्हकञ्च[9] ।
नख-जल-घन-केशी तत्प्रमाणं च पूर्वं
कमलज-घृत[10]-धूपः सर्वभूतान्निहन्ति[11] ।। 25 ।।°

---

1 यो.र., अ.हृ. च 'माहेश्वरो धूपः' इति नाम

2 अ.हृ. 'पत्र', टो. "पक्ष",3 क. पिंडांतकः °–° ख. बिरहटी माहेसकौ निर्मान्यतगरु । पिंडातेक । 4 चक्र. त्वग्वांशी (त्वग्वांशीति) त्वग् = उशीरम्, वांशी = वंशलोचनाः अन्ये तु त्वग् = दालचीनी, मांसी = जटामांसी इत्याहुः (अ.हृ., यो.र., टो.) 4-5-5 ख. 'त्वामांसी, क. विषदंशविंड्रूववचाकेसो निर्मोचकै ।' ख. 'विषदंसविड्रूष च केसोहि निर्मोचके ।

6 ख. शृङ्गु 7-7 क, वेसंग्रहध्रूपरं; ख. वेश्मगृहघ्नं परम् ।

8-8 क. रविशशि सुरकामकं दर्पणी च । ख. सूर 9-9 क. दिग्रहे सिलहकं च ख. दिगृहं 10 क कृत, ख कत 11 क. भूतानि हंति, ख. भूतानुहंति

° पद्यमेतन्महदशुद्धम् । अतोऽत्रास्य सार एव शब्दैः ग्राह्यः ।

टीका :—कूंकूंकेश[1]नि टां 16, कपूर टां 12, [2]कस्तूरी टां 13, चन्दन टां 7, अगर टां 10, सिलारस टां 9, नख ठां 16, वालौ[2] (सुगंधवाला) टां 12, मोथ टां 13, छड़ टां 7 (कमल की दंडी टां 10 व घृत टां 9 ?) [3]राजार्ह सुगन्धधूप ।

इति स्वे[4]दाधिकार:/इति त्रयोदशोऽधिकार

1 ख. केसरि 2-2 क. कस्तूरी से सुगंधवाला तक के छः द्रव्य क. में नहीं हैं ।
3 ख. 'इति राजहंसा सुगंध धूप । इति स्वैदाधिकारो 4 क.० मेदाधिकार:

अथ चतुर्दशोऽधिकारः

स्नेह-बस्ति-कल्पना

स्नेहाधिकारः

घृतम्पुष्टिकरं पानान्मद्यपानाद्ध[1]तौजसाम् ।
केवलं पैत्ति[2]के सर्पिर्वातिके लवणान्वितम् ।। 1 ।।

पेयं बहुकफ[3]व्या[4]धौ व्योषक्षारसमन्वि[5]तम् ।

टीका :—मद्यपान से जिसके ओज का क्षय हो गया हो उसे घी पीने से पुष्टि प्राप्त होती है । पित्तरोगों में केवल घृतपान, वातज रोगों में नमक-मिश्रित घृत का पान व कफरोगों में घी को त्रिकटु व क्षार मिला-कर पीना चाहिये ।

°शीतकाले दिवास्नेहमुष्णकाले पिबेन्निशि° ।। 2 ।।

सर्दियों में दिन में व गर्मियों में रात में घृतपान करना चाहिये ।

वातपित्ताधिके रात्रौ वातश्लेष्माधिके दिवा ।

टीका :—वातपित्ताधिक रोगों में रात में किन्तु वातकफाधिक रोगों में दिन में घृतपान करना चाहिये ।

अनुपानानि

घृते कोष्णजलं पेयं तैले यूषः प्रशस्यते ।
वसामज्ज्ञोः पिबेन्मण्डमनुपानं सुखावहम् ।। 3 ।।

---

1 ख. मद्यपानद्विर्तौजसः 2 ख. 'पैत्रकं सर्पं पर्वातिकेवलवणान्वितं ।'
3 क. ख. कफे 4 सुश्रु. सं. वह्नि 5 ख. समंनितं
°–° "शीतकाले पिबेन्निशि" इत्यपूर्णः पाठः ।

पलद्वयं त्वनिलजे पित्तजे तु पलत्रयम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं व्या[1]धौ तु कफजे पलम्[1] ।। 4 ।।

टीका :—घृतपान के पश्चात् अनुपान में किञ्चिदुष्णजल व तैलपान के बाद यूष हितकर है । वसा तथा मज्जा पान के पश्चात् मांड पिलाना सुखकर होता है ।

वातव्याधि में अनुपान की मात्रा 2 पल, पित्तव्याधि में तीन पल व कफव्याधि में एक पल होती है ।

*

वस्तिकल्पना

°बस्तिर्वाते च पित्ते च कफे रक्ते च शस्यते ।। 5 ।।

संसर्गे सन्निपाते च वस्तिरेव हितः सदा ।

टीका :—वात, पित्त, कफ, रक्त, दोषों के संसर्ग (प्रकोप) तथा सन्निपात (त्रिदोषज संसर्ग) इनमें बस्तिप्रयोग ही सर्वदा हितकर होता है ।°

1-1 ख. व्याधौरुज कफे जले

* अब 'इति घृतपानविधि' इति पाठः ख. पुस्तके दृश्यते ।

° यह श्लोक सुश्रुत सं. से उद्धत है । (चि. अ. 53) चरक ने जिनकी शाखाओं में कुपित हुआ वायु सञ्चार करता है उनमें विशेषतः वस्तिकर्म को प्रशस्त कहा है; तद्यथा—

'येषां च शाखासु चरन्ति वाताः
शास्तो विशेषेण हि तेषु बस्तिः ।।'
च. च. सि, 1/38

वायु के अत्यन्त प्रवृद्ध होने पर, उसकी शान्ति के लिये बस्ति के सिवाय कोई अन्य औषधि नहीं है । अतः कतिपय विद्वान् इसे 'आधी चिकित्सा' मानते हैं तो अन्य इसे ही 'सम्पूर्ण चिकित्सा' कहते हैं, तद्यथा—

"तस्माच्चिकित्सार्धमितिब्रुवन्ति
सर्वां चिकित्सामपि बस्तिमेके" ।। 1/39

शिरोबस्तिविधानम्

¹आशिरो व्या[1]यतं चर्म्म[1] षो[2]डशाङ्गुलमुच्छ्रितम्[2] ।। 6 ।।

तेनाऽऽवेष्ट्य शिरोऽधस्तान् माषकल्केन लेपयेत् ।¹
²निश्चलस्योपविष्टस्य तैलैरुष्णैः प्रपूरयेत् ।। 7 ।।²

धारयेदारुजः शा[3]न्तेर्यामं यामार्द्धमेव वा ।
³शिरोबस्तिर्जयत्येष[4] शिरोरोगं मरुद्भवम् ।। 8 ।।³

हनु-मन्याऽक्षिक[5]र्णार्त्तिमर्दितं मू[6]र्द्धकम्पनम् ।।

टीका :—शिर के समान लम्बाई वाला तथा सोलह अंगुल चौड़ा (ऊंचा) चमड़े का टोपी जैसा पट्टा शिर पर लपेटना चाहिये । चमड़े के लपेट की संधियों में नीचे भाग में उड़द की पीठी का लेप करना चाहिये । इसके बाद रोगी को सीधा बैठाकर गुनगुने तैल से, उक्त चर्मनिर्मित वृत्त (टोपी) के मध्य भाग को, भर देना चाहिये । जब तक पीड़ा शान्त न हो जाय तब तक उसे $1\frac{1}{2}$ से 3 घंटे तक रखे रहना चाहिये । इस शिरोबस्ति से वात के कोप से उत्पन्न शिरो रोग, हनु, मन्या, आंख और कान की पीड़ा नष्ट होती हैं व अर्दित रोग व शिरः कम्प भी नष्ट होते हैं ।

1-1 यो.र. व्यापि तच्चर्म, ग.नि., मा.प्र., चक्र च 'चर्म' 2-2 भै.र., चक्र., वृ.वै.च 'कत्वाऽष्टाङ्गुल० र. र. कृत्वाष्टांगुलिमुद्रितम् क.० मूर्छितं

१-१ 'आशिरो···· लेपयेत्' पाठोऽयं वृ,यो.त. नोपलभ्यते ।

२-२ 'निश्चलस्योपविष्टस्य·······प्रपूरयेत्', अस्मात् परं वृ.यो. त. "शिरोबस्ति शिरः पीडापरीतस्य नरस्य हि" । इत्यधिक पाठः ।

३-३ 'शिरोबस्ति ·······मरुद्भवम्', पाठोऽयं र. र. नोपलभ्यते ।

3 क. ० रुजं दृश्यते 4 क. ० ह्येष शिरिरोग

5 क. ० कटिगार्ति 6 क. मूद्धिनकंपितं, वृ. वै. शीर्षकंपनं; चक्र. मस्तकंपनम्

तैलपूरणे कालनियमः

तैलेनाऽऽपूर्य मूर्द्धानं [1]पञ्चमात्राशतानि[1] च ।। 9 ।।

तिष्ठेत् श्लेष्मणि पित्तेऽष्टौ दशवाते शिरोगदे ।
एवमेव विधिः कार्यस्तथा कर्णाक्षिपूरणे ।। 10 ।।

टीका :-- शिरोबस्ति में तैल को पूरण करने के बाद शिरोरोग में 500 मात्रा, पित्तज में 800 मात्रा तथा वातज शिरोरोग में 1000 मात्रा उच्चारण काल तक उसे धारण करना चाहिये । कान तथा आंख के पूरण में भी यही नियम समझना चाहिये ।

इति शिरोबस्तिः

उत्तरबस्तिः

चर्मणः कस्य धातोर्वा च[2]क्षु-कर्णि-युतोत्तरः ।
बस्तिर्द्वि[3]हस्तमानोच्चै[4]रिष्टः स्वासनवेशिनः[5] ।। 11 ।।

टीका :—उत्तरबस्ति चर्म की व किसी धातु से बने नेत्र व कर्णिकायुत होती है । रोगी को दो[6] हाथ ऊंचे आसन पर बिठा कर यह बस्ति दी जाती है ।

कोष्णेन तिलतैलेन पूरितो रोगनु[7]त्तु तत् ।(?)
[8]यामयामार्द्धमानं वा तत्तैलेन प्रतिष्ठते (?) [8]।। 12 ।।

1-1 क. न च मात्रा शताधिका । वृ.यो.त., ग.नि., चक्र. च. 'पञ्चमात्राशतानि च' इति पाठः एष एव पाठस्साधुः ।

2 क. चनुः कौण मत्तोत्तरः ?
शा. 'अतः परं प्रवक्ष्यामि बस्तिमुत्तरसंज्ञितम् ।
द्वादशाङ्गुलकं नेत्रं मध्ये च कृतकर्णिकम् ।।' (शा., भा.प्र. वृ.यो.त. च)

3 शा. "स्थितस्य जाजुमात्रे च पीठेऽन्विष्य शलाकया" 4 क.० चैर्दष्टं

5 क. विस्तृतः

6 शाङ्र्गधरादि ग्रंथों में रोगी को जानुपर्यन्त ऊंचे आसन पर बिठाने का आदेश है ।

7 क. रोगलं नु 8-8 अप्रासङ्गिकोऽयम्पाठः कालमानाभावात् ।

टीका :—मामूली गरम तिल तैल से पूरित यह रोगों का हरण करती है। इसे एक याम या आधे याम पर्यन्त तैल से प्रतिष्ठित रखें (?)

सेकाभ्य[1]ङ्गावगाहेषु तिलतैलं प्रशस्यते ।
तैलावगाहनं वातशमनं बलपुष्टिदम् ।। 13 ।।

टीका :—सेक, अभ्यङ्ग व स्नानार्थ तिल तैल प्रशस्त है। तैलावगाहन वात-शामक व बल-पुष्टिप्रद है।

धातून्वर्द्धयते तत्तु क्रमेण बस्तिसेवनात् ।।

टीका :—क्रमेण बस्तिसेवन करने से धातुओं की वृद्धि होती है ?

(इति) उत्तरबस्तिः

रक्तस्राव वर्णनम्

एकतस्तु क्रिया सर्वा रक्तमोक्षणमेकतः ।। 14 ।।

टीका :—सारी अन्य क्रियाएं एक तरफ हैं तो अन्य एक ओर केवल रक्त-मोक्षण क्रिया है।

रक्तं हि विक्रियां याति [2]तन्मोक्षे नास्ति चान्यरुक्[2] ।

टीका :—क्योंकि रक्त ही बिगड़ कर रोगों को उत्पन्न करता है। अतः युक्ति-युक्त मात्रा में उसे निकाल देने पर अन्य रोग नहीं होते हैं।

वातरक्ते तथा[3] कुष्ठे सपीडे दुर्जये[3]ऽनिले ।। 15 ।।

पा[4]ण्डिरोगे श्लीपदे[5] च विषदुष्टे च शोणिते ।
ग्र[6]न्थ्यर्बुदापचीक्षुद्ररोगरक्ताधिमन्थके[6] ।। 16 ।।

---

1 क. सैकाभ्यावगाहेषु
2-2 क. तच्चूर्नास्ति न चाति रुक्
3-3 क. ० तथाष्टेसपीडदुर्क्रंयए
4 क. पादिरोगो 5 क. श्रीपदेव 6-6 क. गंथ्यबुंदापत्रीक्षुत्ररोगरक्ताधिमस्तिषु

विदारीस्तनरोगेषु गात्रसादे[1]ऽतिगौरवे ।
रक्ता[2]भिष्यन्दतन्द्रायां पूतिघ्राणस्य देहिनः[2] ।। 17 ।।

यकृ[3]त्प्लीहविसर्पेषु विद्रधौ[4] पिडकोद्गमे ।
[5]कर्णोष्ठघ्राणवक्त्राणां पाके दाहे शिरोरुजि[5] ।। 10 ।।

उपदंशे रक्तपित्ते रक्तस्रावः प्रशस्यते ।

टीका :—वातरक्त, कुष्ठ, पीडासहितदुर्जय वातव्याधि, बाहुरोग, (हाथों में दाह आदि पाणि रोग) श्लीपद, विषदुष्टरक्त ग्रन्थि, अर्बुद, अपची, क्षुद्ररोग, रक्ताधिमन्थ, विदारी, स्तनरोग, गात्रसाद व गात्रगौरव, रक्ताभिष्यन्द, तन्द्रा, नाक के सड़ने व दुर्गन्धित होने, मुख व देह से दुर्गन्ध, यकृत्, प्लीहा, विसर्प, विद्रधि, फोड़े निकलने (पीडिका, बालतोड़), कर्ण-होठ-नासिका व मुख के पाकों में, या उनकी जलन में, शिरोरोगों, उपदंश, व रक्तपित्त, इन रोगों में रक्तस्राव कराना चाहिये ।

मदमूर्च्छाश्रमातानां वातविण्मूत्रसङ्गिनाम् ।। 19 ।।

[6]निद्राऽभिभूत भीतानां[6] नृ[7]णां नासृक् प्रवर्तते ।

टीका :—मद, मूर्च्छा व श्रम के रोगियों एवं मलमूत्रावरोध से पीडित, निद्राभिभूत व भीत रोगियों का रक्तमोक्षण भलीभांति निष्पन्न नहीं हो पाता है ।

त्वग्दोषा[8] ग्रन्थयः शोफा[9] रोगाः शोणितसम्भवाः ।। 20 ।।

---

1 क. गात्रसादांगगौरवे 2-2 क. रक्तोभिष्यंदि तंद्राणां घटिघ्राणेषु देहिनां
3 क. वतिशोथ 4 क. विद्रधो 5 क. कंठोष्टघ्राणवदन सोदाहे सितोरुजे
6 वातनिद्राभिभूतानां 7 क. नृण
8 क. ० दोषे 9 क. शोफ

रक्तमोक्षणशीला[1]नां न भवन्ति कदाचन ।

टीका :—चर्मदोष, ग्रन्थियां, शोफ व रक्त से सम्बन्धित रोग, ये रक्तमोक्षण करवाने वालों के कदापि नहीं होते हैं ।

व्यभ्रे वर्षासु विध्येत ग्रीष्मकाले तु शीतले ।। 21 ।।

हेमन्तकाले मध्याह्ने शस्त्रकालास्त्रयो मताः ।

टीका :—रक्तमोक्षण (शस्त्र काल) तीन हैं । (1) वर्षा ऋतु में जब मेघों से आकाश आच्छन्न न हो, (2) ग्रीष्म ऋतु में जब ठंडक हो और हेमन्त ऋतु का मध्याह्न काल ।

यवा[2]गूं प्रतिपीतस्य शोणितं स्रावयेद्भिषक् ।। 22 ।।

टीका :—वैद्य को चाहिये कि वह यवागू पिये हुए रोगी का ही रक्त निकालें ।

शृङ्गी वातोद्भवे रोगे पित्रजे तु जलौकसः[3] ।
तुम्बी कफोद्भवेरक्तं त्रिदोषे शोषयेच्छिरा ।। 23 ।।

टीका :—वातजरोगों में शृङ्गी, पित्तज रोगों में जोंक, कफजरोगों में तुम्बी व त्रिदोषज रोगों के निवारणार्थ शिरा से रक्त खींचना चाहिये ।

तुम्ब्यष्टाङ्गुलमात्रेण व्य[4]स्तमात्रेण शृङ्गिका ।
जलौका हस्तमात्रेण शि[5]रासर्वाङ्गशोधिनी ।। 24 ।।

टीका :—तुम्बी आठ अंगुल तक का रक्त खींचती है, शृङ्गी तर्जनी से अङ्गुष्ठ तक लम्बे स्थान तक का व जौंक 1 हाथ तक के स्थान का रक्त खींचते हैं व शिरा सर्वाङ्गशोधिनी है ।

---

1 क. सिलानां
2 क. यवागू
3 क. जलौकसां
4 क विस्ति 5 क. शीरः श०

जलौकाश्रृङ्गचथादत्ते[1] हंस: क्षीरं यथोदकात् ।
कौसुम्भमादौ पीताभंस्रवेद्रक्तं शिरादिजम् ।। 25 ।।

टीका :—जिस प्रकार हंस जलमिश्रित दूध में से केवल दूध-दूध ही ग्रहण करता है उसी प्रकार जलौका व शृङ्गी भी केवल दूषित रक्त को ही निकालते हैं। शिराओं से जो रक्त निकलता है वह पहले तो कौसुम्भरंग का होता है व बाद में पीले रंग का।

लाघवं वेदनाशान्तिर्व्याधेर्वेगपरिक्षय: ।
सम्यग् विस्राविते लिङ्गं प्रसादो मनसस्तथा ।। 26 ।।

टीका :—भली भांति रक्तस्राव हो जाने पर शरीर हल्का हो जाता है। वेदना की शान्ति, व्याधि का नाश व मन की प्रसन्नता ये लक्षण सम्यग् विस्रावित के होते हैं।

पृथिव्या[2]दिक भूतानां रक्ते गन्धादयो गुणा:[2] ।°
तस्मा[3]द्रक्तस्य गन्धेन[4] भु[5]वि मूर्च्छन्ति मानवा:[5] ।। 27 ।।

टीका :—पृथ्वी आदि पञ्चमहाभूतों के गन्धादिगुण रक्त में हैं अत: उसकी गन्ध से मनुष्य मूर्च्छित हो जाते हैं।

शीतलान्यन्नपानानि प्रभाते[6] मैथुनं त्यजेत् ।
त्रिदिनं रक्तमोक्षार्थी[7] स्ना[8]नं क्रोधं श्रमं तथा ।। 28 ।।

टीका :—शीतल, अन्न व पान, प्रभात में मैथुन, स्नान, क्रोध व श्रम, इन्हें रक्तमोक्षार्थी तीन दिन तक न करें।

---

1 क. दते

° सुश्रुत सं. 'विस्रता द्रवता रागश्चलनं विलयस्तथा ।
भूम्यादिपञ्चभूतानामेते रक्ते गुणा: स्मृता: ।।'

2-2 क. पृथिव्यांभस्तमो रूप: गंधं रूपं च तन्मयम् । 3 क. तन्माद्
4 क. गंधेन 5-5 क. भुवि मूर्च्छाति
6 क. प्रमात 7 क. मोक्षार्थी 8 क. स्नानां

इति श्रीपरमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीनृसिंहभारथी-तत् शिष्य-परमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रीआनन्दभारती विरचितायां आनन्दमालायां रक्तमोक्षाधिकारः समा[1]प्तः ।। श्री ।।

"संवत् 1853 शाके 1718 प्रवर्त्तमाने मासोत्तममासे असाढमाने पंचम्यां तिथौ शनिवासरे लिप्यक्ृतं स्वेतांबरधर्म्म-घोषासूराणगछे मथेनपंडित श्री 108 श्रीईन्द्रभांणजी तत्पुत्र शिवचन्द नग्र हरसोर मध्ये ।। पं. श्रीशिवचन्द--तत्पुत्र-चिरंजीव मेघराज झुथरमल सुषजी वाचनार्थं ।।

शुभं भवतुः कल्याणमस्तु ।।"

याद[2]शम्पुस्तकं दृष्टं[2] तादृशं लि[3]खितम्मया ।
अतः शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न विद्य[4]ते ।।

श्री श्री श्री श्री श्री

इति चतुर्दशोऽधिकारः

---

1 क. समाप्ताः

2-2 क. यादृशं संपुस्तकं दृष्ट्वा 3 क. लिखते मया 4 क. दीयते

अथ पञ्चदशोऽधिकारः

धातूपधातुशोधन-मारणाधिकारः[1]

धातवः

स्वर्णतारस्य (स्वर्णतारार-) ताम्राणि नागवङ्गौ च तीक्ष्णकम् ।
धातवः सप्त विज्ञेयास्ततस्तान् साधयेद् बुधः ।। 1 ।।

उपधातवः

माक्षिकं तुत्थकाभ्रौ च नीलाञ्जन-शिलाऽऽलकाः ।
रसकश्चेति विज्ञेया एते सप्तोपधातवः ।। 2 ।।

स्वर्णादिधातूनां समासतः शुद्धिः

स्वर्णतारंच(स्वर्णतारार-)ताम्राणि(ताम्राय) पत्राण्यग्नौ प्रतापयेत् ।
विषिचयेत्(निषिञ्चेत्)सप्तानि(तप्ततप्तानि)तैले तक्रे च काञ्जिके
।। 3 ।।

गोमूत्रेण(गोमूत्रे च) कुलत्थानां कषाये च त्रिधा त्रिधा ।
एवं स्वर्णादिलोहानां विशुद्धि(विशुद्धिः) सम्प्रजायते ।। 4 ।।

नागवङ्गौ प्रतप्तौ च गालितो (गालितौ) तौ निषेचये (येत्) ।
त्रिधा त्रिधा विशुद्धिः स्याद्रविक्षीरेण च त्रिधा ।। 5 ।।

शिलागन्धार्कदुग्धाक्ताः स्वर्णाद्याः सप्तधातवः ।
मृयन्ते (म्रियन्ते) द्वादशपुटैः सत्यं गुरुवचो यथा ।। 6 ।।

धातूपधातवः सर्वे मृता आयुःकरास्तथा ।
त्व(अ-)पक्वा धातवो रोगान् कुष्ठादीञ्जनयन्त्यपि ।। 7 ।।

---

1 अधिकारोऽयं नैवाऽस्ति क. ग्रन्थे 2 शा. शोधयेद्

स्वर्णभेदाः

प्राकृतं सहजं वह्निसम्भवं खनिसम्भवम् ।
रसेन्द्रवेधसञ्जातं स्वर्णं पञ्चविधं स्मृतम् ।। 8 ।।

मारणयोग्यसुवर्णस्य लक्षणम्

दाहे रक्तं कषे पीते (पीतं) छेदं (छेदे) कुङ्कुमसन्निभम् ।
ताडेन (ताडने) सुकुमारञ्च स्वर्णं स्यात्तद्रसायने ।। 9 ।।

शोधनम्

सुवर्णं रेतवत्कुर्यात् (त्कृत्वा) मृत्पात्रे धारयेद् बुधः ।
कुमारीरसयोगेन टङ्कणेनाथ मर्दयेत् ।। 10 ।।

तेनैव रुष्ण (रुक्म-) मालोक्य (मालोड्य) वह्नियोगेन शोषयेत् ।
ततः शुद्धं भवे-टु (द्रु) क्मं सर्वभेषजकर्मणि ।। 11 ।।

मारणम्

सौवर्णं रेतवद् भूयः (सुवर्णं रेतवत्कृत्वा) काञ्चनाररसप्लुतम् ।
गुञ्जकातैलयोगेन पुटे दद्यात्तथा त्वपि ? (ऽनले) ।। 12 ।।

कवच्यां स्थापयेद्धीमा-न्न(न-)धो वह्निं प्रदापयेत् ।
पङ्किलं जायते स्वर्णं यामद्वितयमात्रतः ।। 13 ।।[1]

---

1 उपर्युक्तरीत्या न तु स्वर्णशुद्धिर्नैव च स्वर्णभस्म भवति । अतोऽस्माभिरत्र ग्रन्थान्तररीत्या केचित् काञ्चनाररसप्लुतस्वर्णभस्मविधयो निर्दिशिताः । तद्यथा—

शुद्धं हेमं श्लक्ष्णपत्रीकृतं तद्
　　वारं वारं सूतगन्धानुलिप्तम् ।
तीव्रे वह्नौ काञ्चनारे हलिन्या—
　　ज्वालामुख्यां सम्पुटे भस्म कुर्यात् ।।' (र. का. धे.)

(टि. हलिनी = कलिहारी)

"शुद्धस्वर्णभवं चूर्णं तत्समं श्वेतमल्लकम् ।
काञ्चनारद्रवैर्मर्द्यं तुलसीस्वरसैस्तथा ।।

स्वर्णभस्मगुणाः

कान्तीर्विधत्ते हरते च रोगान्,
करोति सौख्यं प्रबलेन्द्रियत्वम् ।
शुक्रस्य वृद्धि बलतेजसी च
आयुः प्रदाता (आयुष्प्रदं वै) भवतेव (भवतीह) हेम ।। 14 ।।

अशुद्धस्वर्णस्य दोषाः

बलञ्च वीर्यं हरते नराणां
रुजागणं पोषयते हि का[1]यम् ।
असौख्यकारी (कृत्सं-) भवतेव (भवतीह) हेम,
अयातो ? (अपक्वकं)वै मरणं दरथदाति ? (ददाति)।। 15 ।।

(मारित-सुवर्णस्थगुणाः)

सुवर्णे (सुवर्णं) शीतलं वृष्यं वल्यं गुरु रसायनम् ।
कान्तिकार (कान्तिकर्तृ) विषोन्माद-त्रिदोषज्वरशोषजित् ।। 16 ।।

इति स्वर्णमारणम्

विधाय चक्रिकां शुष्कां ततो लघुपुटे पचेत् ।
द्वितीयादौ पुटे देयं मल्लं पादमितं बुधैः ।।
अरुणाभं भवेद्भस्म हेम्नस्तु दशभिः पुटैः ।।"
रसामृ., सि. यो. सं. च

"काञ्चनाररसैर्घृष्ट्वा समसूतकगन्धयोः ।
कज्जल्या हेमपत्राणि लेपयेत्सममात्रया ।।
काञ्चनारत्वचः कल्को मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ।
धृत्वा तत्सम्पुटे गोलं मृण्मूषासम्पुटे च तत् ।।
निधाय संधिरोधञ्च कृत्वा संशोष्य गोमयैः ।
वह्नि खरतरं कुर्यादेवं दद्यात्पुटत्रयम् ।।
निरुत्थं जायते भस्म सर्वकार्येषु योजयेत् ।।"
(टिप्पणमिद 312 पृष्ठनिरन्तरम्)
शा. प्र., शा. च

1 कायम = नितान्तम

(रजतशोधनमारणम्)

रजतस्यापि पत्राणि कुर्वादातारतः? (कुर्यादादरतः) पुरा ।
स्नुहीक्षीरेण सम्मर्द्य सोमलं लेपयेत्सुधीः ।। 1 ।।

कवच्यां स्वेदयेद्वह्नौ याममात्रं प्रयत्नतः ।।

रजतं रेतवत्कृत्वा युक्तमंगुलग्धैंकैः ? (युक्तं हिङ्गुलगन्धकैः)।
पूर्ववद्वह्नियोगेन भस्मीभवति तत्क्षणात् ।। 2 ।।[1]

रौप्यभस्मगुणाः

तारञ्च तारयति गङ्गमपारमध्ये ? (रोगसमुद्रपारं)
देहस्य सौख्यं (सौख्यदमिदं) कुरुते बलञ्च ।
पलितं प्रणाशयति कामस्य करोति वृद्धि ?
(पालित्यनाशनमिदं कुरुते च कामं)
मायुश्च वर्द्धयति सेवनवारसोपि ? (सेवनतत्परस्य) ।। 3 ।।

(अशुद्धरौप्यस्य दोषाः)

तारञ्च देहस्य करोति तापं
त्रि-(वि-)र्वद्धितं क्षनि ? (यच्छति) शुक्रनाशम् ।
अपाटवं चैव नस्य ? (तनोश्च) हारि
महागदं मोषयते ? (पोषयती-) त्वशुद्धम् ।। 4 ।।

रौप्यगुणा

रूप्यं शीतं सस्वातश्च (कषायञ्च) पित्तहारि रसायनम् ।
कान्तिदं शुक्रदं नृृणां बलीपलितनाशनम् ।। 5 ।।

इति रूप्यमारणम्

1 रजतमारणस्यैषा प्रक्रिया सन्दिग्धा । अनया तत्क्षणाद् भस्मनैव भवति । (स. रा.)

ताम्रमारणम्

शोधनम्

अर्क-सेहुण्डया(जै)दुंग्धैस्ताम्रपा(प-) त्राणि शोधयेत् ।
अकोठसिंग-? (अङ्कोठ-शिग्रु-)मूलाभ्यामग्नौ ताम्रं सीतं ? (सितं ?) भवेत् ।। 1 ।।[1]

वरारोहस्य सौ मारौ ग्वारिके रसगंधकं ?
सान पत्रा कवचीजंत्र मारइ प्रहर 4 अग्नि 4 । अथ गंधक ?

[2]कौमारीरसलिह्यन् लेपयेत् ?
(कौमारीरससम्पिष्टं ताम्रं गन्धेन लेपयेत् ?)।
कवच्यां स्थापयेद्धीमानधो वह्निं प्रदापयेत् ।। 2 ।।

ताम्रमृतिर्भवेदेवं चतुर्यामाग्नियोगतः ।। 3 ।।

द्विविधं ताम्रम्

श्लोक्षं ? (म्लेच्छं)नैपालकं ताम्रं तथा ? (तत्र)नैपालमुत्तमम् ।
मिष्ट ? (म्लेच्छ-) ताम्रं भवेद्शुद्धं ? (द्रूक्ष-) अशुध ? (मसितं) कटुकं ? (कठिनं) तथा ।। 4 ।।[2]

न विषं विषमित्याहुस्ताम्रमेव महंद्वष ? (महद्विषम्) ।
विषो[3]यमेकदोषः स्यात् शुल्वं चाष्टगुणं मतम् ।। 5 ।।

शुकतुण्डं किंशुका[4]भं छेदे रक्तं तथैव च ।

विशिष्टशुद्धिः

---

1 श्लोकोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते

2-2 इदं सार्धश्लोकद्वयं घ पुस्तके नोदृघतम् । (सम्पा.)

3 घ. विषे यदेक

4 घ. शुकामक्षे

[1]अशिल ? (अम्लि)काया रसे वल्ला एकविंशति(तिकैः)पुटैः[1] ।। 6 ।।

ध्रुवं कालिका ? (मा-) रहिते (रहितं) ताम्रपत्रं (ताम्रं) भवति सत्वरम् ।

मारणविधिः

ताम्रं च रेतवत्कृत्वा ष[2]र्पट (खर्परे) ज्वालयेद् बुधः ।। 7 ।।

पुनर्नवारसेनाथ पञ्च दद्यात्पुटानि तु ।
एवं ताम्र (ताम्रं) भवेच्छुद्धं रसायनकरं परम् ।। 8 ।।

[3]गन्धके-(कें)° गुलकाभ्याञ्च[3] शुल्वपत्राणि लेपयेत् ।
[4]अज्या-(अजा-) दुग्धाग्नियोगेन[4] तम्रभस्मि ? (ताम्रभस्म) कलिं[5] भवेत् ।। 9 ।।

वान्ति भ्रान्ति क्लमं रेचं न करोति कदाचन ।।

(ताम्रभस्मगुणाः)

वह्निञ्च दीपयति नाशयते च कुष्ठ
मर्शांसि पाण्डुनि च शोफसु दुस्तरांश्च ?।
(पाण्डुनिचयानथ शोफरोगान्?) ।
अन्यांश्च दुस्तरगदामपि (मपि) कायजातं (जातान्)
ताम्रं सि-(स) दा (हरति) सेवनया नस्य (नरस्य) ।। 10 ।।

1-1 घ. मृदुरा स्निग्धतापे भवति तत्कध्यं बहुल्येण ?

2 घ. षर्पटे   3-3 ख. गन्धकै गोलकाभां   4-4 घ. दुग्धानि योगासां ?

5 ख. किलिं

° इङ्गुलं = हिङ्गुलं

(अशुद्धताम्रदोषाः)

शुल्वञ्च शोषयति देहजसप्तधातून्,

पुष्णाति रोगान्हरते च कान्तिम् ।

विशेषतः कुष्ठरुजां करोति,

पाकेन हीनं हरते तदायुः ।। 11 ।।

वातं ? (वान्ति ?) विरेकं कुरुते नराणां,

मूर्च्छा(मूर्च्छां) विधते(त्ते) हरेते(हरते) च शुक्रम्

नानारुजानां सहजं च कर्ता ? (कर्तृ)

अ(ह्य-)शुद्धशुल्वे(ल्वं) पि च (किल) जीवहारी ।। 12 ।।

(मारितताम्रस्य गुणाः)

ताम्रं रसं ?(सरं) लघु स्वादु शीतं पित्तकफापहम् ।

रोपणं पाण्डु-कुष्ठार्श-श्वासं श्वयथुकासजित् ।। 13 ।।

(यशदमारणम्)

[1]यशदं रेतवत्कृत्वा गोमूत्रेण च कल्कितम् ।

उदयास्तमनं ? (उदयास्तंरवे)र्यावत् ततः शुद्धं भवेद् भृशम् ।। 1 ।।[1]

सीसस्य शुद्धिः

[2]सीसकञ्च तथा कृत्वा वोग्द्रूम ? (वरोद्गम)रसः(रसैः)पुटान्[2] ।

दद्यादष्टाम्लयोगेन क्षालयेत्तत् प्रयत्नतः ।। 1 ।।

मारणम्

नागपत्राणि कुर्वीत पलत्रितयमात्रतः ।

त्रिफलां सैन्धवं [3]शुष्कां ? (मुक्त्वा ?)कवच्यां ज्वालयेद्भिषक्[3] ।।2।।

[4]नागस्य सिद्धिरेतस्मात् नान्यस्मात् सिद्धिरिष्यते[4] ।।

1-1 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

2-2 'कृत्वां वीरकणवीरद्रुमरसः पुटाना' इति ख. पुस्तके पाठः

3-3 घ. 'मुष्का चकज्वरनयेद्भिषक्' ?

4-4 घ. 'नागस्य सिद्धिरेनस्मानस्मात्सिद्धिरिष्यते ।'

(नागभस्मविधिरपर:)

[1]शिलया रविदुग्धेन नागपत्राणि लेपयेत् ।
मारयेत्पुटयोगेन निरुत्थं जायते ततः ।। 3 ।।[1]

नागभस्मगुणा:

नागश्च नागशतमेव (तुल्य-) बलं करोति,
व्याधिञ्च नाशयति चाशु बलिं (बलं) करोति ।
प्रधानधातोरपि वर्द्धन: स्याद्-
भुजङ्गराजो हरते च मृत्युम् ।। 4 ।।

पाकहीन-नागवङ्गदोषा:

पाकेनहीनौ लघु नागवङ्गौ
[2]कुष्ठौदरारशेहहुलमकाकौ ?[2]
(कुष्ठोदराशींसि च गुल्मकारकौ ?)।
[3]विषोपमौ बाधयत्तौ ? च पात्रं ? (बाधयतश्च वह्नि)[3]
आपाक(मपाक)सिधौ ? (सिद्धौ ?) विततश्च ? (तनुतौ च)
दाहम् ।। 5 ।।

सीसकगुणा:

सीसं रङ्गगुणं गे ? (ज्ञे-)यं विशेषान्मेहनाशनम् ।। 6 ।।

सीसकदोषशान्तिः

पाठायुक्तं पिबेन्मूलं कारवेल्ली(कारवेल्ल्या)जव[4]स्तथा(यवस्य च)।
नागदोषं शमं याति पारदस्याप्यशंसय (सयम्) ।। 6 ।।

1-1 श्लोकोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ।
2-2 घ. 'कृत्ष्मोदराशेहिद्गुल्मकारकैः ?'.
3-3 घ. 'विषोपमो वाधपनौ च पातं ?'
4 घ. भव

इति जसद(यशद) शोशा(सीसक-) मारण(मारणम्) ।।

पित्तलमारणम्

पित्तलं रेतवत् क-(कृ-)त्वा गुञ्जापर्णरसमुर्हुः ।
सप्तः ?(तप्तं)कृत्वा पुटं दत्वा तत(ततः)सुवं(शुद्धं)च पित्तलम् ।।1।।

पिष्टो गन्धार्क(गन्धोऽर्क-)दुग्धेन तेन लेप्यं च पित्तलम् ।
ततो [1]भूया(मूषा-)पुटे दत्वा[1] पचेहुज ? (पचेद्रज-)पुटेन तत (तत्) ।। 2 ।।

एवं पुटत्रयेणैव भस्मारं भवति ध्रुवम् ।। 3 ।।

पित्तलभस्मगुणाः

सुरीतिरेवं च शुभप्रदा स्यात्
प्रधानधातु[2]र्वल ? (धातोर्नव ?) यौवनायाः[2] ।
मांससि (स्य) वृद्धि कुरुते नराणां
प्रोत्साहनं कायबलं करोति ।। 4 ।।

निहन्ति मृत्युं ध[3]न ?(हत ?) एव सिद्धो[4]
वपु (पो-) र्दृढत्वं कुरुते च रूपम् ।
रुजापहर्ता बलवीर्यकर्ता
रसायने कर्मणि श्रेष्ठ उक्तः[5] ।। 5 ।।

पित्तलगुणाः

पि[6]त्तलो (लं) हि हिमं रूक्षं कटूष्णं कफवातनुत् ।
कासश्वासज्वरं हन्यात् योगवाहि रसायनम् ।। 6 ।।

इति पित्तलमारणम्

1-1 घ. भूपः पूटे घृत्वा
2-2 घ. खल पोचनाचः ?'
3 घ. घना 4 घ. सिद्धेः 5 घ. 'युक्ताः'
6 घ. पीत्तलोह

भूनागताम्रविधिः

ग-[1](गं-)डूपदाख्यानादाय [2]सर्षोशुष्यस्तथा ? परान्[2] ।
(सर्वे शोष्यास्ततः परम् ।)
[3]तन्मध्यां मृत्यका ? (तन्मध्यमृत्तिकां)सर्वामुद्धरेद् बहुयत्नतः[3] ।। 1 ।।

घटं सछिद्र(द्रं) तत्पूर्णं समुद्र (द्रं) तं निधापयेत् ।
चुल्यां तदुपरि शनै अग्निं प्रज्वालयेत्सुधा (सुधीः) ।। 2 ।।

[4]तद्रुतिः नु (तद्द्रुतिं तु ?) समादाय टङ्कणेन युतं धमेत्[4] ।
अनेनैव विधानेन नागताम्रं शुभं भवेत् ।। 3 ।।

[5]तत्स्थं पटं वह्निनैव(नापि) न[6] प्रज्वालयति ? (प्रज्वलति) सत्वरम् ।
ज्ञेयं सुसिद्धं तत् [7]सर्वैः दृष्ट्वान्तु[7] प्रत्ययो महान् ? ।।
(दृश्यते प्रत्ययो महान् ?) ।। 4 ।।°

इति नागताम्रम्

---

1 गंड ० 2-2 घ 'तषा सुष्यास्तथा परान्'
3-3 घ 'तन्मध्यमृत्यसर्वां च मुद्धरेत् षल यत्नतः'
4-4 घ. 'तद्रुतिः त्तुं समायादायः टंकणेन पुध्रमेत् ।'
5 घ. तत्संपुटं 6 घ. त्त 7 ल. सैव इष्टा ते
° असंभाव्योयं योगः । अतोत्र तन्त्रान्तरोक्ता विधयो निदर्श्यन्ते —(सम्पा.)
'वर्षासु वृष्टिसंक्लिन्ने भूगर्भे सम्भवन्ति हि ।
जन्तवः क्रिमिरूपा ये ते भूनागा इति स्मृताः ।।
चतुर्विधास्तु भूनागाः स्वर्णादिखनिसंभवाः ।
स्वर्णादिभूमिसम्भूताः दुर्लभास्ते प्रकीर्तिताः ।।
ताम्रभूमिभवाः प्रायः सुलभाः गुणवत्तराः ।
ताम्रभूमवभूनागान् गृहीत्वा यत्नतः पुमान् ।।
गुडगुग्गुललाक्षोर्णा-मत्स्यपिण्याक-टङ्कणैः ।
दृढमेतेश्च संयोज्य मर्दयित्वा धमेत्सुखम् ।।
मुञ्चन्ति ताम्रवत् सत्त्वं तद्वत्पक्षाः सुबर्हिणाम् ।।'
वृ.यो.त., र.रा.सुं. च

(वङ्ग-शोधन-मारणम्)

शोधनम्

अथ वङ्गरसं क(कृ-)त्वा भृङ्गराजरसैः पुटान् ।
अष्टौ दद्यात्प्रयत्नेन वङ्गशुद्धिर्भवेत्ततः ।। 1 ।।

"गुग्गुलं टङ्कणं लाक्षा मज्जा सर्जरसं पुनः ।
ऊर्णा-गुञ्जा-क्षेत्रमीनमस्थीनि शशकस्य च ।।
गुडमध्वाज्यपिण्याकं तुत्थं पेष्यमजाजलैः ।
सर्वंतुल्यं च धान्याभ्रं भूनागमृत्तिकापि वा ।।
मेलयेन्माहिषैः पञ्चदध्यादिगोमयान्तिकैः ।
दृढं मर्द्यं वटीं कुर्यात् कर्षमात्रन्तु शोषयेत ।।
गोष्ठीयन्त्रे धमेद्गाढमङ्गारैश्च चिरोद्भवैः ।
त्रिवारं धूमनादेवं सत्त्वं पतति निर्मलम् ।।
असाध्यान्मोचयेत् सत्वान मृत्तिकादेश्च का कथा ।।"

(र. र.)

'भस्त्राद्वयेन हठतो ध्मातव्यं पञ्चमाहिषसुबद्धम् ।
दत्त्वा दशांशस्वर्जिकपटुटङ्कणगुञ्जिकाक्षारान् ।।
तद् गच्छति कठिनत्वं मुञ्चति सत्त्वं स्फुलिङ्गकाकारम् ।
मुक्तानिकरप्रायं ग्राह्यं तत्काचमधिवर्ज्यं ।।
....

वज्राभ्रकान्त-सस्यक-माक्षिकप्रमृतिसकलधातूनाम् ।
पातयति सत्त्वमेषां पिण्डी ध्माता दृढाङ्गारैः ।'

र. हृ. तं.

"ऊर्णा-टङ्कण-गुड-पुर-लाक्षा-सर्जरसैः सर्वधातुभिः पिष्टैः ।
छागीक्षीरेण कृता पिण्डी शस्ता हि सत्त्वविधौ ।।"

र. हृ. तं,

'चूर्णितसत्त्वसमानं त्रिंशत्पलमादरेण सङ्गृह्य ।
टङ्कणपलसप्तयुतं गुञ्जापलत्रितय-योजितं चैव ।।
तिलचूर्णकिट्टपलैर्मत्स्यैरालोडय द्विरंश युक्तैश्च ।
गोधूमबद्धपिण्डी गोपञ्चकभाविता बहुशः ।।
कोष्ठकधमनविधिना तीव्रं भस्त्रानलेन तत्पतति ।
सन्द्रवति चाभ्रसत्त्वं तथैव सर्वाणि सत्त्वानि ।।'

तत्रैव

भस्मविधिः

क(कृ-)त्वा वङ्गस्य पत्राणि कर्पटेन तु धारयेत् ।
चिञ्चाश्व[1]त्थ(त्थौ)रजोर्द्धार्द्ध ? (तथोर्द्धधः ?) र्वस्त्राणि ? (तेनैव)
परिवेष्टयेत् ।। 2 ।।

मृत्युका-(मृत्तिका-)लेपनं पश्चात्परितो यत्नतः सुधीः ।
वह्नि(वह्नौ) गजपुटे दत्त्वा ततस्तस्मात्समुद्धरेत् ।। 3 ।।

भस्मीभवति तत्सर्वं शङ्खचूर्णनिभं भवेत् ।।

अन्यविधिः

दूर्वारसेनावलिप्ते (लिप्तं) लोहपात्रेऽथवा क्षिपेत् ।
लोह-दार्व्या (दर्व्या) द्रवं वङ्गं च-(चा-)लितं भस्मतां गतम् ।। 4 ।।

तृतीयविधिः

कारोषद्वयमध्ये च वङ्गापत्राणि धारयेत् ।
वह्नौ गजपुटं दद्याद्भस्मीभवति वङ्गकम् ।। 5 ।।

चतुर्थविधिः

पलाशद्रवयोगेन वङ्गपत्राणि लेपयेत् ।
तालेन पुटितं पश्चान्म्रियते नात्र संशयः ।। 6 ।।

वङ्गगुणाः

आयु (आयुः) प्रदाता बलवीर्यकर्त्ता
रा (रो-) गापहर्ता मदनस्य कर्ता ।
वङ्गः समानो नहि किंच्य ? (कश्चि-) द[2]न्यो
रसायने कर्मणि श्रेष्ठ उक्तः ।। 7 ।।

---

1 घ. चिंचाश्वत्थरयो द्वै
2 घ. ० दस्ति

वङ्‌गं लघु शरं (सरं) रूक्षमुष्णं मेहकफ-क्रमात् (क्रिमीन्) ।
हन्ति पाण्डुं महाश्वासं दृश्य ? (दृष्ट ?) मीषत्तु पित्तलम् ।। 8 ।।

वङ्गदोषशान्तिः

वङ्गदोषप्रशान्त्यर्थं सरपुंखा-ह्नि ? (दि ?) भक्षणम् ।। 9 ।।

इति रांग (रङ्ग-) मारणम् ।

(लोहमारणम्)

शुद्धिः

लोहं च रेतवत्कृत्वा तिदू ? (तिन्दु-) वल्कलजैः रसैः ।
पुटे ? (पुट-) द्वादशमात्रेण कवची ? (कवच्यां) वह्नियोगतः ।। 1 ।।

सर्वं रसाञ्जनं ? (रसायने) जोज्यं (योज्यं) लोहे (लोहं) सुधं (शुद्धं) च धीमताः (धीमता) ।

(अन्यविधिः)

सारं च रेतव (वत्) कुर्यात् टंकणद्रावयोगतः ।। 2 ।।

[1]सौवीरेण ततः कुर्यात् प्रक्षालनमतन्द्रितः ।

(मारणम्)

आयसं रेतवत्कृत्वा क्षालयेदमयारसैः ।। 3 ।।

पुटैर्जम्बीरनीरेण शोषयेदातपे मुहुः ।
जम्बुवल्कलनीरैर्वा अ (ह्य-) र्जुनस्यापि वा रसे (रसैः) ।। 4 ।।

○ [2]हिंस्राजटारसैर्वापि सारं सञ्जायते तथा (तदा) ।○
पङ्किलं जायते लोहं वह्नियोगेन शोषयेत् ।। 5 ।।

---

1 सौवीरेण = काञ्जिकेन

2 हिंस्रा = जटामांसी

○—○ घ. हिंस्राजटारसैर्वापि सारसं प्रायते तथा ।

निर्गुण्डीरसयोगेन पञ्चाशत्पुटमात्रतः ।
सोभन ? (शोभनं) या(जा)यते दिव्यं सर्वभेषज्यकर्मणि ।। 6 ।।

लोहः सिन्दूरमेवं स्यात् प्रयोगे दुर्लभो नृणाम् ।

अन्य मारणविधिः

शुद्धमायस-खङ्गेन (खड्गस्तु) गन्धपारदयोः (कौ) तथा ।। 7 ।।

वानरीं च जटायुक्तां मर्दयेद्वि[1]धिपूर्वकम् ।
असि (असे) सम्यक् लेपेन ? (सम्यक्प्रलेपेन) सूर्यसन्मुख ?
(सूर्यसम्मुखतां) तापयेत् ? (नयेत्) ।। 8 ।।

द्रवन्ति (द्रवते) सहसा खड्गः सत्यं गुरुवचो यथा ।
पेषयेच्च पुनस्तानि पश्चात्मारयेत्सुधीः ? ।। 9 ।।

(लोहमारणविधिस्तृतीयः)

सत्यो न (नु)भूतो योगेन्द्रैः क्रमोऽन्यो लोहमारणे ।
कथ्यते रामराजेन कौतूहलधियाऽधुना ।। 10 ।।

शुद्धस्य रसराजस्य भागो भागद्वयं बलेः ।
द्वयोः समं सारचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ।। 11 ।।

यामद्वयं ततो खल्वं (गोलं) स्थापयेत्ताम्रभाजने ।
आच्छाद्यै रण्डजैः पत्रैरुष्णो यामद्वयाद्भवेत् ।। 12 ।।

त्रिदिनं धान्यराशिस्थं तत्ततो मर्दयेद् दृढम् ।
रजस्तद्वस्त्रगलितं जले तरति हंसवत् ।। 13 ।।

(सर्वलोहमारकगणः)

छिलहिण्टीमृता (छिलहिण्ट्यमृता-) हिंस्राजटाऽर्कक्षीरकन्यकाः ।
घ्नन्त्याशु सर्वलोहानि गगनस्यैव का कथा ।। 14 ।।

---

1 विधिपूर्वकम्—विधिरत्र न प्रदर्शिता । असेर्द्रवत्वं अनयारीत्याः कमं सम्भवतीत्यपि विचारणीयम् । (सम्पा.)

(लोहभस्मगुणाः)

आमवातहरणे (हरणो) ऽतिशोफहा
पाण्डुमेहरुचि ? (गर ?) नाशनोऽगदः ।
दुष्टकुष्ठवलिपलितनाशनं (न-)
श्चायसोऽपि ज्वरमृत्युघातकः ॥ 15 ॥

(अशुद्धलोहदोषाः)

आयुप्र[1]हारी (आयुष्प्रहारी) गदकारकोऽयं
यदाप्यशुद्धो भवते ? किलायसः ।
करोति कायस्य अपाटवं च
हृदि प्रपीडां जनयेच्च दारुणाम् ॥ 16 ॥

(लोहस्य गुणाः)

लोहं केश्यं गुरु स्वादु कषायं कफपित्तनुत् ।
शीतं नेत्रहितं रूक्षं बलदं वातलं सरम् ॥ 17 ॥

शोफकुष्ठप्रमेहार्शः गरपाण्डुक्रिमीञ्जयेत् ॥ 18 ॥

(अपथ्यानि)

कूष्माण्डं तिलतैलं च माषान्नं राजिकां तथा ।
मद्यमशल(-मम्ल-)रसं चैव त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥ 19 ॥

इति सार-लोह-मारणम्

(मण्डूरशोधन-मारणम्)

पुरातनं समादाय किट्टं लोहसमुद्भवम् ।
अक्षा (अथां ?) गारैर्धमेद्वह्नौ विभीतकसमुद्भवैः ॥ 1 ॥

---

1 घ. आयुर्विहारी

काष्ठपात्रे गवांमूत्रपूर्णे तत्सप्तधा क्षिपेत् ।
चूर्णयित्वा तथाऽऽलोड्य त्रिफलायाः कषायकैः ।। 2 ।।

गोमूत्रेण पुनः सिक्तं युक्त्या गजपुटे पचेत् ।
तत उध्दृत्य तच्चूर्णं मण्डूरं सिद्धमादिशेत् ।। 3 ।।

अथ लोहमलं शुद्धं कृत्वा काञ्जिककल्कितम् ।
क्षालयेद्वारिणा धीमांस्तथा वै शोधयेद् बुधः ।। 4 ।।

(मण्डूरगुणं)

यत्किट्टं तद्गुणं ज्ञेयं विशेषात्पाण्डुनाशनम् ।
सारे यद्वर्जितं प्रोक्तं तत्किट्टेऽपि सदा बुधैः ।। 5 ।।

इति किट्टमण्डूरमारणम्

(माक्षिकशोधनमारणम्)

माक्षिकस्य त्रयो भागा भागैकं सैन्धवस्य च ।
मातुलुङ्गद्रवैर्वाऽथ जम्बीरोत्थद्रवैः पचेत् ।। 1 ।।

चालयेल्लोहजे पात्रे यावत्पात्रं सुलोहितम् ।
भवेत्ततस्तु संशुद्धि स्वर्णमाक्षिक मिछति (मृच्छति) ।। 2 ।।

पुनः

स्वर्णमाक्षिकचूर्णन्तु सम्पुट्याम्लद्रवैर्दिनम् ।
तत एरण्डतैलं तु (तैलात्तु) द्रक्तं (रक्तं) गजपुटे भवेत् ।। 3 ।।

(रौप्यमाक्षिकशोधनम्)

कर्कोटकी मेषशृङ्गीद्रवैर्जम्बीरजैर्दिनम् ।
भावयेदातपेद्रौप्यमाक्षिकं शुद्धति ध्रुवम् ।। 4 ।।

(माक्षिकगुणाः)

हरेद्वमिं चोग्रमनेकरूपं तथा च मृत्युं हरते च माक्षिकम् ।
रोगांश्च नाशयति (वै) प्रवलं च हृद्यं
मन्दाग्निहानि वृणिविष्टन्तनेत्ररुक् ।।
([1]मर्शांसि मेहमरुचिं क्षयकामलांश्च ?) ।। 5 ।।

(अशुद्धमाक्षिकदोषाः)

मन्दाग्निं बलहानिं च व्रणविष्टम्भनेत्ररुक् ।
कुरुते माक्षिकं मृत्युमशुद्धं नात्र संशयः ।। 6 ।।

(माक्षिकगुणाः)

माक्षिकं तुवरं वृष्यं स्त्रयं लघु रसायनम् ।
चाक्षुष्यं कुष्ठशोफार्शो-मेहवस्त्यर्तिपाण्डुताम् (हृत्)।। 7 ।।
व्यवायं(यि) कटुकं हन्ति रक्तोदरविषक्षयान् ।।

इति माक्षिकमारणम्

"इति श्रीयोगशास्त्रे योगज्ञाने ग्रानंदसिधिकृते
श्ववर्णरूप्यमाक्षिकसोधनमारणम्"

(तुत्थशोधनम्)

तुत्थकं काञ्जिकेनाग्नौ भावये-च्छुद्ध(च्छुद्धि)मिच्छति(मृच्छति) ।
पुटैर्दग्ध (पुटं दध्ना) पुटं क्षौद्रैर्देयं तुत्थविशुद्धये ।। 1 ।।

शुद्धतुत्थस्य गुणा

तुत्थकं लेखनं भेदि कण्डूकुष्ठविषापहम् ।
कफक्रमिहरं तद्वद् अन्य ? (वाम्यं) चाक्षुष्यमुत्तमम् ।। 2 ।।

इति तुत्थकशोधनम्

---

1 चि. पा. पाठोऽयं लभ्यते

(अभ्रकशोधनामारणम्)

अभ्रकजातयः

श्वेतं पीतं तथा कृष्णमभ्रकं त्रिविधं पुनः ।
पिनाकं नागकं भेकं वज्रं जात्या चतुर्विधम् ।। 1 ।।

आद्यत्रयमशुद्धं स्याद्वज्राकारं तदुत्तमम् ।
पिण्याकदलवदग्नौ (पिनाकं दलवच्चाग्नौ) लक्षयेदभ्रकं पुनः ।। 2 ।।

उच्चै-म(र्म)ण्डूक-वप्रागो ? (वद्भेकं) नागं फूत्कारवत्तथा ।
कृष्णाभ्रं वज्रवज्जातं श्रेष्ठमेवं पुनर्धमात् ।। 3 ।।

(शोधनम्)

कृष्णाभ्रकं धमेदग्ना वाति ? (वाज ?) क्षीरे विनिक्षिपेत् ।
भिन्नपत्रं च तत्कृत्वा तन्तु-(त[1]ण्डु-)लीयाम्लजैर्द्रवैः ।। 4 ।।

भावयेदष्टयामं च एवं(ह्येवं) शुधिति(शुद्धयति) चाभ्रकम् ।

(मारणम्)

धान्याभ्रकं समादाय कषा[2]यैश्च विशोधयेत् ।। 5 ।।

ततो मद्यं द्रव्यैरेषां शुष्कं गजपुटे पचेत् ।
कौमारी रविदुग्धं च जम्बूत्वक् बदरी जया ।। 6 ।।

[3]हरडै आमलौ रावरारोह ?[3] (हरीतक्यामलक्यक्ष-वटाङ्कुर-कषायकैः)।

जयन्ती दाडिमीपत्रं जम्बीरस्वरसं तथा ।। 7 ।।

---

1 तण्डुलीयो मेघनादः—'चौलाई' इति लोके

2 अभ्रशोधने: –वज्राभ्रकं वह्नितप्तं निक्षिपेत्सप्तसप्तधा ।
गोदुग्धे त्रिफलाक्वाथ्ये काञ्जिके सुरभीजले ।।
शुद्धिमायाति मलतः प्रक्षिप्तं वा त्रिधा त्रिधा ।।' (र.रा.सु.)

3-3 पाठोऽयं घ. पुस्तते नोपलभ्यते ।

एतैर्विमर्दयेदभ्रं प्रत्येकं च त्रिधा त्रिधा ।
एवं श[1]तपुटैः सिद्धो ?(सिद्धं) निश्चन्द्रो (न्द्रं) जायते ध्रुवम् ।। 8 ।।

अभ्रं मरिचक्षौद्रा[2]भ्यामकैकंन (मेकैकेन ?) तु मारयेत् ।
तन्निश्चन्द्र (न्द्रं) भवेन्नू[3]नं र[4]सायनकरं परम्[4] ।। 9।।°

द्वितीयविधिः

[5]बहुछिद्रमयं पात्रं कृत्वा चुल्यां निधापयेत् ।
पुनर्नवारसैः पश्चादभ्रकं मर्दयेद्रटं ? (द्दृढम्)[5] ।। 10 ।।

रोटिकां यत्नतः कृत्वा छिने (छिन्ने) पात्रे निधापयेत् ।
तस्योपरि नि-(पि-)धायाथ वह्निं प्रज्वालयेत्सुधीः ।। 11 ।।

पञ्च सप्ताथ वाराणि काञ्जिकेन च सिञ्चयेत् ।
यामत्रयाग्नियोगेन [6]सिन्दूराकारमभ्रकम्[6] ।। 12 ।।

[अभ्रकमारचतुष्षष्टि-वनस्पतीनां नामानि (सहस्रपुटविधिः)]

'दुग्धं खेर्वं वटदुग्धवज्रि-कुमारिकानामनि[7]लारितिक्ता ।
मुस्ता-गुडूची-विजया-त्रिकण्ट-वार्त्तावि[8]नी-पर्णिद्वयं ग्रहघ्नाः ।।

सिद्धार्थको वै खरमञ्जरीणां वटप्ररोहो ह्यजशोणितञ्च[9] ।
बिल्वाग्निमन्था[10]ग्निसतिन्दुका[11]नां हरीतकी पाटलिकासमूहैः ।।

---

1 घ. सप्त
2 घ. क्षौद्राभ्यां 3 घ. भवेद्दृढं 4-4 पाठोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ।
° अस्पष्टोऽयं पाठः ।
5-5 घ. पुस्तके अस्य श्लोकस्याभावः ।
6-6 'यामत्रयाग्नियोगेन' अतः परं ख. पुस्तके परपृष्ठास्याभावः
टि. अपूर्णश्चाऽस्पष्टोऽयं योगः । अतोऽत्राऽस्माभिर्नानाग्रन्थोक्तानि चतुष्षष्ट्यभ्रक-मारकवनस्पतीनां नामानि प्रदिश्यन्ते-यैश्च सहस्रपुटभ्रकं संजायते । (सम्पादकः)
7 अनिलारिः = एरण्डमूलम् 8 वार्त्ताकिनी = बृहती 9 ग्रहघ्नः = रक्तसर्षपः
10 अग्निः = चित्रकः 11 तिन्दुकः = तेंदू इति लोके

गोमूत्र-धात्री-कलिवृ[1]क्ष-कु[2]म्भी-तालीसपत्रं च सतालमूली ।
वृषाश्वगन्धामु[3]निभृङ्गराज-रम्भाजलं सार्द्रसुसप्तपर्णम् ॥

धत्तूरलोध्रं च सदेवदारु-वृन्दा[4]-सदूर्वाद्वय-कासमर्दैः ।
मरीचकं दाडिमकाक[5]माची-सशङ्खपुष्पी-न[6]त-नागवल्ली ॥

पुनर्नवा मण्डुकपर्णिका च इन्द्रायणी-भार्ङ्गिसदेवदाली ।
कपित्थलि[7]ङ्गी-कटुकिंशुका[8]नां कोषा[9]तकीमूषकपर्ण्यनन्ताः:[10] ॥

मीनाक्षिका-कारवि-तैलपर्णी-कु[11]म्भीतथार्द्रा सशतावरीणाम् ।
एभिश्च तोयैः स्थितखल्वमध्ये विघर्षयेच्छुष्कभवं तथैव ॥

वनोत्पलानां पुटमग्निशीतं पुनः पुनः खल्वतले विघर्षयेत् ।'
एभिः क्रियां षोडशवारमेवं वल्लीजलानां पुटमारभेच्च ॥

निश्चन्द्रगोपारुणरङ्गतुल्यं भस्मामृतं दिव्यरसायनञ्च ।
नानानुपानैरजरामरत्वं शरीरिणां सेव्यमिदं वरिष्ठम् ॥

गुणैः सहस्रावधिसेवकानां समस्तरोगघ्नमिदं प्रसिद्धम् ॥
(रा.रा.सु., चि.पा., आ.प्र. च)

(अभ्रकगुणाः)

अभ्रं गुरु हिमं बल्यं कुष्ठमेहत्रिदोषनुत् ।

---

1 कलिवृक्षः = विभीतकः   2 चि. पा. 'कुम्भी' स्थाने तुम्बीतिपाठः
3 मुनिः = अगस्त्यः
4 वृन्दा = तुलसी   5 काकमाची = मकोय इति लोके   6 नतं = तगरं
7 लिङ्गी = शिवलिङ्गी   8 = किंशुकः = पलाशः
9 कोषातकी = तोरइ इति लोके   10 अनन्ता = दुरालभा
11 कुम्भी = जलकुम्भी—काई इति लोके

अशुद्धाभ्रकदोषाः

अशुद्धाभ्रं निहन्त्याशु वध ? (वर्द्ध-) येन्मारुतादिकम् ।
अहितं छेदयेद्यन्त्रं मन्दाग्निर्क्रिमिवर्द्धनम् ।। 13 ।।

इत्यभ्रकमारणम्

सत्वपातनविधिः

○ [1]धान्याभ्यन्तर ? निर्मूल्यं ? रसेनैव च मर्दयेत् ।
वदरीमूलसौवीर्जवीरस्य चसकं(?) ।। 14 ।।[1]

आतपे शोषयेदभ्रं यावत्तद्दृढतां व्रजेत् ।
मृद्भाण्डेऽथ विनिक्षिप्य कांजिकेन तु पूरयेत् ।। 15 ।।

तदधः स्थापयेद्भाण्डं तदधः कांस्यपात्रकम् ।
हेमन्ते कारयेद्विद्वान् नान्यथा तन्न ? (तच्च ?) सिद्ध्यति ।। 16 ।।

पुनः पुनः प्रदातव्यं सौवीरादिकमादरात् ।
पृथक्पात्रेऽथ तत्सर्वं प्रयत्नेन तु धारयेत् ।। 17 ।।

एवं कृते भवेत्सत्त्वं गगणाहुति ? (ह्वय ?) मद्भुतम् ।
माषमात्र नरो नित्यं प्रयत्नेन तु भक्षयेत् ।। 18 ।।

माषमात्रप्रयुक्तेन कलौ भवति निश्चलः ।। 19 ।।○

1-1 भ्रष्टोऽयं श्लोकः

○–○ पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते । अतिविचित्रोऽयं पाठः— यतोऽनेन विधिना सत्त्वं नैव सम्भवति (सम्पादकः) । अतोऽत्र अभ्रकसत्त्वपातन—

(मारिताभ्रकस्य गुणाः)

अभ्रं कषायं मधुरं सुशीत-मायुष्करं धातुविवर्द्धनञ्च ।
हन्यात् त्रिदोषं व्रणमेहकुष्ठं प्लीहोदरं ग्रन्थिविषक्रिमींश्च ।। 20 ।।

(मनःशिलाशोधनम्)

(अशोधितमनःशिलाया दोषाः)

[1]मनःशिला मन्दवलं च चून (नूनं)
करोति जन्तोऽशुभपाकहीना ।
मतकालानुबंधं ? कुरुते च मूत्रं
(मलस्य बन्वं किल मूत्ररोध)
सशर्करं कृच्छ्रगदं करोति ।। 1 ।।

(शोधनम्)

पचेत् त्र्यहमजामूत्रै (त्रे) र्दो (दो-) लायन्त्रे मनःशिला (लाम्) ।
भावयेत् सप्तधा पित्तैरजा-लै(याः)शुद्धिमिछति(मृच्छति)।। 2 ।।[1]

अथवा कूष्माण्डरसैः दोलायन्त्रे मनःशिला ।।

(शोधितमनःशिलाया गुणाः)

मनःशिला गुरुर्वर्ण्यो(र्ण्या) त्रिष्णो ? (सरोष्णा) लेखनीकटुः ।
तित्तत्र स्निग्धा विरकाचासकाशः ? (विषश्वास-कासभूत)कफास्रनुत्
।। 3 ।।

इति मनःशिलाशोधनम्

विधिः प्रदर्शितः—

'ऊर्णा सर्जरसञ्चैव क्षुद्रमीनसमन्वितम् ।
एतत्सर्वन्तु सञ्चूर्ण्य छागदुग्धेन पिण्डिका ।।
कृताध्माता खराङ्गारैः सर्वसत्त्वं निपातयेत् ।।'

1-1 ख. पुस्तके पृष्ठाभावादिदं श्लोकद्वयं न दृश्यते ।

(हरितालशोधनमारणम्)

धेनुमूत्रकुमारीभ्यां दोलिकायां च शोधयेत् ।
तत उत्द्धृत्य ताभ्यां च मर्दयेत् हरितालकम् ।। 1 ।।

रोटिकां ? कवचीयन्त्रे गजाख्ये ? (दहेत्तं ?) वालुकं ? (बालुका ?) दहेत् (वृतम्) ।
हरते सर्वदोषांश्च भेषजानामनुत्तमम् ।। 2 ।।

(हरिताल-गुणाः)

हरितालं कटु स्निग्धं कषायोष्णं विषं जयेत् ।
कण्डू-कुष्ठास्यरोगास्र-कफपित्तकचव्रणान् ।। 3 ।।

(अशुद्धतालदोषाः)

अशुद्धं तालमायुघ्नं कफमारुतमेहकृत् ।
पातं ? (तापं) स्फोटाङ्गसङ्कोचं कुरुते तेन शोधयेत् ।। 4 ।।

(भस्मविधिः)

तालकं दोलिकायन्त्रे गोमूत्रेण च शोधयेत् ।
कुमारीरसतो मर्द्य समभागो (गा-)ऽथ शु[1]क्तिकः (का) ।। 5 ।।

रोटिकां कारयेद्वह्नौ (ह्नि) दद्याद् गजपुटोद्भवम् ? (प्राज्ञः[2] सुयन्त्रके) ।
द्वादशप्रहरं यावत् ततस्तस्मात्समुद्धरेत् ।। 6 ।

[3]निर्गन्धञ्चापि निश्चन्द्रं निर्धूमञ्च परीक्षयेत् ।
गुञ्जाद्वयं भक्षणीयं नागवल्लीदला-न्वु ? (न्वि-) तम् ।। 7 ।।[3]

---

1 घ. मुक्तिका

2 पाठोऽयं र. यो. सागरादुद्धृतः तत्र योगोऽयं तालकेश्वररसनाम्नोपलभ्यते । अत्र तु भूधरपुटेन योगो निष्पादनीय इत्यस्माकं सम्मतिः । गजपुटापेक्षया हरिताले भूधर-पुटस्य ज्यायस्त्वात् । (सम्पा.)

3-3 पाठोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ।

मासमेकं द्वयं वापि दुग्धोदनं जितेन्द्रियः ।
हरते सर्वकुष्ठानि नाऽत्र कार्या विचारर्णात् ? (णा) ।। 8 ।।

इति हरतालशोधनम् (मारणञ्च)°

अथ पारदविधि

(पारदस्य जातयः कञ्चुकाः दोषाश्च)

चतुर्विधः पारदः स्याद् ब्राह्मणः क्षत्रियस्तथा ।
वैश्यः शूद्रोऽथ सप्तास्य कञ्चुकाः दोषविंशतिः ।। 1 ।।

योजयेत् पारदं प्राज्ञो ब्राह्मणो (णं) देहसिद्धये ।
रसायने क्षत्रवैश्यौ शूद्रं विष्टादि कर्मसु ।। 2 ।।

क्रमाच्छ्वेतोऽरुणः पीतोऽसितो वर्णश्चतुर्विधः ।।

(पारदमहत्त्वम्)

यो यु[1]ष्मा ? (यक्ष्मा-)ऽनिलकुष्ठदोषशमनः श्लेष्मापहो[2] मूर्च्छितः
पञ्चत्वं च[3] गतो ददाति निय[4]तं रा[5]ज्यं चिरञ्जीवित्त (तम्) ।
ब[6]द्धः खे गमनं करोति सततं विद्याधरत्वं तथा—
सोऽयं पातु यु[7]गे युगे[8]युगपतिः श्रीसूतराज प्रभुः ।। 3 ।।

° तालकस्योड्डयनशीलत्वादयं प्रयोगोऽनयारीत्या न सिद्धयति । अतः कुमारीरस-मर्दितं शुद्धहरितालस्याग्नौ क्षारमन्तराऽवस्थानं दुर्घटमतस्तदाऽऽश्रयो ग्रहीतव्य इति रहस्यम् । (सम्पादकः)

1 घ. पत्र 160. या जुष्मा घ. पत्र 175 योजुष्मा 2 ख. श्लेष्मापस्तो
3 घ. 160. गततो घ. 175. गगदो 4 घ. 175 निव्यतं 5 घ. 175. राजं
6 घ. 160. बद्ध 7. घ. 175. तथा 8 घ. 160., ख. जगपतिः

पारदः सर्वरोगाणां जेता[1] पुष्टिकरः स्मृतः ।
°सुज्ञैन सा[2]धितः कुर्यात् संधि[3]द्धं ? स (संसिद्धि) देहलोहयोः° ।।4 ।।

(पारदस्य पर्यायाः)

°रसेन्द्रः पारदः सूतो हर[4]जः सूतको रसः ।°
मुक[5]न्दश्चेति नामानि ज्ञेयानि रसकर्मसु ।। 5 ।।

एवं वर्णविभेदेन ज्ञातव्यः तत्त्वदर्शि[6]भिः ।
श्वेतकूपाद्रसेन्द्रः स्यात् ? पीतशीतसमुद्भवात् ? ।।
(ईषत्पीतो रसेन्द्रः स्यात् श्वेतद्वीपसमुद्भवः ?) ।। 6 ।।

अरुणो दरदसं[7]ज्ञः कृष्णो[8] ना[9]गसमुद्भवः ।

इति ज्ञातिवर्णभेदः

(पारदलक्षणम्)

अन्तः सुनीलो [10]बहिरुज्वलो यो[11]
मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः ।
शस्तोऽथ धूम्रः परिपा[12]ण्डुरश्च
चित्रो न योज्यो रसकर्मसिद्धौ ।। 7 ।।

दोषहीनो यदा सूतस्तदा मृत्युरुजापहः ।
साक्षादमृत-मेष ? (तुल्योऽयं) दोषयुक्तो रसो विषम् ।। 8 ।।

---

1 घ. 175 येनां 2 ख. साधिते °–° पाठोऽयं घ. 175. नोपलभ्यते ।
3 घ. 160. मसिद्धं
°–° पाठोऽयं घ. 175. नोपलभ्यते
4 घ. 160. हरडा 5 घ. 160. मूकन्द
6 घ. 160. दर्शिनी, 175 दर्शिनः
7 ख., घ, 130. संज्ञो 8 ख. कृष्णा 9 घ. 175 गाग
10 ख. घ. घ बहि 11 घ. घ. या 12 घ. 160. पांडरम्यं घ. 175. पांडुरम्यं

पारदमहादोषाः

नागोवङ्गोमलोवह्निश्चा[1]ञ्चलयं च विष गिरिः ।
असह्याग्निर्महादोषाः नि[2]सर्गाःपा(र्गात्पा)-रदे स्थिताः[2] ।। 9 ।।

भुक्तः[3]? (भौमः) कुष्ठ[4]करः शि[5]लो-चय(च्चय)-भवो[5]
जा[6]-ड्यौ(ड्यं)वक्त? (मरुद्) द्वारियो ? (वारिजः[6]),
वान्ति-भ्रा[7]न्तिकर(करो) [8]स्तथा (तथाऽतिबलिनौ[8]
तौ नाग-वङ्गौ ध्रुव[9]म् ।
दो[10]षौ द्वौ गलगण्ड-गु[11]ल्मजनकौ
त[12]स्मादशुद्धो रसः[12],
नादे[13]यो गदितानि पूर्वमृषिभिः
[14]कर्माणि चाष्टादश[14] ।। 10 ।।

जाड्यं कुष्ठं दाद (दाह)-वीर्यनाशो (शे) मू[15]र्च्छा च जायते ।
मृ[16]त्युस्फोटाङ्ग-खञ्जाश्च कु[17]र्वन्त्यन्य ? (न्त्यष्टौ) क्रमा(क्रमात्)[17]
स्मृताः ।। 11 ।।

इति वर्णभेदः

---

1 ख. चाचलभं 2-2 घ. (160). निसर्ग्रा परिदो स्थितः, घ. 175. निसग्रा परदो स्थितः

3 घ. (175). मुक्ता 4 घ. 160. कुष्टकरः 5-5 घ. 175. सिलोचद्भवयो

6-6 घ. 160. पाड्यौ छद्वारियो 7 घ. 175. भांति 8-8 घ. 160, तथात्ति-र्वेलिनौ लौ 9 घ. 175. ध्रुवम् 10 घ. 160 दोषा 11 घ. 175. गुल्प-जनकौ 12-12 घ. 160 तस्मादुसुद्धो रसो 13 ख. नादेयां 14-14 ख. कर्मा चाष्टादशा, घ. 175. कत्नानि चाष्टादशाः

15 घ. 175 मूच्छां 16 घ. 175. मृत्युस्फोटामसंजा च 17-17 घ. 160 कुर्व-न्त्यान्य क्रमस्मृताः घ. 175. कुवत्यान्य क्रमाः स्मृताः

इति वर्णभेदः ?

स्वाभाविका(:) स[1]त्यगुणा (सन्त्यगुणा) रसेस्मिन्
[2]नागाऽ[3]हिवङ्गामलवह्निसंज्ञौ ।[2]
ना[4]गाद्भवेयुर्गलगण्डरोगाः
कुष्ठं च वङ्गान्मरणं विषे[5]ण ।। 12 ।।

मलेन मूर्च्छा दहनेन दाहो
[6]वीर्यच्युति स्याद्रसचञ्चलत्वात्[6] ।
जाड्यं [7]महत्कञ्चुकयोदराणि[7] ?
(जाड्यं गिरेः स्फोटचयोऽग्निभूत ?)
ततो विशुद्धोऽग्निमनो रसे[8]न्द्रः ?
(स्तस्माद्रसेन्द्रः सुधिया विशोध्यः ?) ।।13 ।।

इति पोटली पट[9]ली ?

पारदशोधने

(ऊर्ध्वपातनसंस्कारः)

दिनैकं म[10]र्दयेत्सूतं कुमारीसम्भवै[11]र्द्रवैः ।
तया[12](तथा) चित्रकजैः [13]क्वाथैर्मर्दयेदेकवासरम्[13] ।। 14 ।।

काक[14]माचीरसैस्तद्वद् दिनमेकं च मर्दयेत् ।
त्रिफलायास्तथा क्वाथै[14] रसो मर्द्य प्रयत्नतः ।। 15 ।।

---

1 घ. 160. सत्यणं घ. 176. सत्यण 2-2 घ. 176. नागामलवह्निसंज्ञो
3 'अहि'रित्यनेन विषं ज्ञेयम् । 4 घ. 160. नागोद्भवेयँ, घ. 176 नागाद्भवेयं
5 घ. 160. विषेसा
6-6 ख. 'वीर्यच्युति स्याद्रसकवलस्यात्', घ. 160. वीयं च्युतं स्वाद सक्कृत्त्वात्' स्या. घ. 176. 'वीर्यं च्युतं स्वाद-सक्कृत त्वात् 7-7 घ. 160, 176. महत्कं-चकपोदराणि 8 घ. 160, 176. रसेंद्रै
9 घ. 176. पटलीण
10 घ. (160) मर्दियं, घ (176) मर्दीय 11 ख. संमवे, घ 160 कुमारीरसं भवैद्रवै
12 ख. तजा, घ (160) तया 13-13ख. घ. (175) रसो मर्धि प्रयत्नतः
14-14 पाठोऽयं ख. घ (175) ग्रंथयोर्नोपलभ्यते

ततस्तेभ्यः पृथक् कुर्यात् सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः ।
ततः क्षिप्त्वा रसं खल्वे रसादर्धं च सैन्धवम् ।। 16 ।।

मर्दयेन्निम्बुकरसैर्दिनमेकम[1]नारतम् ।
ततो राजी रसोनश्च मुख्य[2]श्च नवसादरः ।। 17 ।।

एतं र[3]ससमैस्तद्वत् सूतो म[4]र्द्यस्तुषाम्बु[5]ना ।
°ततः संशोष्य (संशोध्य) चक्रा[6]भं कृत्वा[7] लिप्ता[7](लिप्त्वा) च
हिङ्गुना° ।। 18 ।।

द्वि[8]स्थालीसम्पुटे धृत्वा पूरयेल्लवणेन च ।
अ[9]द्यः (अधः)स्थाल्यां ततो मुद्रां दद्याद् दृढतरां भिषक् ।। 19 ।।

विशेषा[10]ग्नि (विशोष्याग्नि) विधायाद्योनिषिञ्चेदम्बुनोपरि ।
ततस्तु कुर्याती(कुर्यात्)तिप्तोग्नि(तीव्राग्नि)त[11]दधः प्रहरत्रयम् ।।20।।

एवं निपत्यया[12]त्पूर्वं (निपातनादूर्ध्वं)रसो दोषविवर्जितम्(तः) ।
अथो[13]द्ध्वं-पिठरीमध्ये लग्नो ग्राह्यो रसोत्तमः ।। 21 ।।

'काकमाची-रसैः सार्द्धं दिनमेकं तु मर्दयेत् ।
रसोन स्वरसैः सूतः नागवल्लीदलोत्थितैः ।।
त्रिफलायास्तथा क्वाथैः' इत्यधिकः पाठः रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे दृश्यते ।

1 ख. घ (160), घ (176) मनंतरं 2 घ. (160) मुखं च

3 घ (160) रसं समस्तद्वत् 4 ख. मर्द्यं, घ (176) मद्यं 5 घ (176) सुखाम्बुना

6 घ (176) चक्रानां 7-7 कृत्व लिह्यां

°-° अस्मिन् स्थाने घ पुस्तके 160 तमे पुटे 'छितं कृत्वा चर्णं युक्ताथ मेलयेत्' इति पाठः । अस्मात् परं तत्र पूर्वोक्त स्वेदाधिकारस्य कतिचित् श्लोकाः पुनरुक्ताः । पारदविषयकश्लोका अस्मात् परं तत्र नोपलब्धाः ।। (सम्पा.)

8 घ (176) अस्थाली 9 घ. (176) अथः

10 घ (176) विष्याग्नि 11 घ (176) तदर्धे

12 घ (176) निपत्ययत्यूर्द्धो 13 ख. अधोर्ध

दोषाः (मतान्तरेण)

मलदोषो भवेदेको द्वितीयो वह्निसंज्ञकः ।
विषदोषस्तृतीयः स्याच्चतुर्थो दर्पसंज्ञकः ।। 22 ।।

उन्मत्तः पञ्चमो ज्ञेयः पञ्चदोषा रसायने ।। 23 ।।

(सप्तकञ्चुकाः)

पाटली पटली भेदी दुर्गन्धी सन्धिविग्रही ।
आद्रवा तु लघु द्रावी सप्तैता कञ्चुकाः मताः ।। 24 ।।°

(पारदमलनाशनोपायः)

फलत्रिकं चित्रक-रक्तसर्पा ? कुमारिकन्या बृहती कषायाः ।
विमर्द्य सूतं त्रिदिनानि यावत् विमुंचित ? (विमुच्यते)
पञ्चमलादिदोषान् (षैः) ।। 25 ।।*

राज[1]वृक्षो मलान्हन्ति पावको हन्ति पावकम् ।
अङ्कोलश्च विषं हन्ति कुमारी सप्तकञ्चुहृत् ।। 26 ।।

वज्रा[2]र्क-ब्रह्मबी[3]जानि तुम्बि[4]नी वज्रकन्द[5]कम् ।
एवं सम्मर्दितः सूतो जहाति सप्तकञ्चुकम् ।। 27 ।।

° र. रा. सु. 'पर्पटी पाटली भेदी द्रावी मलकरी तथा ।
अन्धकारी तथा ध्वांक्षी विज्ञेयाः सप्तकञ्चुकाः ।।'
बृ. यो. त. (बौद्धसर्वस्वात्)—
"मृत्पाषाणजलाख्याश्च कालीका पालिका तथा ।
श्यामा कपालिका चेति पारदे सप्तकञ्चुकः ।।"

* "कुमारिकाचित्रकररक्तसर्षपैः कृतैः कषायैर्बृहती विमिश्रितैः ।
फलत्रिकेणापि विमर्दितो रसो दिनत्रयं सर्वमलैर्विमुच्यते ।।"
(र.रा.सुं., मा.प्र)

1 राजवृक्षः कृतमालः

2 वज्रः = सेहुण्डः 3 ब्रह्मबीजानि = पलाशबीजानि 4 तुम्बिनी = कटुतुम्बी

5 वज्रकन्दः = अरण्यसूरणः

इष्टिका-राजिका-गौ[1]री-गृहधूमा[2]ग्निसर्षपैः ।
अङ्कोटमूलैः सूतस्य व्रजेयः ? (संहेयाः) सप्तकञ्चुकाः ।। 28 ।।

(पारददोषहरद्रव्याणि)

रजनी-कनकद्राव-कुमारी-महिषीमलैः ? ।
भृङ्गराजाभयांकोल-चित्रमूल-सुराह्वयाः ।। 29 ।।

अपमार्गस्त्व[3]मी सर्वे रसदोषान्हरन्ति हि ।

(पारदबुभुक्षा ?)

अथवा नागवल्ली(ल्या) च सुराचैव (सुरया चैव)
विमर्दयेत् (मर्दयेत्) ।
अहोरात्रा(रात्र-)त्रयेणैव [4]ग्रासे धातुचर (चरं) मुखम्[4] ।। 30 ।।

(पारदभस्म लक्षणम्)

अर्द[5]धूत्वं ? (आर्द्रत्वं) च घन[6]त्वं च चापल्यं गुरु[7]तैजसम् ।
[8]पञ्च यत्र न विद्यन्ते[8] मृतं सूतं तदुच्यते ।। 31 ।।

(विषभेदा)

कालकूटो वत्सनाभः शृंटाक ? (शृङ्गिक-)श्च प्रदीपनः ।
हालाहलो ब्रह्मपुत्रो हारिद्रः सक्तुकस्तथा ।। 32 ।।

सौराष्ट्रिक इति प्रोक्ताः विष-भेदा अमीनव ।। 33 ।।

---

1 गौरी=कुमारी 2 घ. गृहधूमासि-
3 ख. समी
4-4 घ. 176. गृसेद्वार्डंचरं मुषं
5 घ. 176. अदत्वं 6 घ. 176. घनत्यं 7 घ. 176 गुडतैयसं
8-8 घ. 176, पंचपन विद्यते

(अथोपविषाः)

अर्क-सेहुण्ड-धत्तूर लाङ्गली-करवीरकाः ।
गुञ्जाऽहिफेना वित्येताः सप्तोपविषजातयः ।। 34 ।।

(पारदस्य छिन्नपक्षता)

एतेपि(एतैर्वि-) मर्दितः सूतश्छिन्नपक्षः प्रजायते ।
मुखं च जायते तस्य धातू च (धातूंश्च) ग्रसते त्वरात् ।। 35 ।।

(रसकशुद्धिः)

नरमूत्रश्च (त्रे च) गोमूत्रे सप्ताहं रसकं पचेत् ।
दोलायन्त्रेण शुद्धिः(द्धं) स्यादतः (ततः) कार्येषु योजयेत् ।। 36 ।।

रससिन्दूरविधिः)

सूतकं गन्धकं कुर्यात् समभागं सुकज्जलम् ।
नवसारं चतुर्थांशं कौमारीरसमर्दितम् ।। 37 ।।

काचकूप्यां विनिक्षिप्य सप्तवस्त्रयुतां मृदा ।
विलिप्य परितो वक्त्रे मुद्रां दत्त्वा च शोषयेत् ।। 38 ।।

अधः सच्छिद्रपिठरी-मध्ये कूपीं निधापयेत् ।
पिठरीं बालुकापूरैर्भृत्वा चाकूपिकागलम् ।। 39 ।।

शरावेण मुखं रुद्ध्वा वह्निं प्रज्वालयेच्छनैः ।
तस्मादप्यधिकं किञ्चित् षोडशं प्रहरं यतः ।। 40 ।।

रससिन्दूरकं सूतमधस्तिष्ठति निश्चितम् ।
भक्षयेद्रक्तिकाः पञ्च मरिचेन समं रसम् ।। 41 ।।

क्षुद्बोधकारकः प्रायः सद्यः कामाग्निदीपकः ।
ज्वरं प्रमेहं कासं च नाशयेदनुपानतः ।। 42 ।।

(द्वितीयविधिः)

पारदस्य चतुर्भागं त्रिभागं गन्धकस्य च ।
नवसादरैकभागः स्यात् चिकसी ? रसमर्दितः ।। 43 ।।

एकविंशत् पुटैस्तद्वत् ततः रक्तोत्पलद्रवैः ।
षोडश-प्रहरैरग्ने (प्रहरेष्वग्नौ) वधः सिन्दूरवद्भवेत् ।। 44 ।।

इति रससिन्दूरकरणम्

(रसकर्पूरम्)

पारदं सैन्धवं तुल्यं काशीशं चेष्टकारजः ।
सर्वतुल्यं च तत्सर्वं गाढखल्वे विमर्दयेत् ।। 45 ।।

कृत्वा डमरुकायन्त्रे वह्निं प्रज्वालये-च्छनैः ।
षोडशप्रहरं यावदूर्ध्वपातेन तिष्ठति ।। 46 ।।

अनेन विधिना नूनं रसकर्पूरकं भवेत् ।।

इति रसकर्पूरकरणम्

(पारदगुणाः)

देहस्य शुद्धिं कुरुते च पारदो
नानारुजं यो हरते सतूत्तमः ।
करोति वृधि (वृद्धि) बलपुष्टितेजसां
कल्पायुदेहं च करोति नूनम् ।। 47 ।।

(अशुद्धपारदविकाराः)

संस्कारहीनं(नः) खलु सूतराजो यः सेव्यते (सेवते) तस्य
करोति बाधाम् ।
देहस्य नाशं च करोति नूनं कुष्ठादिरोगाञ्जनयेन्नराणाम् ।। 48 ।।

(पारदगुणाः)

पारदः क्रिमिकुष्ठघ्नं (घ्नः) चाक्षुष्योष्णो रसायनम् ।।

समगगनसुजीर्णं सूतकं देहयोग्यं
प्रतिदिनमथ गुञ्जां भक्षते सोमवृध्या (यः स वृद्धया) ।
षडधिकदशमाषैर्मन्मथैकप्रवाहे(हो)
बलिपलितविहीनश्चन्द्रताराार्कजीवी ।। 49 ।।

मूर्च्छितो हरते व्याधीन् मृतो दारिद्रचनाशनम् ।
वद्धः खे चरतां याति पारदे गुण ईदृशाः (शः) ।। 50 ।।

[1]त्रिसिन्दूरं ? समं कुर्यान्मत्स्याक्षीरसयोगतः ।
सर्पाक्षीरसभावेन ? प्रमेहान्विंशतिं हरेत् ।। 51 ।।[1]

इति पारदस्य रससिन्दूर-सरकर्पूरकरणम्

अथ गन्धकशोधनम्

पीतं श्वेतं तथा कृष्णं कपोतं रक्तमेव च ।
तत्रादौ परिभाषोक्ता ? सिधिकाया(शुद्धिः कार्या)विचक्षणैः ।। 1 ।।

लौहपात्रे विनिक्षिप्य घृतमग्नौ प्रतापयेत् ।
तप्ते घृते तत्प्रमाणं क्षिपेद् गन्धकजं रजः ।। 2 ।।

विद्रुतं गन्धकं ज्ञात्वा दुग्धमध्ये विनिक्षिपेत् ।।

1-1 योगोऽयमसमीचीनः । (सम्पा.)

(गुणाः)

[1]गन्धाप्ता ? पलिमृप्युनाशनं ?[1]
[2]यथा भयानश्यति ? कानने मृगः ।[2]
यथा रुजो यान्ति हि देहसम्भवा ?○
....

गन्धकः कटुकः पीके वीर्योष्णः पित्तलो (पित्तलः) रस (सरः) ।
हन्ति कुष्ठक्षयप्लीह-[3]कफवाता-न्नशायनः (रसायनम्) ।। 4 ।।

गन्धकं त्रिफलायुक्तं गन्धाज्येनैव ? (गव्याज्येनैव)भक्षयेत् ।
तस्य नाना-तुजो(रुजो) हन्ति[3] यथा ? (यदा ?) सूतेन संजुते
(संयुतः) ।। 5 ।।

(अपथ्यम्)

रसं कषायं कटुकं तैलं मांस च काञ्जिकम् ।
क्षाराम्ललवणादीनि विदुरान्नं (वि[4]दलान्नं) विशेषतः ।। 6 ।।

(पथ्यम्)

यवषष्टिकगोधूमं घृतं क्षीरं सशर्करम् ।
एतद्भोज्यं सदा पथ्यमपथ्यं च विवर्जयेत् ।। 7 ।।

इति गंधक शोधनम्

1-1 घ. गंधतापलं घृता मृत्युनाशनं

2-2 घ. यथा भयान्न पश्यति कानने मृगः

○ अयमपूर्णः पाठो भ्रष्टरूपेणोपलभ्यते । मूले यथा लिखितस्तथैवात्र दर्शितः ।
(सम्पा,)

3-3 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते

4 घ. विटुरान्नं

(ह्रिङ्गुलशोधनम्)

दरदस्त्रिविधो ज्ञेयश्चर्मारः शुकतुण्डकः ।
हंसपादस्तु तत्रान्यः रसकर्मसु योजयेत् ।। 1 ।।

हिङ्गुलं माहिषीक्षीरैरम्लवर्गैश्च भावितम् ।
खरमूत्रेण वा दोला यन्त्रे शुद्ध्यति निश्चितम् ।। 2 ।।

(हिङ्गुलात् पारदनिष्कासनविधिः)

निम्बूरसैर्निम्बपत्ररसैर्वायाममात्रकम् ।
पृष्ट्वा (पिष्ट्वा) दरदमूर्ध्वं च पातयेत्सूतयुक्तितः ।। 3 ।।

ततः शुद्धरसं तस्मान्नीत्वा कार्येषु योजयेत् ।

(गुणाः)

हिङ्गुलं पित्तकफनुच्चाक्षुष्यं विषकुष्ठनुत् ।। 4 ।।

इति हिङ्गुलशोधनम्-पारदनिष्कासनविधिः (विधिश्च)

(वज्रमुद्रा)

[1]खडीखटिक[1] ? भस्माम्बु लवणैरथवा ध्रुवम् ।
कारीषभस्मलवणं द्वाभ्यां[2] मुद्रा प्रकीर्तिता ।। 1 ।।

विषशोधनं परीक्षणं च

विषानामथ सप्तानां शोधनं च परीक्षणम् ।
गोमूत्रे विषचूर्णन्तु सप्ताहं स्थापयेद् बुधः ।। 1 ।।

राजिकाविषमात्रेण फेनिलं च घनं पयः ।
भवत्येवं यदा कृष्णः कालकूटपरीक्षणम् ।। 2 ।।

1-1 ख. खटीखदिर. 2 घ. वज्र

[1]सुद्वादरे ? विषं क्षिप्तं ? करीषाग्नि प्रयोजयेत् ।
इक्षुदण्डेव लिप्तं वा ? योजयेद्रसकर्मणि ।। 3 ।।[1]

इति विषशोधनम्

शिलाजतुविधिः

हेमाद्याः सूर्यसन्तप्ताः स्रवन्ति गिरिधातवः ।
[2]यन्त्वासां (एतेषां) मृदुमृ[3]त्स्नं च यन्मलं तच्छिलाजतु ।। 1 ।।

हेम्नो वै रजत ? (रौप्यत-)स्ताम्रात्तथा स्यादायसादपि ।
गोमूत्रगन्धः सर्वेषां यथापूर्वमनुत्तमम् ।। 2 ।।

तत्र यत्कृष्णममलं स्निग्धं निश्शर्करं च यत् ।
गोमूत्रगन्धनि[3]लयं तत्प्रधानं प्रचक्षते ।। 3 ।।

(शोधनम्)

°सिलायतु (शिलाजतु)कुष्ट ? (दुष्ट-) कीटादोषोमसम ?
(कीटदोषोपशम) हेतवे ।

1-1 श्लोकस्यास्य कोऽभिप्राय इति न ज्ञायते । (सम्पा.)

2 ख. जघ्यास्य 3 ख. मृत्यां

3 घ. नीलं

°–° अतिभ्रष्टोऽयं पाठः । अतोऽत्र हारीतादि-पूर्वाऽऽचार्याणां मतान्यस्माभिर्निद-र्श्यन्ते—

'लोहस्थितं निम्बगुडूचिसर्पिर्यवैर्यथावत् परिभावयेत्तत् ।
सन्तानिका-कीट-पतङ्गदंश-दुष्टौषधी दोषनिवारणाय ।।'
(हारीतः)

''बहिर्मलमपाकर्तुं केवलजलेन प्रक्षालनं कर्तव्यं, ततस्तदन्तर्गतमृत्तिका सिकता-दिदोषदूरीकरणाय—

व्याधिव्याधितसात्म्यं समनुसरन् भावयेदयः पात्रे ।.......... ....

ष[1]ट्वापांत्तज्यथोवा वह्नौ सर्षपामृतवह्निकैः[2] ? ।। 4 ।।
[3]सैद्यवैस्तु मयेद्धर्मे[3] निर्दोषंश्च दता ध्रुवम्[4] ।।०

(अन्यविधिः)

मु[5]ख्यंसिलाजीतु सिलां इति सूक्ष्मखण्डं प्रकल्पितम् । ?
(मुख्यां शिलाजतुशिलां सूक्ष्मखण्डप्रकल्पिताम् ।)
निक्षिप्यात्युष्णपानीये यामैकं स्थापयेत्सुधीः ।। 5 ।।

मर्दयित्वा ततो नीरं गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ।
[6]स्थापयित्वा च मृत्पात्रे धारयेदातपे बु०धः ।। 6 ।।

उपरिस्थं घनं यस्य (यत्स्यात्) तत्क्षिपेदन्यपात्रके ।
धारयेदातपे तस्मादुपरिस्थं घनं नयेत्[6] ।। 7 ।।

एवं पुनः पुनीत्वा (पुनर्नीत्वा) द्विमासाभ्यां शिलाजतु ।
भूयात्कार्यक्षमं वह्नौ क्षिप्रं (क्षिप्तं) लिङ्गोपमं भवेत् ।। 8 ।।

....फलत्रयस्य यूषेण पटोल्या मधुकस्य च ।
शिलाजमेवं देहस्य भवत्यत्युपकारकम् ।।"
(वाग्भटः)

"उष्णे च काले रवितापयुक्ते व्यभ्रे निवाते समभूमिभागे ।
चत्वारि पात्राण्यसिता-यसानि न्यस्यातपे तत्र कृतावधानः ।।
शिलाजतु श्रेष्ठमवाप्य पात्रे प्रक्षिप्य तस्माद् द्विगुणं च तोयम् ।
उष्णं तदूर्ध्वं क्वथितं च दत्वा विशोधयेत्तन्मृदितं यथावत् ।।
ततस्तु यत्कृष्णमुपैति चोद्ध्वं संतामिकावद्रविरश्मितप्तम् ।।"
(अग्निवेशः)

1 ख. खटाया 2 घ. वह्निकौ
3-3 घ. संद्यषैर्व्वंपयैद्धंमौ 4 ध्रर्वात्
5 घ. मूखं
6-6 पाठोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ०ख. शुचौ

[1]निर्धूमं च ततः शुद्धं सर्वकार्येषु योजयेत्[1] ।
अधः स्थितं च यच्छे[2]लं तस्मिन् [3]नीरं विनिक्षिपेत् ।। 9 ।।

[4]विमर्द्य धारयेद् घर्मे पूर्वं-चैवतन् (वच्चैवत-)न्नयेत्[4] ।। 10 ।।

(अन्यविधिः)

[5]शिलाजितु स्निक्र[6]मं[5] ? [6]द्रावयेदग्निनाजले[6] । ?
(शिलाजतु समानीय) द्रावयेदग्निना जले ।
कंव[7]लंन ? (कम्बलेन ?) दृढं सप्तवार (रं) [8]यूतां (पूतं)
तु कारयेत्[8] ।। 11 ।।

तनोरं (तन्नीरं) लोहजे पात्रे नीत्वा वह्नौ पुनः पचेत् ।
सान्द्रीभूतं भिषग्नूनं सर्वकार्येषु योजयेत् ।। 12 ।।

(शिलाजतुगुणाः)

शिला[9]ज-तुष्णं (तूष्णं) कटुकं योग[10]वाहि-रसायनम् ।
[11]स्वेद-प्रमेहवातार्श-कुष्ठा[12]श्मोदरपाण्डुताम् ।। 13 ।।

हन्ति श्वासक्षि उन्मादं (श्वासक्षयोन्मादं) रक्तशोफकफ-
क्रमात् ? (क्रिमीन् ?) ।
दध्य (दधि)-मत्स्यकुलत्था च (कुलत्थांश्च)
कपोतान्परिवर्जयेत् ।। 14 ।।

इति शिलाजतुकरणम् ।

1-1 पाठोयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते 2 घ. च्छेषं 3 घ. शरीरं च
4-4 पाठोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते
5-5 ख. घ. ग्रन्थयोः 'शिलाजतु स्निक्ष्मं' इति खण्डितः पाठो दृश्यते ।
6-6 घ. 'द्रावयेदग्निना जले' इति पाठस्तूत्तरश्लोकगः, स्वस्थानभ्रष्टतयात्र निवेशित इति भाति ।
7 घ. कंठलेन 8-8 घ. दूतां त्रि कारयेत्
9 घ. शिलाजतूलं 10. घ. योवाही 11 ख. छेदी 12 घ. कुष्ठार्शो

(विविधद्रव्याणां शोधनम्)

तक्रेण क्षालितौ शुद्धौ नवसादर टङ्कणौ ।
कौमारी-दुग्धसम्पक्वं जयपालं च शुधिति (शुद्धयति) ।। 15 ।।

त्रिफला त्रिकटुर्वह्नौ भर्जनाच्च विशुद्धयति ।
मृल्लिप्तं भस्मना चाग्नौ लवणं शोधयेद् बुधः ।। 16 ।।

(नीलाञ्जनशोधनम्)

[1]नीलाञ्जनं चूर्णयित्वा जम्बीररसभावितम् ।
दिनैकमातपे शुद्धं भवेत्कार्येषु योजयेत् ।। 17 ।।

एवं गैरिककासीसं टङ्कणानि वराटिका ।
शङ्खं तोरी च कङ्कुष्ठं शुद्धिमायान्ति निश्चितम् ।। 18 ।।

सौवीरं ग्राहि मधुरं चाक्षुष्यं कफवातजित् ।
हिध्माक्षयश्रनुश्रीतं ? (सिध्मक्षयास्रहृच्छीतं ?)
श्रोतोजनमयंदृशं ? (स्रोतोञ्जनमपीदृशम्)[1] ।। 19 ।।

इति नीलाञ्जनशोधनम्

(नखशुद्धिः)

नखानुष्णजलैः क्षाल्य(?) भर्जयित्वा प्रयत्नतः ।
गुडु(गुड-) पथ्याम्बुनादेयं (ह्येवं) शुद्धयतीति न संशयः ।। 20 ।।

(मुक्ताप्रवालादिरत्नानां शोधनम्)

शोधयेद्दोलिकायन्त्रे यं यं त्वा ?(जयन्त्या)श्व(स्व-)रसेन च ।
[2]मणिमुक्ताप्रवालादि यामैकं शोधनं (धितं)भवेत्[2] ।। 21 ।।

1-1 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।
2-2 घ. मणिमुद्राणि च मारयेत्

कुमार्या तण्डुलीयेन स्तन्येन च निषेचनात् ।
प्रत्येकं सप्तवेलां च तप्ततप्तानि कृत्स्नशः ।। 22 ।।

मौक्तिकानि प्रवालानि तथा रत्नान्यशेषतः ।
क्षणाद् विविधवर्णानि म्रियन्ते नात्र संशयः ।। 23 ।।

उक्तं माक्षिकवन्मुक्ता-प्रवालानि च मारयेत् ।
वज्रवत्सर्वरत्नानि शोधयेन्मारयेत्तथा ।। 24 ।।

(स्वर्णसिद्धिः)

पारदं सीसकं गन्धं कुनटी तच्चतुष्टयम् ।
[2]बीजपूररसेनैव गाटं (गाढं) दिनचतुष्टयम्[2] ।। 25 ।।

लेपयेत्तारपत्राणि चतुर्विंशद्दिनानि च ।
टङ्कणेन धमेदग्नौ चेद्रुक्मस्य (भवेद्रूप्यस्य) काञ्चनम् ।। 26 ।।

(सर्वधातुमारणम्)

तालेन वङ्गं दरदेन तीक्ष्णं नागेन स्वर्णं शिलया च नागम् ।
गन्धाश्मना चापि निहन्ति शुल्वं तारं च मक्षिकजलेन-
पुनर्नभूयात् ।। (माक्षीकवरेण° हन्यात्) ।। 27 ।।

(क्षारविधिः)

क्षारवृक्षस्य काष्ठानि शुष्कान्यग्नौ प्रदीपयेत् ।
नीत्वा तद्भस्म मृत्पात्रे क्षिष्मा (क्षिप्त्वा) नीरे चतुर्गुणे ।। 28 ।।

विमर्द्य धारयेद्रात्रौ प्रातरच्छं जलं नयेत् ।
तन्नीरं क्वाथयेद्वह्नौ यावत्सर्वं विशुद्धति (ष्यति) ।। 29 ।।

2-2 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।
° पाठोऽयं वसवराजीयादूद्धृतः । (सम्पा)

ततः पात्रात्समुद्धृत्य क्षारं ग्राह्यं सितप्रभम् ।
[1]न्चूर्णाभं, प्रतिसार्यं स्यात् (पानीयं) क्वाथावस्थितं ?
(क्वाथवत् स्थितम्) ।। 30 ।।

इति क्षारद्वयं धीमानुक्तकार्येषु योजयेत् ।।[1]

(ख) 'इति श्रीयोगशास्त्रे योगज्ञाने आनंदसिधिकृतं शोधनमारणविधि सर्वधातूनां समाप्ता ।'०

(इति पञ्चदशोऽधिकारः)

1-1 पाठोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ।
० घ. "इति श्रीआनंदभारतीविरचिते आनंदमालायां धातु-शोधन-मारण-प्रकरणम्"।

द्वितीयं परिशिष्टम्

(1) शशिधर तैलु

छड टं 11, नागकेशरि टं 11, पत्रज टं 11, उशीर टं 11, इलाइची टं 11 कर्पूर टं 33, अगरु टं 44 चन्दनु टं 88 इनकौ चूर्ण करि पानी सिहु वाटि करि तेलु सेर 11 मध्य घालीजौ पानी मनु 1 सेर चारु तेलु महि घालि करि पचाइजौ पीछहु भांडे महि घालि कर्पूर टं 5, कस्तूरी टं 11, चन्दनु सेर 2 वाटि छानि करि राषीजौ, इन्ह तेलु अ[1]स्णु ? कीजौ, याकौ नाउ शशिधर तैलु ।

(2) ल्येष्ट ? (ज्येष्ठ) आषाढ चुपडई कीजौ

मोथा टं 17, आडी ? (बडी इलाइची ??)टं 17, वालौ टं 17, सिलारसु टं 17, कूवु ? (कूठ ?) टं 17, लवंगु टं 17, बडी इला[2]इची टं 17, वा[3]लौ टं 17, चंपौ टं 17, पुष्प कंकोल टं 17, तगरु टं 17, नान्ही इलाइची टं 17, उशीर टं 17, सरेसी टं 17, तमालपत्र टं 17, तेनु सेर 10, ए औषध पाणी स्यौ वाटिजहि, पानी मनु 6 घालि करि औटीजइ, जब तैलु सिद्ध भयौ होइ तब लीजौ, पाछौ भांडे घालीजौ, ता मध्य कस्तूरी टं 10, कर्पूर टं 5, इन्ह करि वासीजौ, पाछौ चंदनु कौ चूर्णु सेर 1 घालि करिनी लेपु घुलानु वासिजौ, याकौ नाउ ससिघरु तेलु कहिजौ ।

(3) क्वार कार्तिकु चूपरनु की जौग

व्योना ? नान्हौ वाटिजौ टं 12 ता पाछौ सुगन्धतंलु घालि करि वाटिजौ, नष टं 4, वालौ टं 4, मौथा टं 4, तज टं 4, ये वस्तु घालि वहुरि वाटीजहि ता पाछौ सर धूपीजौ, ता पाछे कूंकूम टं 4 घालिजौ, या कौ नाउ रविकरु कहिजौ ।

(4) कूका ? प्रियङ्गु तगक (तगर ?) पुष्कर

मूलु कंकोलसुगंधा विहाइनि लवंग पद्माखु तज चौरकु त्वक्पत्री

---

1 अभ्यङ्ग ?

2-3 ये दोनों द्रव्य दो बार आये हैं ।

प्रथमः परिशिष्टः

रसरत्नाकरमतेनोक्तं रसप्रकरणम्[1]—(ख. ध. पुस्तकयोः)

(१) [क्रव्यादरसः]

द्विपलं[2] गन्धकं शुद्धं[3] [4]द्रावयित्वा प्रयत्नतः[4] ।
[5]पारदं पलमानेन[5] मृतशुल्वायसी ततः ॥१॥

कर्षमानेन तन्मिश्रं ? (सम्मिश्र्य) पञ्चाङ्गुलदले[6] क्षिपेत्[6] ।
ततो[7] विचूर्णं (विचूर्ण्यं) मानेन (यत्नेन[7]) निक्षिप्याऽऽयसपात्रके[8] ॥२॥

चूल्यां[9] (चुल्ल्यां) वै न्यसेत्तेनैतत्[9] ? (निवेश्य यत्नेन) पाचयेन्मृदुनाग्निना ।[10]
[12]पात्रमात्रं हि जंवर (जम्बीर-) रसं सम्यक्[11] प्रपूरयेत्[11] ॥३॥[12]

सञ्चूर्ण्य[13] पञ्चकोलस्य[14] कषायैश्चाम्लवेतसैः[15] ।
भावना (नाः) खलु[16] दातव्या[:] पञ्चाशत्पुटमात्रया ॥४॥

भृष्टा[17]-टङ्कणचूर्णेन तुल्येन[18] सह मेलयेत् ।
तदर्द्धं कृष्णा[19]लवणं सर्वं तुल्या मरीचिका[19] ॥५॥

---

1 प्रकरणोऽयं क. पुस्तके नोपलभ्यते । 2 ख. द्वपलं 3 शुघं 4-4 ख. द्रावयित्वात्प्रंयत्नत् 5-5 ख. पारवं फलमानेन 6-6 घ. दृले छ्िपेत्—ख. दले क्षेपेत् 7-7 घ. ततोपि चूर्ण्यंमानेव 8 ख. पात्रिकं 9-9 ख. चूल्हां विन्यस्यतेनैतत 10 ग्र. पाचयेतन् 11-11 घ. सम्यक्य पूरयेत् 12-12 यो. र. पात्रं पात्रं०, वृ. यो. त. पल मात्रं, भा. प्र. जम्बीरस्य रसं तत्र पूतं पलशतं क्षिपेत् 13 ख., घ. संचूर्णं 14 ख. पंचकोलस्या, 15 भा. प्र. आम्लवेत-स्थाने 'चुक्रस्य सहितेन च' इति पाठः 16 ख. खल 17 ख. भ्रष्ट 18 ख. तुल्येसह 19 ख.० मरीचका 19-19 यो. र. तदर्द्धं पंचलवणैः सार्वसाम्य मरीचकैः ।

सप्तधा[1] भावयेत्प[2]श्चा-च्चरणकक्षार[3]वारिणा ।
ततः संशोष्य संपीष्य? (सम्पेष्य) कूपिकाजठरे क्षिपेत्[4] ॥६॥

अत्यर्थं गुरुमांसानि गुरुभोज्या[5]न्यनेकशः ।
[6]भुक्ता (भुक्त्वा) हि कण्ठपर्यन्तं चतु[7]र्वल्लमितं रसम् ॥७॥

यद्वम्ल[8] ? (पट्वम्ल-) तक्रसहितं पिवेत्दनुमानतः ? (तं पिबेदनुपानतः) ।
क्षिप्रं[9] तज्जीर्यतां[9] याति (तज्जीर्यते भुक्तं ?) जायते दीपनं पुनः ॥८॥

गोदोहमात्रं [10]तत्सर्वं द्रवी[11] भवति नान्यथा[12] ।
[13]रसः क्रव्यादि ? (क्रव्याद-) नामाय[13] (नामायं) प्रोक्तो[14] मन्थान-भैरवी (भैरवैः[14]) ॥९॥

[15]सिंहेन ? (सिंहल-)-क्षोणिपालस्य भूरिमाँसप्रियस्य च ।
द्विष्टौ ? ग्राम्य समासाद्य भैरवानंदसेविना ?[15] ॥१०॥

[16]कुर्याद्दीपन-सुद्धतं ? (मुद्धतं)[17] च पवनं दुष्टामयोच्छोषणं[17]-
तुंदस्छूल्य (तुंदस्थौल्य-) निबर्हणो गदहरः शूलर्ति-(शूलार्ति-) निर्मूलनः ।
गुल्म-प्लीह-विनाशनो बहुरुजं (जां) बिश्वंसनः (विध्वंसनः) संततं (स्रंसनः)
सेव्यो ग्रन्थिमहोदरापहरणः क्रव्यादनामा रसः[16] ॥११॥

---

1 ख. शतधा 2 ख. भावयेपश्च्या 3 ख. क्षारि० 4 ख. क्षपेत् 5 ख. भोज्यानिनेकछा: 6 ख. ये मिदं 7 ख. चतुर्वमिदं 8 ख. कटुम्ल 9-9 ख. क्षिप्रां तजीयतां 10 ख. तत सर्वं 11 ख. डवि 12 ख. नानिथा 13-13 ख. रस कारव्याधिनामोय 14 ख. प्रोक्ता ग्रंथानभैरकं 15-15 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते । यो. र. अस्मिन्स्थाने,

'सिंहलक्षोणिपालाय भूरिमांसभुजे पुरा ।
पुनर्भोजनकामस्य भैरवानन्दयोगिनः ॥
ततः क्रव्यादकः प्रोक्तो दृढं प्रत्ययकारकः'' ॥ इति पाठः

16-16 पाठोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते, 17-17 यो. र. पवनजे देहे परं शोषणम् ।

टीका:— शोध्यो गन्धक टं २०, शोध्यो पारो टं १०, मृत ताम्र टं[1] ५, (मूल में कर्षमान = २।। टं) मारो सारु टं[2] ५ (मूल में लोह भी २।। टां है) इन चौहन की एरण्ड के पात विषै पर्पटी करौ लोहे कौ भाडौ जंमीरी को रस सेर[3] ऽ५ टंक २५ अग्निमुख रस परिपक्व भरा, पीपरि, पीप्पलीमूल, चव्य, चितौ सुठी इन्ह के क्वाथ की पुटे[4] १२५ अरु अमलवेत की पुट ५०, ता पश्चात् सर्व समान भृष्ट सुहागा मेलिजौ पश्चात् सब ही से आधौ सौचरु मेलिजौ (अन्य ग्रंथों में सौवर्चल के स्थान पर पञ्चलवण का पाठ है) वाहुरी सब की समान मरिच मेलिजौ, ता पाछै चना की लोनी की पुटै औटिकरि सूखे चूक छानि कूपी मध्य राखीजौ (घ. में चणकक्षार की ७ भावनाएं व ख. में मूलपाठ में सौ भावनाएं कही गई हैं। प्राय: सभी अन्य ग्रंथों में केवल ७ ही भावनाएं कही गई हैं।) रत्ती[5] १२ खवाइजौ अनूपानु पान कौ, पीपरि के निंबु चा ? (या) तक्र स्यौ दीजौ। इति क्रव्यादरस: ।।

(२) अग्निकुमारो रस:

कर्पूरञ्च[6] लवङ्गञ्च चित्रकं चव्य[7]कन्तथा।
दाडिमाम्लं विशेषेण[8] शृङ्गवेरञ्च रेणुकाम्[9] ।।१०।।

एतानि समभागानि सूक्ष्म[10]चूर्णानि कारयेत्[10] ।
यवक्षारं[11] तथा स्वर्जी[12] टङ्कणं लवणानि च ।।११।।

---

1 ख. टं ४ 2 ख. टं ४ (यदि १ पल ख. व घ. के टीकाकारों की मान्यतानुसार १० टांक है तो निश्चित ही १ कर्ष २।। टांक ही होगा - न ४ टां होगा न ५ टां), 3 मूल में जंबीरी का रस १ पात्र कहा गया है। चरकोक्त मानानुसार वह ४ सेर व शार्ङ्गधरोक्तमानानुसार वह ३ सेर १६ तोला होगा। ख. के टीकाकार जंबीर रस सेर १० जलाने की बात कहते हैं व घ. के टीकाकार ५ सेर २५ टं. जंबीररस लेना बताते हैं (४) मूल पाठ में पञ्चकोल और अम्लवेत के पुटों की संख्या ५०-५० है। 5 ख. में मात्रा १ रत्ती कही गई है। मूल पाठ में ४ वल्ल की मात्रा निर्दिष्ट है। कलिङ्ग मानानुसार 'त्रिगुञ्जो वल्ल उच्यते'। अत: अन्य ग्रंथकारों ने भी १।। माशा ही कहा है।

6 ख. करचूरं 7 ख. चविमेव 8 ख. नि च 9 ख. रेणुक 10 ख. सूक्ष्मचूर्णेन कारएतु 11 ख. जवखार 1 ख. सार्जी ।

त्रिकुटा[1] त्रिफला लोहं[2] सर्वमेव द्विभागिकम्[3] ।
[4]जम्बीरनिम्बुनीरेण[5] दिवसत्रयभावितम्[6] ।।१२।।

तथा[7]ऽमृतारसेनैवं[7] मर्दितं चाम्लवेतसैः[8] ।
चणकाकारमात्रेण[9] दीयते रस उत्तमः[10] ।।१३।।

नाम्ना ह्य[11]ग्निकुमारोऽयं स्वामिकार्तिकनि[12]र्मितम् ।।

अरोचकं वह्निविशेषमान्द्यं[13],
गुल्मं[14] प्रमेहं विनि[15]हन्त्यवश्यम् ।
चुक्रेणयुक्तं खलु पक्ति[16]शूलं,
सूर्योदयाद्वृ[17]द्धमतीवजातम्[17] ।।१४।।

श्वास[18]कासकफातङ्कनाशनः[19] प्राणवर्द्धनः ।
[20]कटुत्रयेण दत्तश्चेत्[20] पित्तारोचकनाशनः ।।१५।।

*-सूतराजभवं भस्म रक्ति[21]कार्द्धं प्रदीयते ।
एवं चूर्णानुपानेन वैद्यः कौतु[22]कमाभजेद् ।।१६।।*

टीकाः— जौवखारु । साजी । सुहागौ । भूज्यो । सीधो । सौचल । विड्. । समडी । सांभरि । त्रिकुटा । त्रिफला । सार । आगिली औषध सौं दूनी मात्रा लीजै ही ।। कचूर (कपूर) । लवंग । चीतौ । चव्य । अनारदाणा । ? (मूल पाठ में जम्बीरनिम्बुनीरेण दिवसत्रय भावितं

---

1 ख. त्रिकुट 2 ख. लोह 3-3 ख. द्विविधभागिकम् 4 र. यो सा. यवानी 5 र. यो. सा. नीराभ्यां 6 ख. दिवसतर्यंभवितं 7 ख. मृतारसेनैव 8. ख. चाम्लवेतसैं 9-9 ख. चणकक्षारमात्राभि 10 ख. चूर्णमुत्तमं ।

11 ख. अग्नि 12 ख. निर्मिततं 13 ख. माद्यं 14 ख. गुल्म-प्रजेदं 15 ख. बिनहंत्य 16 ख. सूलं 17 ख. द्विद्विमतीवजाता 18 ख. श्वासकासकफातका 19 ख. त्रासनं 20-20 ख. देयं त्रिकुटकं चैव 21 ख. रक्तिवार्द्यं 22 ख. वंद्यकोवुकमातजेद् ।
-—'सूतराजभवं .... कौतुकमाभजेत्', पाठोऽयं ग्रन्थ-ग्रन्थेषु नोपलभ्यते । योगोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ।

है—अतः 'अनारदाणा' यहां नहीं होना चाहिये । "जम्बीरीनींबू" की तीन दिन भावना देवें ऐसा पाठ होना चाहिये) आमलवेतस । आदौ । (मूल पाठ में अमृता = गिलोय व आमलवेतस की भावना कही गई है) रेणुका मात्रा समानु । जंबीरी के रस की भावना दिन ६॥ नींब (नींबू) के रस की भावना दिन ३॥ टंक १ चूंकनी स्यौ दीजै । सूल जाई ।। त्रिकटु के अनुपान ते । अरोचकादि जाइ । मारे पारै की आधी रत्ती के अनूपान गोदोहमात्र ? भोजन द्रवीभूत होइ ।। ईति अग्निकुसोरो रस ? ।। (इति अग्निकुमाररसः)

(३) [पञ्चामृतरसः[1]]

अभ्रकं पारदं चैव ताम्रं लोहं च वङ्गकम् ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।।१।।

सर्वव्याधिहरो ह्येष रसः परमदुर्लभः ।।

इति सर्वव्याधिहरपंचामृतरसः

[टीका:—अभ्रक भस्म, पारद भस्म (रस सिन्दूर) ताम्रभस्म, लोहभस्म और बङ्गभस्म, ये सम भाग ले श्लक्ष्णचूर्ण बनालें । रोग-दोष व रोगी के बलाबल को देख कर इसे प्रयुक्त करे । यह सभी व्याधियों को नष्ट करने वाला परमदुर्लभ रस है ।]

(४) इच्छाभेदीरसः[2]

शुण्ठीमरिचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम् ।
जैपालत्रिगुलं (जैपालस्त्रिगुणं) दद्यात्सर्वमेकत्रचूर्णितम् ।।१।।

इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात् सितया सह दापयेत् ।
धावन्तश्चूलिकात् पीत्वा (यावन्तश्चुलुकाः पीतस्)
तावद्वेगान् विरोचयेत् (तावद्वारं विरेचयेत् ।) ।।२।।

तक्रोदनं च दातव्यमिच्छाभेदी यथेच्छया ।
दोषाः कदाचित्कुप्यन्ति जिता लङ्घनपाचनैः ।।३।।

---

1 योगोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते । 2 योगोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

ये तु संशोधनैः शुद्धाः न तेषां पुनरुद्भवः ।
बालवृद्धावतिस्निग्धः क्षतक्षीणो-तषश्वयः (भयान्वितः) ॥४॥

श्रान्तस्तुडार्त (स्तृषार्तः) स्थूलश्च गर्भिणीस्त्री नवज्वरी ।
नवप्रसूतानारी च मन्दाग्निश्च मदात्ययी ॥५॥

शल्यार्दितश्च पुरुषो न विरेच्यो विजानता ॥

इति इच्छाभेदी रसः

[टीकाः—सोंठ, काली मिरच, शुद्धपारा, शुद्धगन्धक व सुहागा सभी समभाग, शुद्ध जयपाल सोंठ से तिगुना, इनको विधिवत् पीस कर रख छोडे। यह इच्छाभेदी रस है । २ रत्ती इस रस को मिश्री के साथ शीतल जल से पिलाना चाहिये । जितने चुल्लू पानी इसके साथ पिया जावेगा उतनी ही वार रेचन होगा। छाछ और भात पथ्य में देना चाहिये । लङ्घन व पाचन औषधियों से जीते गये दोष तो पुनः प्रकुपित हो सकते हैं किंतु वमन-विरेचन रूप संशोधन द्वारा बाहर फेंक दिये गये दोषों की पुनरुत्पत्ति नहीं होती है ।

किन्तु बालक, वृद्ध, अतिस्नेहनकर्मकृत, क्षत, तज्जन्य क्षीणता, भयभीत, थका व्यक्ति, तृषार्त, स्थूल शरीर, गर्भिणी, नवज्वरी, नवप्रसूता, जिसकी अग्निमंद होगई हो, मदात्ययी व किसी शल्य से पीडित पुरुष को विरेचनार्थं अयोग्य मान कर, अनुभवी चिकित्सक को उन्हें इच्छाभेदी आदि से विरेचन नहीं कराना चाहिये ।]

(६) सन्निपातार्णवरसः[1]

विषु टं २ मरिच टं २ नौसादर टं २, मुर्दारसिंगु टं २ नीलोथोथो टं २ साजी टं २ सुहागी टं २ कपीला टं २ गौ के मूत्र सौं वांटि छाणि गोली बांधीजहि चना प्रमाण सनिपातक छया ? छिबांरौ ? वातव्याधि कह मनुष्य के मूत (मूत्र) स्यौं संधि संधि गठिया वाऊ नीकी होह अचेतु मूर्च्यौं (मूर्च्छित ?) नीको होइ इति संनिपातार्न्नवरसु ॥

1 यह योग ख. ग्रंथ में नहीं मिलता ।

(६) लोकनाथरसः[1]

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत् ।
तथा गन्धस्य भागौ द्वौ कुर्यात्कज्जलिकां तयोः ।।१।।

सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिक्षिपेत् ।
भागैकं टङ्कणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ।।२।।

तथा शङ्खस्य खण्डानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् ।
क्षिपेत्सर्वे (र्वं) पुटस्थात्त (स्यान्त-)श्चूर्णं (र्ण-) लिप्तशरावयोः ।।३।।

गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पुटेजपुटेन वा (पचेद्गजपुटेन च) ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ।।४।।

षड्गुञ्जासम्मितं चूर्णमेके-(को) नत्रिंशमू (दू-) षणैः ।
घृतेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ।।५।।

क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारे क्षये तथा ।
अरुचौ ग्रहणीरोगे कार्श्ये मन्दानले तथा ।।६।।

काश्य-(कास) श्वासेषु [गुल्मेषु] लोकनाथरसो हिता (हितः) ।
तस्योपरि घृतान्नं च भुञ्जीत कवलत्रयम् ।।७।।

मञ्चे क्षणेकमुत्तानः शयीतानुपधानकै (के) ।
अनम्ल (अनम्ल-) मन्नं सघृतं भुञ्जीत मधुरं दधि ।।८।।

प्रायेण जाङ्गलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ।
सदुग्धभक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ सान्ध्यभोजने ।।९।।

सघृतान्मुद्गवटकान् व्यञ्जनेष्वेव चारयेत् ।
तिलामलककल्केन स्नापथे (येत्) सर्पिषाऽथवा ।।१०।।

---

1 योगोऽयं पत्राभावात् ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

अभंज (अभ्यञ्ज-) येत् सर्पिषा च स्नानं कोष्णोदकेन च ।
क्वचित्तैलं न गृह्णीयान्न बिल्वं कारवेल्लकम् ।।११।।

वार्त्ताकिं शफरी (रीं) चिञ्चां त्यजेद्या (द्व्या-) याममैथुनम् ।
मद्यं सन्धानकं हिंगुं शुण्ठी (ण्ठीं) माषान् मसूरि (र-) कान् ।।१२।।

कूष्माडं राजिकां कोपं कांजि (कांजिकं) चैव वर्जयेत् ।
त्यजेदयुक्तनिद्रां च कास्य (कांस्य-) पात्रे च भोजनम् ।।१३।।

ककारादियुतं सर्वे (र्वं)त्यजेच्छाकफलादिकम् ।
ग्राह्योऽयं लोकनाथस्तु शुभनक्षत्रवासरे ।।१४।।

पूर्णातिथौ शुक्लपक्षे जाते चन्द्रबले तथा ।
पूजयित्वा लोकनाथ कुमारी (रीं) भोजयेत्ततः ।।१५।।

दानं दद्याद् द्विघटिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ।
रसाचजायते (रसाच्चेज्जायते) तापस्तदा शर्करया युतम् ।।१६।।

सत्वं गुडूच्या गृह्लीयाद् वंशरोचनया युतम् ।
खर्जूर दाडिमं द्राक्षा-मिक्षा (मिक्षु-) खण्डानि चानयेत् (चारयेत्)।।१७।।

अरुचौ निस्तुषं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ।
दद्यात्तथा ज्वरे धान्यगुडूचीक्वाथमाहरेत् ।।१८।।

उशीरवासकक्वाथ (थं) दद्यात्समधु शर्करम् ।
रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये ।।१९।।

अग्निभृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ।
निद्रानाशे दती (द्यती-)सारे ग्रहण्यां मन्दपावके ।।२०।।

सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलैः पिबेत् ।
शूलेऽजीर्णे तथा कृष्णा मधुमुक्ता (युक्ता) ज्वरे हिता ।।२१।।

प्लीहोदरे वातरक्ते छर्प्रो (छर्द्यां) चैव गुदाङ्कुरे ।
नासिकास्रुतरक्ते च रसं दाडिमपुष्पजम् ।।२२।।

दूर्वायाः स्वरसं नस्ये प्रदद्याच्छर्करायुतम् ।
कोलमज्ज (मज्जा) कणा बर्हिपक्षभस्म सशर्करांम् (रम्) ।।२३।।

मधुना लि (ले-) ह्येच्छर्दिहिक्काकोपस्य शान्तये ।
विधिरेष प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन्पोट्टलीरसे ।।२४।।

मृगाङ्क हेमगर्भे व मौक्तिकाख्ये रसेषु च ।
इत्ये (त्य)-यं लोकनाथाख्यो रस: सर्वो (सर्व)-रुजो जयेत् ।।२५।।

टीका:— शुद्धपारौ वुभुक्षुतु टं २५ गंधकु टं ५० (मूल में टं २५ ही है) कजली कीजौ । कीडी (कौडी) टं १०० वांटि छाणि कपराकै (मूल पाठ में उक्त कज्जली को पीली कौडियों में भरने का आदेश है) सुहागी (गा) टं २५ (मूल पाठ में टङ्कण का तोल पारद से आधा है) गाइ को क्षीर मर्दीजौ दि (दिन) ३ (दिन ३ टीकाकार की कल्पना है) पश्चात् बाधौ छाण्यो संखुचूर्ण टं २००, सर्व उषध एकत्र कारि खरलीयौ । गौ के दुग्ध महि दिन ३ चंदिया सी करि सुकैजौ (मूल पाठ का आशय यह है कि कज्जली भरी पूर्वोक्त कौडियों के मुख दूध में पिसे उक्त सुहागे के कल्क से बंद करें । तत्पश्चात् चूने से लींपे एक शराव में ८ भाग शंख के टुकड़ों के बीच में कौडियों को जमा कर ऊपर चूने से पुता दूसरा शराव ढक कर विधिवत् कपरौटी करें ।)

ता पश्चात् द्वौ सहनक आनिहि चूनौ लेप दीजौ । सरवा सं ८ (शंख ८ भाग) पुट मध्य च दीया धरीयौ जौ सकौ जो । ता पश्चात् खाडो खोदीजौ अरने छाना मे-लि तरहरिता मध्य सरवा धरीजौ । आस-पास और उपर छाना अरनो । गजपुट समस्त राति दीजौ प्रहर ४ और न दीजौ । स्वांगशीतल भये प्रभात लेइ । (उक्त सम्पुट को १ हाथ प्रमाण गजपुट में देवे व स्वाङ्गशीतल होने पर निकाल कर सुरक्षित रखलें—यही लोकनाथ रस है ।)

गुण औषध कौ—चिहुनी ६ (६ गुञ्जा) चूर्ण मिरच २९ वांटि मेलीजौ । गौ का घृत स्यौं दीजौ वातु जाई । नौनी स्यौ दीजै पित्तु जाई । मधु स्यौ श्लेष्मा जाइ ।

अतिसारु छई अरु छई अरुचि, ग्रहणी, अर्श, मंदाग्नि, अफारा, कास, स्वास, गुलमु जाई मधु स्यौ दीजौ । जव दुपहर जीवने बैठौ तव कौर तीन घी महिं चहोकी खाई उचत ही न खाई घरी २ दिन चढौ पहर सु खाई । दधि न खाई ।। (इस रस का सेवन कर ३ ग्रास घी और भात देकर थोडी देर तक तकिया रहित शय्या पर चित्त सुलावे ।)

जांगल मांसु लवा, तीतरु, बटेरु, हिरण के मांसु षरहा मांसु धृत में रांधीजौ दूध सहित भातु दीजौ संध्या कह घी के वरा कीजौ मूंग के। घी स्नानु करौ। तेल वर्जनीक, तातो पानी न्हाई। घी स्यौं चुपडो। वेलु करेला, कुम्हेडो, ककारादि सत्र छाड़ो। वायाम, मैथुन छाडौ, पीपरि सोंठ, उडद, मसूरी, और न खाई।

ज्वर कह गुडूची धनिया के क्वाथ सौं दीजौ, रक्त पित्त, कफ कह स्वास, कास, स्वरक्षय, उसीर वासौ को क्वाथु मधुशक्कर स्यौं दीजौ। रक्तपितु जाई। निद्रानाश अतीसारु ग्रहणी कह सौंचरु—लौंनु, हरड, पीपरी चूर्ण स्यौं दीजौ। उपर तातो पानी पीवौ शूल जाइ। पीपरि मधु स्यौं दीजौ ज्वर जाई। दान्यौ? (अनारपुष्प ?) के रस सौं दूब के रस सौ दीजौ नाशिका रक्त जाई। छर्दिकह मधु स्यौं दीजौ। इति लोकनाथरसु॥

(अम्लरहितघृतयुक्त अन्न, मधुर दही, घृतपक्व जंगली पशु-पक्षियों का मांस व दूध भात पथ्य है। अग्नि प्रदीप्त होने पर सन्ध्या को घी में तले मूंग के बड़े देवें। घी युक्त तिल और आंवले के कल्क से अथवा केवल घी से मालिश कर मामूली गरमजल से स्नान करें। तैल, बिल्व, करेला, बेंगन, मछली, इमली, व्यायाम, मैथुन, मद्य, अचार आदि, हींग, सौंठ, उडद, मसूर, कोहला, राई, क्रोध, कांजी, अयोग्य निद्रा, कांसी के बर्तन में भोजन, ककारादि शाक व फल छोड़ दें। शुभ नक्षत्र, वार, अक्षयतिथि, शुक्लपक्ष, और चंद्रबल देख कर लोकनाथ की पूजा करे, कुमारिकाओं को भोजन करावे, दान दे व फिर इस रस का सेवन प्रातः काल के वाद दो घड़ी दिन चढने के पहले पहले करना चाहिये। यदि इसके सेवन से कोई उपद्रव हो तो उपचार इस प्रकार करेः—

दाह हो तोः—गिलोय सत्व व वंशलोचन व मिश्री का सेवन दूध से करे। अथवा वंशलोचन, मिश्री, गिलोयसत्व, खजूर, अनार, दाख, ईख का रस इनके कल्क में जल मिला कर पीवें।

अनुपानः— १. अरुचि में चांवल व धनिया को घी में भून कर व मिला कर लें।

२. ज्वर में:—धनिया व गुडूची क्वाथ से।

३. रक्तपित्त, श्वास, कास, व कफजन्य विकारों में :
उशीर व अडूसापत्र के क्वाथ में मिश्री ।

४. निद्रा नाश, अतिसार, ग्रहणी व मन्दाग्नि मे
सिकी भांग का चूर्ण व मधु मिला कर रात में ।

५. शूल व अजीर्ण में : कालानमक, हरड व पीपर का
चूर्ण उष्णजल से ।

६. जीर्ण ज्वर में मधु+पिप्पली से ।

७. प्लीहा, वातरक्त, वमन, अतिसार व रक्तस्राव में दाडिम
के फूल व दोब का कल्क । इसी कल्क का नस्य
रक्तस्राव में ।

८. छर्दि-हिचकी में : बेर की गिरी, पीपर, मयूरपिच्छ
भस्म व मधु ।

९. ये सारे अनुपान राजमृगाङ्क, मृगांक, हेमगर्भ पोट्टली, व
मुक्ता के योगों में भी उपयोगी हैं। अनुपान भेद से यह
लोकनाथ रस सभी रोगों में उपयोगी है ।

(७) शीतहरो रसः

शुद्धतुत्थकभागैकं द्विगुणं शुद्धतालकम् ।
त्रिगुण गालित चूर्णं कौमारीरसमर्दितम् ॥१॥

मूषामध्ये न्यसेत्कल्कं मृत्तिकागोलके भृतम् ।
शुष्कं गजपुट दद्याच्चतुर्यामात्समुद्धरेत् ॥२॥

द्विगुञ्जः शर्करोपेतः शीतज्वरहरो रसः ॥

इति शीतहरो रसः❋

टीका:— एक भाग शुद्धतुत्थ, २ भाग शुद्ध हरताल को कुमारीरस से मर्दन कर
तिगुने चूने के चूर्ण के बीच में रख कर मूषा में रखे व गीली मृत्तिका

❋ योगोऽयं ह. पुस्तके [illegible] ।

के गोले में उसे भर दे व गजपुट (भूधर पुट) दे कर चार याम के पश्चात् स्वाङ्गशीतल होने पर निकाल कर रख छोड़े। इस रस की मात्रा २ रत्ती (रोगी के बलाबल के अनुसार न्यून भी) है व अनुपान शर्करा है। इससे शीतज्वर नष्ट होता है।]

(८) मानिनीमान मर्दनरसः[1]

कज्जली-गन्धसूताभ्यांतुल्य-मन्मत (मुन्मत्त)-बीजकम् ।
तत्तैलमर्दितं सेव्यं द्विवल्लं ससितं नृणाः ।।१।।

मेहौघं नाशयेत्सर्वे (र्वं) स्तम्भकृद्द्रावयेत् स्त्रियम् ।
रसः कामप्रदो नृणां मानिनीमानमर्दनः ।।२।।

इति मानिन मानमर्दनरसः

[टीकाः—शुद्ध पारद-गंधक की कज्जली के बराबर धतूरे के बीज मिलाकर धतूरे के बीजों के तैल से मर्दन कर दो वल्ल (छः रत्ती) मिश्री के साथ लेने से सभी प्रमेहों का नाश होता है व स्तम्भन होता है। यह मानिनीमानमर्दनरस पुरुषों को कामप्रद होने से कारण मानिनियों का मान मर्दन करने वाला है।]

वक्तव्यः—छ रत्ती की मात्रा इस युग के अनुरूप नहीं है।

(९) शीतभञ्जीरसः[2]

रस-हिङ्गुल-गन्धं च जैपालं मर्दिते (तं) त्रिभिः ।
दन्तीक्वाथेन सङ्ग ह्य (सम्मर्द्य) रसो ज्वरहरः स्मृतः ।।१।।

आर्द्रकस्य रसेनाथ दापयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद्यामभात्रकम् ।।२।।

शर्करादधिभक्तं च पथ्यं देयं प्रभाततः (प्रयत्नतः) ।
शीततोयं पिबेच्चानु इक्षु-मुहुरसो (मुंद्गरसं) हितम् ।।३।।

1-2 एतौ योगौ ख. पुस्तके पृष्ठाभावात् नोपलभ्यतः ।

शीतभञ्जीरसो नाम्ना सर्वज्वरकुलान्तकः ।।

इति शीतभञ्जीरसः

[टीका: – शुद्धपारद, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गंधक समभाग व दंतीबीज सब के बराबर लेकर दंतीक्वाथ की भावना से ज्वरहर यह योग विधिवत् तैयार करें। अद्रक रस के साथ इसकी २ रत्ती की मात्रा देनी चाहिये। यह महाघोर नवज्वर का शमन याममात्र ही में कर देता है। शक्कर, दही व भात का पथ्य यत्न से देना चाहिये। ऊपर शीतलजल व इक्षुरस व मुद्गरस पीना हितकर है। यह शीतभंजी नामक रस सभी ज्वरों का नाश करता है।]

(१०) उदकमञ्जरी

नवज्वरविनाशाय[1] वक्षा-(वक्ष्या-) म्युदकमञ्जरीम् ।
रस-गन्धौ[2] समौ स्यातां मरिचं तत्समं क्षिपेत् ।।१।।

टङ्कणस्य समं[3] भस्म शर्करा सर्व-सम्मता ।
भावना मत्स्य[4]-पित्तस्य मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।।२।।

आर्द्रकस्य[5] रसेनायं दीयते वल्लमात्रकम्[6] ।।

टीकाः— सुधपारौ ।। सुध गंधक ।। सममात्रा ।। इन समान मिरच ।। सर्वसमान अष्ट सुहागौ ।। सब ही ते समान मिश्री ।। रोहू मत्स्य के पित्त की भावन ।। दिन ३।। मिश्री बिन भावन दीजै । मिश्री पाछे तैं मिलाजे। आदे के रस स्यौं दीजै रती ३ नव ज्वर जाहि[7] ।

---

1 ख. विनासै 2 ख. रांधौ 3 ख. टंकणसमं 4 ख. मत्स 5 ख. आइकस्य 6 ख. बलमात्रकं 7 घ. पुस्तक में टीका नहीं मिलती। वृ. यो. त., र. क. ल., टो., भै. र., भा. प्र व यो. र. में पारद-गंधक-टंकण व मरिच प्रत्येक समभाग व मिश्री सब के बराबर कही गई है। टो. में तिमिंगिल मछली के पित्त की भावना कही गई है। कतिपय पूर्वाचार्यों ने 'शर्करा' का अर्थ 'विष' इस योग में बताया है—यथा—'शर्करा अत्र विषम्'।

(११) चिन्तामणिरसः

द्वे[1] ऽजाज्यौ कणविश्वपञ्चलवणं मारीचगन्धाभ्रकं,
※त्रिक्षारं सुरसेन्द्रम[2]र्द्धममृतं [3]तत्सर्वमेकीकृतम्[4]※ ।

+[5]देयञ्चार्द्रकनाग[6]वल्लिसहितं मन्दाग्निश्लेष्मानिले ?+
⊕सामे सज्वर[7]सन्निपातविषमे मोहे [8]ह्युदावर्तके⊕ ॥१७॥

[9]चूर्णं चास्य हि[9] पञ्चगुञ्जमुदितं[10] लोकोपकारैर्बुधैः ॥

टीका:— जीरो । कालोजीरौ । त्रिकटु । सौंधौं । सौंचलु । विडु । समडी । सांभरि । गंधकु । अभ्रक । साजी । जौखार । सुहागौ । पारौ । एती औषध मात्रा समान । विषु अर्धमात्र । एकत्र करि चूर्ण कीजै । रती ५। आदे के रस (आदे व पान के रसों से) के अनूपान सौं दीजै । इति चिन्तामणि रस ।×

(१२) ज्वराङ्कुशो रसः

खण्डितं हरिणशृङ्गं ज्वालामुख्या रसैः समम् ।
रुद्धा (रुद्ध्वा) भांण्डे पचेचुल्हं (पचेच्चुल्यां) यामयुग्मं ततो नयेत् ॥१॥

अष्टांशं त्र्यूषणं दद्यान्निष्कमात्रं च भक्षयेत् ।
नागवल्लीरसैः सार्द्धं सर्वज्वरकुलापहः ॥२॥

एष ज्वराङ्कुशो नाम रसः सर्वरसोत्तमः ॥

---

1 ख. द्वोजाजी 2 ख. मर्द्ध 3 ख. तत 4 ख. कृतं ※-※ र.क.ल. 'त्रिक्षारं च समं पृथग् विषरसात्रर्धार्धं भागौ तथा' इति पाठः; अनेन द्वे जाजीतः त्रिक्षारपर्यन्तद्रव्याः समाः; पारदः विषश्चार्द्धार्द्धं भागौ ॥ 5 ख. दतं 6 ख. नागवली +-+ 'देयञ्चाद्रक……… श्लेष्मानिले' अस्मिन्स्थाने र. क. ल. "क्षिप्त्वा चाद्रकनागवल्लिजरसं बद्धा त्रिगुञ्जावटी ।" इति पाठः ॥ 7 ख. सानिपात 8 ख. उदावर्तनो ⊕-⊕ 'सामे सज्वर. …… ह्युदावर्तके' अस्मिन्स्थाने र. क. ल. "सामे सज्वरसान्निपातिकमहामेहाद्युदावर्तके ।" इति पाठः । 9-9 ख. चूर्णायं रसं 10 ख. गदितो 11 ख. लोकोपचारोबुधं ॥
× पाठोऽयं घ. पुस्तके नोपलभ्यते ।

टीका:— चूर्णीभूत हिरण को शृङ्ग ।। ज्वालामुखी खासनी के कृष्ण खासनी कै रस सानींजै । आठवें हिस्से त्रिकटु मेलहीजै । टं १ पान सौं दीजै सर्वज्वर जाइ ज्वरांकुसो नाम रस ।।

विधि:— अन्य ग्रंथों के अनुसार हरिणशृङ्ग के छोटे छोटे टुकड़े करके अथवा चूर्ण करके ज्वालामुखी के रस से भावित करें व सूखने पर डमरुयन्त्र में रख कर २ याम तक पाक करें। स्वाङ्ग शीतल होने पर यन्त्र को खोल कर कृष्ण वर्ण की भस्म प्राप्त करें। ऐसी भस्म इस योग में होनी चाहिये । 'असकृद् भावितं शृङ्गं हारिणं कुट्टितं रसैः । ज्वालामुख्याः पचेद्भाण्डगतं तद्भस्म चूर्णयेत् ।।' ज्वालामुखी को कुछ विद्वान 'खसनी बूटी' कहते हैं, कतिपय विद्वान 'भल्लातक' व अन्य इसे 'बिछुआ घास' कहते हैं । श्री हरिप्रपन्नजी ने इसे 'अग्निशिखा'—जलजांभुल (म.) कहा है । ज्वालामुखी के चार भेद हैं । 'शुक्ला पीता तथा रक्ता कृष्णा ज्वालामुखी भवेत् ।।'

(१३) अर्द्धनारीनटेश्वर-रसः

पारद ?—(दाद् ?) द्विगुण शीशं वङ्गञ्चेति प्रलेपयेत् ? ।
सर्वस्मिन् (सर्वस्माद्) द्विगुणं गन्धं विषान् ? मरिचमष्टधा ? ।।१।।

निम्बबीजं त्रिकटुकं देवदाली सराजिका ।
पारदं गन्धकञ्चेति समभागं विचूर्णयेत् ।।२।।

कारवेल्लरसेनाथ निर्गुण्ड्यास्तु पुनः पुनः ।
भावये-देजनाजस्य ?(दंजनादक्ष्णो ?) गच्छेदर्द्धाङ्गजोज्वरः ।।३।।

द्वितीया-त्त्यंजना ? (क्ष्यञ्जना ?-) चूर्णं ? (त्तूर्ण)-मर्द्धोऽपि स विनश्यति[1] ।।

टीका:— पारौ टं १ सीसा टं १[2] वंग टं १[2] गंधकु टं[2] १० (?) पारौ गंधक कुं एकत्र कज्जली कृत्वा सीसा बंग कज्जली एकत्र करि कवची जंत्र गज-

---

1 अस्पष्टोऽयं योगः । अस्माभिरत्र अविकलरूपेण प्रदिष्टः । 2 मूल पाठ में गंधक सब से दुगना कहा गया है । शीशा व बंग २-२ टं. हों तो गंधक १० टं. होगा ।

पुट करि ? पकाईजौ विषु[1] टं १ (?) मरिच टं १ (?) निंबोली टं १ त्रिगडू टं ३ देवदाली फल टं १ राई टं १ पारौ टं १ गंधकु टं १ कजली कीजौ और सब उषध एषकठी (इकठ्ठी) कपराछान कीजौ। कारवेली (करेला) के रस पुट ७ दीजौ (मूल पाठ में निर्गुण्डी भी है।)

इत्यर्द्धनारीनटेश्वर-अञ्जनम्

(१४) रविसुन्दर

पारौ टं २ गंधकु टं २ विषु टं २ अजेपालु टं ६ नीव ५ ? पत्र रसु[2] पुट २१ दीजौ सर्षप प्रमाण वटी २ २ खाइ प्रभात भक्षे ते विषमज्वर जाई। इति रविसुंदररसः।

(१५) मृत्युंजयो रसः[3]

गौमूत्र स्यौ सोध्यौ विषु, शुद्ध गंधकु शुद्ध पारौ मछली रोहू को पीतौ छेरी (बकरे) को पीतौ मोर को पीतौ भैंस को पीतौ सर्व समान मात्रा छैरी को मूत्र मर्दीजौ दिन ३ उरद प्रमाण वटी कीजाही आदै के रस स्यौ वरी (?) (वटी ?) एक दीज्यौ विषमज्वर जाई उदर रोग पीनस अजीर्ण मूर्च्छा श्लेष्म-ज्वर सौजौ कमलवाउ पाण्डुरोग सन्निपात प्रस्वेद सर्व रोग याति, मूर्च्छित मनुष्यु पड्यौ होई सु चेतौ। दधि पथ्य दीजौ, सीरौ ? (शीतल ?) पाणी पाइजौ। पेटकृमि जाहि निर्मल काया होई।

(१६) सन्निपातार्णव रसः[4]

अपामार्ग-ठिठिवणी (?) रणी (?) सेहुण्डकं तथा।
रक्तशाकं (?) गृहैत्यैषां ? (गृहीत्वैषां) क्षाराण च पृथक् पृथक् ॥१॥

टङ्काणि पञ्च चां (?) (पञ्चा ऽथ पंचे (पञ्च) हि लवणं पलम् ॥१॥
सुधा दशपल मूत्रैर्गवां यन्त्रेण श्रा[1]- स्रा-) वयेत् ॥२॥

पश्चात्क्षारं त्वपः (?) (क्षारजल) पात्रे वह्ना ? (ह्नौ) यत्नेन शोषयेत्।
पारदं गन्धकं तुत्थं चोकं च नवसादरम् ॥३॥

---

1 मूल पाठ 'विषान् मरिचमष्टधा' अस्पष्ट है। आगे का पाठ भी अस्पष्ट है।

2 ख. नींब पत्र रस पुट 7 दीजै। 3 योगोऽयं ख. पुस्तके नोपलभ्यते।

4 अस्पष्टाशयोऽयं योगः।

हरितालं विषं धूर्त्तं जयपालं मनःशिला ।
द्विटङ्कं चोक्तं प्रत्येकं शोरा-टङ्कणके तथा ।।४।।

क्षारे द्वे सोमलक्षारं गुञ्जा-हिङ्गुलशोणकम् ?।
वचा पृथक् त्रिटङ्कं स्यात् सर्वाण्येकत्र योजयेत् ।।५।।

कूप्यां निम्बूरसेनाथ चक्रेण ? (चुक्रेण ?) सह लेपयेत् ।
क्षौरछित्वात् (?) सन्निपातात् (?) सर्वगात्रेषु शून्यता ।।६।।

रस एष स्ववीर्येण हन्ति सर्वाङ्गजां रुजाम् ।।

टीका: — आंधाझारौ ठाठिवण अरणी सेहुंड रतसगा (?) इन्ह कौ खारु टं ५ लीजौ ईट की लौनी (?) टं ५० (?) लीजौ (मूल पाठ में अपामार्गादि ५-५ टं व लवणपंच पल हैं व सुधा १० पल हैं) गच ? (सुधा ?) टं १०० गाइ को मूत्र घालि चुवाइजौ पारौ गंधकु थूथो चौकी नवसादरा हरितालु विषु धतूरे के बीज जयपाल मनसिल इन्ह को दोइ दोई टंक लीजं ही सोरा सुहागा साजी जवाखारु मल (सोमल)-खारु घूघरी हींगलू सन (मूल पाठ में शोणक (?) है ।) वच इन्ह कौ तीन तीन टंक लीज ही । अङ्ग शून्यता सन्निपात तरवाह (?) दौव गलौ (?) माथे मध्य कनपटी पाछी पारनौ सन्निपातु जाइ ।

इति सन्निपातार्न्नवरसः

(१७) ज्ञानोदय रसः

[2]विजया शक्तिसम्भोगान् *मदमण्डनशम्भुजा (?) (ना ?)[2] ।
ज्ञानोदयो भवेत्येष (?) (भवत्येषः) साधकानन्दसिद्धिदः ।।१।।

---

1 अस्पष्टाशयोऽयं योगः 2-2 र. लं., 'विजयाशक्तिसंयोगिनटमण्डनशम्भुमिः ।' 2-2 टो., 'विजया शक्तिसंयोगान्मदमण्डनशम्भुना ।
ज्ञानोदयो भवेत्येव साधकानंदसिद्धिदः ।।
कालवेदनिशानाथक्रमेण समशर्करः ।
सेवितः सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदनः ।
वातश्लेष्मामयध्वंसी ज्वरातीसारनाशनः ।।

[1]काल-(?) (कला) वेद-निशानाथ[1]-क्रमेण समशर्करा:(?) (र:)
सेवित: सात्म्यतो ग्राही [2]जलदोषापनोदन:[2] ।।२।।

वातश्लेष्मामयध्वंसी ज्वरातीसारनाशन: ।।

टीका:— विजया भाग १६ (?), गंधकु भाग ४, जातीफलु भाग ३ (?) रसु भाग २ (?) खलीजौ समभाग शर्करा मिलैजौ इति ज्ञानोदय रस: ।

(१८) सामुद्रादिचूर्ण[1] (चूर्णम्)

सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् ।
टङ्कणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।।१।।

अर्कक्षीर (रं) स्नुहीक्षीरं मातये (?) (मातपेद्) भावये-न्त्य ? (त्र्य-)-हम् ।
अर्कपत्रा (?) हि (?) लिपित्तेन (?) (अर्कपत्रविलिप्तेन) सधा (संध्या) भाण्डे पुटे पचेत् ।।२।।

तत्क्षारं चूर्णये-च्च ? (च्चा-) थ त्र्यूषणं त्रिफलारज: ।
जीरकं वह्निचूर्णं च नवकस्य पलं पलम् ।।३।।

विजया भाग 16 गंधक 4, जातिफल 3 रस । खलीजे समभाग शक्कर भेलीजे ।।' इति टो. : (रसराजलक्ष्मीत:— टो. उद्धृत:)

1-1 र. लं 'कला वेदाङ्कचन्द्रांशै:' अत्र 'कला' समीचीन: 2-2 र. लं. कफवातापनोदन:
* मदमण्डनं जातीफलं

3 विजया, गंधक, जातीफल व रस मूल पाठ में काल-वेद-विशानाथ भागेन क्रमात् हैं ।
4 र. यो. सा.
'कला-वेदाङ्कचन्द्रांशै: सर्वांशसितया युतै: ।
शक्राशनरजोजातीफलशुक्रै: सुसाधित: ।।
सेवित: सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदन: ।
वातश्लेष्मामयध्वंसी ज्वरातीसारनाशन: ।।
बृंहणैरनुपानैर्हि योजित: कामवृद्धिकृत् ।
ज्ञानोदयो भवेदेष साधकानन्दसिद्धिद: ।।'
टि. कला = 16, वेद: = 4, अङ्क: = 9, चन्द्रांश: = 1
विजया गंधकं जातीफलं रसं

क्षाराक (?) (कं ?) मेतदर्द्धं स्यादेकीकृत्वा (?) (त्य) प्रयोजयेत् ।
सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूले शोथे तथैव च ।।४।।

अग्निमान्द्ये च (?) (द्य-) जीर्णे च भक्ष्यं निष्कद्वयं तथा ।
वाधिकं (?) (वातिके) च कफं (?) (जलं) कोष्णं घृतं पित्तादिको (?)
(के हितम्) ।।५।।

कफे गोमूत्रसंयुक्तमारनाल ? (लं) त्रिदोषजम् (?) (जे) ।।

टीकाः— समुद्री सैंधव काचलवरण जवाखारु सौचलु सुहागा साजी सममात्रा लीजही आक के दूध की अरु सेहुंड के दूध को भावना दि (?) (दिन) ६ दीजई वाहुरि आक के पातन प्रलेप हांडी मध्य घालि माटी (?) (भट्टी ?) कौ गजपुट पचौजे । त्रिगडू त्रिफला जीरो हरद (?) वह्नि= चित्रक) चीतो १० (?) लीजई अर्कक्षार अरु उषधन को चूर्ण बरा-वरी मिलौजौ । टं २ खाइ अनूपानु कौ तातौ पानी कै छीड (?) (घृत ?) कै गौमूत्र कै काँजी स्यौ दीजौ अजीर्ण जाइ ।। इति सामु-द्रादि चूर्णु ।

(१६) विषमज्वरहर रसः

सूतं नागं तथा तालं चूर्णं चैव विमर्दयेत् ।
कुमारिकारसेनैव-मेकद्वौ ?च तृतीयकः (?) (मेक-द्वि-त्र्यष्ट-मानतः?)।।१।।

तच्चूर्णं सम्पुटे धार्यं त्रिभिर्गजपुटैस्ततः ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसशीतश्च (?) (रसः सिद्धश्च) जायते ।।२।।

द्विगुञ्जा (?) (० ञ्जं) शर्करायुक्तं शीतज्वरविनाशनम् (?) (ने) ।
उदनं (?) (ओदनं) शर्करायुक्तं पथ्यं देयं प्रयत्नतः ।।३।।

टीकाः— पारा टं १ सीसा टं २ हरिताल टं ३ चूना टं १८(?)(८ ?) कुमारीरस-मर्दयेत् गजपुट ३ दीजौ सिद्धं भवति रसु टं २ (?) (२ रत्ती) खाडु (शक्कर) टं १ (?) सेती देना भातु दुग्धु पथ्यु विषमज्वरु जाई ।। इति विषमज्वररसु ।

(२) शीतज्वरहरो रसः[1]

शुद्धतुत्थकभागैकं द्विगुणं शुद्धतालकम् ।
त्रिगुणं गालितं चूर्णं कौमारीरसमर्दितम् ।।

मूखा (मूषा-) मध्ये न्यसेत्कल्कं मृत्तिकागोलके कृतम् (भृतम्) ।
शुद्धं (?) (शुष्कं) गजपुटं दद्याच्चा (?) (च्च-) तुर्यामात्समुद्धरेत् ।।

द्विगुन्जं (न्जः) शर्करोपेतं (तः) शीतज्वरहरो रसः ।।

(२१) ज्वरारि-गुटिका[2]

रस-हिङ्गु ल-जैपालं-वृद्ध (?) (वृद्ध्या) दन्त्याम्बु-(?) (दन्त्यम्बु-)
घर्षयेत् (?) (घर्षितम्) ।
दिनाऽर्द्धेनज्वरं हन्ति गुजै (?) (गुन्जैकं) सितया सह ।।१।।

इति ज्वरारिगुटिका

[टीकाः—रस १ भाग, हिंगुल २ भाग, जैपाल ३ भाग इन्हें दन्तीक्वाथ से विधिवत् मर्दित कर १ रत्ती की मात्रा शक्कर के साथ देने से आधे दिन में ज्वर नष्ट होता है ।]

(२२) गङ्गाधररसः

मुस्तं मोचरसं लोध्रं कुटजं तु च (!) (कौटजानि) तथैव च ।
बिल्वास्थि-वा ? (धा-) तकीपुष्पमहिफेनं तु गन्धकम् ।।१।।

शुद्धं हि पारदं चैव सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
रसो गङ्गाधरो नाम्ना माषमात्रं प्रयोजयेत् ।।२।।

---

1 योगोऽयं द्विरुक्तः । अत्रत्य सप्तमो योग एव पुनरुक्तः ।

2 वसवराजीये प्रतापमार्तण्डरसः—
'रसहिंगुल-जैपालं [3]पृथ्वीदन्त्यम्बुमर्दितम् ।
दिनार्धेन ज्वरं हन्याद् गुडेन सितया सह ।।
चतुर्वल्लमिदं खादेत् सर्वज्वर प्रशान्तये ।।'

3 पृथ्वी = कलौंजी (मंगरेला) इति लोके ।

सर्वातीसारग्रहणी-प्रशमं (म:) यान्ति (स्याद्धि) वेगत: ।
सरिद्वेगविबन्धं (घ)- श्च पथ्यं तक्रोदनं तथा ।।३।।

इति गङ्गाधररस:

[टीका:—नागरमोथा, मोचरस, लोध, इन्द्रजव, बेलगिर, धाय के फूल, अफीम, गन्धक शुद्धपारद, ये सभी समभाग लेकर खूब बारीक चूर्ण कर रख छोड़ें। यह गङ्गाधर नामक रस है। एक माषा की मात्रा देने से यह रस सभी अतिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका रोगों को नष्ट करता है। नदी समान अतिसारवेग को भी यह रोक देता है। तक्रोदन इस पर पथ्य है।]

(२२) स्वच्छन्दभैरवरस:

रसमेकं द्वयं गन्धं सैन्धवं द्वयमेव च ।
ज्वालामुखीरसै: पञ्चदिनानि परिमर्दयेत् ।।१।।

मूषिकायां निरो-ध (?) (द्ध-) व्यं पुटेद्रात्रौ च मध्यम: (?)
(पुटं दद्याच्च मध्यमम् ।)
सर्वे भस्म तदा याति (?) (तत्सर्वं भस्मतां याति, बिल्ल (?)
(वल्ल-) मेकं प्रयच्छति (?) (प्रयोजयेत्) ।।२।।

रौद्रं सुज्वरं (रौद्रज्वरेषु) तंद्रासु निद्रासुप्तासु (निद्रासुप्त्योस्तु) योजयेत् ।
आमग्रहण्योग्रहणी-कासेश्वासे विशेषत: ।।३।।

पुष्टदष्टि ? (दृष्टि-) मसौ कुर्यात् सौकुमार्यं च जायते ।
अक्षिरोगेषु सर्वेषु रसं (रस:) स्वच्छन्दभैरव: ।।४।।

इति स्वच्छन्दभैरव रस:

[टीका:—पारद १ भाग, गंधक २ भाग, सैंधव २ भाग, इन्हें ज्वालामुखी के रस से ५ दिन भावित करे। फिर मूषा में बन्द करके (रात्रि में) मध्यम पुट देवे। इससे ये भस्म हो जावेंगे। इस औषधि की १ वल्ल मात्रा (३ रत्ती) देने से रौद्रज्वर, तंद्रा, निद्रा, सुप्ति, आमज ग्रहणी, ग्रहणी, कास, श्वास, विशेष करके नष्ट होते हैं। इसके प्रभाव से दृष्टि पुष्ट

हो जाती है। सभी प्रकार के अक्षि रोगों पर इस स्वच्छन्द भैरव को देना चाहिये।]

(२४) [अपर:] स्वच्छन्दभैरव:

समभागं च सङ्ग्राह्य पारदामृतगन्धकम् ।
जातीफल च भागार्द्धं दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥

सर्वार्द्धं मागधीचूर्णं खल्वयित्वा निधापयेत् ।
गुञ्जाद्वय त्रय चापि नागवल्ली-दलेन तां ? (दलान्वितम्) ॥२॥

आर्द्रकस्वरसेनाथ यथादोषवशेन त ? (यथादोषं च सेवयेत् ।)
शीतज्वरो (रे) सन्निपाते विषूच्यां विषमज्वरे ॥३॥

पीनसे चैव मन्दाग्नौ शिरोरोगे च दारुणे ।
प्रयोज्ये (ज्यो) (?) भिषजा सम्यग् रस: स्वच्छन्दभैरव: ॥४॥

पथ्य दध्योदन देयं द्वीक्ष्य ? (वीक्ष्य) दोषबलाबलम् ॥

इति स्वच्छन्द-भैरवरस:

[टीका:—शुद्धपारद, बच्छनाग और गन्धक १-१ भाग. इनकी विधिवत् कज्जली करके जायफल ½ भाग मिलावें। और सब से आधा पीपल का चूर्ण मिला, खरल करके रख छोडें। इसमें से २ या ३ रत्ती पान या अद्रक रस से यथा दोष देने से शीतज्वर, सन्निपात, विसूचिका, विषमज्वर, पीनस, मंदाग्नि, दारुण शिरो रोग, इन सभी को यह रस नष्ट करता है। दोषों का बलाबल देख कर दही-भात (या अन्य वस्तु) की पथ्य-रूपेण कल्पना करे।]

(२५) चन्द्रप्रभावटी

[1]मृतं स्तनं ? (सूतं मृतं ताम्रं मृत स्वर्णं सम समम्[1] ।
तुल्यं च खादिरसार तथा मोचरस क्षिपेत् ॥१॥

1-1 अस्मिन्स्थाने र. रा. सु 'मृतं सूतं मृतं ताभ्रं मृतं स्वर्णं समं समम्' इति पाठः ।

टि. योगोऽयं . . . पुस्तके . . . पुनरुक्तः । (सम्पादक)

प्रवं (?) (द्रवै:) शाल्मलिमूलोत्थैर्मर्दयेत् प्रहरद्वयम् ।
चर्णमाचा (?) (चणमात्रा) वटी भक्ष्या निस्तुषैर्जीरकैः सह ।।२।।

त्रिदोषो-छ्वा ! (त्थ-) मतीसारं सज्वरं नाशयेद् ध्रुवम् ।।

इति चन्द्रप्रभावटी रस:

[भाषा:—पारदभस्म या रससिंदूर, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म ये तीनों समभाग सब के बराबर खैरसार व मोचरस, इन्हें शाल्मली के रस से दो प्रहर घोटे। चने प्रमाण वटी बना कर तुषोज्झित जीरे के साथ खाने से सज्वर त्रिदोषज अतिसार रोग नष्ट होता है।]

(२५) चन्द्रोदयरस:

पलं मृदुस्वर्णदलं रसेन्द्र:
पलाष्टकः षोडश गन्धकस्य ।
शोणैः स-(सु-) कार्पासभवैः प्रसूनैः
सर्वं दिमर्द्याथ कुमारिकाद्भिः ।।१।।

तत्काचकुम्भे निहितं सुगढि ? (सुगाढे)
मृत्कर्पटै [स्तद्] दिवसत्रयञ्च ।
पचे (पचेत्) क्रमाग्नौ सिकताख्ययन्त्रे
ततो रजः पल्लवराग-रम्यां (रम्यम्) ।।२।।

निगृह्य चैतस्य फलं (पलं) पलानि
चत्वारि कर्पूररजस्तथैव ।
जातीफलं सोषणमिन्दु-(मिन्द्र-) पुष्पं
कस्तूरिकाया इह शाण एक (एकः) ।।३।।

चन्दोदयोऽयं कथितोऽस्य माषो[1]
भुक्ते (भुक्तो-) हिवल्लीदलमध्यवर्त्ती ।
मदोन्मदानां प्रमदाशतानां
स-(ग)र्वाधिकत्वं श्लथयं विकाण्डे (श्लथ्यत्यकाण्डे[2]) ।।४।।

1 भै. र, वल्लो 2 भै. र. श्लथयत्यवश्यम् ।

[1]शृतं घनीभूतमतीव दुग्धं
मृदूनि[2] सांसानिक ? (मांसानि) [स-] मण्डकानि[3] ।
[4]नवानि (माषान्न-) पिष्टानि भवन्ति पथ्य—
मानन्ददायि(यी-) न्यपराणि यानि ।।५।।

बलीपलितनाशन-सनु-(स्तनु-) भृतो (भृतां) वय (वयः) स्तम्भनः

समस्तगदखण्डनः प्रचुर-योग[5]-पञ्चाननः ।
[6]गृहै न रसराड यं भवति यस्य चन्द्रोदयः[6]
स पञ्च-शशि(?) (शर-) दर्पितो मृदृशां (?)(मृगदृशां) कथं वल्लभः ।।६।।+

सुपुत्री (पत्री-) कृत्य शोधितस्य स्वर्णस्य पल, सर्वसंस्कारकृतः पारद पलाष्ट, शुद्धस्य गन्धकस्य षोडशपलानि, पारदेन सह स्वर्णस्य ग्रन्थं ! (पत्र) मेलयित्वा पुनर्गो (र्ग-) न्धकेन कज्जलीकृत्य रक्तकार्पासभवप्रसूनै रसैः सम्मर्द्य कुमारिका-भ्दीः ? (द्भि-) श्च कूप्यां वालुकायंत्र (त्रे) पचेदिति, तत एतस्य रक्त-कोमलपत्रतुल्यं रजः चत्वारि पले (लानि) निगृह्य कर्पूर-रजः पलैकं निगृह्य जातीफलादीनि चत्वारि पृथक् शाणकानि समेल्य मिलितस्या माष अहिवल्लीदल-मध्यवर्त्तीमाषः यः भुक्ते स वक्ष्यमाणः गुणो भवेदित्यर्थः। इति चन्द्रोदयरसः ।।

---

1 भै. र. घृतं 2 भै. र. गुरूणि

3 भै. र. समस्तकानि, 4. भै. र. मांसान्न, 5. भै. र. रोग ।

6-6 भै. र. 'गृहेऽपि गृहभूपतिर्भवति यस्य चन्द्रोदयः' ।

+अस्मात्परं र. यो. सा., वृ. यो त. च—

'रतिकाले रतान्ते च सेवितोऽयं रसेश्वरः ।
मानहानि करोत्येष प्रमदानां सुनिश्चितः ।।
कृत्रिमं स्थावरञ्चैव जङ्गमञ्चैव यद्विषम् ।
न विकाराय भवति साधकेन्द्रस्य वत्सरात् ।।
यथा मृत्युञ्जयोऽभ्यासान्मृत्युञ्जयति देहिनाम् ।
तथाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः ।।' इत्यधिक पाठः ।।

[भाषा:—शुद्ध स्वर्ण के वर्क १ पल, सुसंस्कृत पारद ८ पल, शुद्ध गन्धक १६ पल इनकी विधिवत् कज्जली कर, रक्तकपास के फूलों के रस व घी कुंआर के रस से अच्छी तरह मर्दन कर सुखावे व कपरौटी की हुई आतिशी शीशी में डाले। तीन दिन तक क्रमात् मन्द, मध्य व खर अग्नि, बालुकायन्त्र में उस शीशी को रख कर दे। स्वाङ्गशीतल होने पर ऊर्ध्वलग्न उत्तम लाल रङ्ग का रस ग्रहण करलें। यह रस १ पल, शुद्धकर्पूर ४ पल, जायफल, समुद्रशोष, लवङ्ग, कस्तूरी प्रत्येक १-१ शाण (३-३ मात्रा) मिला कर रख छोड़े। ३-३ रत्ती (वल्ल=३ रत्ती, माष=८ रत्ती, आठ रत्ती की मात्रा उचित नहीं है) पान में रख कर खाने से यह रस मदोन्मत्त स्त्रियों के गर्व को एक दम शिथिल कर देता है। क्षय, धातुक्षय, और समस्त दुःसाध्य व्याधियाँ नष्ट होती हैं। वलि-पलित-बुढापा दूर होकर मनुष्य फिर से युवा हो जाता है। इसके ऊपर दूध लेना चाहिये। अत्यन्त भारी मांस व उड़द के पदार्थ पथ्य हैं। अर्थात् जठराग्नि प्रबल हो जाती है।]

(२६) शीतभञ्जीरसः[1]

रस-हिङ्गुल-गन्ध च जैपालं मर्दितं त्रिभिः।
दन्तीक्वाथेन संगृह्य (?) (सम्मर्द्य) रसो ज्वरहरः स्मृतः ॥१॥

आर्द्रकस्य रसेनाथ दापयेद्रक्तिकाद्वयम्।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद्याम-मात्रकं (?) (मात्रतः) ॥२॥

शर्करा दधिभक्तं च पथ्यं देयं प्रयत्नतः।
शीततोयं पिबेच्चानु रक्तामुद्ग (?) (इक्षुमुद्ग-) रसो (?) (रसं) हितम् ॥३॥

शीतभञ्जीरसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥

इति शीतभञ्जीरसः

---

1. अयं योगः पुनरुक्तः। नवमं योगमस्मिन् परिशिष्टे प्रपश्यताम्।

(२७) [अपरः] शीतभञ्जीरसः[1]

शुद्धतुत्थकभागैकं द्विगुणं शुद्धतालकम् ।
त्रिगुणं गालितं भृष्टं (?) (चूर्णं) कौमारीरस मर्दितम् ।।१।।

मूष-मध्ये न्यसेत्कल्कं मृत्तिकागोलकं (के) कृतम् ।
शुष्कं गजपुटं दद्याचतुर्याम ? (च्चतुर्यामात्) समुद्धरेत् ।।२।।

द्विगुञ्जः शर्करोपेतः शीतज्वरहरो रसः ।।

रोदति च जनान्दृष्ट्वा जरया जर्जरीकृतम् ।
न मां जानन्ति यत्नेन मूढाः कालवशंगताः[2] ।।१।।

(२९) स्वर्णादिलोहमारणार्थ-रसभस्म [विधिः]

उत्तरा[3]वारुणीदुग्धैः सर्पारिज[4]रसैस्तथा ।
हंसपादी[5]रसैस्तद्वद् वज्य (?) (वज्र्य-) र्कपयसा तथा ।।१।।

[6]ब्रह्ममूलरसैस्तद्वत् कपिकच्छूशिफारसैः ।
विष्णुक्रान्ता[7]-षडङ्गोत्थ[8]रसैर्पौनर्नवैस्तथा ।।२।।

जवीचञ्ची (?) (यवचिञ्चा-) देवदालीकञ्चुका-पाढिका-वरी ।
रसैः प्रमर्दयेत्सूतं भिषग् देश (?) (दश-) दिनावधि ।।३।।

तं कल्कं मोलकं ? (गोलकं) कृत्वा यन्त्रे सोमानले पचेत् ।
एकविंशद्दिनं याव-दथिस (दग्निं सं-) ज्वालयेदधः ।।४।।

यन्त्रादुत्तारयेत्सूतं भस्मीभूतं सुपाण्डरम् (?) (पाण्डुरम् ?) ।
तस्मैतत्सारयेल्लोहं सुवर्णाद्यमशंसयम् ।।५।। ?

---

1 पुनः पुनरुक्तोऽयं योगः । अत्रत्य सप्तमः विंशतिश्च योगौ पश्यताम् ।

2 अपूर्णोऽयं योगः 3 उत्तरावारुणी = इन्द्रवारुणी 4 'सर्पारिज'-स्थाने र. का. धे. "सर्पाक्षिज" इति पाठः । उभावपि "गन्धनाकुली"-द्रव्यस्य पर्यायौ । —यथा- 'फणिहन्त्री', 'नकुलाढ्या', 'अहिभुक्', 'अहिमर्दिनी', 'सर्पाक्षी' इत्यादयः (सम्पा.) 5 हंसपादी = हंसराजः 6 ब्रह्ममूलं = पलाशमूलम् 7 विष्णुक्रान्ता = अपराजिता । षडङ्गः = गोक्षुरः ।

लेपने (?) पुटयोगेन सर्वलोहानि मारयेत् ।। ?

इति स्वर्णादिमारणार्थ-रसभस्म ?

[टीका:—इन्द्रायण, गंधनाकुली, हंसराज, थूहर व आक के दूध, पलाश, कौंच की जड़, कोयल, गोखरू, पुनर्नवा यव[1], चिंचा, बंदाल, कञ्चुका (?), पाठा व शतावर। इनके रसो से १० दिन पारद को खरल करे। फिर उस कल्क का गोला बना कर सोमानल यन्त्र में पचावे। (दाब लगा कर पचावें)। अग्नि, उसे २१ दिन तक दी जाय। फिर यत्न से उतार कर यन्त्रस्थ पीतवर्ण की पारद भस्म को रख छोड़ें। स्वर्णादि सभी धातुओं को इस भस्म के साथ मारना चाहिये।]

वृहच्चन्द्रोदयरस:

सूक्ष्मं (सुसूक्ष्मं) रेतितं कृत्वा सुवर्णं शुक्तिमात्रकम् ।
पारदं गोधितं (?) (शोधितं) सम्यक् दद्यात्पलचतुष्टयम् ।।१।।

सुशोधितं गन्धकञ्च प्रदेयं कुडवद्वयम् ।
वृक्षकार्पासपुष्पोत्थरसे मर्द्यं दिनद्वयम् ।।२।।

तत: कन्यारसेनैव भावि ? (व-) यित्वा विनिक्षिपेत् ।
कर्षार्द्धं रेतितं नागं, ततो यन्त्रं प्रकल्पयेत् ।।३।।

अष्टादशाङ्गुलोत्सेधं विस्तारेण षडङ्गु-णं (?) (लम्) ।
सुचिक्कणं सुवृत्तं ? च सम्पुटं रचयेत्तथा ।।४।।

यथोर्ध्वसम्पुट: श्चाध: ? सम्पुटार्द्धे ग्रसे द्दृढम् ।
(ततोर्ध्वं सम्पुटं ?) (श्चाध:) सम्पुटार्द्धे न्यसेद्दृढम् ?)
सकुलालेन रवितं (?) (रचितं) सुपक्वे (?) (क्वं) ताम्रसन्निभम् ।।५।

मध्ये काचप्रलिप्तं च रसमारणकर्मसु ।
अधा (?) (अध:) ? सम्पुटे ? (ट)- खण्डेषु (तु)
रसचूर्णे[3] (?) (र्णं) मियोजयेत् (विनिक्षिपेत्) ।।६।।

---

1 कतिपय विद्वान् हिरणखुरी को यवचिंचा मानते हैं।
2 मध्ये ? ऊर्ध्वे ? 3 रसकल्कं

किञ्चिदोष्टं परित्यज्य मुखे देया पिधानिका ।
काचं भस्मसमं कृत्वा भक्तेन सह भक्षयेत् (लेपयेत् ?) (मर्शयेत् ?) ।।७।।

तेनव मुद्रयित्वाऽथ सम्पुटं कारयेत्ततः ।
सन्धियुक्तमधःखण्डं मृच्चैलेन प्रयोजयेत् ? ।।८।।

संधि त्यक्त्वा ऊध्द्वर्खण्डं (?) (डे) जलमुद्रां प्रलेपयेत् ।
शुद्धाञ्जननिभं किट्टं किट्टार्द्ध-समितां (?) (र्द्ध मृत्तिकां) कुरु ।।९।। ?

सुवर्ण-पुण्प-निर्यास-समिताद्धे्न ? योजयेत् ।
दक्षाण्ड न (?) (स्य) (?) द्रवेनैव मर्दयित्वा दृढं भिषक् ।।१०।।

सर्व्वतो मुखमुद्रेयं पुत्रस्यापि न कथ्यते ।
तथापि रचये (येद्) यन्त्रं पारम्पर्योपदेशतः ।।११।।

सम्पुटस्य यथा सन्धिर्जलमध्ये न तिष्ठति ।
विरच्यैवं प्रकारेण भवेद्रैवव (?) (त)- संज्ञकः ।।१२।

यन्त्रा (:) सोमानलो[1] नाम क्वचिद्रक्तः ?सुगोपितः ।
यं यं ? (यन्त्र ?)- राज इति क्वापि प्रोक्तः परमदुर्लभः :।१३।।

रसस्य निगदः ? (डः) साक्षादनेन प्रपचेद्रसम् ।
शनैः शनैर्मन्दवह्नि भिषगृ ? (ग्दि-) न चतुष्टयम् ।।१४।।

ततः प्रवालसंकाशं संग्राह्यं च सुघोपमम् ।
यदि किञ्चिच्च तिष्ठेत यन्त्रराजे षु- (सु-) गंधकः ।।१५।।

ततोर्द्धं गन्धकं दत्त्वा तेनैव विधिना पचेत् ।
अथवा वालुकाख्येन काचकूप्यां पुनः क्षिपेत् ।।१६।।

---

1 ऊर्ध्वंवह्निरधश्चापो मध्ये तु रससंग्रहः ।
सोमानलमिदं प्रोक्तं जारयेद्गगनादिकम् ।। र. रा. सु.

2 दक्षः कुक्कुटः मयूरश्च ।

स्वाङ्गशीतं समादाय नवपल्लव-सन्निभम् ।
सूक्षचूर्ण-रसं ? कृत्वा रक्षेत् स्वर्णकरेणुकैः ? ।।१७।।

जातीफलं लवङ्गञ्च कङ्कोलं जातिपत्रकां (कम्) ।
मस्तङ्की (?) (ङ्गी) कर्षमात्रां स्यात् कस्तूरी कर्षमात्रिका ।
तदर्धं यक्क (पर्ण ?, पक्व ?, वंश-?) कर्पूरं तथार्कंकरहा
(कर्करहा) टकम् ? (द्वयम् ?) ।।
समुद्रशोषजफलं समभागं विचूर्णयेत् ।।१९।।

माषमात्र रसं नित्यं चूर्णमेतद् द्विमाषकम् ।
मिश्रयित्वा भक्षयेच्च शृणु पथ्यमतः परम् ।।२०।।

प्रथमं मृदुमांसं च घृतांधः (?) (घृताक्तं तु) सुशीलयेत् ।
अतः पर च कुविध (विविध ?) मांसभक्ष ? प्रकल्पयेत् ।।२१।।

मण्डकान् वटकांश्चैव पक्वान्नं दुग्धसंयुतां (?) (तम्) ।
भोजयेद्रमयेद्बालां कामं चित्तगतां (?) तथा ।।२२।।

सप्तधातुक्षयं कास मन्दाग्नि ग्रहणीगदम् ।
श्लेष्मा-स ? (म ?) यान्बहुविधान् प्रमेहान् विंशतिं जयेत् ।।२३।।

अपस्मारं तथा गुल्मं हृद्रोगं पीण्डु (?) (पाण्डु-) दुर्ज्जयेत् (?) (दुर्जयम्) ।
अरुचिः शोफरोगाश्चं प्रमेहपिडिका क्षयेत् ? (ञ्जयेत्) ।।२४।।

जीर्णज्वर प्रलेपाख्यं (प्रलापाढ्य ?) सामवातं गुदामयम् ।
जयेच्छूल-गरंश्वासं जयेदाशु उरः क्षतम् ।।२५।।

बालानां च प्रदातव्य मात्राभेदेन सर्वथा ।
वृद्धानां च परां पुष्टिं वीर्याढ्यं कुरुते भृशम् ।।२६।।

तिमिरं च जयेदाशु रसायनमनुत्तमम् ।
स्त्रीणां प्रीतिजननं [च] वलीपलितनाशनम् ।।२७।।

रक्तपित्तं सितं नीलं मेचकं जलसन्निभम् ।
शुक्रस्राव कटिशूलं नाशयेच्च किमद्भुतम् ।।२९।।

कक्षापुटिमते प्रोक्तो ? रसः परमदुर्लभः ।
सानुभूतश्चात्र मया लिखिता (तः) ? सम्प्रदायतः ।।२६।।

श्रीकक्षापुटिमतात् परमदुर्लभो रसः ।।

इति वृद्धचन्द्रोदयः

[योग की भाषाः—सुवर्ण चूर्ण ½ पल, शोधित पारद ४ पल, गन्धक ८ पल इनकी विधिवत् कज्जली कर (लाल) कपास के फूलों के रस से २ दिन मर्दन करे। फिर घींग्वार के रस की भावना देकर १/२ कर्ष शीशे का चूर्ण डाले।

फिर निम्नोक्त यन्त्र बनावेः—

१८ अंगुल ऊंचा, छः अंगुल चौडा ऐसा सुचिक्करण व सुवृत्त सम्पुट बनावे। यह नीचे का पात्र हुआ जिसमें पानी रहेगा। उसके ऊपर रखने का भी एक पात्र बनावे जो नीचे वाले (पूर्वोक्त) पात्र में आधा तो दृढता से फिट हो जाय व आधा ऊपर रहे। ऐसे पात्र अच्छे कुम्भार से बनवावे व पक कर ताम्रवर्ण के होने पर उपयोग में लें। इस ऊपर वाले पात्र में काच प्रलिप्त करलें जैसा कि रस कर्म में किया जाता है। इस पात्र में पूर्वोक्त रस कल्क (चूर्ण) सावधानी से रख दे। इस पात्र के ओष्ट भाग को छोड कर उसके ऊपर एक हंडिया रखे जिस में अग्नि रहेगी। उन्हें मुद्रित करे।

अब ग्रंथाकार सम्पुट मुद्रा का वर्णन इस प्रकार करते हैंः—

काच व राख सम भाग लें और चावलों के साथ भिगो कर एकजीव करें। उस मुद्राद्रव्य से मध्यम व उपरि भाग का सधि-मुद्रण करे।

नीचे व मध्य के पात्रों की संधि पर कपड़-मिट्टी करे। सधि को छोड कर ऊपर वाले खंड पर जलमुद्रा करे। आगे ग्रंथकार जल-मुद्रा की विधि इस प्रकार बताते हैंः—

शुद्ध अंजन के समान काला किट्ट (मण्डूर) व उससे आधी मिट्टी विशेष व स्वर्णपुष्प-गोंद उससे आधा मिलावे। इन सबको मुर्गे या मयूर के अण्डे के द्रव से मर्दन करलें। यह मुख-मुद्रा है, यह दुर्लभ हैं व गोपनीय है जिसे अपने पुत्र को भी न बतानी चाहिये (?)।

इस प्रकार परम्पराप्राप्त उपदेशानुसार यन्त्र रचे। इसकी संधि जल में नहीं पहुंचनी चाहिये। इस विधि का नाम रैवत है व यंत्र का नाम सोमानल है जो सुगोपित है।

यह रसकर्म के लिये निगड (जंजीर) है—रस को बांध रखने वाला यंत्र है। इस यंत्र में उक्त पारदादि को ४ दिन मंदाग्नि से शनैः शनैः पकावे।

पाक होने पर रंग में प्रवाल सदृश व गुणों में अमृत तुल्य इस रस को निकाल कर सुरक्षित रखलें।

कदाचित् यंत्र में कच्चा गंधक रह जाय तो उक्त रस में उससे आधा गंधक देकर पुनः जारण करलें व रस सिद्ध करलें।

अथवा वालुकायंत्र से ही रस को बनालें।

फिर जायफल, लवंग, कंकोल, जावित्री, मस्तङ्गी ये १-१ तोला व कस्तूरी भी एक तोला लें। ½ तोला [1]पक्वकर्पूर अकरकरा १ तोला, समुद्रशोषफल १ तोला मिला कर चूर्ण पृथक् रखें।

पूर्वोक्त रस का चूर्ण १ माषा व जायफल आदि का चूर्ण २ माषा मिला लेवें व वय-दोष-रोग के बलाबल के अनुसार मात्रा निर्धारित कर लेने से चन्द्रोदय की तरह यह भी अनेक रोगों का नाश करता है। यह कक्षापुटि आचार्य के मत का बृहद् चन्द्रोदय रस है।]

---

1 भावमिश्र ने पक्वकर्पूर में अपक्व से न्यून गुण बताये हैं।

राजमृगाङ्कपोट्टलीरसः❋

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेम्न (:) सूक्ष्माणि कारयेत् ।
(तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत्) (?)
काञ्चनाररसेनैव ज्वालापुष्या (मुख्या) रसेन च ।।१।।

नागवल्या रसैस्तावद् यावभ्दु (द्भ)- वति पिष्टिका ।
ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टङ्कण तत्रां (त्र) निक्षिपेत् ।।२।।

पिष्टि (पिष्ट)- मौक्तिकचूर्णञ्च हेमद्विगुणमावपेत् ।
तेषु सर्वे (सर्व)- समं गन्धं क्षिप्ता (क्षिप्त्वा) चैकत्र मर्दयेत् ।।३।।

तेषां कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ।
पश्चान्मृदु (दा) चे- (वे-) ष्टयित्वा शोषयित्वावधारयेत् ।।४।।

सराव (शराव-) सम्पुट (स्या-) न्तस्तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ।
लवण- (णा) पूरिते भाण्डे धारयेत्त च (त्तु) सम्पुटम् ।।५।।

मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा बहुभिर्गोमयं (यैः) पुटेत् ।
ततः शीतं समा-कृष्ण (कृष्य) गन्धं सूतसमं क्षिपेत् ।।६।।

पिष्ट्वा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्गजपुटेन च ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य गुञ्जायुग्मं प्रयोजयेत् ।।७।।

अष्टभिर्मरिचैर्युक्तो कृष्णा-त्रे- (त्र) यान्वितो पिच । (ऽथवा)
विलोक्य देया दोषादीनेकैका रसरक्तिका ।।८।।

सर्पिषा मधुना वापि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ।
लोकनाथसमं पथ्य कुर्यात् स्वस्थमना शुचिः ।।९।।

श्लेष्माणं ग्रहणी (ं)- श्वास (ं)- कासं क्षयमरोचकम् ।
मृगाङ्कोऽय रसो हन्यात् कृशत्वं बलहानिता (ताम्) ।।१०।।

इति राजमृगाङ्कपोट्टलीरसः

---

1 पाठोऽयं प्रमादादेव ग्रन्थकृता नोद्धृतः

❋ योगोऽयम् ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

राजमृगाङ्करसः※

[1]भस्मसूतस्त्रयो भाग भागैकं भस्महेमकम् ।
[2]मृताभ्रस्य च[2] भागैकं शिला-गन्धक-तालकम् ।।१।।

प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
वरायीं (टान्) पूरयेत्तेन क्षा(छा)- गीक्षीरेण टङ्कणम् ।।२।।

पिष्ट्वा तेन मुख रुद्ध्वा मृद्भाण्ड तं निरौधयेत् ।
शुष्कं गजपुटेत् (टे) का चूर्णपित् (पक्त्वा चूर्णयेत्) स्वाङ्गशीतलम् ।।३।।

रसो राजगाङ्कोऽयं चतुर्गुञ्जः क्षयापहः ।
दशपिप्पलिकाक्षौद्रैरेकोनविं[3]श-दूषणैः[4] ।।४।।

इति राजमृगाङ्को रसः

तालेश्वरोरसः⊕

[5]द्वयं द्वादशकर्ष (र्षं ?) तालञ्च कूष्माण्डरसं लिहेत्[5] ।
स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे यावत्तोयं न विद्यते ।।१।।

पश्चात्त शोषयेत्खल्वे सूत (सूतं) कर्षं (कर्ष-) द्वयं क्षिपेत् ।
[6]तन्मर्द्य (र्द्यं ?) वहुवाराणि नीलाभं कज्जली भवेत्[6] ।।२।।

स्नुहीक्षीरं रविक्षीरं छागी-गोक्षुर-वाकुची-
पातालं गरुली कोल्ह-चक्रमर्द्द कजद्रवैः (?) ।।३।।

※ योगोऽयम् ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।
1-1 शा. सूतभस्म त्रिभागं स्याद्भागैकं हेमभस्मकम् । 2-2 शा. मृत ताम्रस्य, र. यो. सागरेऽपि ताम्र एव पठितः । 3 शा. त्रिश० 4 शा. अस्मात्परम् 'सघृतं दापयेत्पथ्यं स्त्रीकोपाग्निश्रमांस्त्यजेत् । पथ्यं वा लघुमांसानि राजरोगप्रशान्तये ।।', इत्यधिक पाठः ।

5.6 छन्दोभङ्गः—भ्रष्टपाठः अस्मिन्स्थाने रसयोगसागरे—'कर्षा द्वादश तालस्य कूष्माण्डरससम्भृते ।' इति पाठः । तदेव समीचीनः 6-6 र. यो. सा. धर्षयेद्बहुधा तत्तु यावत् कज्वलिका भवेत् ।'
⊕ योगोऽयम् ख. पुस्तके नोपलभ्यते ।

(पातालगरुडाऽङ्कोलचक्रमर्दक-हिज्वला:[1] ।।)

कुमार्योन्मत (कुमार्युन्मत्त)-भल्लात-त्रिफलातु (म्बु)-पुनर्नवा (:) ।
[2]निम्बत्वचा सिरोवध्या (?) पुटं देय (?) त्रयंत्रयम्[2] ।।४।।

षङ्कर्षे (षट्कर्षं) चूर्णकलिकां (?) (कलिकाचूर्णं) [3]हंडिकायंत्र ? कारयेत्[3]
चतुर्थांस (श)-मधस्थाप्य (प्यं) मध्य (ध्ये) स्थाप्यन्तु तालकम् ।।५।।

पश्चादुपरि चूर्णे (र्णं) तु सर्वे (र्वं) स्थाप्य (प्यं) प्रयत्नतः ।
हण्डिका (कां) कण्ठपर्यन्तं (न्तां) [4]कुमारी-मज्जपूरयेत्[4] ।।६।।

[5]ततो मुद्रां दृढं कृत्त्वा उर्द्धस्म स्यापतं ? किलम् (?)[5]
चतुर्यामं तु दीप्ताग्निं हतं यामं विशाग्निना ? ।।७।।

[6](दीप्ताग्निना चतुर्यामं विंशद्यामं हठाग्निना)[6]

[7]स्वाङ्गशीतल–कुष्ठघ्नो स्वयं तालेश्वरोत्तम:[7] ।
[8]पथ्यन्तु सांबुशाल्यन्नं कुष्ट (ष्ठ-) मष्टादशं हरेत्[8] ।।८।।?

इति तालेश्वरो रसः ।

---

1 हिज्वला = समुद्रफल इति लोके ।

2-2 र.यो.सा.'निम्बत्वगेभिर्भेषज्यैः पुटानाञ्च त्रयं त्रयम् ।'

3-3 र.यो.सा. हंडिकायान्तु धारयेत् ।

4-4 र.यो.सा. कुमारीरसयोगतः ।

5-5 र.यो.सा. 'पूरयेच्च ततो मुद्रां दृढां कुर्यात् प्रयत्नतः ।
तस्योपरि शिलां दत्त्वा दृढां न च चलेद्यथा ।।' इत्यधिकः पाठः ।

6-6 पाठोऽयं र.यो.सा. दृश्यते ।

7-7 र.यो.सा. 'स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य कुष्ठे तालेश्वरो रसः ।
कुष्ठनाशकरः ख्यातो भैरवानन्दयोगिना ।।'

8-8 र.यो.सा. पथ्यं मुद्गाम्बु शाल्यन्नं भिषगत्र प्रयोजयेत् ।

तालेश्वरोरसः❀ (द्वितीयः)

गुडूच्यां (च्या) तालकं मर्द्यं यावद्यामचतुष्टयम् ।
शाणमात्रे तालकेऽस्मिन् शोरकस्याऽपि रक्तिकाम् ।।१।।

दत्त्वा दिमर्दयद्वास्म् ? (दत्त्वा विमर्द्य संशोष्य)
काचकूप्यां ततः क्षिपेत् ।
पाचयेद् बालुकायन्त्रं(न्त्रे) यावद्यामाष्टकं भवेत् ।।२।।

ततः सुशीतं संगृह्य भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
मरिचैः षोडशमितै–।।३।। (?) [रेकादशदिनावधि ?]

एवं तालेश्वरो नाम सर्वान् कुष्ठान् व्यपोहति ।
वातरक्तं महाघोरं हंत्यरक्तं ? न संशयः ।।

इति तालेश्वरो रसः ।

तारकेश्वररसः❀

जाती-टङ्कण-तालानां भागा दश-दश स्मृताः ।
युक्ता (क्त्या) सर्वे (र्वं) मर्दयित्वा शिवास्वरससाधिता ? (तम् ? ।।)
युक्तं (उक्तं ?) कुष्ठहरं सेव्यं सर्वदा भोजन-प्रियौ (?) ।। (प्रियैः ?)

इति तारकेश्वर रसः ।

कनकसुन्दर रसः ❀

हिङ्गुलं[1] मरिचं गन्धं पिप्पली-टङ्कणे विषम् ।
कनकस्य च बीजानि समांगं ? (समांशं) विजयाद्रवैः ।।१।।

मर्दयेद्यामामात्रन्तु चणमात्रा वटी कृता ।
भक्षणाद्ग्रहणीं हन्ति रसः कनकसुन्दरः ।।२।।

❀ इमौ योगौ ख-पुस्तके नोस्तः ।

1 निघण्टु रत्नाकरे हिङ्गुलस्थाने पारदो नियोजितः

अग्निमान्द्यं ज्वरं तीव्रमतिसारञ्च नाशयेत् ।
दध्यन (न्नं) दापयेत्पथ्यं वाऽथ तक्रोदनं चरेत् ।।३।।

ग्रहणीरोगिणां तक्रं दीपनं ग्राहि वातलम् ।
पथ्यं मधुरपाकित्वान (न्न) च पित्त-प्रकोपनम् ।।४।।

इति कनकसुन्दरो रसः ।

महाज्वराङ्कुशः❀

सूतं गन्धं विषं तुल्यं धूर्तबीजं त्रिभिः समम् ।
चतुर्णां द्विगुणं व्योषं चूर्णं [1]गुञ्जाद्वयं हितम्[1] ? ।।१।।

जम्बीरकस्य मञ्जाया (भि)रार्द्रकस्य रसेन वा[2] ।।२।।
दापयेत् शीतपूर्वेषु विषमेषु रसो ह्ययम् ।।
सन्निपाते महाघोरे कफवातोत्तरे हिते ? (तम्) ।

इति महाज्वराङ्कुशः ।

सोमबाणरसः❀

हिङ्गुलं मरिच (चं) मारिच् (त-) नागं नागवङ्गमलिन ज (ज्व-)
लानाऽलम् । पञ्चपित्तमलं (गरलं) तरलं प्राक् ? (तत् ?)
प्रपुष्प (पुष्प-) युक्तमपि मर्दय गाढम् ।।१।।

तत्समानमखिल (लं) घनवारा भावितं घनमदेन विभावितम् ।
तदनुपान भेदितो ? हंति संततक-दारुणं ज्वरम्[3] ।।२।।

1-1 अस्मिन् स्थाने टो. 'हेमक्षीरी विभावितम् ।
चतुर्वारं घर्मशुष्कं-चूर्णं गुञ्जाद्वयं हितम् ।।' इति पाठः

2 अस्मात् परं टो. 'महाज्वराङ्कुशो नाम समस्तज्वरनाशनः ।'
इत्यधिकः पाठः ।

3 छन्दोभङ्ग दोषः— भ्रष्ट पाठः । अस्मिन्स्थाने टोडरानन्दे
'भावितं तदनुपानभेदतो हन्ति संततकं दारुणं ज्वरम् ।' इति शुद्ध पाठः

❀ इमौ योगौ ख-पुस्तके नोस्तः

सन्निपातमपि (ति-) पातकोद्भवं शापदोषजनितं रतितापम् ।
तुष्टि-पुष्टि-बल (फल)-भोगदायकः सोमबाण इति कीर्तितो रसः ॥३॥

इति सोमबाणरसः

ज्वराङ्कुशः*

पलद्वयं शुद्धसूतं गन्धकञ्च पलद्वयम् ।
समानममृतं दद्यान्मर्दयेदर्कदुग्धतः ॥१॥

दिनानि सप्तयत्नेन दत्त्वा दत्त्वार्कदुग्धकम् ।
ततस्तु गोलकं कृत्वा यन्त्र (यन्त्रे) सोमानले पचेत् ॥२॥

दा-(आ-) सप्तविंश-दि-(द्वि- वसान् स्वाङ्गशीतं रसं ततः ।
भस्मितं मर्दयेत्खल्वे तिलपर्णीरसेन वै ॥३॥

हृत्पर्णी (र्ण्याः) काकमाची (च्या-) च (श्च) त्रैलोक्यविजयारसैः ।
देवताकृष्णजरसैः[1] ब्रह्मपुत्ररसेन च ॥४॥

भावयित्वाथ सञ्चूर्ण्य स्थापयेत्सुकरण्डके ।
ज्वरिताय प्रदातव्यो द्विगुञ्जोऽयं रसेश्वराः (रः) ॥५॥

कर्पूरेणाथवा दद्यात् कस्तूर्यां (र्या) वा रसेश्वरम् (रः) ।
जातीफलेन वा दद्या-त्स्त्री? (च्छ्री-)खण्डमनुपाययेत् ॥६॥

दष्टाविशितं ? कृत्वा ज्वरवेगो निवर्तते ।
विषमान्तकरः सद्यो नान्यथा शिवभाषितम् ॥७॥

इति ज्वराङ्कुशः

धूम्रकेतुरसः+

भवेत्समं सूतसमुद्रफेन (नं) हिङ्गूलगन्धं परिमृद्य (मर्द्य) जामे (यामम्)[2]
नवज्वरे वल्लयुगञ्च[3] दत्तमार्द्राम्भसाऽयं ज्वरधूमकेतुः ॥१॥

इति रसरत्नावल्या (ल्यां) ज्वरधूमकेतुः ॥

---

* योगोऽयम् ख-पुस्तके नोपलभ्यते ।
1 देवताकृष्णजरसैः = तुलसीरसैः ।
+ योगोऽयम् ख-पुस्तके नास्ति ।
2 र. यो. सा. यत्नात् ।
3 वल्लमितं त्रिघस्त—इति र. यो. सा. ।

ज्वराऽरिरसः*

रसगन्धकयोर्भागैः (गौ) शुद्धयोरुभयोरपि ।
त्रिकटुत्रितयं चैव एकैकं भृङ्गवल्लयोः ॥१॥

आकारकरभागकं (एकं) (क) स्यात्फटि(स्फुट)टङ्कणम् ।
विप्रस्य वत्सनाभस्य भाग (गो) द्वितयसंयुतम् ॥२॥

सारणाख्या-दि-(हि-) फेनस्य दत्त्वा पादं हि चूर्णयेत् ।
दिनानि सप्त सम्मर्द्य भृङ्गराजरसेन तु ॥३॥

नैपालबीजतोयेन दिनैकं भावितं कुरु ।
नैपालभावनाहीनमपक्वमलजे ज्वरे ॥४॥

सुपक्वमलजे दद्यान्नैपालजलभावना ।
क्षणेनैव ज्वरो याति मलपात (:) सुखावह (:) ॥५॥

छोटिका-षष्टिमात्रेण ज्वरारिर्नाशयेज्ज्वरान् ।
षष्टिकान्नं प्रदातव्यं पथ्यं दधि सुशीतलम् ॥६॥

टीका—रसु भागु १ गंधकु भागु १ त्रिकटु ६ चित्रकु १, तज १ अकरकरहा १ परीया (फूला किया) सुहागा १ दूधिया (श्वेत) वत्सनाभ २ चोखी अफीम १ (पाद=¼) सब सम (प्रोक्त) मात्रां दिन ७ भंगरे के रस सौं मर्दियै नैपाल के बीज की भावना (१ दिन) अपक्वमलज्वर में नैपाल की भावना नहीं देवें व सुपक्वमलज्वर में नैपाल जल की भावना देनी चाहिये । वल्लमात्रा रसु देई ज्वरु जाई इससे सुखावह मलपात होकर क्षणमात्र में ज्वर नष्ट हो जाता है । यह ज्वराररस ६० छोटिका मात्र काल में ज्वर का नाश कर देती है । भातुसीरोदह्यौ पथ्यु (भात व शीतल दही पथ्य हैं)

इति ज्वराररसः

---

* योगोऽयं ख-पुस्तके नास्ति ।

शीतभञ्जीरसः❋

पारदं रसकं तालं तुत्थं टङ्कण-गन्धकम् ।
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवल्लीरसैर्दिनम् ।।१।।

मर्दयं (ये)-त्तेन कल्केन ताम्रपात्रोदरं लिपेत् ।
अङ्गुल्यार्द्धप्रमाणेन ततो रुध्या(न्ध्या)च्च तन्मुखम् ।।२।।

विपचेत् सिकतापूर्णे क्षिप्त्वा धान्यानि तन्मुखे ।
यदा स्फुटन्ति धान्यानि तदा सिद्धं विनिर्दिशेत् ।।३।।

ततो नयेत्स्वाङ्गशीतं ताम(म्र)-पात्रोदराद्भिषक् ।
शीतभञ्जीरसोनाम चूर्णयेन्मरिचैः समः (म्) ।।४।।

माषैकं भक्षयेत् पर्णखण्डे चोष्णजलं पिबेत् ।
नाशयेद् विषमं तीव्रमेक-द्वि-त्रि-चतुर्थजम् ।।५।।

दुग्धोदनं (दध्यौदनं) शर्करा च पथ्यं वा तत्र भक्तकम्(तक्र भक्तकम्) ।
इति शीतभञ्जीरसः

पञ्चपञ्चामृतरसाः

पञ्चपञ्चाऽमृत (तं) प्रोक्तं पञ्चधा पञ्चभिः कृतम् ।
पञ्चानाञ्चापि धातूनां पञ्चरोगहरं परम् ।।१।।

पञ्चानुपानयोगेन पञ्चानां पाचनान्वितम् ।
पञ्चपातकिपापघ्नं पञ्चपुण्यकर परम् ।।२।।

सुवर्णं रजतं ताम्रं नागवङ्गौ(नागं वङ्ग-) समन्वितम् ।
सुवर्णं कान्तलोहञ्च रजतं ताम्रमभ्रकम् ।।३।।

समौक्तिकं हेमवज्रं रसाभ्रकसमन्वितम् ।
नागं वङ्गं घनं[1] लोहं जैपाल ? (नेपालं[2]) पंचं (पञ्चमं) स्मृतम् ।।४।।

पारदं रजतं ताम्रं साभ्रकं हेमपञ्चकम् ।
पञ्चपञ्चामृतान्याहुः सर्वरोगहराणि तु (च ?) ।।५।।

इति [पंच] पञ्चामुत्त ? (मृत)-रसः (साः)

❋ योगोऽयम् ख-पुस्तके नोपलभ्यते
1 घनं = अभ्रकं । 2 नेपालं = ताम्रं

द्वितीयं परिशिष्टम्

अथ परिमलपारिजातके

चम्पकगन्धतेलु

(१) तेलु आछौ[1] सधरु[2]-सुवासु तिल को तेलु सेर१० जाईपत्री[3] टं ३२ लवंग टं ३२ कर्पूर टं ३२ ठडी ? (बडी ?) इलाइची टं ३२ कूकू टं ३२ तज टं ३२ मिरच टं ३२ कंकोल टं ३२ सर्व वस्तु नान्ही करिवारी वाटिजहि ता पाछौ मौटी वस्त्र छानि करि ता महा घालिजौ सु तेल महि घालिजौ तव उत्तम वासु आवै ।

इति चम्पकतैलं[4]

(२) वालौ टं ३२ मोथा टं ३२ रेणुका टं ३२ प्रियंस? (प्रियङ्गु?) टं ३२ गव्योना[5]? टं ३२ तगरू टं ३२ पत्रजु टं ३२ बडी इलाइची टं ३२ छर टं ३२८ वाटि करि तेलु सेरु १० ता माही घाली करि घाम रखीजही इति कंपक्च? (चपक?) गंध तेलु होई ।

अथ नातीगन्धतेलु[6] ?

(४) वालौ टं ३६ रेणुका टं ३६, बडी इलाइचो टं २४, तेलु सेर १० या तेल महि चूर्ण करि घाम राषि लहिज्यौ ज्यौ (×) जाइ के पू? (फू?)ल कौ सौ वासु आवै, इति रतिवल्लभ तैल ।

---

1 तैल अच्छा 2 अच्छी गंध वाला या ताजा 3 जाईपत्री = जातीपत्री ? (जावित्री ?) 4 इसका नाम चम्पकतैल कैसे पड़ा यह पुस्तक से ज्ञात नहीं होता । इस योग में चम्पा का प्रयोग नहीं हुआ है । 5 'गव्योना' से ग्रन्थकर्ता का क्या आशय रहा होगा, वह इस पुस्तक से ज्ञात नहीं होता । मुरा = गन्धिनी, गंधपलाशी = गंधानिक, गन्धोली = गंधा, कर्चूर = गंधसार-गंधमूल, कृष्णागरु = गंध, चोरक = ग्रन्थिल, गंधेज घास होता है । इनमें से किसी को या अन्य द्रव्य को गव्योन्त कहा गया है, यह ज्ञात नहीं हो सका । 'परिमल पारिजात' पुस्तक हमें नहीं मिल सकी है ।
6 नातिगंधतैल का योग नहीं दिया गया है ।

कंकोल छर मात्रा एकत्र करि सम भिलौंजहि, एक विधि उबटनौ कौ यह।

(5) वालौ, प्रियङ्गु, उसीर, चौरकु, चम्पे की चक्वत्री ? (त्ववपत्री ?) शिलारसु, छरीला, कूंक, छर, गव्यौना, पत्रज, सममात्रा कं एकत्र कीजहि

(6) दूसवौ ? (दूसरा ?) उबटनौ

बडी इलायची टं 2, जाइफल टं 2, नख टं 2, कबा[1]व टं 2, सिलारसु टं 2, कंकोल टं. 2, आ[2]डी ?टं 2 य सर्व नान्ही कै सुगन्धतैल महि घालिजौ, ता पाछौ कुकू टं 22, वाटि करि मिलायजौ, गंधजल घालि करि त्रिपुरहरदा-सवल्ल ? सा धूपि घूपिजौ, ता पाछौ 3 दिन घाम रखिजौ, ता पाछौ फूलनु वासिजौ, गन्धपानी स्यौ वाटि अंग उबटीजौ।

(7) (अन्य) उबटन

प्रियंगु, उसीस, सिलारसु, वालौ, नख, पत्रज, तज, तालीसपत्र, मौथा, इलाइची, चंदनु ए सम मात्रा वाटिजौं। गंधजल सौ वाटि, कर्पूरा, (र?) कस्तूरी, वाटि करि फूल नु वासिजौ। यह उबटनौ ग्रीष्म रितु कह भलौ।

(8) इलाइची टं 16, तमालपत्र टं 16, कवाव टं 16, गंधेल के फूल ? (गंधतृणपुष्प ?) टं 16, आडी टं 16, सिलारसु टं 16, नख टं 5, कस्तूरी टं 1 ए सर्व एकत्र करि जाहि।

(9) एक उबटनौ यह

सेमल के कांटे आनि, वाटि छानि, करि छेरी के दूध घालि करि, वाटि छानि वाटि छानि, मुह मुह उबटीजौ मौहासे जाहि।

(10) अक ? (अथ ?) मुंह की छाई जाहि

तेलु सिरस को, हरद दारुहरद, दूब गोरोचना कूव ? (कूठ) जाइफल, कुसुंभ, इन्हकौ उबटनौ कीजो, मुंह की छाइजाइ, वर्ननीकौ होइ।

---

1 कवाव = शीतल चीनी ? (द्विरुक्त है)

2 आडी = बडी इलायची ? (द्विरुक्त)

अथ स्नानविधि

(11) वृष संक्रांति में

प्रियङ्गु, हरद, दारुहरदा, वालो, चक्पत्री ? (त्वक् पत्री) छट, चन्दनु, कूंक ? (कूठ ?)वांटि, छानि, इन्हको वृष संक्रांति स्नानु कीजै ।

(12) मिथुन संक्रांति में

कूंकू, कूठु, पदमाखु, उसीर, अगर, गव्यौना, गोरोचना, वाटि, छानि, इन्हकौ मिथुन संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(13) कर्क संक्रांति में

मोथा, कूठु, चंदनु, छरीला, वालौ, इन्हांगी ? (एकाङ्गी ?) गोरोचना, हरद, वाटि, इन्हकौ कर्क संक्रांति स्नानु कीजै ।

(14) सिंह संक्रांति में

चंदनु, छडा, मोथा, कुतु, ? (कूठ ?) गोरोचना, तज, वाटि, छानि, इन्हकौ सिंघ संक्राँति स्नानु कीजौ ।

(15) कन्या संक्रांति में

चन्दनु, कूतु, ? (कूठ ?) हरद, वालौ, छड, गोरोचना, मोथा, वानि ? (वाटि ?) इन्हकौ कन्या संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(16) तुला में

कूत्तु ?, (कूठ ?) छर, उसीर, पदमाखु, पत्रल ?, (पत्रज ?) गोरो-चना, हरद, वाटि, छानि, इन्हकौ तुल संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(17) वृश्चिक में

पद्माखु, मोथा, अगरु, चक्पत्री ?, (त्वक्पत्री ?) कूठु, प्रियंगु, गोरो-चना, कपूंर, वाटि, छानि, इन्हकौ वृश्चिक संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(18) मकर संक्रांति में

नलीपवाली ? (नलिका प्रवालाकृति ?) नख, मोथावडा, गोरोचना, खुर, पदमाखु, वाटि, छानि इन्हकौ मकर संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(19) कुंभ संक्रांति में

तज, गव्योना, जाइपत्री, नागकेशरि, कपूंरा, वालौ, गोरोचना, मोथा, वाटि, छानि, इन्हकौ कुंभ संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(20) मीन संक्रांति में

जाइफल, वारौ, कपूंर, उशीर, पदमाखु, सो वाटि छानि इन्हकौ मीन संक्रांति स्नानु कीजौ ।

(21) कपूंर, कस्तूरी, अगरु याको नाम पक्षमर्दनु कहीजै ।

(22) कस्तूरी, चन्दनु, अगरु, याको नाउ विसारु ? कहीजै ।

(23) पदनाखु ? (पद्माख ?) अगरु, कस्तूरी, चन्दनु, कवाब, इतनी वस्तु समान रुचि[1] वार तीन कपरा छानि करि राखि लहि मासूं ? (या सौं ?) वसंत रितु को नर्दनु (मर्दन ?) कीलौ ? (कीजौ ?) ।

(24) चन्दनु, कपूंर, उसीर, मासौ, (या सौं ? या 2 महीने ?) ग्रीष्म कौ लेपु कीजौ ।

(25) इलाइची, छर, अगरु, कस्तूरी, चंदनु, या को नाउ विसारु ।

(26) इलायची, छरा, अगरु, कस्तूरी, लवंग, कपूंर, चन्दनु, वरषा रितु कै लेपु कीजौ ।

(27) चंदनु, पदमाखु, कपूंर, छसीर, ? (उशीर ?) इलाइची, याकौ शरद रितु लेपु कीजौ ।

1 इन पांच द्रव्यों में से कोई तीन रुचि के अनुसार

(28) कुंकु, अगर, सिनारसु ?, (शिलारस ?) लवंग, कस्तूरी, इलाइची, याकौ हि[1]म रितु लेपु कीजौ।

(29) अथ लोवानु उडाइबे की विधि

हडिया कोरी लीजौ, तामहि लोवान मेलिजौ, हडिया उ[2]पर धारौ, तिस उपर तासक धारीजौ, तासक पानी भरीजौ, तासक के पैंदे उडि लागै सो लोवान सतु।

(30) अथ सुरतानी चोवा की विधि

मेटु[3] तोला 8, सिलारसु तोला 4, कस्तूरी तोला 2, कूंकू तोला 2, कपूर तोला 1, पी[4]छौ भीजौ अगरु सेर 1, चंदन सेर 1, जिवा[5]दी ? पीछौ मिलाइजौ, कुमकुमा[6] पषान्यो लोवानु टं 1, अगरु टं 1, छर टं 1, उसीर टं 1, गेहुला टं 1, ए[7]कांगी टं 1, सुरतानी[8] कपूर तोले 12, क[9]स्तूरी तोला 2, चोखो चोवा तब चुवाइजौ।

(31) अथ साब ? की जुगति

गौहूवा चन्दनु सेर 1, अरण्ड कौ तेलु सेर 2, गौहुवा चंदनु की चीरि कली कीजही, ते कली अरंडी के तेल महि भिजवौ दिन 45 ज्यौ घ[10]रा महि रहौज्यौ, गंध जाइ तौ वे कली फूल नु वासौ, चंवेली के फूल, राइबेल के, चंप के, केवरे के फूल, गुहि[11]या चंदनु? ,वासौ लोवानु टं 2, गोहू[12]ला टं 5, क[13]लंचकु टं 5 ?, उसीर टं 10, चंदनु टं 5, गव्यौना टं 5, चंपावती टं 5, इ[14]कंगी टं 7 ?, छड टं 5, ब्राह्मी टं 5, पत्रज टं 5, तज टं 5, नेत्रवालौ टं 5, छरीला टं

1 हेमन्त
2 चूल्हे ऊपर
3 मुल्तानी मिट्टी 4 ये द्रव लेकर इन्हें पानी से भिगोवे ? 5 जबाद कस्तूरी ? किंतु इनका तोल इस योग में नहीं है। अतः प्रतीत होता है कि यह 'वाटि' (घोट कर) 6 लाल रंग का लोहवान ? 7 शटी ? 8 संभवतः उस युग में कोई सुल्तानी कपूर होता होगा 9 इस योग में कस्तूरी 2-2 तोला दो वार लिखी मिलती है 10 घड़े के अन्दर 11 गौहूवा? 12 प्रियंगु 13 पीले फूल का सहचर कुरण्टक ? 14 कचूर ?

2, मैनु[1] टं 2, तब सब वस्तु गुहिया चंदनु के साथ चुवावौ, कुम[2]कुमा के पानी स्यौ धोवौ अवलि ? साख ? होइ ।

(32) अथ कुमकुमा ? कीनु गति

एकु वास[3]नु माटी कौ ता माहि वा[4]स की नारी बनावौ ग[5]जु 1 वासनु चूल्है पर धरौ तामहि पानी मैं[6]लौ ह्वै 2 वासनु पौदो ? धरौ ता वासन माहा फूल मेलौ वा गुलाला ? (ब ?) के वा चम्पे वा राइबेल के और गन्धमव (मय) फूल होइ तै रे पैंदे के वासन माहि मंलौ चूल्हे के वासण की यै पैदें के भांडे ही बनावौ ।

वासन नु मुह मूदौ अरु चुल्हा के वासनु पैंदे की आग वारौ आरने उपरा की थोरी थोरी मंद आच तब कुमकुमा होइ, औवलि इति कुमकुमा ।

(33) अथ कस्तूरी की युक्ति

कस्तूरी की वलरी ? (व[7]ल्लरी ?) गाइ के दूध माहि औटावौ से[8]वर को गौंदु सुकवौ वांटि, ए पाव कस्तूरी मिल चौमासे चौमासे सानि धरौ कस्तूरी दौनी ?

(34) अथ गौरा की जुक्ति

चन्दनु टं 15, अगरु टं 5, उसीर टं ?(टं)5, नखौ सेत्यङ्क ? (सीपज?) 5, छरीला टं 5, घी माह्य भूजौइ, कंणी (कंधी ?) टं 5, चम्पावती टं 5, तगरु टं 5, गठिउना ? (ग्रंथिपर्ण ?) फुलेलु सेर 1, सवाक प्रकार 1, चुरावौ तोरे 1, एक हिमे रौ मासौ सवा 1।, आविली को सतु, गरी नारेल की, कपरा छानि मिलौ धरौ, वह साष क्त्तिम ?होइ ।

---

1 मोंम 2 इस योग के आगे का योग कुमकुमा का है
3 बर्तन 4 बांस की नली 5 गज 6 रखा हो
7 लता कस्तूरी ? 8 सेमल ?

(35) अथ वाते ? गुलाल करिवे की विधि

त्यौखरि सेर s5, फटिकरि कटौरा महि वाटि टां 1 से 2। पानी माहि घीरिजौ, ता पाछै आधे पानी स्यो त्यौषरि ? सानिजौ ज्यौ गीला न होइ सुकवौ ता पीछै पुट 2 देइ, ता पीछो पतंगु से रुबटि ? पुट कौरि पानी सेर 5, चरूवा ठ ? (उ-)तारि धरौ सीरावौ ? गोंन्हौ ? सौ तव त्यौषरि हि पुट 1 मीडों सुकवौ ता पीछौ दूसरौ वाहि पानौ कौ देइ तथा तीसरा पुट् पतगु के पानी की देइ गुलालुग्रौ औवलि ।

(36) अथ अबीर करिबै को विधि

चंदनु टं 20, अगरु टं 10, कलंचकु ? टं 20, प्रवाखीरु टं 40, नखौ टं 5, गेहुला टं 5, छरीला टं 30, मोथा टं 40, कचूरु टं 40, पत्रज टं 40, तज टं 20, कस्तूरी टं 3, आडी टं 5, ए वास्तौ (वस्तुएं) पिसावौ, भारी चाकी करि एकत्र छरीला, कचूरा, मोथा, पत्रज, तज, गठिउना, व्रह्मी ए वस्त हंडिया महि मेलौ पौदौ ? पयारुशई । भोनकौ धाननुकौ ।

(37) अथवा उसीर की जर ता ऊपर हडिया महि सातो वस्त छडी लादि मेलौ यारौ घरौ (घड़ा) ऊपरि मैदा स्यौं लेपु करोजौ, जैसे वाफ न निकसे, सेरु पानी मेलौ अथता सेर 1? जब वह पानी हडिया महिकौ सूखि जाइ तब हठिया उतारि धरौ । तब से वस्त (वस्तुएं) सुकाइजहि आछो पीछौ ? (पीस्यौ ?) उपरि व्ये ? (मेत्रेलि घाम सुखाज ही तब ए सातौ पहिलौ शानौ? (सातौ?)वस्तु पिसावौ, वाकी चन्दनु, अगरु, कलंचकु. तवाखीरु, नखौ गेहुलां इकंसो गहूवा ? आडी कस्तूरी ए वस्तौ अरु सातौ छुरी लादि दौ वाकी पिसांवौ वार 7 पाछो नान्हौ पीन्हौ पीसौ उसौ (औषधि) कपस सौ छानीजौ जब ठानि ? (छानि) निवरो तब फूलनु वासौ पौदौ फूल अरडूप ? 2 फूल ता वासनु माह्य अबीर बुरकुवा आवौ ?तब थारी ऊपर अबीर मेलौ, कटौती तु दाराखौ तब सकरौ भयौ वै फल वलना ? में कुमकुमा पखारौ, लेवानु ? (लोहवान) है ? छुर है ? उसीर है ? गेहूणा है ? छानिजौ वै फू डारौ और

फूल नु बालौ दिन 4 वासै पीछै औवलि अवीरु हौइ वहुरि भारी चाकी स्यौ पिसावौ सब वस्त इकट करि ।

(38) अथ खिरौरी ? करिवे की विधि

खैरु सेरऽ ?ले करि पहिलौ ही घूपीजौ ता पीछौ सहकारु टं 5, कर्पूर टं 1 कस्तूरी टं 2, दै-व्या ? (वा-?) सीजौ ।

(39) अथ (सुख ?) (मुख ?) वास गुटिका

कवाब टं 29, तज टं 20, चंदनु टं 20, लघुलाइची ? (इलाइची) टं 20, खैरु टं 20, ए वस्तु गंध पानी, सिहु वाटि जहि ता पाछौ कर्पूर टं 1 कस्तूरी टं 2, सहकारु टं 5, इनि वासि करि खौरु की वाधि जहि ।

(40) कस्तूरी टं 2, कर्पूरु टं 2, कूंकू टं 8, नखी टं 4, जाइफल टं 5, वालौ टं 6, मोया टं 7, छुर टं 8, अगरु टं 9, वाकौ नाठ (नाम) माननिमिएकी ? (मर्दन ?) घूपु ।

(41) इलायची र कूंक ?3, नखी चन्दनु टं 3, पत्रज टं 3, (गुरु ? या अगर ?) टं 3, वाकौ नाऊ दधिचंलु ?

(42) नखी 1, मोथा 1, इकङ्गी 1, छुर 1, हररौ 1 ?, गठिउना 1, वालौ 1, मिस्री 17, इह मनोहर घूप ।

(43) एला, सुरभो चंदनु, आडी कस्तूरी, कचरु, नख मधुस्यौं मिलइ जइ छ ।

(44) अगरु, कस्तूरी, कुंकू, चंदनु, सालरि, ?ए सर्व समान कीजही या घूप सौ सर्व कार्ज सिद्ध होइ ।

(45) अथवा (वा-?)र्तिका विधि

कूंकू, मोथा, तगरु, प्रियंगु, अक्षत्राचंदनु ? भिगोइ, गीति, ?याकौ नाउ वृचन्दनु ?

(46) मोथा, देवदारु, लाव ? राल गंधाढ्यमांव ।

(47) कर्पूर, पानी, चन्दनु, देवदारु सिजा ? (सिला ?) रसु, अगरु, वाकौ नांव मुदिता ।

(48) कर्पूर को पानी, अगरु सिलारसु वालौ कूंकू, नखु, चंदनु, मोथा, पदमाखु, याकी वाकी कीजै । जुक्त पहली परिमल रक्तधि ?